



भारत का विधि आयोग

भारतीय दंड संहिता

से

संबंधित

एक सौ छपनवीं रिपोर्ट

[खण्ड 1]

अगस्त, 1997

## विषय सूची

### खंड 1

	पृष्ठ
अध्याय 1 : प्रस्तावना	1
अध्याय 2 : दंड और दंड देना—नीति और प्रक्रिया	5
अध्याय 3 : मृत्यु शास्त्र	13
अध्याय 4 : आपराधिक धृण्यन्त्र	19
अध्याय 5 : वित्तीय स्कैम (घोटाला)	23
अध्याय 6 : प्रयत्न विधेयक में नए अध्याय 5ख के रूप में नई धारा 120ग और 120घ का अंतःस्थापन	26
अध्याय 7 : राज्य के विरुद्ध आपराध	32
अध्याय 8 : आत्महत्या : दुष्प्रेरण और प्रयत्न	38
अध्याय 9 : स्त्री और बालकों के विरुद्ध आपराध	41
अध्याय 10 : भगा ले जाने का आनुषंगिक आपराध	55
अध्याय 11 : दस्तावेज—इसकी परिभाषा का विस्तार	65
अध्याय 12 : भारतीय दंड संहिता (संशोधन) विधेयक, 1978	69
अध्याय 13 : निष्कर्ष और सिफारिशें	100

### खंड 2

उपांध 1 : भारतीय दंड संहिता, 1860 से संबंधित प्रश्नावली	117
उपांध 2 : भारतीय दंड संहिता से संबंधित कार्यपत्र	138
उपांध 3 : प्रश्नावली के संबंध में प्राप्त उत्तर और अन्य उत्तर/संबंधी ज्ञापन	143
उपांध 4 : कार्यपत्र के प्राप्त उत्तर	149
उपांध 5 : शिमला (हिमाचल प्रदेश) में आयोजित कार्यशाला की कार्यवाही	155
उपांध 6 : पण्डी (गोवा) में आयोजित कार्यशाला की कार्यवाही	158
उपांध 7 : विशाखापत्तनम (आंध्र प्रदेश) में आयोजित कार्यशाला की कार्यवाही	161
उपांध 8 : विज्ञान भवन (नई दिल्ली) में आयोजित दाँड़िक न्याय पर राष्ट्रीय संगोष्ठी की कार्यवाही	166
उपांध 9 : आंध्र प्रदेश न्यायिक अकादमी, सिकन्दराबाद में आयोजित कार्यशाला की कार्यवाही।	171



गवर्नर गवर्नर

न्यायमूर्ति  
के० जयचन्द्र रेडी

अ० शा० पत्र सं० 6(3)(36)/95-एल० सी० (एल० एस०)

अध्यक्ष,  
भारत का विधि आयोग,  
भारत सरकार,  
नई दिल्ली-110 001  
टेलीफोन :  
कार्यालय : 3384475  
निवास : 3019465

तारीख 30 अगस्त, 1997

प्रिय विधि मंत्री मवदीय,

मुझे "भारतीय दंड संहिता" से संबंधित 156वाँ रिपोर्ट इसके साथ भेजते हुए अत्यंत हर्ष है। इसके साथ ही, भारत सरकार द्वारा विधि आयोग को समनुदेशित प्रमुख कार्यों से एक कार्य पूरा हो गया है।

2. भारत सरकार द्वारा किए गए निर्देश के अनुसरण में, विधि आयोग ने, भारतीय दंड संहिता (संशोधन) विधेयक, 1978 के प्रति विशेष निर्देश से, भारतीय दंड संहिता के व्यापक पुनरीक्षण का कार्य, 15 जुलाई, 1995 को मेरे कार्यभार ग्रहण करने के ठीक पश्चात आरंभ किया था।

3. लोक अभिमत अभिग्राप्त करने के लिए, आयोग ने, अध्ययनाधीन विषय के विभिन्न पक्षों को अधिकथित करते हुए, एक विस्तृत प्रश्नावली और कार्यपत्र परिचालित किया था। आयोग ने, चेन्नई, हैदराबाद, विशाखापत्तनम, पण्डी, शिमला और नई दिल्ली में कार्यशालाएं/संगोष्ठियां आयोजित की थीं। आयोग ने, अपनी सिफारिशों करते समय भारतीय दंड संहिता (संशोधन) विधेयक, 1978 के उपबंधों की भी जांच की थी।

4. हमने, विशेष रूप से भारतीय दंड संहिता (संशोधन) विधेयक, 1978 के सभी उपबंधों की सरकर संवीक्षा के पश्चात वर्तमान रिपोर्ट को पर्याप्त रूप से व्यापक रिपोर्ट बनाने का प्रयास किया है।

5. सिफारिशों, संहिता की खामियों को दूर करने और उसके उपबंधों को अधिक प्रभावी बनाने की दृष्टि से की गई हैं। हमें आशा है कि यदि सिफारिशों कायमन्वित की जाती हैं, तो वे संहिता को अधिक सर्वांगपूर्ण बना देंगी।

सादर,

मवदीय,

(के० जयचन्द्र रेडी)

श्री रमाकान्त डॉ० खलप,  
विधि और न्याय राज्य मंत्री,  
भारत सरकार, शास्त्री मवन,  
नई दिल्ली।

अपराध और आपराधिक विधि का मूल उस आदिकालीन पद्धति में निहित है, जिसके द्वारा सभी गलत बातों में निजी प्रतिशोध द्वारा परिव्राण किया जाता था, जो प्रतिशोध के सिद्धांत पर आधारित आत्म सुधार की एक पद्धति थी। प्रख्यात विद्वान् श्री गोयली का कथन है कि “निजी प्रतिहिंसा के रूप में आत्म सुधार की पद्धति सर्वत्र नियमित न्याय व्यवस्था की स्थापना के पूर्व विद्यमान थी। क्षतिग्रस्त व्यक्ति अपने कुटुम्बियों और आश्रितों के साथ अन्यायी के विरुद्ध छापा मारते थे और उसके पशुओं और साथ ही उसकी पत्नी और बच्चों को भी छीन ले जाते थे अथवा उसे, उस पर “बधन” लगाकर आधिदैविक शास्तियों द्वारा भयभीत करते थे जैसाकि पूर्वी देशों में आज भी किया जाता है अथवा अंतरः उसे अपना गुलाम बना लेते थे या उसका जीवन समाप्त कर देते थे। ऐसे ब्रह्म ग्रन्थों द्वारा भी विधिक नहीं थे किन्तु यही वह मूल योत था, जिससे धीरे-धीरे दाँड़िक विधि का विकास हुआ क्योंकि ऐसी प्रक्रिया का विचार प्रतिकर नहीं अपितु दंड था। इस पद्धति से सहजतः भयावह अव्यवस्था बढ़ी। अपराधी प्रायः सशक्त होते थे, भले ही अपने विरोधी से अधिक सशक्त न हों और दोनों पक्षों में कुटुम्बियों की सहायता से रक्तरंजित शत्रुता बढ़ी थी, जो सम्भवतः कई पीड़ियों तक चलती थी”।<sup>1</sup>

1.02. इस प्रकार असम्य समाज में कोई व्यवस्थित दाँड़िक विधि नहीं थी। किसी भी व्यक्ति के शरीर अथवा संपत्ति पर किसी भी समय किसी अन्य व्यक्ति द्वारा आक्रमण किया जा सकता था। आक्रांत व्यक्ति की या तो मृत्यु हो जाती थी या वह अपने विरोधी को पराजित कर देता था। ‘दांत के बदले दांत, आंख के बदले आंख, जिन्दगी के बदले जिन्दगी’ ही दाँड़िक न्याय का अग्रदूत था। समय के साथ-साथ आहत व्यक्ति, अपने शत्रु की छत्या करने के बजाय प्रतिकर स्वीकार करने के लिए तैयार होने लगा। तत्पश्चात् साधारण अपराधों के समाधान के लिए एक सर्वी मान अस्तित्व में आया। ऐसी पद्धति ने भी पुराकालीन दाँड़िक विधि को जन्म दिया। काफी समय तक इन सिद्धांतों को लागू किया जाना पक्षकारों के बीच ही बना रहा किन्तु धीरे-धीरे यह कृत्य राज्य द्वारा किया जाने लगा।

भारत में प्राचीन रूप से दाँड़िक न्याय व्यवस्था का मूल स्मृतियों में खोजा जा सकता है किन्तु यह विशेष रूप से मनु के काल से अस्तित्व में आया। अपराध के प्रवर्ग में मनु ने हमला, चोरी, डकैती, मिथ्या साक्ष्य, मानवचन, आपराधिक न्यास भंग, घोखाधड़ी, जारकर्म और बलात्संगा को माना था। राजा अपनी प्रजा की रक्षा करते थे और बदले में प्रजा उसके प्रति स्वामीभक्त रहती थी तथा उसे राजस्व देती थी। राजा स्वयं न्याय प्रशासन करता था और यदि वह व्यस्था होता था, तो वह विषय न्यायाधीश को सौंपा जाता था। यदि किसी अपराधी पर जुर्माना किया जाता था, तो वह जुर्माना राजा के खजाने में जाता था और उसे क्षतिग्रस्त पक्षकार को प्रतिकर के रूप में नहीं दिया जाता था।

1.03. वास्कोडिगामा ने, जो पुर्तगाल की प्रजा था, केंद्र आफ गुड होप के पास से, जो अफ्रीका के सुदूर दक्षिण में है, भारत के मार्ग की पहली बार खोज की थी। संक्षेप में कहा जाए, तो उसके पश्चात् पुर्तगालियों ने, भारत के साथ व्यापार करना आरंभ किया और बाद में अंग्रेजी भी इस परिदृश्य पर आए और भारत के साथ व्यापार करने लगे। चूंकि वे बहुत सफल रहे अतः, मद्दारानी एलिजाबेथ ने 1600 ईसवी में एक चार्टर जारी किया, जिसके अंतर्गत ईस्ट इंडिया कंपनी नियमित हुई। चार्टर ने, कंपनी को विधियां बनाने के लिए शक्तियां प्रदान कीं। 1609 ई० में जेम्स प्रथम ने चार्टर का नवीकरण किया तथा 1661 ई० में चार्ल्स द्वितीय ने, पुनः चार्टर का नवीकरण करते समय वैसी ही शक्तियां प्रदान कीं।<sup>2</sup>

1.04. 1668 के चार्टर ने बाब्बे को ईस्ट इंडिया कंपनी के पास अंतरित कर दिया तथा यह निवेश दिया कि न्यायालय में कार्यवाहियां उसी प्रकार होनी चाहिए, जिस प्रकार की वे हंगलैंड में स्थापित हो चुकी थीं। कोर्ट आफ जुडिकेचर, जो 1672 ई० में स्थापित किया गया था, अपने साधारण सत्रों के लिए मास में एक बार बैठता था और जो मामले शेष रह जाते थे उन्हें “लघु सत्रों” के लिए आस्थाग्रात् कर दिया जाता था, जो साधारण सत्रों के पश्चात् आहुत किए जाते थे। यह न्यायालय चोरी और डकैती के मामलों में दासता का दंड अधिरोपित करता था। चोरी के साधारण मामलों में अपराधी को धनीय प्रतिकर का संदाय करना पड़ता था या अन्यथा उसे चुराई गई वस्तु के स्वामी के लिए काम करने को बाध्य किया जाता था।<sup>3</sup>

1693 ई० में चार्ल्स द्वितीय ने, ऐसे अन्य स्थानों पर, जिन्हें कंपनी विनिश्चित करे, कोर्ट आफ जुडिकेचर स्थापित करने के लिए एक और चार्टर मंजूर किया। 1687 में एक और चार्टर मंजूर किया गया था, जिसके द्वारा विवादों को सुलझाने के लिए फोर्ट सेंट जार्ज, मद्रास में एक मेयर और निगम की स्थापना की गई थी। इन चार्टरों द्वारा उन अंग्रेजों को, जो भारत आए थे, सिविल और दाँड़िक, दोनों प्रकार के न्याय का प्रशासन न्यस्त किया गया था। इन न्यायालयों में प्राधिकारियों द्वारा प्रयोग की जाने वाली शक्तियां बहुत ही मनमानी थीं। अनोखे आरोप विरचित किए जाते थे तथा विलक्षण दंड अधिरोपित किए जाते थे।<sup>4</sup>

1726 में, कोर्ट आफ डायरेक्टर्स ने, भारत में सिविल और दांडिक मामलों में न्याय के उचित प्रशासन के लिए क्राउन को अभ्यावेदन किया। उस पर, न्याय के समुचित प्रशासन के लिए मेयर न्यायालय स्थापित किए गए थे किन्तु प्रशासित की जाने वाली विधियां मनमानी थीं क्योंकि मेयर और एल्डरमेन कंपनी के विधियिक सेवक होते थे और उनका विधिक ज्ञान नगण्य था। वह विधि, जो प्रशासित की जाती थी, हिन्दुओं अथवा मुसलमानों की सामाजिक स्थितियों के उपयुक्त होने में पूर्णतः असफल थी। 1753 में एक और चार्टर पारित किया गया था, जिसके अधीन मेयर भारतीयों के बीच वादों का विचारण करने के लिए सशक्त नहीं थे और ऐसा कोई व्यक्तित्व न्यायाधीश के रूप में बैठने का हक्क नहीं था, जिसका वाद में कोई हित होता था। अब, अंग्रेजी विधि भारतीयों को लागू नहीं रह गई थी तथा उन्हें उनकी अपनी विधियों और प्रथाओं द्वारा शासित होने के लिए छोड़ दिया गया था। 1765 में, राबर्ट बल्लाईव तीसरी बार भारत आया और मुगल सप्राट से दीवानी की मंजूरी अभिप्राप्त करने में सफल हो गया। दीवानी की मंजूरी में केवल दीवानी न्यायालयों का ही नहीं, अपितु निजामत का भी, अर्थात् बंगाल, बिहार और उड़ीसा में सम्पूर्ण प्रशासन के पर्यवेक्षण का अधिकार शामिल था।<sup>5</sup>

1772 में, वारेन हेस्टिंग्स ने, दांडिक न्याय के उचित प्रशासन के लिए कदम उठाए। दांडिक अपराधों के विचारण के लिए प्रत्येक जिले में एक फौजदारी अदालत स्थापित की गई थी। इन न्यायालयों के साथ कंपनी की यूरोपीय जनता का कोई संबंध नहीं था और न ही वे उनके प्रशासन में हस्तक्षेप करते थे। इन न्यायालयों में काजी अथवा मुफ्ती, न्याय की व्याख्या करने और यह अवधारित करने के लिए बैठते थे कि अपराधी किस वक्त अपराध के दोषी थे। प्रत्येक जिले के कलक्टर को, उनके सम्पूर्ण कार्य का सामान्य पर्यवेक्षण करने का आदेश दिया गया था। जिला न्यायालयों के अतिरिक्त, एक सदर निजामत अदालत भी स्थापित की गई थी। यह न्यायालय मृत्यु दंड के मामलों में तथा ऐसे अपराधों में, जिनमें एक सौ रुपए से अधिक जुर्माना होता था, दंड का पुनरीक्षण और उसकी पुष्टि करता था। इन न्यायालयों की मुसलमान विधि अधिकारी द्वारा सहायता की जाती थी। वारेन हेस्टिंग्स द्वारा अपनाई गई न्याय की स्कीमों में वो प्रमुख विशेषताएँ थीं। पहली, उसने भारतीय प्रांतों पर अंग्रेजी विधि लागू नहीं की थी; और दूसरी, हिन्दु और मुस्लिम विधियों को समान रूप से माना जाता था। दांडिक न्याय का प्रशासन नवाबों के हाथों में बना रहा और इसलिए, मुस्लिम दांडिक विधि प्रवृत्त रही। ये न्यायालय राजधानी में थे। देश के शेष भागों में न्याय का प्रशासन जमीदारों के हाथों में था। बंगाल और मद्रास में मुस्लिम दांडिक विधि प्रवृत्त थी। बास्ते प्रेसिडेंसी में हिन्दु दांडिक विधि और मुसलमानों को मुस्लिम दांडिक विधि लागू होती थी। हिन्दु विधि का प्रमुख ग्रंथ व्यवहार मयूर था किन्तु हिन्दु दांडिक विधि एक प्रकार से निरंकृत और पुरोहित प्रपंज की पद्धति थी। इसमें सभी लोप विधि के समक्ष समान नहीं थे तथा दंड भी विभेदकारी थे।<sup>6</sup>

1773 में, रेग्लैटिंग ऐक्ट पारित हुआ था, जिसने दांडिक न्याय के प्रशासन को प्रभावित किया। उस अधिनियम के अधीन एक गवर्नर जनरल नियुक्त किया गया था और चार काउंसेलरों द्वारा उसकी सहायता की जाती थी। फौर्ट विलियम, बंगाल में एक सुप्रीम कोर्ट स्थापित किया गया था। यह न्यायालय सिविल, दांडिक, नावधिकरण तथा गिरजाधार संबंधी सभी मामलों का संज्ञान करता था। सुप्रीम कोर्ट के निर्णय के विरुद्ध किंग इन काउंसिल को अपील होती थी। ऐसे सभी अपराधों का, जिनका विचारण सुप्रीम कोर्ट द्वारा किया जाता था, कलकत्ता निवासी ब्रिटिश प्रजा की एक ज्यूरी द्वारा विचारण किया जाता था। गवर्नर जनरल, गवर्नर या सुप्रीम कोर्ट के किसी न्यायाधीश द्वारा किया गया कोई अपराध इंलैंड में किंस बैंच द्वारा विचारणीय था। उस चार्टर आफ जस्टिस की तारीख 26 मार्च, 1774 थी, जिसने सुप्रीम कोर्ट की अधिकारिता की नींव रखी तथा कलकत्ता में प्रशासित न्याय 1861 के अधिनियम के अधीन हाई कोर्ट के स्थापित होने तक ऐसा ही बना रहा।

1781 में, रेग्लैटिंग ऐक्ट की खामियों को दूर करने के लिए संशोधनकारी अधिनियम पारित किया गया था। इस अधिनियम ने, न्याय के लिए प्रार्थीय न्यायालयों का गठन करने और उनसे होने वाली अपीलों की सुनवाई के लिए एक समिति नियुक्त करने के लिए गवर्नर जनरल इन काउंसेल की शक्तियां और परिमाण अधिकृत की। गवर्नर जनरल को इन न्यायालयों के मार्गदर्शन के लिए विनियम बनाने की शक्ति थी। उस समय बंगाल में हिन्दु और मुसलमान दोनों को, मुस्लिम दांडिक विधि लागू थी।

1793 में, लार्ड कार्नवलिस की गवर्नर जनरलिशप के अंतिम दिनों में, कंपनी में चार्टर के नवीकरण के लिए कुछ कदम उठाए गए। तदनुसार, 1793 का अधिनियम पारित किया गया कठिप्रय जिसमें कठिप्रय पूर्ववर्ती अध्युपायों को समेकित और निरसित किया गया।

1.03. बंगाल के मुफसिल नगरों में जिला और नगर न्यायालयों में विधि अधिकारियों को, जो सदर अमीन और प्रधान सदन अमीन होते थे, दांडिक अपराधों में सीमित शक्तियां दी गई थीं। वे 50 रुपए तक का जुर्माना कर सकते थे और केवल एक मास तक का साधारण सप्रम कारावास दे सकते थे। उनके विनियम के विरुद्ध अपील मजिस्ट्रेट ज्वाइंट मजिस्ट्रेट को की जाती थी। ऐसे अपराधों का, जिनके लिए कठोर दंड विधित था, विचारण मजिस्ट्रेटों द्वारा किया जाता था, जो वो वर्ष तक का सप्रम या साधारण कारावास अधिरोपित करने के लिए सशक्त थे। कुछ सदायक मजिस्ट्रेट और डिप्टी उप मजिस्ट्रेट भी थे, किन्तु उनके पास पूर्ण दंडाधिकारी शक्ति नहीं थी। ऐसे अपराध, जिनमें भारी दंड अपेक्षित होता था, सत्र न्यायाधीश को अंतरित कर दिए जाते थे। सत्र

न्यायाधीशों द्वारा दिए गए मृत्युदंड और आजीवन कारावास निजामत अदालत द्वारा पुष्टि के अध्ययन थे। सत्र न्यायाधीशों के विनियमों के विरुद्ध अपील निजामत अदालत को होती थी। 1833 तक बंगाल में दांडिक न्याय प्रशासन का यही स्वरूप था।

मद्रास में, जिला दुपुरों की सीमित दांडिक अधिकारिता थी। वे 200 रुपए तक जुर्माना या/और एक मास तक का कारावास का दंड दे सकते थे। 1815 के रेग्लैटिंग 10 द्वारा मजिस्ट्रेटों को एक वर्ष तक का कारावास अधिरोपित करने की शक्ति दी गई थी। सदर अमीन भी होते थे जो तुच्छ प्रकृति के मामलों का विचारण करते थे। गंभीर अपराधों को विचारण के लिए सत्र न्यायाधीश को भेजा जाता था। राज्य के विरुद्ध अपराध फौजदारी अदालत को विनियमित किए जाते थे। फौजदारी अदालत, मद्रास प्रेसिडेंसी में मूल्य दांडिक न्यायालय थी और उसमें वे सभी शक्तियां निहित थीं, जो बंगाल में निजामत अदालत को दी गई थीं।

बंगाल में दांडिक न्याय का प्रशासन कुछ छोटे-मोटे परिवर्तनों सहित बंगाल और मद्रास प्रेसिडेंसी के पैटर्न पर ही था।

बंगाल, मद्रास और बास्ते के न्यायालयों में व्यवहार और प्रक्रिया, विनियमों द्वारा विधित की जाती थी जो समय-समय पर पारित किए जाते थे। बंगाल में 1793 से 1834 तक 675 विनियम पारित किए गए थे। मद्रास में 1800 से 1834 तक 250 विनियम पारित किए गए थे और बास्ते में उसी अवधि के दौरान 259 विनियम पारित किए गए थे।

1.06 ब्रिटिश भारत में प्रचलित भारतीय दंड संदिता अथवा आपराधिक विधि संदिता का इतिहास 1833 से प्रारंभ होता है। इस वर्ष के पूर्व रिफार्म बिल आ चुका था। यह एसी अवधि थी, जो विधि सुधार के विषय और विशेष रूप से दांडिक विधि के सुधार से परिपूर्ण थी। परोक्ष रूप से, भारतीय दंड संदिता का श्रेय बेन्थम को जाता है जो विधि सुधार के विषय पर तत्कालीन सर्वश्रेष्ठ लेखक था, जिसकी मृत्यु एक वर्ष पहले हुई थी। बेन्थम के प्रिय शिव्य जैम्स मिल ने, बेन्थम के विचारों के प्रभाव के अंतर्गत ब्रिटिश इंडिया का इतिहास लिखा था। इस प्रकार एक व्यापक कारक के रूप में उन दोनों लेखकों के प्रभाव के कारण, भारत के लिए व्यापक विधान की आवश्यकता तीव्र और व्यापक रूप से मद्दसूस की गई थी।

1.07 1833 में, मैकाले ने भारत में सम्पूर्ण दांडिक विधि की संदिता करने और उसमें एक रूपता लाने के लिए हाउस आफ कामन में एक प्रस्ताव पेश किया। लार्ड मैकाले ने, ब्रिटिश पार्लियमेंट में विधेयक पर बोलते हुए कहा—

“मुझे विश्वास है कि इसके पूर्व किसी भी देश को संदिता की इतनी आवश्यकता नहीं थी जितनी भारत को है और मुझे यह भी विश्वास है कि ऐसा कोई भी देश नहीं था जिसमें इस आवश्यकता को इतने संदर्भरूप से पूरा किया जा सकता हो। हमारा सिद्धांत मात्र यह है—एक रूपता, जब आप इसे पा सकते हों, भिन्नता या असमानता जब यह आवश्यक हो किन्तु सभी मामलों में निश्चितता।”<sup>7</sup>

लार्ड मैकाले ने, हाउस आफ कामन को यह भी बताया कि मुसलमान कुरान द्वारा शासित थे और बास्ते प्रेसिडेंसी में हिन्दु मनुस्मृति द्वारा शासित होते थे। विधि के बिंदुओं और काजियों से परामर्श किया जाता था तथा कठिप्रय बातों में न्यायालय के विनियम समनाने होते थे। इस प्रकार, 1833 का वर्ष भारत में संदिताकरण के इतिहास में अधिक महत्वपूर्ण है। 1833 के चार्टर ऐक्ट ने सम्पूर्ण ब्रिटिश भारत के लिए एक विधान-मंडल पुरस्थापित किया। विधान-मंडल को प्रेसिडेंसी नगरों और साथ ही मुफसिल क्षेत्रों के लिए एक समान हिन्दुओं और मुसलमानों के लिए विधान बनाने की शक्ति थी।

1.08 तदनुसार, 1833 का चार्टर ऐक्ट (3 और 4 बिल IV/सी० 858 पारित किया गया था, जिसके द्वारा भारत के गवर्नर जनरल को सम्पूर्ण भारत के लिए विधान बनाने के लिए सशक्ति की अधिनियम के अधीन एक

तब से अब तक काफी समय बीता और अनेक नई समस्याएं तथा मुद्रे प्रकाश में आ गए जिनके कारण भारतीय दंड संहिता (संशोधन) विधेयक, 1978 के उपबंधों के प्रति विशेष निर्देश संहित भारतीय दंड संहिता का और व्यापक पुनरीक्षण करने की आवश्यकता उत्पन्न हो गई है। संशेष में, यही वह प्रयोजन था जिसके लिए भारत सरकार ने, विधि आयोग से वर्तमान सामाजिक विधिक परिदृश्य के आलोक में, पूर्वोक्त विधेयक के प्रति विशेष निर्देश के साथ भारतीय दंड संहिता के पुनरीक्षण का कार्य आरंभ करने का अनुरोध किया था।

इस पृष्ठभूमि में भारतीय दंड संहिता का, विशेष रूप से भारतीय दंड संहिता (संशोधन) विधेयक, 1978 के प्रतिनिर्देश संहित, पुनरीक्षण करने के लिए व्यापक अध्ययन आरंभ किया गया।

1.11 सुसंगत मुद्रों पर लोक अभिमत प्राप्त करने के लिए आयोग ने एक विस्तृत प्रश्नावली और प्रमुख मुद्रों की बाबत एक कार्यपत्र भी सभी राज्य सरकारों, सभी राज्यों के पुलिस महानिदेशकों, उच्चतम न्यायालय, उच्च न्यायालय न्यायाधीशों, विधिज्ञ संगमों, विधि के आचार्यों, अधिवक्ताओं और गैर-सरकारी संगठनों को परिचालित की थी। प्राप्त विभिन्न उत्तरों पर विचार किया गया था (दिखाए उपाबंध)। आयोग ने, हैदराबाद में, विशाखापत्न, गोवा, शिमला में अनेक कार्यशालाएं आयोजित की थीं तथा नई दिल्ली में एक राष्ट्रीय संगठनों भी आयोजित हुई थीं। इन सभी स्थानों पर, आयोग को न्यायाधीशों, वरिष्ठ वकीलों, पुलिस अधिकारियों, विधिक शिक्षाविदों तथा गैर-सरकारी संगठनों के साथ विचार-विमर्श का फायदा मिला था। इन सभी कार्यशालाओं में भारतीय दंड संहिता (संशोधन) विधेयक, 1978 के सभी ढंगों पर खुल कर चर्चा की गई थी। सधन अध्ययन करने के पश्चात, आयोग ने, महत्वपूर्ण मुद्रों पर ध्यान केन्द्रित करने के अतिरिक्त, एक पृथक अध्ययन में विधेयक के प्रत्येक खंड पर चर्चा की है तथा 1978 से अब तक नई विचारधाराओं को ध्यान में रखते हुए, व्यापक सिफारिशें की हैं तथा नए विधेयक के पुरस्थापन से पूर्व उन पर सम्यक रूप से विचार किया जाना चाहिए।

तथापि, इस प्रक्रम पर, हम यह भी उल्लेख कर सकते हैं कि विधेयक के खण्ड 197 के अधीन विद्यमान अध्याय 19 के स्थान पर एक नया अध्याय, जिसका संबंधित वही हो (अध्याय 19) अंतस्थापित किया जाना चाहिए जो “एकांतता संबंधी अपराध” के संबंध में हो। विद्यमान अध्याय 19 में तीन धाराओं, उत्तरांश धारा 490, 491 और 492 का उल्लेख है किन्तु उनमें से धारा 490 और 492 निरसित हो चुकी है तथा एकमात्र धारा 491 असहाय व्यक्तियों के संविदागत अधिकारों के संरक्षण के लिए “संविदा का भंग” के संबंध में है। प्रस्तावित नए अध्याय 19 में, जो विद्यमान अध्याय के स्थान पर प्रस्थापित किया जाना है, धारा 491 से 492 तक उल्लिखित है और वे “एकांतता संबंधी अपराधी” के संबंध में हैं, जैसे कृत्रिम श्रवण या अभिलेख संबंधित का व्यक्तियों के ज्ञान या सम्मति के बिना वार्तालाप सुनने या अभिलिखित करने के लिए उपयोग अथवा अपराधीकृत छायाचित्र आदि लेना। हमने इस खंड पर अध्याय 12 में, ब्रायलीसीरीज़ रिपोर्ट की विषय वस्तु का सम्यक रूप से निर्देश करने के पश्चात और साथ ही सविधान के अनुच्छेद में 21 यथा विस्तारित एकांतता के अधिकार की संकल्पना के प्रति निर्देश के पश्चात विस्तृत रूप से चर्चा की है और साथ ही विदेशी विधि आयोगों की गई है तथा अंततोगत्वा यह सिफारिश की गई है कि ये अपराध समुचित रूप से भारतीय दंड संहिता में शामिल नहीं किए जा सकते और एकांतता संबंधी ऐसे अपराधों से व्यापक तौर पर निष्टाने के लिए, एक पृथक विद्यमान होना चाहिए। यह भी उल्लेखनीय है कि विधि आयोग इस विधि पर पृथक रूप से यथा संभव शीघ्र व्यापक अध्ययन करने का प्रस्ताव कर रहा है।

\*

#### पाद टिप्पण

1. नेलसन, “इंडियन पेनलकोड” (1897) पृष्ठ 4।
2. रत्नलाल और धीरजलाल “दि इंडियन पेनल कोड” (1982)।
3. योग्यकृत पृष्ठ II।
4. योग्यकृत।
5. योग्यकृत।
6. योग्यकृत पृष्ठ iii।
7. दीवान अनिल, “इंडियन एडवोकेट”, बाल्यम 25, पृष्ठ 8।

#### अध्याय 2

#### दंड और दंड देना—नीति और प्रक्रिया

संवेधानिक लोकतंत्र के उचित कार्यकरण के लिए दांडिक विधि का स्वस्थ प्रशासन अनिवार्य है। यह दांडिक विधि ही है जो समाज का व्याप्तियों अथवा व्यष्टि समूहों के आशयपूर्ण और आपराधिक कृत्यों से संरक्षण करती है। दांडिक विधि अनेक निवारक अध्युपाय भी विहित करती है। क्योंकि यह बात सुस्थापित है कि निवारण, उपचार से बेदर है। तथापि, हमें चतुरमुखी अनवरत तीव्र विकास को ध्यान में रखते हुए, अपराध और उसके दंड की समस्याओं पर अपने अभिमत दुहराने होगे।

2.02. वह प्रयोजन, जो दंड से प्राप्त होता है अथवा जिसका प्राप्त होना अपेक्षित है, चतुरमुखी है।<sup>1</sup> प्रथम प्रतिशोध, अर्थात् आंख के बदले आंख अथवा दांत के बदले दांत लेना। इसके पीछे उद्देश्य यह है कि समाज की खतरनाक व्यक्तियों की लूटपाट से रक्षा की जाए और इसलिए यदि एक व्यक्ति दूसरे की आंख निकाल लेता है तो बदले में उसकी आंख निकाली जाती है। हमारी वर्तमान सामाजिक दशाओं की स्थिति और मानव मनोविज्ञान की समझ के परिप्रेक्ष्य में, दंड के इस रूप को समाज का सामान्य अनुमोदन नहीं मिल सकता है।

दंड देने का दूसरा प्रयोजन निवारक है। हमें विश्वास है कि मोरे गए कारावास का दंड सिद्धोष आंख खोलने वाला होगा और वह निश्चित रूप से पुनः अवैध कार्य करने का साहस नहीं करेगा।

मध्य दिखाकर निवारण एक अन्य उद्देश्य है जिसे दंड से अभिप्राप्त करना अपेक्षित है। सिद्धोष द्वारा भोगे गए दंड का अवतरण तथा न्यायालय द्वारा उसकी दोषसिद्धि का अभिनिधारण का अपना प्रभाव होना संभाव्य है और वह अन्य व्यक्तियों को वैसे ही अवैध कृत्यों में लगने से प्रवृत्त करने वाला होना चाहिए।

दंड के प्रतिशोधात्मक, भयोपकारी और निवारक सिद्धांतों के विरुद्ध अपराधियों को पुनः समझाने के अध्युपाय के रूप में, दंड के प्रति सुधारात्मक अभिगम पुनर्वास पर जोर देता है ताकि अपराधी अच्छे नागरिकों के रूप में रूपांतरित हो जाए।

समय-समय पर विभिन्न सिद्धांतों का पुनर्विलोकन किया गया है। प्रायश्चित का सिद्धांत तथा प्रतिशोध का सिद्धांत अब प्रचलन में नहीं रह गए हैं। भयोपकारी सिद्धांत के बारे में भी कुछ न्याय शास्त्रियों की अपनी आशंकाएं हैं। उन्हें संदेह है कि क्या इसमें अतिरिक्त कोई ऐसी बात है जो जिसका लक्ष्य समाज का संरक्षण हो।

2.03. मृत्यु दंड के उत्सादन के प्रश्न पर विचार करते समय, जिसकी अगले अध्याय में हम समीक्षा करेंगे, यह उचित रूप से महसूस किया जाता है कि भयोपराति परिस्थितियों के अनुसार, उचित मामलों में कार्य करती है और इसे पूरी तरह दांडिक न्याय के प्रशासन से हटाया नहीं जा सकता है। कुछ ऐसे निश्चित किस्म के अपराध होते हैं जो जिनके लिए भयोपकारी दंड आवश्यक है। आर्थिक अपराधों की बढ़ती हुई विभीषिका भयोपकारी दंड देने की अपेक्षा करती है और कारावास का न्यूनतम दंड अनिवार्य बनाया जाना चाहिए। आर्थिक अपराधों से संबंधित कतिपय अधिनियमितियों में हमें ऐसे उपबंध मिलते हैं।

किन्तु साथ ही साथ कतिपय ऐसे अपराध हैं जो, परिस्थितियों की पृष्ठभूमि की जांच करने पर, भयोपकारी दंड की अपेक्षा नहीं करते हैं। किशोर अपचारिता के मामले में, यह सुधारात्मक सिद्धांत ही है जिसे मुख्य रूप से मान्यता मिली है। क्रमबद्ध सुधार द्वारा किशोर अपराधियों को, दांडिक गतिविधियों का आश्रय लेने से सफलतापूर्वक निवारित किया जा सकता है तथा अपराध की प्रवृत्ति रोकी जा सकती है। यदि उन्हें अकृता छोड़ दिया जाता है तो वे ऐसा कठोर अपराधी बन करके, जैसाकि वे मानसिक रूप से हो जाएंगे, समाज के लिए घोर विभीषिका साबित हो सकते हैं। मानसिक विकास पर ही सुधारात्मक सिद्धांत अपना जोर देता है।

2.04. शरीर और संपत्ति संबंधी अपराधों के अन्य प्रकारों पर विचार करते समय, हम यह पाते हैं कि दंड देने के मामले में, भारतीय दंड संहिता के उपबंध समय की परीक्षा में खरे उतरे हैं। अपराध की गुरुता के अनुसार, दंड घटता बढ़ता है। साधारणतः यह महसूस किया गया है कि अत्यधिक उदारता न्याय के लक्ष्य को पूरा नहीं कर पाती। किन्तु न्यायालय बहुधा सदैव ही कठोर दंड देने के लिए साधारण तौर पर अनिच्छुक देखे गए हैं। इसलिए, यह सुस्थापित है कि दंड देना एक कला है जिसमें विभिन्न उपायों का संतुलन अंतर्गत है।

यह स्वीकृत है कि दंड अपराध का प्रकटन मात्र है जिसका दूसरा अद्वैत प्रथम में और स्वयं दांडिक न्यायाधीशों के कृत्य में अनिवार्य: पूर्वानुमानित है। दंड देने वाले प्रायिकारी के रूप में राज्य कभी भी प्रतिशोध की मावना से विचार नहीं करता है तथा प्रतिशोध पुरानी धारणा का आधुनिक विश्व में स्थान नहीं रह गया है। हमारी दांडिक विधियां, विशेष रूप से भारतीय दंड संहिता, न्यायालय को विहित दंड देने में उदार छूट प्रदान करती हैं। अधिरोपण के मामले में, भयोपकारी रूप में दंड से दुड़रा प्रयोजन-



विभिन्न देशों में प्रचलित दंड प्रणाली के सर्वेक्षण से यह पता लगेगा कि भयोपरित की धारणा को दाढ़िक विधि की आधुनिक नीति से पूरी तरह तुपत नहीं किया जा सकता। तथापि, दंड के सुधारात्मक सिद्धांत को समुचित महत्व मिला है और इसका लक्ष्य इस बात पर जो ए देकर सुधार करना है कि अपराधी को निरोध द्वारा दंडित किए जाते समय उसकी शिक्षा, स्वास्थ्य और सुधारात्मक प्रभाव की ओर ले जाने की भी आवश्यकता है। यदि अपराधी को पुनःशिक्षित किया जा सकता है और उसके चरित्र की विशेषताओं को पुनः प्रकाश में लाया जा सकता है तो उसे एक बार फिर समाज की प्रमुख धारा में रखा जा सकता है।

2.09 अब दंड देने के संबंध में विचार करें तो विभिन्न कार्यशालाओं में इस नीति पर यह बात कही गई है कि अधिरोपित की जाने वाली जुमनि की रकम पर्याप्त रूप से बढ़ाई जानी चाहिए। यथासंभव इसे अल्पकालीन कारावास के स्थान पर रखा जाना चाहिए। यह भी अभिव्यक्त किया गया है कि दाढ़िक विधि के उपयोग और दुरुपयोग से आहत निर्धन व्यक्तियों को क्षतिपूर्ति के लिए प्रतिपूरित किया जाना चाहिए और यह भी कि काफी समय पूर्व विहित जुमनि की रकमों की अब आधुनिक काल में सुरक्षित और प्रभाव नहीं रह गया है और अधिरोपित किए जाने वाले जुमनि का समाज की आर्थिक संरचना से कोई संबंध नहीं है तथा उसमें भयोपरित के आवश्यक तत्व का प्रायः अभाव रहता है।

संहिता की उन विभिन्न धाराओं की, जहाँ जुमनि के दंड का उपबंध किया गया है, परीक्षा करने से यह पता चलता है कि जुमनि की न्यूनतम रकम 100 रुपए से लेकर एक हजार रुपए तक है। अधिकतर अपराधों की बाबत यह पांच सौ रुपए से कम है। अतः उन धाराओं में कम से कम बीस गुणा जुमनि की मात्रा की बाबत परिवर्तन किया जाना चाहिए तथा ऐसा जुमना अधिरोपित करने के लिए प्रथम श्रेणी मजिस्ट्रेटों की शक्तियों की बाबत दंड प्रक्रिया संहिता में एक उपबंध किया जाना चाहिए।

जुमनि के साथ एक मुख्य समस्या त्रुटिकर्ता की बाबत है। इस परिप्रेक्ष्य में अपराधी की वित्तीय प्राप्तियां भी सुरक्षित हो जाती हैं। एक अन्ती व्यक्ति जुमनि का संदाय कर सकता है और उसमें त्रुटि के कारण कारावासित किए जाने से बच सकता है जबकि एक निर्धन व्यक्ति को, जो जुमनि का संदाय नहीं कर सकता है, कारावास भूगतना पड़ता है।

2.10 सारियकीय सर्वेक्षण से पता चलता है कि दाढ़िक न्यायालयों द्वारा जुमनि का अधिरोपण पहले की अपेक्षा बहुत अधिक है। एक अकिञ्चन अभियुक्त द्वारा जुमनि के संदाय की बाबत समस्या को सुधारने के लिए यह प्रश्नसंबंधी दोगा कि उससे किस्तों में, अर्थात् अपराधी के संसाधनों से संबंधित विभिन्न शास्त्रियों के बीच प्रवर्गीकरण करके संदाय कराया जाए। कुछ प्रख्यात न्यायशास्त्रियों ने यह संप्रेक्षण किया है कि जुमनि की किस्तों में अदायगी का प्रावधान, करवाता का तथा कैदी को दितकर अनुभव तथा प्रासादिक नैतिक परिण से बचाने के अतिरिक्त, अपराधी के कुटुम्ब पर हितकर प्रभाव डालता है। त्रुटिकर्ताओं के मामले में, वहाँ भी जहाँ ऐसा फायदा दिया जाता है, कुछ अन्य प्रक्रियाएँ भी विकसित की जा सकती हैं। उसे जेल से बाहर, अर्थात् बांध, सड़क या ग्रामीण संरचना जैसी लोक परियोजनाओं पर अनिवार्य रूप से कार्य करने के लिए लगाया जा सकता है। इस प्रकार यथासंभव दंड के रूप में जुमनि के अनेक फायदे, उसका सुधारात्मक उपचार होने के अतिरिक्त भी है। इस प्रकार संगृहीत जुमनि का उपयोगी तौर पर राज्य द्वारा उपयोग किया जा सकता है। निसदेह कुछ हानियां भी जानकारी में आई हैं। उनमें से एक यह है कि व्यवहार में जुमनि अपराध के प्रति समायोजित किए जाते हैं और इसलिए उनको धनी और निर्धन को असमान रूप से वहन करना पड़ता है। जुमनि का भय समृद्ध लोगों को कतिपय अपराध करने से रोकता नहीं है। इसमें संरेह नहीं कि कुछ अक्षेपों का कुछ महत्व है किन्तु समग्र रूप से देखने पर इस बात से इंकार नहीं किया जा सकता कि विधि के प्रवर्तन में जुमनि एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं, किन्तु वे ठोस विवेक और विशेष रूप से संदाय के साधनों को समझते हुए अधिरोपित किए जाएं। फिर भी, जुमनों का प्रयोग अभ्यस्त अपराधियों, वेश्याओं, औषधि अभ्यस्तों के संबंध में नहीं किए जाने चाहिए क्योंकि उनपर जुमनि के अधिरोपण से कोई प्रत्याशित सुधारात्मक परिणाम नहीं मिल सकता।

इस पृष्ठभूमि संहित द्वारा विधेयक में प्रस्तावित दंड के विभिन्न प्रकारों की जांच करने की प्रस्थापना करते हैं।

2.11 संहिता के अध्याय 3की धारा 53 से 75 तक उन दंडों के संबंध में है जो संहिता के अधीन दिए जा सकते हैं। विधेयक का खंड 18 एक नई धारा द्वारा 53 के प्रतिस्थापन के लिए उपबंध करता है जो निम्नवत है:—

- “53. दण्ड—किसी अपराध के लिए दोषसिद्धि पर निम्नलिखित दंड दिए जा सकते हैं, अर्थात्:—
- मृत्यु;
  - आजीवन कारावास, जो कठिन, अर्थात् कठोर श्रम के साथ होगा;
  - किसी अवधि के लिए कारावास को—
    - कठिन, अर्थात् कठोर श्रम के साथ, या
    - सादा, अर्थात् अल्प श्रम के साथ, हो सकेगा;

- (iv) सामुदायिक सेवा;
- (v) पदधारण करने से निरहता;
- (vi) प्रतिकर के संदाय के लिए आदेश;
- (vii) सम्पत्ति का समपदरण;
- (viii) जुमना;
- (ix) लोक परिनिवास।”

इन पाते हैं कि प्रस्तावित धारा में आजीवन कारावास कठिन, अर्थात् कठोर श्रम सदित होगा। कारावास का यह वर्णन विद्यमान धारा में नहीं है। इसी प्रकार सादा कारावास भी अन्य श्रम के साथ हो सकता है।

इसमें दंड के चार नए प्रकार, अर्थात् (i) सामुदायिक सेवा, (ii) पदधारण करने से निरहता, (iii) प्रतिकर के संदाय के लिए आदेश और (iv) लोक परिनिवास समिलित है। धारा 35 में दंड, अर्थात् “आजीवन निष्कासन”, 1959 के अधिनियम 26 द्वारा “आजीवन कारावास”, शब्दों द्वारा प्रतिस्थापित किया गया था। धारा 53क, जो 1959 के अधिनियम 26 द्वारा जोड़ी गई है यह कहती है कि हर मामले में, जिसमें किसी अवधि के लिए निवासिन का दंडादेश दिया गया है, दंडादेश को उसी रीति में व्यवहृत किया जाएगा जैसे यह उसके लिए कठिन कारावास हो। वे प्रश्न जो अद्यात्मा न्यायालयों के समक्ष उठते हैं, यह है कि क्या “आजीवन निवासिन”, के दंडादेश से “आजीवन कारावास” अभिग्रहित है। विधि आयोग ने, अपनी 39वीं रिपोर्ट में यह कहा है कि ऐसा कोई स्पष्ट उपबंध नहीं है कि आजीवन कारावास के लिए दंडादेश व्यक्ति को, अब विधि जैसी है उसके अधीन इस प्रकार बरता जाएगा, अर्थात् क्या इसे वैसा ही होना चाहिए जैसाकि आजीवन कठिन कारावास का अथवा आजीवन सादा कारावास का दंडादेश है और क्या यह दंड अवधि में वैभिन्न होने के बावजूद, जबकि किसी भार्ती के कारावास का दंडादेश अथवा विनिर्दिष्ट अवधि के लिए दंडादेश गुणता में प्रियोग है और क्या अनुज्ञय है कि आजीवन कारावास के लिए दंडादेश परिवर्तन करना विधित: अनुज्ञय है कि आजीवन कारावास अपेक्षित है। “शंकाओं के निराकरण” की दृष्टि से आजीवन कारावास कठिन दंड होगा। अनुरूपत: आजीवन कारावास को कठिन बनाने वाला प्रस्तावित संसोधन आवश्यक है। अन्य परिवर्तन, अर्थात् सादा कारावास, कठिन कारावास की तुलना में अल्पश्रम सदित हो सकता है, एक वांछनीय परिवर्तन है।

2.12 अब दंड के रूप में “सामुदायिक सेवा” पर विचार करते समय प्रश्न यह उठता है कि क्या यह व्यवहार्य है। सामुदायिक सेवा के रूप में दंड एक नई धारणा है और यह सुधारात्मक सिद्धांत से निकटतः संबंध है। “दिव्यलोके आपके सिनिसमेंट आपकी सिनिसिनौटी, ओयो मिटिंग आपके फर्स्ट कॉर्प्रेस 1880” में यह संप्रेक्षण किया गया था “वर्तमान विद्या का सर्वोच्च लक्ष्य अपराधियों का सुधार करना है, निर्धन पीड़ित व्यक्तियों पर दंड का अधिरोपण नहीं।” इसी के अनुसार, अखिल यह एक स्वीकृत सिद्धांत है कि दंड का चरम उद्देश्य समाज विरोधी व्यक्ति को अच्छा नागरिक बनाना है। पुनर्वास और कैदियों की उल्लीला वायु जेल प्रणाली का सुझाव दिया था। पुनर्वास और अनुकूलन देकर, अभिप्राप्त करने के लिए उल्लीला वायु जेल प्रणाली की सिफारिश की जाती है। यह मान्य है कि कैदियों को सामाजिक रूप से पुनर्वासित करने की दृष्टि से उन्हें काम में नियोजित किया जाना चाहिए जो उन्हें निर्मुक्ति के पश्चात उपयोगी तथा लाभकारी नियोजन के लिए तैयार करेगा। यह भी ध्यान में रखना है कि इस उल्लीला वायु जेल प्रणाली में कैदी एक सीमा तक स्वतंत्रता का उपभोग करता है किन्तु जारी की जाने वाली सेवा, इसमें संदेह नहीं कि सुधारात्मक पद्धतियों की दिशा में एक नूरन प्रयोग है किन्तु जैसाकि अनेक शरणारोगी के अधीन करने की जांच करने की प्रस्थापना करते हैं।

विधेयक का खंड 27 के बाद सामुदायिक सेवाओं के दंड की बाबत एक नई धारा 74क को अंतःस्थापित करने के लिए उपबंध करती है:

“74क.(1) जहाँ कोई व्यक्ति जो अठारह वर्ष से कम आयु का नहीं है तीन वर्ष से अनधिक की अवधि के लिए किसी भार्ती के कारावास से, या जुमनि से, अथवा दोनों से, दण्डनीय किसी अपराध का सिद्दादेश ठहराया जाता है, वहाँ न्यायालय, उसे पूर्वोक्त प्रकार से दण्डित करने अथवा उसके संबंध में किसी अन्य रीति से कार्यवाही करने के बजाय ऐसा आदेश पास्त करने के सकेगा (जिसे इस धारा में इसके पश्चात सामुदायिक सेवा आदेश कहा गया है) जिसमें उससे यह अपेक्षा की जाएगी कि वह नकद अथवा वस्तु रूप में किसी भी प्रकार के पारिश्रमिक के बिना ऐसा काम, इतने घण्टों तक और ऐसे निवंधनों तथा शरणों के अधीन करे जो उक्त आदेश में विनिर्दिष्ट किया जाए:

परन्तु घण्टों की संख्या, जिन तक किसी व्यक्ति से कोई सामुदायिक सेवा आदेश के अधीन काम करना अपेक्षित होगा चालीस घण्टे से कम और एक हजार घण्टे से अधिक नहीं होगा:

परन्तु यह और कि न्यायालय किसी ऐसे व्यक्ति के संबंध में कोई सामुदायिक सेवा आदेश उस दशा के सिवाय नहीं करेगा जब—

(क) पेंसा व्यक्ति ऐसे आदेश के अधीन अपेक्षित काम करने की लिखित सहमति देता है;

(ब) न्यायालय का समाधान हो जाता है कि ऐसा व्यक्ति अपेक्षित काम करने के लिए उपयुक्त व्यक्ति है और उसे ऐसा काम उचित पर्यवेक्षण के अधीन करने के वास्ते समर्थ बनाने के प्रयोजन के लिए राज्य सरकार या किसी स्थानीय प्राधिकारी द्वारा उस क्षेत्र में प्रबंध कर दिया गया है जिसमें ऐसे व्यक्ति से ऐसा काम करने की अपेक्षा की गई है।

(2) उपधारा (1) के अधीन किए गए प्रत्येक सामुदायिक सेवा आदेश में ऐसे व्यक्ति द्वारा किए जाने वाले कार्य का स्वरूप विनिर्दिष्ट होगा जो समाज के सामान्य लाभ के लिए होगा।

(3) जहाँ उस व्यायालय का जिसने कोई सामूदायिक सेवा आदेश दिया है, किसी समय समाधान हो जाता है कि—

(क) कोई व्यक्ति, जिसके विरुद्ध उपधारा (1) के अधीन सामुदायिक सेवा आदेश दिया गया है, युक्तियुक्त कारण प्रतिवेतु के बिना उन निर्बंधनों और शर्तों में से किसी की पूर्ति करने में असफल रहा है जो ऐसे आदेश में विनिर्दिष्ट है; या

(ख) सामुदायिक सेवा आदेश देने की तारीख के पश्चात् विद्यमान परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए, न्याय के द्वितीय में ऐसा करना आवश्यक या समीचीन है, तो वह—

(i) खंड (क) के अधीन आने वाले मामले में सामुदायिक सेवा आदेश को उपांतरित या प्रतिसंहृत कर सकेगा और अपराध के सिद्धान्त व्यवित के संबंध में, ऐसी रीति से कार्यवाही कर सकेगा जिससे उसके बारे में उस अपराध के लिए कार्यवाही की जा सकती थी जिसके बारे में ऐसा आदेश दिया गया था या सामुदायिक सेवा आदेश के प्रवर्तन के जारी रहने पर प्रतिकूल प्रभाव ढाले बिना उस पर एक सौ रुपए से अनधिक का जुर्माना अधिरोपित कर सकेगा :

(ii) खंड (ख) के अधीन आने वाले मामले में सामुदायिक सेवा आदेश को उपर्युक्त या प्रातिसङ्गत कर सकेगा और अपराध से सिद्धांश ठहराए गए व्यक्ति के संबंध में ऐसी रीति से कार्यवाही कर सकेगा जिससे उस अपराध के संबंध में कार्यवाही की जा सकती थी जिसके बारे में ऐसा आदेश दिया गया था।

(4) जहां कोई न्यायालय एक ही विचारण में दो या अधिक अपराधों से सिद्धोष किसी व्यक्ति के खिलाफ दो या अधिक सामुदायिक सेवा आदेश देता है वहां वह निदेश दे सकेगा कि किसी सामुदायिक सेवा आदेश के अधीन जितने घण्टों के लिए सेवा करने की अपेक्षा है वे न्यायालय द्वारा उसी विचारण में किए गए सामुदायिक सेवा आदेशों में से किसी के अधीन काम के घण्टों के समर्वर्ता या उनके अतिरिक्त होंगे किन्तु इस प्रकार ऐसे व्यक्ति द्वारा ऐसे सामुदायिक सेवा आदेशों में से सभी या किसी के अधीन काम करने के घण्टों की कुल संख्या एक हजार घण्टों से अधिक नहीं होगी।

2.13 इस नई धारा के सतके पाठन से यह प्रदर्शित होता है कि सामुदायिक सेवा का दंड किसी ऐसे व्यक्ति को, जो 18 वर्ष से अधिक आयु का है और जो तीन वर्ष से अनधिक अवधि के लिए किसी भाँति के कारावास से या जुमानि से या दोनों से दंडनीय किसी अपराध का सिद्धदोष है, दिया जा सकता है और न्यायालय उस व्यक्ति को जेल भेजने या किसी अन्य रीति से परखने के बजाए एक आदेश, अर्थात् “सामुदायिक सेवा आदेश” उक्त सिद्धदोष से किसी परिश्रमिक के बिना ऐसा कार्य, ऐसे घटों के लिए, करिपय निबंधन और शर्तों के अध्यधीन रहते हुए, करने की अपेक्षा की बाबत कर सकेगा। दूसरे शब्दों में, सामुदायिक सेवा आदेश नाम से जात आदेश दंड के रूप में दोषसिद्धि के पश्चात्, प्रस्तावित धारा 74क में उल्लिखित सभी शर्तों के साथ, पारित किया जाता है। इसका कार्यान्वयन भाग उपधारा (1 क) और (1ख) में उपबन्धित है और कार्य राज्य सरकार अथवा किसी स्थानीय प्राधिकरण द्वारा की जाने वाली व्यवस्थाओं के अनुसार, उचित पर्यवेक्षण के अधीन किया जाना है। उपधारा (2) यह अधिकथित करती है कि सिद्धदोष द्वारा किए जाने वाले कार्य की प्रकृति विनिर्दिष्ट करनी होगी। इस प्रकार के दंड देने में निहित उद्देश्य यद्यपि बाहर से आकर्षक प्रतीत होता है किन्तु उसे प्रवर्तित करने में अनेक कठिनाईयां हैं। उपधारा (3) के पाठन मात्र से यह बात स्पष्ट हो जाती है। यह धारा एक पर्यवेक्षक प्राधिकारी की अवधारणा करती है जो यह देखेगा कि सिद्धदोष कार्य कर रहा है और विनिर्दिष्ट घटों की सेवा प्रदान कर रहा है और यदि वह त्रुटि के रूप में ऐसा करने में असफल रहता है तो उसे उसके पश्चात् दंडादिष्ट किया जाना है। हम समझते हैं कि खुली वायु जेल प्रणाली सुधारात्मक अध्युपाय की दृष्टि से, सामुदायिक सेवा के दंड की अपेक्षा बहतर उपयक्त है।

2.14. अगली बात यह है कि क्या “पद धारण करने से निरहृता” का देंड मारतीय देंड संदिता की धारा 53 में शामिल किया जाना चाहिए। कुछ प्रकार के मामलों में, विशेष रूप से जिनमें लोक सेवक और निरामों, कंपनियों, रजिस्ट्रीकृत सोसाइटियों आदि में पद धारण करने वाले अन्य व्यक्ति आते हैं, दोपसिद्धि होने पर पदधारण करने से निरहृता अपरिवार्य है, किन्तु ऐसी प्रक्रिया जटिल

रूप से उनके संबंधित सेवा नियमों और विनियमों से संबद्ध है। यह सामान्य ज्ञान का विषय है कि प्रायः ऐसे सभी सेवा नियमों में हमें दोषसिद्धि के पश्चात् ऐसे व्यक्ति को पदधारण करने से निरहित करने वाले कुछ आदेश या उपबंध मिलते हैं। अतः, यह विषय संबंधित प्राधिकारियों द्वारा उन सभी नियमों और विनियमों के अधीन विनिश्चित करने के लिए स्वाहा देना उचित होगा, वयोंकि प्रसंगवश सेवा शर्तों से संबद्ध अन्य ऐसे प्रश्न भी उत्पन्न हो सकते हैं जिनमें अगे जांच अपेक्षित होगी।

2.15. दंड के रूप में प्रतिकर के संदाय के प्रश्न पर उच्चतम न्यायालय ने श्री ओदिष्यत्व गौतम बनाम कुमारी सुधाराचक्रवर्ती<sup>3</sup> के मामले में अपने दिल्ली घरेलू कार्यकारी महिला मंच बनाम भारत संघ<sup>4</sup> में पूर्ववर्ती विनिश्चय को उद्धृत करते हुए, यह संप्रेक्षण किया:

“भारत के सविधान के अनुच्छेद 38(1) के अधीन अंतर्रिक्ष निदेशक तत्वों को ध्यान में रखते हुए, दांडिक क्षति प्रतिकर बोर्ड स्थापित करना आवश्यक है। बलात्तसंग के आहत व्यक्तियों प्रायः काफी वित्तीय हानि उपगत करते हैं उदाहरणार्थ, कुछ हतने मानसिक आघात से प्रस्त हो जाते हैं कि वे नियोजन में नहीं रह सकते।

आहत व्यक्तियों के लिए प्रतिकर न्यायालय द्वारा अपराधी की दोषसिद्धि पर दिया जाएगा और दाँडिक क्षति प्रतिकर बोर्ड द्वारा, चाहे दोषसिद्धि हो या न हो, दिया जाएगा। बोर्ड बलात्संग के परिणामस्वरूप गम्भीरस्था के कारण पीड़ा, उत्तीर्ण और आधार अथवा उपर्यान की हानि को भी, गणना में ले गा।”

न्यायालय ने यह भी कहा :

“विनिश्चय यह उपबंध करके प्रतिकर के लिए आहट व्यक्ति के अधिकार को मान्यता देता है कि वह न्यायालय द्वारा अपराधी की दोषिणिदि पर, केन्द्रीय सरकार द्वारा स्कीम को अंतिम रूप दिए जाने के अधीन रहते हुए, दिया जाएगा। यदि बलात्संग का विचारण करने वाले न्यायालय की अंतिम प्रक्रम पर प्रतिकर देने की अधिकारिता है तो न्यायालय को अंतिम प्रतिकर देने के अधिकार से डंकार करने का कोई कारण नहीं है और स्कीम से इसका सीधे उपबंध किया जाना चाहिए।”

दिल्ली घरेलू कार्यकारी महिला मंत्र के मामले में पूर्वोक्त विनिश्चय में अधिकथित सिद्धांतों के आधार पर अंतरिम प्रतिकर का संदाय करने की अधिकारिता बलात्संग के मामलों का विचारण करने वाले न्यायालयों की समग्र अधिकारिता का भाग समझी जाएगी जैसाकि उनपर इंगित है यह अपराध मौलिक मानव अधिकारों और साथ ही वैयक्तिक स्वतंत्रता और जीवन के मूल अधिकार के भी विरुद्ध अपराध है।

2.16. विधि आद्योग ने, दंड प्रक्रिया संहिता संबंधी आपनी 154 वीं रिपोर्ट में, एक नया उपबंध, अर्थात् धारा 357क, संबंधित राज्य सरकारों द्वारा आहत व्यक्ति प्रतिकर स्कीम विरचित करने के लिए अंतःस्थापित करने की सिफारिश की है जिसके अधीन, आहत व्यक्तियों को उसमें उपदर्शित रीति के अनुसार, जहां कहीं यह आवश्यक पाया जाता है, धारा 357 के अधीन जुमनि में से, आयात्य द्वारा अधिनिर्णीत किए गए प्रतिकर के अतिरिक्त, प्रतिकर का संदाय किया जा सकता है। हम यह भी बताना चाहते हैं कि वर्याचार प्रतिकर का दिया जाना ऐसी अनेक परिस्थितियों पर निर्भर है जिनमें कुछ जांच अपेक्षित है और कुछ मामलों में प्रतिकर के संदाय का आदेश अनिवार्यतः दंड के रूप में दिया जाना आवश्यक नहीं है। अतः, हमारा यह अभिमत है कि धारा 53 में दंड के रूप में प्रतिकर के संदाय के लिए आदेश समिलित करना उचित नहीं है।

दूसरा दंड, जिसे धारा 53 में शामिल किये जाने की अपेक्षा है “लोक परिनिंदा”, अर्थात्, अपराधी के नाम, उसके अपराध के वर्वरण और दंडादेश का प्रकाशन है। प्रस्तावित धारा 74ग में, उपधारा (3) के अधीन अधिष्ठात्री दंडादेश के अतिरिक्त, लोक परिनिंदा के रूप में दंड के अधिरोपण की व्यवस्था है और यह अध्याय 12, 13 धारा 272 से 276, 383 से 389, 403 से 409, 415 से 420 में लिखित अपराधों और अध्याय 18 के अधीन मामले के अपराधों, जो भारतीय दंड संहिता (संशोधन) विधेयक के अधीन प्रस्तावित नई धारा 420क और 462क के अधीन अपराध हैं, तक संमिलित है। ये सभी ऐसे अपराध हैं जिन्हाँ लोक कर्तव्य से न्यस्त व्यक्ति अपराध करते हैं। ऐसा दंड समाज विरोधी अपराधों, आर्थिक अपराधों, कभी कभी जिन्हें सफेदपोश अपराध कहा जाता है और जो विशेष रूप से परिष्कृत व्यक्तियों द्वारा किए जाते हैं, की बाबत अधिक सुसंगत है। यह सामान्य बात है कि वे अपराध बहुसंख्या में प्रमाणित करते हैं किन्तु अपराधी आसानी से पकड़े नहीं जाते हैं। तथापि, कम से कम ऐसे मामलों में, जिनमें दोपसिद्धि होती है, लोक परिनिंदा का दंड अधिक भयोपकारी रूप में प्रभावी होना संभाव्य है। क्योंकि प्रचार से होने वाली अपर्कार्ता और पारिणामिक रोक प्रभाव जैसे, कारबार आदि की हानि का भय बना रहता है। ऐसी परिनिंदा यूएसोएसोआर०, कोलम्बिया और अन्य देशों में विद्युत दंडों में से एक है। भारत में दंड का यह रूप खाद्य उपमिश्रण निवारण अधिनियम और आय-कर अधिनियम में सम्मिलित है। विधि आयोग ने अपनी 42वीं रिपोर्ट में ऐसे दंड के समावेश पर विचार किया और सिफारिश की कि ऐसा अतिरिक्त दंड उन व्यक्तियों के मामले में, जिन्हें अध्याय 12 और 13 के अधीन किसी अपराध जैसे उद्दापन, आपराधिक, दुर्विनियोग, छल साधन और स्तावजों से संबंधित अपराध के लिए दूसरी बार सिद्धदोष ढोते हैं, उपयोगी होगा। हमारा यह भी अभिमत है कि अतिरिक्त दंड के रूप में ऐसी लोक परिनिंदा होनी चाहिए और तदनुसार इसे भारतीय दंड संहिता की धारा 53 में शामिल किया जाना चाहिए तथा चुने ए मामलों में उसके अधिरोपण की बात न्यायलय के विकें पर लोट ली जानी चाहिए।

2.17. भारतीय दंड संहिता में मात्र कुछ धाराएं ऐसी हैं जो शास्ति के रूप में मृत्युदंड विहित करती हैं। ये धाराएं 121, 132, 194, 302, 305, 307 का दूसरा भाग और 396 हैं। तथापि, दाढ़िक विधि संशोधन अधिनियम, 1983 के फलस्वरूप, बलातसंग के अपराध की बाबत न्यूनतम दंड धारा 376 (1) और (2) के अधीन विहित किया गया है। इस प्रश्न पर कि क्या कुछ और अपराधों की बाबत ऐसा न्यूनतम दंड होना चाहिए, विचार-विमर्श किया गया था और अंततोगत्वा इस बात पर सहमति है कि, सिंदात रूप में, दंडादेश देने के मामले में न्यायिक उद्योगात्मकों पर निर्बंधन लगाना एक स्वस्थ प्रथा नहीं है। यदाकदा ऐसे दृष्टांत हो सकते हैं जहाँ न्यायाधीश अनुपातिक दंडादेश देने में असफल हो गए हों किन्तु फिर भी उसे इस धारा के लिए उपादान नहीं माना जा सकता कि न्यायाधीश समग्र रूप से उचित दंड देने में असफल हो गए हैं। विधि आयोग ने, अपनी 14 वीं और 42 वीं रिपोर्ट में इस प्रश्न पर विचार किया और यह दृष्टिकोण अपनाया कि आपवादिक मामलों के सिवाय न्यूनतम दंड के लिए कोई उपबंध नहीं होना चाहिए। हम इस अभियान से सहमत हैं।

अनेक अपराधों की बाबत विहित दंड “कारावास से या जुमनि से या दोनों से” है। विभिन्न कार्यशालाओं में यह कहा गया है कि आधुनिक समाज के परिवर्तन, अपराधों के रूप, उन अपराधों की पुनरावृत्ति अथवा कठिपय प्रकार के अपराधों की बार-बार आवृत्ति को देखते हुए, यह आवश्यक है कि दंड कारावास होना चाहिए और इसके अतिरिक्त जुमना भी होना चाहिए। भारतीय दंड संहिता के विभिन्न उपबंधों तथा अपराध की आधुनिक प्रवृत्ति की जांच करने के पश्चात हमारा यह अभियान है कि धारा 153, 153क, 160, 166 से 175, 177, 182, 221, 269 से 291, 292, 294 से 298, 336, 465 और 477क के अधीन अपराधों की बाबत कारावास और साथ ही जुमनि का दंड होना चाहिए। प्रसंगतः, हम यह भी सुझाव देते हैं कि अपराधों की बाबत कारावास की सीमा उचित रूप से बढ़ाई जानी चाहिए।

### अध्याय 3

#### मृत्यु शास्ति

भाग 1

##### मृत्यु दंड को बनाए रखना

विधेयक का खंड 125 विद्यमान धारा 302 को निम्नलिखित उपबंधों के अंतर्स्थापन द्वारा प्रतिस्थापित करने के लिए है,—

“302. (1) जो कोई हत्या करेगा वह, उपधारा (2) में विविर्दिष्ट मामलों के सिवाय कारावास से बंदित किया जाएगा और जुमनि का भी दायी होगा।

(2) जो कोई हत्या करेगा वह,—

(क) यदि हत्या पूर्व चिन्तन के पश्चात की गई और उसमें अत्यन्तिक क्रूरता अन्तर्विलित है; या

(ख) यदि हत्या में असाधारण दुराचारिता अन्तर्विलित है; या

(ग) यदि हत्या संघ के सशस्त्र बलों के या किसी पुलिस बल के सदस्य की है या किसी लोक सेवक की है और,—

(i) हत्या के समय ऐसा सदस्य या लोक सेवक कर्तव्यरूप है; या

(ii) ऐसे सदस्य या लोक सेवक द्वारा ऐसे सदस्य या लोक सेवक के रूप में अपने कर्तव्य के विधिपूर्ण निर्वहन में की गई या किए जाने के लिए पर्याप्त किसी बात के परिणामस्वरूप की गई है, चाहे हत्या के समय वह, यथास्थिति, ऐसा सदस्य या लोक सेवक रहा हो या नहीं; या

(घ) यदि हत्या ऐसे व्यक्ति की है जिसने दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 43 के अधीन अपने कर्तव्य के विधिपूर्ण निर्वहन में कार्य किया है या जिसे उक्त संहिता की धारा 37 या धारा 129 के अधीन उसकी सहायता की मांग या अपेक्षा करने वाले मजिस्ट्रेट या पुलिस अधिकारी को सहायता दी थी; या

(ङ) यदि हत्या उसके द्वारा उस समय की गई है जब वह आजीवन कारावास का दंड भोग रहा है, और ऐसा दंड अंतिम हो गया है; तो मृत्यु से या आजीवन कारावास से बंदित किया जाएगा और जुमनि का भी दायी होगा।

(3) जहाँ कोई व्यक्ति, जो आजीवन कारावास का दंड भोग रहा है, उपधारा (2) के खंड (ङ) के अधीन किसी अपराध के लिए कारावास से बंदित किया जाता है वहाँ ऐसे दंडादेश क्रमवर्ती होंगे एक साथ नहीं।”

मूल विषय जिस पर विचार किया जाना है, वह यह है कि क्या मृत्युदंड उत्सादित किया जाना चाहिए।

3.02 विधेयक के निम्नात्मकों का आशय उन मामलों की सूची तैयार करना था जिनमें मृत्यु दंड का आदेश दिया जाना चाहिए। प्रश्न यह है कि क्या ऐसे प्रवर्ग उसके अधीन विहित किए गए हैं या किए जा सकते हैं। हम मृत्यु शास्ति के रूप में दंड की विस्तृत रीति से परीक्षा करने और अपना निष्कर्ष देना चाहेंगे। तथापि, सुसंगत उपबंध की परीक्षा आरंभ करने के पूर्व इस विषय पर हुए विकास और न्यायिक प्रतिक्रिया को निर्दिष्ट करना बांधनीय होगा।

मृत्युदंड पर विवाद युगों पुरानी घटना है। गत कुछ शताब्दियों से मृत्यु के दंड को उत्सादित करने का अभियान चल रहा है जिसके पक्ष में जनमत बढ़ता जा रहा है। कुछ देशों ने मृत्यु की शास्ति उत्सादित कर दी है। ब्रिटेन में जनमत के सारभूत भाग द्वारा समर्पित मृत्यु की शास्ति को पुनः अपनाने का एक अभियान चल रहा है।

अपराधियों और दंड के प्रति मानवीय अभियान की विश्वव्यापी भावना विद्यमान है। दंड को उदार बनाने तथा कारागारों का सुधार करने के लिए प्रयास किए गए हैं और किए जा रहे हैं। पिछले कुछ समय से मृत्यु का दंड उत्सादित करने का अभियान चल रहा है। इसके पक्ष में जनमत बढ़ता जा रहा है। यद्यपि, अभी तक इसे उत्सादित नहीं किया गया है किंतु यह भी, विधि इसी संबंध में धीरे-धीरे उदार हो गई है।

भारतीय दंड संहिता कि धारा 121, 132, 194, 302, 305, 307 का द्वितीय भाग और 396 के अंतर्गत आने वाले सभी अपराधों में मृत्यु के दंड अथवा इसके विकल्प में आजीवन कारावास के लिए उपबंध है। इस प्रकार यह देखा गया है कि सभी संगीन अपराध

#### पाद-टिप्पणी

1. डॉ. जैकब जार्ज अनाम केरल राज्य 1994 (2) क्राइमस।
2. कार्डवेल, क्रिमिनलजी, पृष्ठ 403, आर० सी० निगम द्वारा उद्घृत “लॉ आफ क्राइम्स इन इंडिया”—दाढ़िक विधि के सिद्धांत, खंड 1, पृष्ठ 232।
3. जैटी 1995 (9) एससी 509।
4. जैटी 1994 (7) एससी 183।

मृत्यु के दंड से दंडनीय बनाए गए हैं। भारत में मृत्यु दंड रस्सी से लटकाकर, जब तक कि व्यक्ति मृत घोषित नहीं किया जाता है, निष्पादित किया जाता है।

3.03 भारत में, भारतीय दंड संहिता की धारा 302 के अधीन उपबंधित हत्या के लिए मृत्यु शास्ति और दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 354 (3) में प्रस्तुत दंड देने की प्रक्रिया की संवैधानिकता को इस आधार पर उच्चतम न्यायालय में चुनौती दी गई थी, कि वे भारत के संविधान के अनुच्छेद 14, 15 के अतिक्रमणकारी हैं। संविधान पीठ में, जिसे यह विषय निर्दिष्ट किया गया था, बहुमत ने यह अवधारित किया कि हत्या के लिए वैकल्पिक दंड के रूप में मृत्यु की शास्ति के उपबंध और संहिता की धारा 353 (3) में दंड देने की प्रक्रिया भी भारत के संविधान के अनुच्छेद 14, 19 और 21 का अतिक्रमण नहीं करती है। तथापि, उच्चतम न्यायालय ने मृत्यु शास्ति की संवैधानिक विधिमान्यता को बनाए रखा।

इस प्रकार जगभोड़न सिंह बनाम पंजाब राज्य<sup>1</sup> के मामले में उच्चतम न्यायालय का ध्यान ऐसे व्यापक, अमारा निर्दिष्ट और अनियन्त्रित न्यायिक विवेक की संवैधानिक विधिमान्यता की ओर आर्थित किया गया था जिसमें दोषिसिद्ध के “जीवन” और “मृत्यु” के बीच चयन किया जाता हो, पांच सदस्यीय न्यायपीठ के समक्ष सशक्त रूप से यह तर्क दिया गया कि ऐसे विवेक के परिणाम विभेदकारी हैं और इसमें मनमानापन अंतर्ग्रस्त है जो संविधान के अनुच्छेद 14 का अतिक्रमण करता है। न्यायालय ने इस तर्क को अस्वीकार कर दिया और दंड देने के मानवंडों को अधिकृति कर पाने की असंभाव्यता के कारण ऐसे व्यापक न्यायिक विवेक को उचित ठहराया, क्योंकि दो मामलों के तथ्य और परिस्थितियां एक समान नहीं हो सकतीं और दंड देने के विषय में गलत विवेक यदि कोई है तो वरिष्ठ न्यायालय द्वारा सही किया जा सकता है।

3.04. पुनः, बचन सिंह बनाम पंजाब राज्य<sup>2</sup> के मामले में, उच्चतम न्यायालय ने इस तर्क पर प्रतिक्रिया व्यक्त करते हुए यह अवधारित करने के लिए कि “विशेष कारण क्या हो सकते हैं, कठोर मानदेह बनाने में अपनी अनिच्छा जाहिर की कि देंड प्रक्रिया संविता की धारा 354 (3) में कथित देंड देने की प्रक्रिया, जिसमें मृत्यु का देंड केवल अपरिमापित, अमार्दिर्शित विशेष कारण से अनुज्ञात किया गया है, अनुचित, अयुक्तियुक्त और अन्यायपूर्ण है और इसलिए संविधान के अनुच्छेद 14, 19 और 21 का अतिक्रमणकारी है। किन्तु उच्चतम न्यायालय ने, न्यायालयों को यह सलाह दी कि वे अपराध और अपराधी की बाबत सम्यक ध्यान दें तथा बढ़ाने और घटाने वाले कारकों की सापेक्षता को संतुलित करें तथा मृत्यु का देंड मामलों के सर्वाधिक आपवादिक रूप से समाप्त हो चुका हो। से विरलतम् में देने पर विचार करें जबकि वैकल्पिक विकल्प पहले ही अशक्य रूप से समाप्त हो चुका हो।

धारा 354 (3) नियन्त्रित

“जब दोषसिद्धि मृत्यु से अथवा अनुकल्पतः आजीवन कारावास से या कई वर्षों की अवधि के कारावास से दंडनीय किसी अपराध के लिए है, तब निर्णय में, दिए गए दंडादेश के कारणों का और मृत्यु के दंडादेश की दशा में, ऐसे दंडादेश के लिए विशेष कारणों का कथन होता।”

दंड प्रक्रिया संविता की धारा 354 (3) तथा अन्य संगत उपबंधों के कथन से यह स्पष्ट है कि दंड का चयन करने के लिए या उस परिपेक्ष में विद्यमानता को स्वीकार करने के लिए न्यायालय को अपराध और अपराधी दोनों की ओर सम्यक ध्यान देना चाहिए। वह सापेक्ष महत्व जो बढ़ाने और घटाने वाले हुयादानों को दिया जा सकता है, विशिष्ट मामले के तथ्यों और परिस्थितियों पर निर्भर करता है। दंडादेश अधिरोपित करने में, अपराध की प्रकृति और गंभीरता प्रमुख हैं तथा न्यायालय को वह अनुपात ध्यान में रखना है जो अपराध और दंड तथा उन अन्य संबद्ध परिस्थितियों के बीच, जो मामले में विद्यमान है, बना रहना आवश्यक है।

उच्चतम न्यायालय ने, अनेक मामलों में यह निर्णय दिया कि मृत्यु की शास्ति “विरल से विरलतम” मामलों में  
ही लागत।

मच्छी सिंह बनाम 'पंजाब शाहजहां' के मामले में उच्चतम न्यायालय के तीन न्यायाधीशों की पीठ ने, मृत्यु का दंड अधिरोपित करने के लिए 'विरल में विरलतम' मामले के सूत्र की बाबत बचन सिंह के मामले (पूर्वोक्त) में अधिकथित सिद्धांतों पर ध्यान देते हुए, यह सप्रेक्षण किया कि बचन सिंह के मामले में उपदर्शित मार्गदर्शी सिद्धांतों पर चलना होगा और ऐसे प्रत्येक व्यष्टिक मामले के तथ्यों पर लागू करना होगा जहां मृत्यु का दंड अधिरोपित करने का प्रश्न उठता है और निम्नवत् सप्रेक्षण भी किया गया —

“यदि पूर्वोक्त सिद्धांत के आलोक में सभी परिस्थितियों का समग्र, व्यापक दृष्टिकोण लेने पर तथा इसमें इसके पूर्व बताए गए प्रश्नों के उत्तरों पर विचार करने के पश्चात् मामले की परिस्थितियां ऐसी हैं कि मृत्यु का दंड दिया जाना न्यायसंगत है तो न्यायालय ऐसा करने में अप्रसर होगा।”

इसी प्रकार अलाउद्दीन मियां और अन्य बनाम बिहार राज्य<sup>1</sup> के मामले में इस अभियान की इस प्रकार पनराखिति की गई :—

“तथापि, इस क्रम में कि दंडादेश दर मामले की मात्रा के अनुरूप उचित रूप से श्रेणीकृत किए जाएं। यह आवश्यक है कि विधि द्वारा विहित अधिकतम दंडादेश, जैसा कि बच्चन सिंह के मामले में (ए.आई.आर. 1980 एस.सी. 898) संप्रक्षण किया गया है। विश्ल में विरलतम मामले के लिए, जो आपवादिक प्रकृति के हैं, आरक्षित रखा जाए। कठोरता के दंडादेश अपराध की गंभीरता को प्रकाशित करने, विधि के लिए सम्मान का संबर्धन करने, अपराध के लिए उचित दंड देने, आपराधिक आचार के प्रति पर्याप्त मय पैदा करने तथा समुदाय को ऐसे और आचरण से संरक्षित करने के लिए अधिरोपित किए जाते हैं। इससे तीन प्रयोजन (i) दंडात्मक, (ii) निवारक और (iii) संरक्षात्मक, पूर्ण होते हैं। यही कारण है कि इस न्यायालय ने, बच्चन सिंह के मामले में यह संप्रक्षण किया कि जब दंडादेश का प्रश्न विचाराधीन हो तो न्यायालय को अपराध तथा आहत व्यक्ति की ही नहीं अपितु आपराधिक परिस्थिति और समुदाय पर अपराध के प्रश्न पर भी विचार करना चाहिए। जब तक कि अपराध की प्रकृति तथा आपराधी की परिस्थितियों से यह पता न चलता हो कि अपराधी समाज के लिए एक खतरा है, और आजीवन कारबोल का दंड पूर्णतः अपर्याप्त होना, न्यायालय को साधारणतः कम दंड अधिरोपित करना चाहिए और युत्सु का कठोर दंड नहीं, जिसे केवल आपवादिक मामलों के लिए ही आरक्षित रखा जाना चाहिए।”

मिश्र बनाम पंजाब सरकार में संविधान पीठ ने यह अभिनिधारित किया:-

“अपराध की गुरुता, दंड के लिए भारदीर्शी सिद्धांत प्रस्तुत करती है और कोई भी, उन परिस्थितियों पर, जिनमें अपराध किया गया है, हेतु और उसके अप्रत्यक्ष प्रमाण पर ध्यान दिए बिना, अपराध की गंभीरता अवधारित नहीं कर सकता है। विधान-मंडल संगत स्थितियों को असंगत नहीं बना सकता है तथा न्यायालयों को अपनी विधिसम्मत अधिकारिता का प्रयोग सुनिश्चित मामलों में मृत्यु का दंडादेश अधिरोपित न करने के अपने विवेक का प्रयोग करने की विधिसम्मत अधिकारिता से वंचित नहीं कर सकता और न्यूनकारक परिस्थितियों की ओर से आंख बंद करने के लिए बाध्य नहीं कर सकता तथा उन पर मृत्यु दंड देने के संदेशास्पद और आत्मविरोधी कर्तव्य के लिए बाध्य नहीं कर सकता। साम्य और शुद्ध अंतःकरण न्याय के प्रमाण चिन्ह हैं।”

<sup>6</sup> केहर सिंह बनाम दिल्ली प्रशासन<sup>6</sup> में समरूप सिद्धांतों की परिवर्तिति की गई है वृत्ता यह सोशला किया गया है कि

“यह ऐसे अभियुक्त द्वारा की गई धूमाजनक हत्या है जो प्रधानमंत्री की संरक्षा के लिए सुरक्षा गार्ड के रूप में नियोजित किया गया था। यह विरल में से विरलतम मामला है जिसमें कठोर शास्ति आवश्यक है।”

पूर्वोक्त सिद्धांत अनेक परवर्ती मासलो<sup>7</sup> में अनुसन्धान किए गए हैं।

3.05. मृत्युदंड के विरुद्ध अभियान को निःसदेह हाल के कुछ वर्षों में गति मिली है। 1962 में लोक सभा में मृत्यु दंड के न के लिए संकल्प पेश किया गया था। सरकार ने, उसे भारत के विधि मंत्रालय को निर्दिष्ट करने का आश्वासन दिया था और अंततः वह विषय विधि आयोग को निर्दिष्ट किया गया था। विधि आयोग ने इस विषय पर पूरी तरह विचार करने के पश्चात् यह किया कि भारत में विद्यमान विशिष्ट परिस्थितियों में, मृत्युदंड के उत्सादन के प्रयोग का जोखिम नहीं लिया जा सकता। ने, अपनी 35वीं रिपोर्ट में मृत्यु शास्ति के प्रतिधारण पर व्यापक रूप से विचार किया और अंततः निम्नवत् किया है—

“उत्सादन और प्रतिधारण का मुद्रण, प्रतिधारण के पक्ष और विपक्ष में विभिन्न तर्कों के संतुलन पर विनिश्चित किया जाना है। उत्सादन या प्रतिधारण के लिए मात्र एक तर्क मुद्रे को विनिश्चित नहीं कर सकता है। इस विषय पर किसी निश्चय पर पहुंचने के लिए, साधारण रूप से समाज के और व्यष्टिक यानव प्राणी के संरक्षण की आवश्यकता ध्यान में रखनी होती।

उत्सादन के लिए अनेक तर्कों की विधिमान्यता अथवा उनमें निहित शक्ति से इंकार कर पाना कठिन है और न ही आयोग मृत्यु के दंड की अप्रतिसंहरणीयता पर आधारित तर्कों को, आधुनिक लाभागम की आवश्यकता, मृत्यु दंड की गंभीरता और मानव मूल्यों के प्रश्न पर जोर देते हुए लोकमत के कातिपय भागों द्वारा प्रदर्शित सशक्त भावना को, हल्का नहीं समझ सकता। तथापि, भारत की दशाओं को, उसके निवासियों के सामाजिक उत्थान की भिन्नता को, देश में नैतिकता तथा शिक्षा के स्तर में विसंगति को, उसके राज्यक्षेत्र की व्यापकता को, उसकी जनसंख्या की विभिन्नता को, और वर्तमान स्थिति में देश में कानून और व्यवस्था बनाए रखने की सर्वोपरि आवश्यकता को ध्यान में रखते हुए, भारत मृत्युदंड के प्रयोग का जोखिम नहीं उठा सकता।

वे तक, जो जिस परिप्रेक्ष्य में विश्व के किसी एक भाग की बाबत वैध होंगे, किसी अन्य क्षेत्र की बाबत, ठीक नहीं हो सकते। इसी प्रकार यदि भारत के कुछ भागों में उत्सादन किया जाए तो इससे तात्त्विक अन्तर नहीं पड़ सकता। अन्य भागों में इसके गंभीर परिणाम सामने आ सकते हैं।

अंतर्विष्ट सभी मुद्दों वर विचार करने के पश्चात् आयोग का यह अधिकृत है कि देश की वर्तमान स्थिति में मृत्युदंड नाए रखा जाना कानूनी।”

3.06. तथापि, विधि आयोग ने, यह सिफारिश की है कि ऐसे बालकों को, जिनकी आयु अपराध किए जाने के समय 18 वर्ष से कम है, मृत्यु का दंडादेश नहीं दिया जाना चाहिए। दंड प्रक्रिया सहिता, 1973 में उदारीकरण की दिशा में एक और प्रगति हुई है, मृत्यु दंडनीय बाल अपराधों में मृत्यु के दंडादेश के स्थान पर आजीवन कारावास अधिरोपित करने की उदारीकरण की प्रवृत्ति को उच्चतम न्यायालय द्वारा भी सर्वेश्वर प्रसाद शर्मा बनाम मध्य प्रदेश राज्य<sup>8</sup> के मामले में निम्नलिखित शब्दों में विशिष्टता प्रदान की गई है:-

“दादिक विधि में हाल में अपनाई गई दिशा, नियम के रूप में आजीवन कारावास और अपवाद के रूप में सूत्युदंड दिया जाना है, जिसके साथ कारण अभिलिखित किया जाना आवश्यक है।”

इस प्रकार ऐसे मामलों में, जहां लघुकारी परिस्थितियां विद्यमान हों, अभियुक्त को आजीवन कारावास से दंडित किया जाता है। लघुकारी परिस्थितियों के अभाव में और "विरल में से विरलतम मामलों" में मृत्युदंड दिया जाता है।

3.07. हमने इस प्रश्न पर अन्य देशों में विद्यमान विधि का तुलनात्मक अध्ययन करने के पश्चात् और सर्वोच्च न्यायालय द्वारा दिए गए अद्यतन विभिन्न निर्णयों की परीक्षा करने के पश्चात् अनेक पहलुओं पर सतर्कतापूर्वक विचार किया है और हम मृत्युदंड के प्रतिधारण के लिए विधि आयोग की उसकी 35वीं रिपोर्ट में की गई सिफारिश को दुहराते हैं किन्तु यह दंड उच्चतम न्यायालय द्वारा अधिकाधित मार्गदर्शी सिद्धांतों के अनुसार ही दिया जाना है।

भाग 2

मत्यु की शास्ति देने के प्रवर्गों का विनिर्देश—आवश्यक नहीं

3.08. अब हम विशेषक के खंड 125 के अधीन आने वाली धारा 302 के प्रस्तावित उपखंड (2) में उत्पन्न होने वाले मुद्दे पर विचार करना चाहेंगे, अर्थात् क्या मृत्यु दंड देने के लिए मामलों के प्रवर्ग विनिर्दिष्ट किए जाने चाहिए। धारा 302 की उपधारा (2) में प्रस्तावित विनिर्दिष्ट प्रवर्ग सम्पूर्ण नहीं हैं।

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 354(3), जैसी कि यह पहले थी, न्यायाधीश के लिए आज्ञापक बनती है कि वह मृत्युदंड के दंडादेश और आजीवन कारावास के आनुकृतिपक दंडादेशों के बीच चयन का प्रयोग करते समय उन विशेष कारणों का कथन करें जिनके कारण मृत्यु का दंडादेश दिया गया है। यह उपबंध इसके विधायी इतिहास के परिप्रेक्ष में सुस्पष्ट शब्दों में यह साक्ष्य प्रदान करता है कि ऐसे अपराधों के मामले में, जो मृत्युदंड से या आनुकृतिपक आजीवन कारावास से दृढ़नीय हैं, आजीवन कारावास नियम है और यह केवल आपवादिक मामलों में तथा ऐसे विशेष कारणों से, जिन्हें अभिलिखित किया जाना है, मृत्यु दंड अधिरोपित किया जा सकता है। किन्तु दंड प्रक्रिया संहिता या किसी अन्य कानूनी लिखत में कहीं भी यह उपदर्शित नहीं है कि मृत्यु का दंडादेश अधिरोपित करने वाले तथाकथित 'विशेष कारण' कौन से हैं। इस प्रकार, पुनः सम्पूर्ण विषय न्यायालय के विवेक पर छोड़ दिया गया है।<sup>9</sup>

3.09. दंड प्रक्रिया संदित्ता, 1898 की धारा 367(5) का 1955 के अधिनियम 26 द्वारा संशोधन किए जाने के पूर्व सामूहिक नियम यह था कि मृत्युदंड से दंडनीय अपराध के सिद्धांतों व्यक्ति पर मृत्यु का दंडादेश अधिरोपित किया जाना है और यदि न्यून दंडादेश अधिरोपित किया जाना हो तो न्यायालय से यह अपेक्षा थी कि वह लिखित रूप में कारण अभिलिखित करें। किन्तु पूर्व दंडादेश अधिरोपित किया जाना हो तो उपर्युक्त नियम तथा आजीवन कारावास देने के संशोधन द्वारा धारा 367(5) के उपर्युक्त का लोप कर दिया गया था और परिणामतः न्यायालय मृत्यु दंड या आजीवन कारावास देने के लिए मृत्युदंड हो गया और अब मृत्यु दंड नियम तथा आजीवन कारावास अपवाद नहीं रह गया।

विधान द्वारा लाए गए उदार उपर्युक्त का निर्वचन करते हुए, न्यायसूत्रि कृष्ण अय्यर ने, एन्नमा अनाम आंध्र प्रदेश राज्य<sup>10</sup> के पालने में यह संप्रेक्षण किया:-

“मृत्युदंड के रूप में जीवन के प्रति विधिक भय के विवादास्पद प्रेषण पर राज्य के विश्वविद्यालय अंतःकरण ने स्वयं को विद्यान के रूप में अभिव्यक्त किया है। प्रवृत्ति का रूख सरकारी, आशिक उत्सादन तथा संपूर्ण उत्सादन से पश्चामन की ओर है।”

न्यायमूर्ति कृष्णा अय्यर ने, उन सभी स्थितियों की, जिनमें आजीवन कारावास या मृत्यु का दंड न्यायसंगत है, “न्यायिक कंप्यूटर में एक करने की” असंभाव्यता को स्वीकार किया।

उन्होंने फिर भी, मृत्यु दंड और आजीवन कारावास के बीच चयन करते समय कुछ उपादानों पर विचार करने का सुझाव दिया, जैसे वैयक्तिक, सामाजिक, देतुकारक और शारीरिक परिस्थितियां; अपराध की विभीत्स स्थिति; आहत व्यक्ति की अभागी और असहाय स्थिति, कारावास द्वारा प्रदत्त घोर पीड़ा, उत्पीड़न और विधि प्रक्रिया के परिणामस्वरूप सिद्धोष के सिर पर लटकने वाली मत्त्य की शास्ति की सम्भेदी यंत्रणा।

प्रस्तावित धारा 302(2)(क) या (ख), (ग) या (घ) के अंतर्गत आने वाले मामलों में भी यह कल्पना की जा सकती है कि ऐसी मर्मभेदी, लघुकारी परिस्थितियां भी हो सकती हैं जो मृत्युदंड की शास्ति का अधिरोपण रोक दें और इस प्रकार पुनः जगामोहन सिंह बनाम उत्तर प्रदेश राज्य<sup>11</sup> और वचन सिंह के मामले<sup>12</sup> में, जैसीकि पहले चर्चा की जा चुकी है, अधिकथित सिद्धांत लागू होता है। इसे तो कानूनी रूप से दंड प्रक्रिया संदिता, 1973 की धारा 354(3) में भी मान्यता मिली है जो यह कहता है कि मृत्यु की शास्ति के क्षेत्र में लघुकारी उपादानों के विस्तार व सिद्धांत का न्यायालयों द्वारा उदार और व्यापक निर्वचन किया जाना चाहिए। अतः, भारतीय दंड संदिता विधेयक में धारा 302(2) के अधीन प्रस्तावित संशोधन के बावजूद स्थिति बस्तुतः बैसी ही बनी रहेगी।

3.10 इसलिए हमारा यह अभिमत है कि धारा 302 को बनाए रखना बेहतर है। क्योंकि उन कारणों के लिए मृत्युदंड अधिरोपण की आबत सीमाओं के कथन के बनाए उन्हें इस कारण किसी सीधे रूप में रख पाना असंभव है कि ऐसी कौन सी परिस्थितियाँ हैं जो विरल से विरलतम मामला बनाती हैं उन्हें विधायी उपबंध द्वारा नियत नहीं किया जा सकता है। इसलिए, हम विधेयक के छंड 125 में यथा प्रस्तावित धारा 302 में किसी परिवर्तन की सिफारिश नहीं करेंगे।

भाग 3

भारतीय दंड संहिता विधेयक में धारा 302 का प्रस्तावित खंड (3)

3:11 अब, हम विद्येयक के खंड 125 के उपखंड (3) की परीक्षा करेंगे, जो निम्नवत् उपबंध करती है—  
“जहाँ कोई व्यक्ति, जो आजीवन कारावास का दंड भोग रहा है, उपधारा (2) के खंड (3) के अधीन किसी अपराध के लिए कारावास से दंडित किया जाता है वहाँ ऐसे दंडादेश क्रमवर्ती होंगे, एक साथ नहीं।”

हम विधेयक के पूर्वोक्त उपबंधों का द्वाल में दुई विद्यायी और न्यायिक नीति के परिप्रेक्ष्य में विचार करना चाहते हैं।

दंड प्रक्रिया संहिता, 1898 के अधीन यदि कोई व्यक्ति किसी अन्य अपराध के लिए आजीवन निष्कासन का दंड भोग रहा है तो पश्चात्वर्ती दंडादेश उस निष्कासन के दंडादेश की समाप्ति पर जिसके लिए वह पहले दंडादिष्ट किया गया था, आरंभ होगा। जब तक कि न्यायालय यह निर्देश न दे कि निष्कासन का पश्चात्वर्ती दंडादेश, निष्कासन के पूर्व दंडादेश के साथ-साथ ही भोगा जाना था।

3.12 वर्ष 1955 में, दंड प्रक्रिया संहिता, 1898 की धारा 307 को, 1955 के अधिनियम 26 द्वारा एक नई धारा 397 द्वारा प्रतिस्थापित किया गया था। धारा 397 की नई उपधारा (2) के अधीन, जो 1 जनवरी, 1956 से प्रवृत्त हुई, यदि पहले से ही आजीवन कारावास का दंडादेश भोग रहे किसी व्यक्ति को पश्चात्वर्ती दोषसिद्धि पर आजीवन कारावास का दंडादेश दिया जाता है तो पश्चात्वर्ती दंडादेश पूर्ववर्ती दंडादेश के साथ भोगा जाएगा। दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 427 (2) इसी आशय की है।

और, भगीरथ बनाम दिल्ली प्रशासन<sup>13</sup> के मामले में यह अभिनिधारित किया गया था कि:— “अपराध जितना गंभीर होगा दंडादेश उतना ही लंबा, मुजरा और कूट भी उतनी ही अधिक। अब दंड प्रतिकारी नहीं रह गए हैं। वे सधारात्मक हैं।”

हम महसूस करते हैं कि भारतीय दंड प्रक्रिया संहिता विधेयक की धारा 302 का खंड (3), जिसमें आजीवन कारावास का दंड साथ-साथ होने के बजाय क्रमवर्ती भोगे जाने का उपबंध किया गया है, भूतकाल के भयोपराणी और प्रतिशोधात्मक सिद्धांतों की दिशा में एक और कदम होगा जैसाकि उच्चतम न्यायालय ने स्प्रेक्षण किया है। इस दृष्टि से, हम विधेयक में धारा 302 के प्रस्तावित खंड (3) का अनुसोद्धन तर्हीं करते।

भाग 4

आजीवन सिद्धदोष द्वारा हत्या के लिए दंड

3.13 भारतीय दंड संहिता की धारा 303 यह उपर्युक्त करती है कि

“जो कोई आजीवन करावास के द्वादेश के अधीन होते हा उसको करोन वा तो न होने दिया जाए ।

विधि आयोग ने, अपनी 42वीं रिपोर्ट में पूर्वोक्त धारा में किसी परिवर्तन की सिफारिश नहीं की क्योंकि यह “बहुत ही विरल से विरलतम रूप में लाग द्वाती है।”

उच्चतम न्यायालय ने मिथु बनाम पंजाब राज्य<sup>14</sup> के मामले में यह घोषित किया कि धारा 303 के पूर्वोक्त उपबंध अनुच्छेद 14 में अंतर्विष्ट समानता की गारंटी और सविधान के अनुच्छेद 21 द्वारा प्रदत्त अधिकारों का भी अतिक्रमण करता है। न्यायमूर्ति चिनप्पा रेडी ने अपने समर्वती अभिमत में यह संग्रहण किया कि:—

“धारा 303 को विधिमान्य बनाए रखना असंभव है क्योंकि यह न्यायिक विवेक को अपवर्जित करती है। उन्होंने कहा कि “न्याय के मान” न्यायाधीश के हाथों से, जैसे ही वह अभियुक्त को किसी अपराधी का दोषी उद्घोषित करता है, हट जाता है। मृत्यु का दंड इतना अंतिम, इतना अप्रिसंहरणीय और इतना प्रतिरोध्य है कि यदि न्यायिक चित्त का समावेश हुए बिना, कोई विधि इसके लिए उपबंध करती है तो उसे ठीक, न्यायाचित और युक्तियुक्त नहीं कहा जा सकता। ऐसी विधि को अनिवार्य रूप से मनमानी और दमनकारी कहा जाएगा। धारा 303 ऐसी ही विधि है और इसे समाप्त होना ही चाहिए।”

विधेयक का खंड 126 भारतीय दंड संहिता की धारा 303 का विरोध करने के लिए है।

3.14 हमने विधेयक के विभिन्न उपबंधों पर सर्तकतापूर्वक विचार कर लिया है और महसूस करते हैं कि यदि धारा 303 का लोप कर दिया जाता है तो धारा 307 का दूसरा भाग, जो यह उपबंध करता है कि “जब कि इस धारा में वर्णित अपराध करने वाला कोई व्यक्ति आजीवन कारावास के दंडादेश के अधीन हो, तब यदि उपर्युक्त कारितु हुई हो तो वह मृत्यु से दंडित किया जा सकेगा” उसी सात्रृश्य और सिद्धांत पर जो धारा 303 को मनमानी तथा दमनकारी और सविधान के अनुच्छेद 14 और 21 का अतिक्रमणकारी मानता है, को बनाए नहीं रखा जा सकता। हम तदनुसार, धारा 307 के दूसरे भाग को हटाने की सिफारिश करते हैं।

#### पाद टिप्पणी

1. 1993 (2) एस सी आर 541।
2. ए आई आर 1980 एस सी 898।
3. 1993 (3) एस सी सी 470।
4. 1993 (3) एस सी सी 5।
5. 1983 (2) एस सी सी 277।
6. 1988 एस सी सी 387।
7. देखिए के, जे. चर्चर्जी बनाम राज्य [1994(2) एस सी सी, पृष्ठ 220], भैरोनाथ सिंह बनाम राजस्थान राज्य [1994(2) एस सी सी, पृष्ठ 467], गौरी शंकर और अन्य बनाम तमिलनाडु राज्य [जे टी 1994(3) एस सी सी 54], अमृत लाल सामेश्वर जोशी बनाम भट्टाचार्य राज्य [1994(3) क्राइम्स 197]।
8. ए आई आर 1977 एस सी 2423।
9. बलवंत सिंह बनाम पंजाब राज्य, ए आई आर 1976 एस सी 230, ए आई आर 1976 एस सी 2196, ए आई आर 1977 एस सी 2423।
10. ए आई आर एस सी 799।
11. 1973 (2) एस सी आर 541।
12. 1980 (2) एस सी सी 884।
13. 1985 (2) एस सी 580।
14. [1983] 2 एस सी सी 277।

#### अध्याय 4

##### आपराधिक षड्यंत्र

जब तक अपराध मन में ही बना रहता है, वह दंडनीय नहीं। अपराधियों के चरित्र में भी प्रायः अनैच्छिक विचार अपराध नहीं है। किन्तु जब वे विचार कोई अवैध कार्य करने वाला ऐसे कृत्य, जो अवैध नहीं है, किन्तु अवैध साधनों द्वारा करने या कारित किए जाने की सहमति के रूप में ठोस आकार से लेते हैं तब भले ही आगे और कुछ नहीं किया गया हो किन्तु इस सहमति को आपराधिक षड्यंत्र कहा जाता है। तथापि, धारा 120क का परंतुक यह स्पष्ट कर रहा है कि किसी अपराध को करने की सहमति के सिवाय उपर उल्लिखित प्रकृति की सहमति मात्र आपराधिक षड्यंत्र के तब तक नहीं होगी जब तक कि कोई कार्य उसके अनुसरण कोई व्यक्तिकारी द्वारा कर नहीं दिया जाता। यह एक और प्रत्यक्ष कदम है जो अन्यथा तैयारी की प्रकृति का हो जाता जैसे उस आपराधिक षड्यंत्र को कायान्वित करने के लिए आयुध क्रय करना जो इसे दंडनीय बना देती है। कोई अवैध कार्य करने या अवैध साधन से ऐसा कार्य करने, जो अवैध नहीं है, की सहमति के अनुसरण में, आयुध क्रय किए जाने का कृत्य अपराध का गठन करेगा। भारतीय दंड संहिता की धारा 120क निम्नवर त है:—

“120क. आपराधिक षड्यंत्र की परिभाषा—जब कि दो या अधिक व्यक्ति:—

(1) कोई अवैध कार्यः अथवा

(2) कोई ऐसा कार्य, जो अवैध नहीं है, अवैध साधनों द्वारा करने या करवाने को सहमत होते हैं; तब ऐसी सहमति आपराधिक षड्यंत्र कहलाती है।

परन्तु किसी अपराध को करने की सहमति के सिवाय कोई सहमति आपराधिक षड्यंत्र तब तक न होगी जब तक कि सहमति के अलावा कोई कार्य उसके अनुसरण में उस सहमति के एक या अधिक पक्षकार द्वारा नहीं कर दिया जाता।

स्पष्टीकरण—यह तत्वादीन है कि अवैध कार्य ऐसी सहमति का चरम उद्देश्य है या उस उद्देश्य का आनुषंगिक भाग है।

4.02. आपराधिक षड्यंत्र का अपराध दंड संहिता में दंड विधि संशोधन अधिनियम, 1993 पुरास्थापित किया गया था जिसमें एक पृथक अध्याय 5क अंतस्थापित किया गया है इसमें केवल दो धारा 120क और 120ख हैं। इन दो धाराओं के उपबंधों के मध्य स्पष्ट और पर्याप्त अध्यारोहण होने और अध्याय 5में अंतर्विष्ट षड्यंत्र द्वारा अपराध के उपशमन को शासित करने वाले उपबंधों के बावजूद विधान-मंडल ने किसी प्रकार भी पूर्ववर्ती अध्याय को संशोधित करना आवश्यक नहीं समझा है अब चाहे कोई कृत्य या अवैध लोप हो या न हो, व्यक्ति जैसे ही वह अपराध करने की सहमति का पक्षकार बन जाता है, आपराधिक दंड का दोषी हो जाता है और, यथास्थिति, धारा 120ख की उपधारा (1) या (2) के अधीन दंडनीय हो जाता है। जहां तक गमीर अपराध करने में संबंधित पद्धयंत्रों का संबंध है, धारा 120ख(1) षड्यंत्र के किसी भी पक्षकार को ठीक उसी स्थिति में रखती है जैसे कि दंड के प्रयोजन के लिए अपराध के दुष्प्रेरक की होती है। यद्यपि, सैद्धांतिक रूप से किसी व्यक्ति को अपराध करने के षड्यंत्र से उस समय भी आरोपित करना संभव है जहां उस षड्यंत्र के अनुसरण में, कोई प्रत्यक्षकृत्य न किया गया हो। फिर भी, यदाकदा ऐसा होता है कि दो या अधिक व्यक्ति मात्र सहमति साखित करने वाले साक्ष्य के आधार पर और इसके अतिरिक्त, कुछ नहीं होने पर भी आपराधिक षड्यंत्र के लिए अभियोजित किए जाते हैं।

4.03. फिर भी, चाहे जो हो, इसमें कोई सदेह नहीं कि अध्याय 5क के अधीन षड्यंत्र द्वारा दुष्प्रेरण का अब व्याक्तारिक प्रयोग बहुत कम है तथा यह दाँड़िक विधि की संकल्पना के रूप में अप्रचलित है। इस बात पर ध्यान दिया जाना चाहिए कि इंगलैंड में दुष्प्रेरण की एक प्रजाति के रूप में षड्यंत्र का पृथक उल्लेख नहीं है। इसीलिए, विधि आयोग ने, अपनी 42वीं रिपोर्ट में, धारा 107 के दूसरे पैरा और षड्यंत्र द्वारा दुष्प्रेरण के संहिता के अध्याय 5 के सभी एश्चातवर्ती निर्देशों का लोप किए जाने की सिफारिश की थी।

धारा 120क में आपराधिक षड्यंत्र की परिभाषा के व्यापक प्रभाव से व्यक्ति अवाक रह जाता है। इसके, अर्थात् केवल (i) अपराध करने के लिए सहमति ही नहीं, अपितु (ii) अवैध कृत्य करने के लिए सहमति, और (iii) कोई ऐसा कार्य अवैध साधनों द्वारा करने की सहमति जो अवैध नहीं है, भी आ जाते हैं। अवैध साधनों द्वारा किसी उद्देश्य की प्राप्ति के बीच इस विभेद में कुछ अवैध कार्य करना, अर्थात् एक अवैध कार्य करना अन्तर्गत है। वह कार्य, जो धारा 120ख की उपधारा (1) या (2) के अधीन दंडनीय अपराध है, धारा 120क में यथापरिभाषित आपराधिक षड्यंत्र का एक पक्षकार हो जाता है। दूसरे शब्दों में, आपराधिक षड्यंत्र किसी अन्य अपराध का आनुषंगिक अपराध नहीं है, अपितु यह अपने आपमें एक स्वतंत्र और अधिकारी अपराध है।

4.04. वास्तव में घट्यंत्र का आधुनिक अपराध प्रायः पूर्णरूप में उस रीति का परिणाम है जिस रीति से न्यायालय द्वारा घट्यंत्र के उस सिद्धांत को समझा गया था जो अपने आप में सिविल विधि के देशों के न्यायशास्त्रियों को इस सारभौम मान्यता के बावजूद प्रभावित नहीं करता कि किसी संगठित समाज में संगठित आपराधिकता या मुकाबला करने के लिए विधिक आयुध होने चाहिए। अधिकतर अन्य देशों में भी यह खोज निकाला कि जिसे अधिक विभेदकारी ऐसे सिद्धांत समझते हैं जिससे आपराधिक गैंगों, गुप्त संगमों और क्रान्तिकारी सिद्धीकेटों को अभियोजित किया जाता है।

आपराधिक षड्यंत्र की परिभाषा के अनुसार, दो या अधिक व्यक्तियों का ऐसी सहमति का पक्षकार होना आवश्यक है और एक ही व्यक्ति को कभी भी मात्र। इस साधारण कारण से आपराधिक षड्यंत्र का दोषी नहीं ठहराया जा सकता कि कोई व्यक्ति षड्यंत्र नहीं कर सकता है।<sup>1</sup> आपराधिक षड्यंत्र के अपराध में दो या अधिक व्यक्तियों के बीच दाँड़िक अपराध करने के लिए इस बात पर और विचार किए जिना उत्पन्न हो जाता है कि वे अपराध वस्तुतः किए गए हैं अथवा नहीं। आपराधिक षड्यंत्र का तथ्य ही अपराध गठित करता है और यह अनावश्यक है कि अवैध करार के अनुसरण में कोई बात की गई या नहीं।<sup>2</sup>

इस प्रकार यदि अभिहित व्यक्तियों की कोई अवैध कार्य करने के आशय में सम्मति है तो भी यह षड्यंत्र का आरोप स्थापित करने के प्रयोजन के लिए पर्याप्त नहीं है।

हमरे गुब्बों में जहाँ विचारों का मेल नहीं है वहाँ षड्यंत्र नहीं हो सकता।<sup>3</sup>

4.05. इस धारा के अधीन यह अपराध का एक संघटक नहीं है कि सभी पक्षकारों को एक ही अवैध कृत्य करने के लिए सहमत होना चाहिए। इसमें अनेक कार्यों का किया जाना समाविष्ट हो सकता है। जहां अभियुक्तों को अवैध कार्यों के तीन प्रकारों को करने का षड्यंत्र करने के लिए आरोपित किया जाता है वहां मात्र यह तथ्य कि उनमें से सभी ऐसे प्रत्येक अपराध की बाबत पृथक्तः सिद्धोष नहीं किए जा सकते। इस प्रश्न पर विचार करने के लिए कोई सुसंगति नहीं है कि षड्यंत्र का अपराध किया गया है अथवा नहीं। वह सभी अवैध कार्य करने के षड्यंत्र के अपराध के दोषी द्वारा जा सकते हैं, भले ही व्यक्तिक अपराधों के लिए उनमें से सभी दोषी नहीं हों।<sup>4</sup> यह आवश्यक नहीं है कि षड्यंत्र का प्रत्येक सदस्य षड्यंत्र के पूर्व और जानता हो।<sup>5</sup> इस धारा के अधीन ऐसा कोई निश्चित प्रयोजन होना चाहिए जिसके बारे में पक्षकार वार्ता कर रहे हैं या जिसका उन्होंने षड्यंत्र किया है।

4.06. विधि आयोग की 42वीं रिपोर्ट में यह अभिमत था कि लालू आपराधियों अथवा दौड़िक अवैध कार्यों को करने की सद्व्यवस्था के लिए दंड देने की न तो सैद्धांतिक अधिकारिता है और न ही व्यावहारिक आवश्यकता। व्यवहार में ऐसे छोटे-मौटे बड़यों के कुछ प्रादृष्टवेत अभियोजना को राज्य सरकार अथवा उसके अधिकारियों द्वारा मंजूरी दी जाती है, इसीलिए, यह सिफारिश की गई थी कि धारा 120क का जो आपराधिक बड़यों को परिभाषित करती है, निम्नवत् पुनरीक्षण किया जाना चाहिए:-

“120क. जहां दो या अधिक व्यक्ति मृत्यु से, आजीवन कारावास से, दो वर्ष या उससे अधिक अवधि के किसी मात्रि के कारावास से, दंडनीय अपराध करने या ऐसा अपराध कारित किए जाने के लिए सदमत होते हैं, वहां यदि सदमति अपराधिक घटयों की जाती है।

स्पष्टीकरण 1.—इसका कोई महत्व नहीं है कि अपराध का किया जाना ऐसी सहमति का चरम लक्ष्य है अथवा नहीं वास्तव यह उस लक्ष्य का आनंदगिक भाग है।

स्पष्टीकरण 2.—आपराधिक घट्यंत्र को गठित करने के लिए यह आवश्यक नहीं है कि सहमति के अनुसरण में कोई कार्य या लक्ष्य लोप होगा।”

4.07. यह उल्लेखनीय है कि भारतीय दंड संहिता (संशोधन) विधेयक, 1978 मौन है और आपराधिक धृत्यंत्र के अपराध के बारे में कोई परिवर्तन उपदर्शित नहीं किया गया है। किन्तु तत्कालीन विधि आयोग का उसकी 42वीं रिपोर्ट में यह अभिमत था कि लघु अपराधों के लिए आपराधिक धृत्यंत्र इस अध्याय के अधीन नहीं आना चाहिए। इस परिपेक्ष में यह प्रस्तुत है कि लघु अपराध, गंभीर प्रकृति के किसी अपराध की दिशा में ले जा सकते हैं और ऐसे अपराधों को संबंधित तथ्य और कार्य के सिद्धांत के अनुसार, पृथक कर पाना सरल नहीं होगा।

इसके अतिरिक्त, आपराधिक घटयंत्र का अपराध अन्य अपराधों से भिन्न है। अन्य अपराधों में कोई दांडिक कार्य करने का आशय तब तक स्वयं में अपराध नहीं है जब तक कि कोई आत आशय को पूरा करने के लिए की जाती है, उसको करने के लिए तुल्य होती है या कोई कार्य करने का प्रयास किया जाता है। दूसरी ओर, घटयंत्र में कोई कार्य करने की मात्र सहमति या दुरभिसंधि होती है यह आवश्यक नहीं है कि उसे किया जाता है या नहीं और धारा 120क में आन्वयिक दायित्व का सिद्धांत ही अंतर्विष्ट नहीं है। यदि कोई अभियुक्त आपराधिक घटयंत्र का दोषी पाया जाता है, भले ही वह लघु अपराध के लिए क्यों न हो, तो उसे इस धारा के अधीन सिद्धांत किया जाना चाहिए।

4.08. इसमें यह सुझाव है कि इस धारा में छेड़छाड़न की जाए वन्येकि ठीक यह कार्य कर रही है।

“120ख. आपराधिक षड्यंत्र का दंड—(1) जो कोई मृत्यु, [आजीवन कारावास] या दो वर्ष या उससे अधिक अवधि के कठिन कारावास से दंडनीय अपराध करने के आपराधिक षट्यंत्र में शरीक होगा, यदि ऐसे षट्यंत्र के दंड के लिए इस सहित में कोई अभिव्यक्त उपबंध नहीं है, तो वह उसी प्रकार दंडित किया जाएगा, मानो उसने ऐसे अपराध का दुष्प्रेरण किया था।

(2) जो कोई पूर्वोक्त रूप से दंडनीय अपराध को करने के आपराधिक षड्यंत्र से भिन्न किसी आपराधिक षट्यंत्र में शारीक होगा, वह दोनों में से किसी भाँति के कारावास से, जिसकी अवधि छह मास से अधिक की नहीं होगी, या जुमनिये से, या दोनों से, दण्डित किया जाएगा।”

4.09. यह धारा, पूर्ववर्ती धारा की अनुपूरक है और उसमें किए गए अपराध के लिए दंड का उपबंध करती है। यह आत्मध्यान देने योग्य है कि दंड के प्रयोजनों के लिए धारा 120ख, आपराधिक षड्यंत्र को दो वर्गों में विभाजित करती है, जहां षड्यंत्र किसी गंभीर अपराध को करने के लिए है, अर्थात् दो या उससे अधिक अवधि के लिए कारावास से दंडनीय कोई अपराध, वहां अपराधी उसी प्रकार दंडित किया जाएगा मात्र उसने ऐसे अपराध का दुष्येण किया हो। दूसरे प्रवर्ग में, कोई अन्य अपराध (जिसके अंतर्गत केवल जुमनि से दंडनीय अपराध भी है) करने के लिए षड्यंत्र तथा अपराध से भिन्न कोई अवैध कार्य करने के पद्धयंत्र सम्मिलित हैं और उनके लिए उपधारा (2) में एक समान दंड का, अर्थात् दोनों में से किसी मात्रि के कारावास से, जिसकी अवधि छह मास से अधिक नहीं होगी या जुमनि से, या दोनों से, का उपबंध किया गया है। यह मानते हुए कि लघु-षट्यंत्रों को न्यायालयों के समक्ष किसी व्यक्ति द्वारा अधिरोपित करने के लिए छोड़ देना खतरनाक होगा, दंड प्रक्रिया संहिता में यह उपबंध किया गया है कि कोई न्यायालय उनका संज्ञान सिवाय तब से नहीं करेगा जब कि शिकायत राज्य सरकार या इस निमित्त सशक्त किसी अधिकारी के आदेश द्वारा या उसके प्राधिकार के अधीन की गई हो।

दूसरे शब्दों में, आपराधिक घटयंत्र के लिए दंड अधिक कठोर है, यदि सदमति कोई गंभीर अपराध करने के लिए है जो कम कठोर है, यदि सदमति कोई ऐसा कार्य करने के लिए है, जो यद्यपि अवैध है किन्तु मृत्यु, आजीवन कारावास, या दो वर्ष से अधिक अवधि के कठिन कारावास से दंडनीय अपराध नहीं है। यह धारा वहां लागू होती है, जहां घटयंत्र के सदस्यों द्वारा, जो उस घटयंत्र की अवधि के दौरान पक्षकार हैं, जिसके लिए वे इस धारा के अधीन आरोपित किए गए हैं, कोई अपराध नहीं किया गया है।

4.10. इंगलैंड में षड्यंत्र की विधि इतनी व्यापक नहीं है जितनी की भारत में है। षट्यंत्र न्यायालय के विवेक पर सिवाय हत्या के मामले में जहां परिनियम द्वारा 10 वर्ष का अधिकतम दंड है, जुमनि या कारावास से देणीय सामान्य विधि का अपराध है। यह दो या अधिक व्यक्तियों के बीच किसी अवैध प्रयोजन को प्रभावी बनाने के लिए सहमति है। जब कि किसी अपराध के अनाभ्यारोप अपराध का किया जाना स्वभावतः अवैध प्रयोजन के रूप में माना जाता है वहां किसी अभ्यारोप षट्यंत्र के अनापराधिक अवैध प्रयोजनों की बाबत कोई संक्षिप्त या स्पष्ट नियम नहीं है, कपटवंचित करने, ऐसा अपकृत्य करने, जिसमें विद्वेष अंतर्गत हो या लोक रिष्ट करने के षट्यंत्र भोटे तौर पर अभ्यारोप हैं, संविद भंग करने या उसके लिए उत्तेजित करने का षट्यंत्र संभवतः व्याज के गांग में अभ्यारोप नहीं है।

4.11. यद्यपि, धारा 120ख की वर्तमान उपधारा (1) केवल दो वर्ष या उसके अधिक की अवधि के कठिन कारावास से देढ़नीय अपराधों को ही निर्दिष्ट करती है। फिर भी, वे अपराध, जो दो वर्ष या उससे अधिक की अवधि के किसी भाँति के कारावास से देढ़नीय हैं, आपराधिक षड्यंत्र की परिभाषा के अंतर्गत लाए जाने चाहिए। विधि आयोग द्वारा सुझाया गया द्वितीय स्पष्टीकरण उसी प्रकार है जैसाकि धारा 121क का स्पष्टीकरण है। यद्यपि, यह पूर्णतः आवश्यक नहीं है फिर भी, यह वांछनीय प्रतीत होता है कि उसे इस धारा में भी होना चाहिए।

धारा 120ख की उपधारा (1) के अधीन आपराधिक बहुयंत्र का हर पक्षकार उसी प्रकार से दंडित किए जाने का दायी है मानो उसने आशयित अपराध का दुष्प्रेरण किया हो। इसका तात्पर्य यह है कि बहुयंत्र के प्रत्येक मामले में, धारा 5 में अंतर्विष्ट समुचित उपबंध खोजे और लागू किए जाने चाहिए। अतः इस धारा को स्वतः पूर्ण बनाना स्पष्टतः अविधिमान्य होगा।

इसीलिए, तत्कालीन विधि आयोग ने, अपनी 42वीं रिपोर्ट में यह सिफारिश की थी कि धारा 120ख को निम्नवत् पुनर्रीक्षित किया जाना चाहिए ।

“120ख. जो कोई ऐसे आपराधिक घट्टयंत्र में सदयुक्त होगा, जहाँ ऐसे घट्टयंत्र के दंड के लिए कोई अभिव्यक्त उपबंध नहीं है—

(क) यदि अपराध, जो बहुयंत्र के उद्देश्य को पूरा करने के लिए किया जाता है अथवा कारित किया जाता है या बहुयंत्र के अनुसरण में किया जाता है तो उस अपराध के लिए उपबंधित दंड से दंडनीय होगा, और

(ख) यदि बहुयंत्र के अनुसरण में, अपराध नहीं किया जाता है, तो उस अपराध के लिए उपबंधित किसी भाँति के कारावास से, जिसकी अवधि उस अपराध के लिए उपबंधित अधिकतम अवधि के आधे तक हो सकेगी या ऐसी जुमने से, जो उस अपराध के लिए उपबंधित है या दोनों से, दंडनीय होगा।<sup>5</sup>

4.12. ऐसा प्रतीत होता है कि विधि आयोग ने, धारा 120ख को स्वतः पूर्ण बनाने के आशय से उस धारा के पुनरीक्षण के लिए सिफारिश की थी। किन्तु यह सिफारिश भाषा को अस्पष्ट बना देगी। इसलिए, इस सिफारिश को भारतीय दंड संहिता (संशोधन) विधेयक, 1978 में शामिल नहीं किया जा सका, जो इस धारा के बारे में मौन है।

यह धारा निःसंदेह बहुत महत्वपूर्ण है क्योंकि यह ऐसे आपराधिक बहुयंत्र के लिए ही दंड का उपबंध करती है, जहाँ ऐसे बहुयंत्र के दंड के लिए संहिता में कोई अधिकार उपबंध नहीं किया गया है। इसलिए, जहाँ आपराधिक बहुयंत्र धारा 107 के अधीन दुष्प्रेरण के तुल्य है, वहाँ इस धारा के उपबंधों का अवलंब लेना अनावश्यक है क्योंकि संहिता में ऐसे बहुयंत्र के दंड के लिए विनिर्दिष्ट बहुयंत्र मुख्य अपराध से पृथक रूप से दंडनीय एक पृथक अपराध है।<sup>6</sup>

4.13. उपर्युक्त विचार-विमर्श के आलोक में, हमारा यह अभिमत है कि इस विषय में हमारी सिफारिश दोनों धाराओं के लिए, पूर्व उल्लिखित कारणों से, एक समान है। दूसरे शब्दों में, अध्याय 5क को छेड़ने की आवश्यकता नहीं है क्योंकि यह बहुयंत्र के अपराध के लिए अवशिष्ट उपबंध के समान कार्य करता है।

## घाद टिप्पण

- सोपन दास बनाम राज्य (1955) 25 एस० सी० आर० 88।
- दूर सुहम्मद बनाम राज्य (1970) एस० सी० सी० (क्रिमिनल)।
- भारत संघ बनाम प्रफुल्ल कौ. सोनल (1979) 25 एस० सी० सी० (क्रिमिनल) 609।
- मेजर ई० जी० बार से बनाम राज्य, ए० आई० आर० (1961) एस० सी० 1762।
- डालभिया आर कौ. बनाम दिल्ली प्रशासन (1962) II क्रि० ला० ज० 805।
- महेशचन्द्र 1986(1) क्राइम्स 63 डाजारी बरिया, 192, 30 क्रि० ला० ज० 473 भी देखिए।

## अध्याय 5

### वित्तीय स्कैम (घोटाला)

#### लोक संस्थाओं के कपटवंचन का बहुयंत्र

5.01. ऐसे अनेक गंभीर आर्थिक अपराध हैं, जो समाज को नुकसान पहुंचा रहे हैं। कहने की आवश्यकता नहीं कि इन अपराधों को करने का हेतु व्यक्ति का लोग है और प्रयोग में लाई जाने वाली पद्धति कपट की प्रकृति की नहीं है। संघ सरकार ने, वर्ष 1962 में “सम्याम समिति”<sup>7</sup> नाम से एक समिति नियुक्त की थी, जिसने सतक सर्वेक्षण के पश्चात सामाजिक, आर्थिक अपराधों के 8 प्रवर्ग किए थे, जिनमें से कुछ निम्नवर्त हैं:—

- देश के आर्थिक विकास को रोकने या उसमें रुकावट ढालने तथा उसकी आर्थिक स्थिति को खतरा पहुंचाने के लिए परिकलित अपराध;
- करों का अपवंचन और परिवर्तन; और
- मुनाफाखोरी, कालाबाजारी और जमाखोरी।

5.02. द्वाल में विभिन्न क्षेत्रों, जैसे बैंकों, अस्पतालों, सार्वजनिक शेयरों के विनिधान, जिनमें करोड़ों रुपए का घोटाला सामने आया है, में अनेक प्रकार के स्कैम हुए हैं। शिवसागर तिवारी बनाम भारत संघ<sup>8</sup> में उच्चतम न्यायालय ने भी यह सर्वेक्षण किया कि देश में अनेक घोटाले हुए हैं।

5.03. स्पष्टतः, वित्तीय घोटालों का मूल सार्वजनिक धन के कपटवंचन में है जो करोड़ों रुपए का हुआ है। राष्ट्र की अर्थनीति चरमरा उठती है जब ऐसी विराट रकम, कपट साधनों द्वारा निहित द्वितीयों के पास चली जाता है, निर्धारित नागरिकों के उस सक्षम अंजित धन को लेकर जिसे उसने, अपनी संपत्ति के अर्जन के लिए अथवा अपने जीवन में अपनी जीविका के उपर्याप्ति के लिए विनिहित की थी, जिनका इन अपराधियों द्वारा गबन कर दिया जाता है। इन सबसे परे यदि ऐसे अपराधी दोषकालिक निवारण के पश्चात भी निरापद रह जाते हैं अथवा उन्हें इन घोटालों की रकम की तुलना में नगण्य रकम का कपट करने वाले अभियुक्त जैसे ही दंड दिए जाते हैं तब जनता का देश में विद्यमान न्याय की व्यवस्था से विश्वास उठाने लगता है। इसका सीधा संबंध देश की लोकतात्रिक संरचना में विश्वास के साथ है और व्यवस्थित समाज का अस्तित्व ही खतरे में पड़ जाता है। ए० जयराम और अन्य बनाम आंध प्रदेश राज्य माफूल सी बी आई<sup>9</sup> के मामले में उच्चतम न्यायालय ने यह निंदा की कि बड़े पैमाने पर उर्वरक स्कैन्डल में अन्तर्गत कर्मचारी, राज्य पुलिस द्वारा की गई विलंबित जांच के कारण निरापद छूट गए। यह अभिनिर्धारित किया गया।

“यह वास्तव में दुखद स्थिति है कि इतने बड़े पैमाने में हुए उर्वरक स्कैन्डल में सही समय पर उचित कदम नहीं उठाए गए थे और विश्वासोत्पादक तथा अभियोज्य साक्ष्य के आमाव में अभियुक्तों को, जो सरकारी कर्मचारी थे, संदेह का लाभ देकर दोषमुक्त कर दिया है। हमें ऐसा लगता है कि आयातित उर्वरक के परिवहन में ऐसे बड़े पैमाने पर स्कैन्डल न हुआ जाता, यदि सरकारी कर्मचारियों की, जो अभियोजित किए गए हैं, बड़ी संख्या इसमें अन्तर्गत न होती। यह वैसा नहीं है कि वरिष्ठ सरकारी अधिकारियों ने भी उक्त कपट या उसे छिपाने के अपराध करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभायी थी। राज्य पुलिस द्वारा की गई विलंबित जांच, जिसके कारण बहुत समय बाद सीबीआई द्वारा जांच की आवश्यकता पड़ी, पुलिस प्रशासन की दक्षता पर एक दुखद टिप्पणी मात्र है.....”

दिल्ली विकास प्राधिकरण बनाम स्कीपर कांस्ट्रेक्शन कंपनी (प्रा०) लिमि०<sup>4</sup> के मामले में यह अभिनिर्धारित किया गया था:—

“निगमित सत्ता की धारणा, व्यापार और वाणिज्य को प्रोत्साहन देने और उसका संवर्धन करने के लिए विकासित की गई थी, अवैध कार्य करने और लोगों के कपटवंचन के लिए नहीं। इसलिए जहाँ निगमित प्रकृति को अवैध कार्य करने या देश में विभिन्न रूपों में अच्छे छाते पैमाने पर हो रहा है। उपर स्टेटा के (सामाजिक स्तर) कुछ व्यक्तियों (जिनसे समाज के धनी और प्रभावशाली वर्ग के व्यक्ति अभिग्रह हैं) ने “सम्पत्ति कैरियर” को अपने जीवन का एकमात्र लक्ष्य बना

“हम कुछ संप्रेक्षण करने के लिए आध्य हैं कि इस मामले में जो कुछ हुआ वह उस बात का हृष्टान मात्र है, जो हमारे देश में विभिन्न रूपों में अच्छे छाते पैमाने पर हो रहा है। उपर स्टेटा के (सामाजिक स्तर) कुछ व्यक्तियों (जिनसे समाज के धनी और प्रभावशाली वर्ग के व्यक्ति अभिग्रह हैं) ने “सम्पत्ति कैरियर” को अपने जीवन का एकमात्र लक्ष्य बना

लिया है। उस देश में, जहां उस देश के पैदा हुए महान सपूत्रों ने कहा था कि "साध्य की अपेक्षा साधन अधिक महत्वपूर्ण है" उनके लिए असंगत बन गए हैं। अक्खड़पन की भावना प्रचलित है: हर काम किया जा सकता; प्रत्येक प्राधिकारी या की उनके संस्था से काम कराया जा सकता है; आवश्यकता है कि उसे ठीक ढंग से "आतंचीत करने" अधारा "वश में करने प्रत्येक संस्था से काम कराया जा सकता है; आवश्यकता है कि उसे ठीक ढंग से "आतंचीत करने" अधारा "वश में करने की" उनमें विधि के प्रति धोर असम्मान, अर्थात् अवमानना विकसित हो गई है। वे सोचते हैं कि कानून अन्य व्यक्तियों के लिए है, उनके लिए नहीं। न्यायालय देश में इस प्रवृत्ति का मुकाबला करने का प्रयास कर रहे हैं। उन्हें कुछ सफलता लिया है, उनके लिए नहीं। किन्तु किन्तने विषयों को हम सम्भाल सकते हैं और ऐसे विषय भी मिली हैं जैसा कि हाल की घटनाएं प्रदर्शित करती हैं। किन्तु किन्तने विषयों को हम सम्भाल सकते हैं और ऐसी राज्य अभी भी विद्यमान है। वास्तविक प्रश्न यह है कि ऐसी राज्य व्यवस्था को किस प्रकार सक्रिय बनाया जाए, जो ऐसी राज्य अभी भी विद्यमान है। वास्तविक प्रश्न यह है कि ऐसी राज्य व्यवस्था को किस प्रकार सक्रिय बनाया जाए, जो ऐसी राज्य अभी भी विद्यमान है। किन्तु इस न्यायालय में न्यायाधीशों को भी हम ऐसा मानते हैं कि मनोव्यव्याधि के कारण यह पूछने की चलाना चाहते हैं। किन्तु इस न्यायालय में न्यायाधीशों को भी हम ऐसा मानते हैं कि मनोव्यव्याधि के कारण यह पूछने की अनुज्ञा है "हमने पचास वर्ष से भी कम समय में अपने देश को क्या बना दिया है?" विधि के सम्मान और, प्रतिष्ठा कहां गई? और इसके लिए कौन जिम्मेदार है?

इस प्रकार इस निश्चय पर पहुंचने के लिए और समर्थन अपेक्षित नहीं है कि उपर उद्धृत विभिन्न प्रकार के घोटालों को अहंत ही प्रभावशाली रीति से सुलझाया जाना है।

5.04. कहने की आवश्यकता नहीं कि अधिकतर कपट साधारण रूप से व्यष्टिक तौर पर नहीं किए जाते हैं अपितु, वे संगठित रीति से दूसरों के सहयोग और सहायता से किए जाते हैं।

5.05 विधि आयोग (प्र०के०) ने “किमिनल कांसपिरेसी डू डिफार्ड” (लॉ कॉ नं० 228) संबंधी रिपोर्ट में कपटवंचन के घटयन्त्र पर विचार किया है जो कामन लॉ आफन्स बना हुआ है। कपटवंचन के घटयन्त्र का क्षेत्र अत्यधिक व्यापक है। जैसाकि इसके नाम से उपर्युक्त होता है यह किसी एक व्यक्ति द्वारा अकेले में कार्य करते हुए नहीं किया जा सकता।

आयोग (यूके०) ने, कपटवंचन के षड्यंत्र की निम्नवत् व्याख्या की है:-

“2.7. मोसेस (1991) किसिनल एल आर 617 में कोर्ट आफ अपील के विनिश्चय में लोक सेवक को उसके लोक कर्तव्य के विरुद्ध कार्य करने में धोखा देने की सहमति संबंधित कपटवंचन के पढ़ायंत्र के प्रयोग का एक हाल का दृष्टांत दिया गया है। प्रतिपक्षियों ने ऐसे अप्रवासियों द्वारा कार्य अनुज्ञापत्रों के लिए आवेदनों को सुकुर बनाने के लिए बढ़ायंत्र किया जाना चाहिए। अनुज्ञापत्र अभिप्राप्त करने से एक पासपोर्ट स्टाप द्वारा रोक दिया गया था। यह धोखा आवेदकों के बारे में जिहें ऐसे अनुज्ञापत्र अभिप्राप्त करने के रूप में था जिससे उनको निर्गत की जाने वाली राष्ट्रीय बीमा संख्या की संभाव्यता बढ़ गई थी।

2.8. वह सीमा, जिस तक अनार्थिक हानि कारित करने का षड्यंत्र इस प्रवर्ग से आगे बढ़ जाता है, स्पष्ट नहीं है। प्राधिकारों के बीच विरोध है। विर्दस (1975 ए सी 842) के द्वारा ऑफ लार्डस ने विभिन्न न्यायिक अभिमत व्यक्त किए थे। यह संकीर्ण अभिमत कि इस प्रकार का मामला कपट के षड्यंत्र द्वारा हुए अनार्थिक लाभ का ही एक रूप था, श्री लार्ड थे। यह संकीर्ण अभिमत कि इस प्रकार का मामला कपट के षड्यंत्र द्वारा हुए अनार्थिक लाभ का ही एक रूप था, श्री लार्ड थे। द्विप्लार्ड द्वारा स्काट (1975) एस सी 819, 841-बी सी में व्यक्त किया गया था। लार्ड रॉड्किलफ और राड हैनिंग द्वारा बेलदम (1961) एस सी 103 ने व्यक्त व्यापक अभिमत, प्रिवी काउंसेल द्वारा वाई यू-त्संग (1992) 1 एस सी 269 में अनुमोदित किए गए थे जिसमें सिवेले की लार्ड गॉप्ट ने, जिन्होंने ओर्ड का मत बताया था, कहा कि लोक कर्तव्यों से संबद्ध मामले किसी विशेष प्रवर्ग में नहीं आते अपितु, साधारण सिद्धांत भी सौदाहरण प्रतिपादित करते हैं कि कपटव्यंत्र के स्वयं में अर्थिक हानि कारित करने का आशय अन्तर्गत होना आवश्यक नहीं है।

120 खण्ड, भारतीय दंड संहिता में अंतःस्थापित कर ली जाएः—

“120 खरबों लोक संस्था, आदि के कपटवंचन का आपराधिक घट्यंत्र । जब दो या अधिक व्यक्ति किसी लोकसंस्था या स्थानीय प्राधिकरण को अपने या किसी अन्य व्यक्ति के लिए सदोष अभिलाभ कारित करने या कारित करने के लिए कपटपूर्वक या बेईमानी से अथवा ऐसी लोकसंस्था या स्थानीय प्राधिकरण को करने या कारित करने के लिए कपटवंचित करने को सहमत होते हैं तो ऐसी आपराधिक घट्यंत्र कहलाती है और जो कोई ऐसे आपराधिक घट्यंत्र में शारीक होगा वह आजीवन कारावास से, या दोनों में से किसी भाँति के कारावास से, जिसकी आवधि 10 वर्ष तक हो सकेगी, दंडनीय होगा और जुमानि का भी दायी होगा:

परन्तु कोई सहमति, कपटवेचन का आपराधिक घटयंत्र तब तक न होगी जब तक कि सहमति के अलावा कोई कार्य उसके अनुसरण में उस सहमति के एक या अधिक पक्षकारों द्वारा नहीं कर दिया जाता।

स्पष्टीकरण—इस धारा के प्रयोजनों के लिए ऐसा कोई बैंक या वित्तीय संगठन या कंपनी या निकाय या निगमित निकाय, जो सरकार के स्वामित्व में है या उसके नियंत्रणाधीन है, “लोकसंस्था” समझे जाएंगे।

## पाद टिप्पणी

1. श्री के सन्यानम् की अध्यक्षता में गठित भ्रष्टाचार निवारण संबंधी समिति की रिपोर्ट, 1962।
  2. 1996 (9) स्केल 680।
  3. 1995 (4) स्केल 393।
  4. ए आई आर 1996 एस सी 2005।
  5. विधि आयोग (यू. के.०) (लॉ काम नॉ 228) विधि सुधार का चौथा कार्यक्रम की मद 5 “क्रिमिनल लॉ क्रांसपिरिसी दू डिफ्राइड” क्रिमिनल लॉ।
  6. पूर्वोक्त टिप्पण 4।

## अध्याय 6

### प्रयत्न—विधेयक में नए अध्याय 5ख के रूप में नई धारा 120ग और 120घ का अंतःस्थापन

भारतीय दंड संहिता (संशोधन) विधेयक, 1978 में खंड 45 के अधीन इस नए अध्याय के लिए उपचंड किया गया था। गलती से विधेयक, के खंड 46 से 51 तक भी इस अध्याय में समिलित किए गए थे जो, वस्तुतः भारतीय दंड संहिता की विषय सूची के अनुसार एक स्वतंत्र अध्याय, अर्थात् अध्याय 6 गठित करते हैं। इसलिए यह नया अध्याय केवल धारा 120 ग और 120घ तक ही परिसीमित है, जो प्रयत्न के संबंध में है।

6.02 प्रयत्न का विषय पढ़ने ही अंतिम अध्याय, अर्थात् अध्याय 23 में (जिसमें अवधिष्ट उपबंध के रूप में संहिता की केवल एक धारा 511 ही है) समिलित किया जा चुका है। तथापि, विधेयक में यह ठीक अध्याय 5क के पश्चात्, संभवतः इस धारा के महत्व को और हुआ दुष्प्रेरण तथा घटयंत्र के साथ इसके निकट संबंध को देखते हुए अंतःस्थापित किया गया है। विधेयक में एक इस नए अध्याय के अंतःस्थापन द्वारा, जिसमें केवल 2 धाराएँ हैं, अर्थात् धारा 120ग और 120घ हैं, धारा 511 का लोप किया गया है।

6.03 यह उल्लेखनीय है कि संहिता की अनेक धाराएँ ऐसे कार्यों को, जो विशिष्ट अपराध का गठन करते हैं, परिभाषित करते समय, उन कार्यों को करने के प्रयत्न को स्वयं कार्य करने के तुल्य रखा है और उसी सीमा तक दंडनीय बनाया है। संहिता के ऐसे उपबंध संक्षेप में निम्नलिखित हैं:

(1) धारा 121 के अधीन, जिससे नया अध्याय प्रारंभ होता है भारत सरकार के विरुद्ध युद्ध करने या ऐसा युद्ध करने का कोई प्रयत्न, दोनों ही मृत्यु से दंडनीय अपराध है।

(2) धारा 124 में राष्ट्रपति और अन्य उच्च पदाधिकारियों को उनकी विधिपूर्ण शक्तियों में से किसी शक्ति का प्रयोग करने के लिए या प्रयोग करने से विरत रहने के लिए उत्प्रेरित करने या विवश करने के आशय से उन्हें सदोष अवरोध में रखने का प्रयत्न।

(3) धारा 125 में, भारत सरकार के साथ शांति या मैत्री संबंध रखने वाली किसी एशियाई शक्ति की सरकार के विरुद्ध युद्ध करने का प्रयत्न।

(4) धारा 130 के अधीन, किसी युद्ध के कैदी को बचाने का प्रयत्न करने वाला उसी सीमा तक दंडनीय है जिस सीमा तक वह जो वस्तुतः ऐसे युद्ध कैदी को बचाता है।

यदि धारा 511 का कठोर रूप से एक अवधिष्ट उपबंध के रूप में निर्वचन करने का प्रयास किया जाए तो उसमें अंतर्विष्ट कोई भी विचार इस निर्वचन के लिए लागू नहीं होगे कि धारा 121 के अधीन युद्ध करने का प्रयत्न अध्या धारा 130 के अधीन युद्ध के कैदी को बचाने का प्रयत्न इस प्रकार गठित कोई मार्गदर्शन नहीं देती है।

(5) धारा 153क—शत्रुता की भावना, आदि के संप्रवर्तन का प्रयत्न।

(6) धारा 161—किसी लोक सेवक द्वारा अवैध परितोषण लेने का प्रयत्न।

(7) धारा 162—लोक सेवक पर भ्रष्ट या अवैध साधनों द्वारा असर डालने के लिए परितोषण लेने का प्रयत्न।

(8) धारा 163—किसी लोक सेवक पर वैयक्तिक असर डालने के लिए परितोषण लेने का प्रयत्न।

(9) धारा 165—किसी लोक सेवक द्वारा, ऐसे लोक द्वारा की गई कार्यवाही या कारबार से सम्पूर्णत व्यक्ति से, प्रतिफल के बिना, मूल्यवान चीज अभिप्राप्त करने का प्रयत्न।

(10) धारा 196—उस साक्ष्य को काम में लाने का प्रयत्न, जिसका मिथ्या होना जाता है।

(11) धारा 213—अपराधी को दंड से प्रतिच्छादित करने के लिए परितोषण अभिप्राप्त करने का प्रयत्न।

(12) धारा 239 और धारा 340—किसी व्यक्ति को कूटकूत सिक्का प्राप्त करने के लिए उत्प्रेरित करने का प्रयत्न।

(13) धारा 241—किसी व्यक्ति को किसी सिक्के को असली सिक्के के रूप में प्राप्त करने के लिए उत्प्रेरित करने का प्रयत्न जबकि अपराधी उस समय, जब वह सिक्का उसके कब्जे में आया था, उसका कूटकूत होना नहीं जानता था।

(14) धारा 307—पार्श्व में के सिवाय प्रयत्न शब्द का प्रयोग किए बिना, हत्या करने का प्रयत्न परिभाषित करती है।

(15) धारा 308—जो इसी प्रकार आपराधिक मानव वध, जो हत्या नहीं है, करने का प्रयत्न परिभाषित करती है।

पूर्ववर्ती अंतिम दो धाराओं में कोई ऐसा कार्य ऐसे आशय या जान, और ऐसी परिस्थितियों के अंतर्गत किया गया है कि यदि उस कार्य से वह मृत्यु कारित कर देता है तो, यथास्थिति हत्या का या हत्या की कोटि में न आने वाला आपराधिक मानव वध का दोषी माना जाएगा। उस आनुमानिक शर्त को यदि वह उस कार्य द्वारा मृत्यु कारित करता है, उन मामलों में लागू किया जाना आसान नहीं है कि जहां वह कार्य किसी की मृत्यु कारित करने के लिए शारीरिक रूप से अश्वम व्यक्ति द्वारा किया गया हो। प्रझन यह है कि क्या यह धारा 307 के अंतर्गत न आने वाले की हत्या का प्रयत्न होगा अध्या धारा 308 के अंतर्गत न आने वाला मानव वध करने का प्रयत्न, किन्तु वह धारा 115, अवशिष्ट धारा के अधीन उस रूप में दंडनीय होगा, मात्र पूर्ण रूप से सैदातिक नहीं है क्योंकि इसका न्यायालय द्वारा पहले भी अधिकतर प्रयोग किया गया है।

(16) धारा 309—आज्ञा हत्या करने का प्रयत्न।

(17) धारा 385, 387 और 389—उद्दापन करने के लिए किसी को क्षति या अभियोजन के भय में डालने का प्रयत्न।

(18) धारा 391—डकैती करने के लिए पांच या अधिक व्यक्तियों का संयुक्त प्रयत्न।

(19) धारा 397, 394 और 398—लूट करने का प्रयत्न।

(20) धारा 460—मृत्यु या घोर उपहति कारित करने के लिए रात्रि में अनेक गृहमेदकों में से एक द्वारा प्रयत्न।

6.04. अंततः धारा 511 है जो निम्नवत है:—

“5.11 आजीवन कारावास या अन्य कारावास से दण्डनीय अपराधों को करने के प्रयत्न करने के लिए दंड—जो कोई इस संहिता द्वारा आजीवन कारावास से या कारावास से दंडनीय अपराध करने का, या ऐसा अपराध कारित किए जाने का प्रयत्न करेगा, और ऐसे प्रयत्न में अपराध करने की दिशा में कार्य करेगा, जहां कि ऐसे प्रयत्न के दंड के लिए कोई अभिव्यक्त उपबंध इस संहिता द्वारा नहीं किया गया है, वहां वह उस अपराध के लिए उपबंधित किसी भाँति के कारावास से उस अवधि के लिए, जो, यथास्थिति, आजीवन कारावास से आधे तक की या उस अपराध के लिए, उपबंधित दीर्घतम अवधि के आधे तक की हो सकेगी या ऐसे जुमनि से, जो उस अपराध के लिए उपबंधित है, या दोनों से, दंडित किया जाएगा।

#### दृष्टांत

(क) क, एक सन्दूक तोड़कर खोलता है और उसमें से कुछ आभूषण चुराने का प्रयत्न करता है। सन्दूक इस प्रकार खोलने के पश्चात् उसे जात होता है कि उसमें आभूषण नहीं हैं। उसने चोरी करने की दिशा में कार्य किया है, और इसलिए, वह इस धारा के अधीन दोषी है।

(ख) क, य की जेब में हाथ डालकर य की जेब से चुराने का प्रयत्न करता है। य की जेब में कुछ न होने के परिणामस्वरूप क अपने प्रयत्न में असफल रहता है। क इस धारा के अधीन दोषी है।

6.05. तथापि, विधि आयोग ने अपनी 42बी रिपोर्ट (पैरा 5.43) में यह कहा कि धारा 511 में प्रयुक्त भाषा बहुत उलझने वाली है। यह भी उल्लेख किया गया था कि धारा 309 भी आत्महत्या करने के प्रयत्न को कुछ इसी प्रकार परिभाषित करती है “जो कोई आत्महत्या करने का प्रयत्न करेगा और उस अपराध के करने के लिए कोई कार्य करेगा....”। इसलिए आपराधिक प्रयत्न गठित करने के लिए स्पष्टतः वो अपेक्षाओं का पूरा होना आवश्यक है, आर्थात्—

(i) अपराधी पहले कोई अपराध करने का प्रयत्न करे, जो वह अनुमानतः कोई कार्य करके ही कर सकता है किन्तु स्पष्टतः वह पर्याप्त नहीं है।

(ii) उसे, उस कार्य को करने में, जो प्रयत्न है, अपराध को करने की ओर कुछ और भी करना आवश्यक है।

6.06 प्रयत्न की परिभाषित करने की समस्या का यह संक्षेप में इस परीक्षण का काण्डन करते में निहित प्रतीक्ष होता है कि कब कार्य तैयारी के प्रक्रम से आगे बढ़ जाता है।

“प्रयत्न” को अवधारित करने के लिए वो परीक्षण है:—

(i) पहला परीक्षण निकटता का है। प्रायः उद्धृत कथन यह है कि सुदूरतः किसी अपराध के किए जाने की ओर ले जाने वाले कार्य, उसे करने के प्रयत्न के रूप में नहीं समझे जाते हैं। किन्तु, उससे ठीक संबद्ध कार्य प्रयत्न हैं, ऐसा निकटता के नियम का कथन है।

दूसरे शब्दों में, प्रयत्न किए जाने से तुरंत संबद्ध होना चाहिए मात्र सुदूरतः नहीं।

(ii) दूसरा परीक्षण अंतिम कार्य परीक्षण के रूप में जाना जाता है। अपराध के किए जाने की ओर ले जाने वाले सुदूर कार्य उसे करने का प्रयत्न नहीं माने जाते हैं किन्तु उससे तुरंत संबद्ध कार्य प्रयत्न है।

किन्तु अंतिम कार्य के इस परीक्षण में फिर भी स्पष्ट कमियां हैं। इसे उस स्थिति में लागू नहीं किया जा सकता है जहाँ अभियुक्त अमित्रः अपने उद्देश्य को पूरा करने का आशय रखता है जैसे धीरे-धीरे विषयकितकरण द्वारा हत्या। इसके अतिरिक्त, वह कार्य जिसका अपराधी द्वारा किया जाना शोष रहता है, विष को गिलास में रखता है और उसमें मदिरा में मिलने का आशय ही है किन्तु मदिरा वस्तुतः शिकार व्यक्ति द्वारा ले ली जाती है। यहाँ “अंतिम कार्य” जो अपराधी करना चाहता था, वास्तव में उसके द्वारा नहीं किया गया था किन्तु वह कृत्य इसे प्रयत्न होने से निवारित नहीं करता है।

6.07. प्रयत्न गठित करने के लिए अभियुक्त के कार्य ऐसे होने चाहिए जो स्वयं में स्पष्टतः और संदिग्ध रूप से अपराध किए जाने का आशय उपदर्शित करते हैं। सामन्त<sup>1</sup> ने जिसका अभिमत प्राप्तः उद्धृत किया जाता है निम्नवत् संप्रेक्षण किया,— “कोई अपराध करने के आशय के साथ किया गया कार्य तब तक आपराधिक प्रयत्न नहीं है जब तक कि वह ऐसी प्रकृति का न हो कि अपने आप में उस आपराधिक आशय का पर्याप्त साक्ष्य हो जिस आशय से वह किया जाता है। आपराधिक प्रयत्न न हो कि अपने आप में उस आपराधिक आशय का पर्याप्त साक्ष्य हो जिस आशय से वह किया जाता है। आपराधिक प्रयत्न ऐसा कार्य है जो “अपने आप में आपराधिक आशय प्रदर्शित करता है....कोई कार्य....जो अपनी निजी प्रकृति में और अपने आप में निर्देश है....मात्र ऐसे साक्ष्य द्वारा आपराधिक प्रयत्न के भीतर नहीं लाया जा सकता। वे आपराधिक प्रयोजन क्या थे जिनके साथ यह किया गया।”

6.08. अतः यह सुझाव दिया जाता है कि प्रयत्न में आपराधिक कार्य के लिए व्यावहारिक परीक्षण यह है कि अभियोजन यह सावित करे कि अभियुक्त द्वारा किए गए प्रयास उस बिंदु तक पहुंच गए हैं कि जहाँ वे अपने आप में यह स्पष्टतः उपदर्शित करते हैं कि वह लक्ष्य क्या था जिसकी ओर वे निर्दिष्ट थे। दूसरे शब्दों में, किए गए प्रयास अपने आप में प्रथमदृष्ट्या यह दर्शित करने के लिए पर्याप्त हैं कि अपराधी का आशय वह अपराध करने का था जिसके प्रयत्न का उस पर आरोप लगा है।

यह भी उल्लेखनीय है कि ‘प्रयत्न’ गठित करने के लिए आवश्यक आपराधिक कार्य पूरा हो जाता है यदि अभियुक्त ऐसा कार्य करता है जो जिसकी ओर वे निर्दिष्ट थे। दूसरे शब्दों में, किए गए प्रयास अपने आप में प्रथमदृष्ट्या यह दर्शित करने के लिए किए गए रूप में युक्तियुक्ततः माना नहीं जा सकता।

उच्चतम न्यायालय ने प्रयत्न की आवश्यक निम्नवत् अपना अभिमत व्यक्त किया था<sup>2</sup> :—

“कोई व्यक्ति किसी विशिष्ट अपराध को करने के प्रयत्न का अपराध करता है जब (i) वह उस विशिष्ट अपराध को करने का आशय रखता है और (ii) वह तैयारियां करने के पश्चात और अपराध करने के आशय से, उसके किए जाने की दशा में उसका कोई कार्य करता है, ऐसा कार्य आवश्यक नहीं कि उस अपराध के किए जाने की ओर उपरांत कार्य हो किन्तु वह कार्य उस अपराध के किए जाने के क्रम के दौरान किया गया कार्य अवश्य हो।”

प्रध्यात न्यायशास्त्री सर जेम्स स्टीफन, ने अपनी हाइजेस्ट लाफ क्रिमिनल लॉ के अनुच्छेद 50 में प्रयत्न को निम्नवत् परिभाषित किया है :—

“उस अपराध को करने के आशय से किया गया कार्य और कार्यों की किसी श्रृंखला का भाग है, जो उसका वस्तुतः उसका किया जाना गठित करते यदि उसमें व्यवधान नहीं पड़ता। वह बिंदु, जिस पर कार्यों की ऐसी श्रृंखला आरंभ होती है, परिभाषित नहीं किया जा सकता अपितु, वह हर विशिष्ट मामले की परिस्थितियों पर निर्भर करता है।”

6.09. ‘प्रयत्न’ के न्यायशास्त्री निर्वैचन को समझ लेने के पश्चात यह बिल्कुल स्पष्ट है कि ‘प्रयत्न’ के लिए अभियुक्त का निष्फल कार्य आवश्यक है। यदि वह सफल हो गया होता तो वह कार्य अपराध कहलाता किन्तु उसके लिए उसकी असफलता अपराध के प्रयत्न में संपरिवर्तित कर देती है। ऐसा ही अभियाम धारा 511 के दोनों दृष्टितौरों में है जहाँ यह कहा गया है कि कोई व्यक्ति निष्फल कार्य के दौरान, चोरी करने के प्रयास का दोषी है।

6.10. विधि आयोग ने, अपनी 42वीं रिपोर्ट में यह सिफारिश की थी कि सहिता का अंतिम अध्याय, जिसमें केवल धारा 511 वै. लोप कर दी जाए और उसके बजाय अध्याय 5ख के पश्चात ‘प्रयत्न’ शीर्षक से एक नया अध्याय 5ख, जिसमें दो धाराएं 120ग और 120घ हैं, अंतःस्थापित किया जाए :—

120ग. प्रयत्न की परिभाषा :

कोई व्यक्ति अपराध करने का प्रयत्न करता है, जब—

(क) वह, उसके करने के लिए अपेक्षित आशय या जान से उस अपराध को करने के लिए कोई कार्य करता है;

(ख) इस प्रकार किया गया कार्य अपराध करने से समीप से जुड़ा हुआ और निकटतम है; और

(ग) वह कार्य अपने उद्देश्य में, ऐसी परिस्थितियों के कारण विफल होता है जो उसके नियंत्रण में नहीं है।

#### दृष्टितौर

(क) क, य की हत्या के आशय से एक बन्दूक खरीदता है और उसमें गोली भरता है। यहाँ तक क हत्या करने के प्रयत्न का दोषी नहीं है। क, य पर बन्दूक से गोली चलाता है, वह हत्या करने के प्रयत्न का दोषी है।

(ख) क, य की हत्या विष से करने के आशय से विष खरीदता है और उसे भोजन में मिला देता है और अपने ही पास रखे रखता है, यहाँ तक क हत्या करने के प्रयत्न का दोषी नहीं है। क भोजन को य की मेज पर रखता है या उसे य के नौकर को य की मेज पर रखने के लिए देता है। क हत्या करने के प्रयत्न का दोषी है।

(ग) क किसी अन्य व्यक्ति का बक्सा चुराने का आशय रखता है जब वह द्रेन में यात्रा कर रहा है, बक्सा उठाता है और द्रेन से उतर जाता है। वह पाता है कि यह उसका अपना बक्सा है। चूंकि उसने उसके द्वारा आशयित अपराध को किए जाने की दिशा में कोई कार्य नहीं किया है, वह चोरी करने के प्रयत्न का दोषी नहीं है।

(घ) क, रत्नों को चुराने के आशय से य के सन्दूक को तोड़ कर खोल देता है, पर उसमें कोई रत्न नहीं पाता। उसके कार्य का उद्देश्य लक्ष्यों के अज्ञान के कारण पूरा नहीं हुआ, वह चोरी करने के प्रयत्न का दोषी है।

“120घ. प्रयत्न के लिए दंडः जो कोई आजीवन कारावास या एक विनिर्दिष्ट अवधि के कारावास से दण्डनीय अपराध के करने का प्रयत्न करने का दोषी होगा, वह, जहाँ ऐसे प्रयत्न के दण्ड के लिए कोई अभियुक्त उपबंध नहीं किया गया है वहाँ उस अपराध के लिए उपबंधित किसी भाँति के कारावास से, जिसकी अवधि, यथास्थिति, आजीवन कारावास की अवधि की आधी या उस अपराध के लिए उपबंधित कारावास की दीर्घतम अवधि की आधी हो सकेगी, या उस अपराध के लिए उपबंधित जुमनि से, या दोनों से, दंडनीय होगा।”

6.11. प्रयत्न की इस परिभाषा को दृष्टि में रखते हुए, जिसे हत्या और हत्या की कोटि में न आने वाले मानव वध के संबंध में, बिना किसी गमीर कठिनाई के लागू किया जा सकता है, विधि आयोग ने, अपनी 42वीं रिपोर्ट में आवश्यक नहीं समझा कि इन दोनों में किसी अपराध को करने के प्रयत्न को परिभाषित करने के लिए एक भिन्न सूत्र होना चाहिए। धारा 307 और 308 को निम्नवत् पुनरीक्षित करने की सिफारिश भी की गई थी।

“307. हत्या का प्रयत्न : जो कोई हत्या करने का प्रयत्न करेगा, वह कठिन कारावास से जिसकी अवधि दस वर्ष तक की हो सकेगी, दंडित किया जाएगा और जुमनि से भी दंडनीय होगा; और यदि ऐसे कार्य द्वारा किसी व्यक्ति की मृत्यु हो जाए तो अपराधी,—

(क) यदि वह आजीवन कारावास से दंडादिष्ट हो तो मृत्यु से दंडित किया जा सकेगा; और

(ख) किसी अन्य दशा में, आजीवन कारावास से दंडित किया जा सकेगा।

“308. आपराधिक मानव वध करने का प्रयत्न : जो कोई हत्या की कोटि में न आने वाले आपराधिक मानव वध करने का प्रयत्न करेगा, वह दोनों में से किसी भाँति के कारावास से, जिसकी अवधि तीन वर्ष तक की हो सकेगी, या जुमनि से, या दोनों से, दंडित किया जाएगा। और यदि ऐसे कार्य से किसी व्यक्ति को उपद्रवित हो जाए, तो वह दोनों में से किसी भाँति के कारावास से, जिसकी अवधि सात वर्ष तक की हो सकेगी, या जुमनि से, या दोनों से, दंडित किया जाएगा।

#### दृष्टितौर

क, गमीर और अचानक प्रकोपन पर, ऐसी परिस्थितियों में य पर पिस्तौल चलाता है कि यदि तद्दारा वह मृत्युकारित कर देता तो वह हत्या की कोटि में न आने वाले आपराधिक मानव वध का दोषी होता। क ने इस धारा में परिभाषित अपराध किया है।”

6.12. भारतीय दंड संहिता (संशोधन) विधेयक, 1978 में विधि आयोग द्वारा की गई सिफारिशों अन्य संशोधनों सहित शामिल कर ली गई थी, जैसे—

(i) धारा 120ग का दृष्टितौर (ग) छोड़ दिया गया था और दृष्टितौर (घ) को दृष्टितौर (ग) बना दिया गया।

(ii) धारा 307 (ख) में निम्नलिखित शब्द अंतःस्थापित किए गए थे।

“या कठिन कारबास से जिसकी अवधि दस वर्ष तक की हो सकेगी।”

विधेयक में धारा 120ग और 120घ निम्नवत है:-

120ग. प्रयत्न की परिभाषा :—कोई व्यक्ति अपराध के करने का प्रयत्न करता है, जब—

(क) वह, उसके करने के लिए अपेक्षित आशय या ज्ञान से उस अपराध को करने के लिए कोई कार्य करता है;

(ख) इस प्रकार किया गया कार्य अपराध के करने से समीप से जुड़ा हुआ और निकटस्थ है; और

(ग) वह कार्य आपने उद्देश्य में, ऐसी परिस्थितियों के कारण विफल होता है जो उसके नियंत्रण में नहीं है।

दुष्टांत

(क) क, य की हत्या करने के आशय से एक बन्दूक खरीदता है और उसमें गोली भरता है। यहां तक क हत्या करने के प्रयत्न का दोषी नहीं है। क, य पर बन्दूक से गोली चलाता है, वह हत्या करने के प्रयत्न का दोषी है।

(छ) क. य की हत्या विष से करने के आशय से विष खरीदता है और उसे भोजन में मिला देता है और अपने ही पास रख रहता है, यहां तक कि हत्या करने के प्रयत्न का दोषी नहीं है। क भोजन को य की मेज पर रखता है या उसे य के नौकर को य की मेज पर रखने के लिए दे देता है। क हत्या करने के प्रयत्न का दोषी है।

(ग) क, रत्नों को चुराने के आशय से य के सन्दूक को तोड़कर खोल देता है, पर उसमें कोई रत्न नहीं पाता। उसके काय का उद्देश्य तथ्यों के अज्ञान के कारण पूरा नहीं हुआ, इसलिए वह चोरी करने के प्रयत्न का दोषी है।

120८. प्रयत्न के लिए दंड :—जो कोई आजीवन कारावास या एक विनिर्दिष्ट अवधि के कारावास से दंडनीय अपराध के करने का प्रयत्न करने का दोषी होगा, जहाँ ऐसे प्रयत्न के दंड के लिए कोई अभिव्यक्त उपबंध नहीं किया गया है, वहाँ उस अपराध के लिए उपबंधित किसी भाँति के कारावास से, जिसकी अवधि, यथास्थिति, आजीवन कारावास की अवधि की आधी, या उस अपराध के लिए उपबंधित कारावास की दीर्घतम अवधि की आधी हो सकेगी, या उस अपराध के लिए उपबंधित जुमनि से, या दोनों से, दंडनीय होगा।”

6.13 विधी आयोग द्वारा 42वीं रिपोर्ट में सुझावों, "प्रयत्न" से संबंधित न्यायिक और साथ ही शैक्षणिक निर्वचनों की जांच करने के पश्चात् यह स्पष्ट हो गया है कि चार ऐसे विशिष्ट प्रक्रम हैं जिनसे होकर कोई कार्य साधारणतः संहिता द्वारा दंडनीय कोई अपराध होने से पूर्व गुजरता है। प्रथम प्रक्रम, अपराध करने का आशय, अर्थात् आपराधिक मनःस्थिति कहलाता है। फिर भी, आशय अपने आप में आपराधिक होने पर भी, जब तक कुछ और न किया जाए, दंडनीय नहीं है। दूसरे प्रक्रम को तैयारी कहा जाता है और कुछ आपवादिक प्रवर्गों के सिवाय तैयारी दंडनीय नहीं है।

संविता की धारा 511 तीसरे प्रक्रम, अर्थात् प्रयत्न के प्रक्रम से संबंधित है। जो कोई अपराध करता है, पहले अपराध करने का आशय रखता है फिर अपराध करने की तैयारी करता है और फिर अपराध करने के लिए प्रयत्न करता है और जब सफल हो जाता है तो उसके हाथ सुपराध किया गया कहा जाता है। यह तीसरा प्रक्रम धारा 511 के अधीन दंडनीय बनाया गया है।

“इसमें संदेह नहीं कि यह एक साधारण और अवशिष्ट उपर्युक्त है जो ऐसे अपराधों को करने से प्रयत्नों से संबंधित है जो किसी अन्य विनिर्दिष्ट धारा द्वारा दंडनीय नहीं बनाए गए हैं। यह ऐसे अपराधों को करने के सभी प्रयत्नों को जो, कारावास से दंडनीय बनाता है केवल मन्त्र से दंडनीय अपराधों को ही नहीं।

“प्रयत्न” दंडनीय बनाया गया है क्योंकि प्रत्येक “प्रयत्न” यद्यपि परिणाम को प्राप्त करने में असफल रहता है। भौति का सृजन करता है जो अपने आप क्षति है और अपराधी का दोष वही है मानो वह उसमें सफल हो गया हो। दंड को उचित ठहराने के लिए दोष क्षति से संबद्ध होना चाहिए, जब क्षति उतनी बड़ी नहीं है जितना कि किया गया कार्य होता तब विहित दंड का आधा दंड ही दिया जाता है, तथापि, किसी अपराध को करने की तैयारी के सिवाय तब के दंडनीय नहीं है जबकि ऐसी तैयारी धारा 122 (भारत सरकार के विशद्युद्ध करना) और 399 (इकैती करने के लिए तैयारी करना) के अधीन की गई हो।

6.14 इस बात पर ध्यान दिया जाना बहुत महत्वपूर्ण है कि “प्रयत्न” के अपराध के साथ करने के प्रयत्न अथवा विशेष या स्थानीय विधियों के अधीन अपराधों को कारित करने के प्रयत्न नहीं आते क्योंकि वे भी संहिता के अधीन अपराध नहीं हैं। किसी ऐसे कार्य को करने का प्रयत्न जो यदि किया जाता तो संहिता के अधीन अपराध नहीं होता, संहिता के अधीन कोई आपराधिक दायित्व उपरात नहीं कर सकता।

सहिता के अधीन प्रयत्न का अपराध गठित करने के लिए, अपराधी का, पूर्ण अपराध करने का आशय आवश्यक है। धारा 511 के द्वारा शब्दों में “ऐसे अपराध कारित किए जाने के लिए” किसी अपराध के दुष्प्रेरण का प्रयत्न सम्मिलित होगा। अतः, यह अभिनिधारित

किया गया है कि किसी अपराध के दुष्प्रेरण का प्रयत्न विधितः संभव नहीं है क्योंकि किसी अपराध का दुष्प्रेरण स्वयं में अपराध है। ऐसे प्रयत्न का सामान्य रूप किसी दूसरे से कोई अपराध करने का अनुरोध है। अपराध के किए जाने की ओर किया गया कार्य अनुरोध में ही विद्यमान है। यह अपराध पर प्रभाव नहीं डालेगा। यद्यपि प्रार्थी व्यक्ति अनुरोध को स्वीकार नहीं करता है।

इसी प्रकार, धारा 511 के ये शब्द “अपराध किए जाने की दिशा में कोई कार्य करता है” भी बहुत व्यापक शब्द हैं। केवल “आशय मात्र, अथवा आशय के बाद की गई तैयारी, प्रयत्न गठित करने के लिए पर्याप्त नहीं है किन्तु आशय के बाद की गई तैयारी और उसके बाद अपराध किए जाने की दिशा में किया गया कोई कार्य पर्याप्त हो”। इस धारा के अधीन दिए गए दोनों में से प्रत्येक दृष्टांत में केवल किसी अपराध को करने के आशय के साथ किया गया ऐसा कार्य ही नहीं जो असफल हो जाता है क्योंकि यह संभवतः अपराध को पूर्ण होने में परिवर्तन नहीं होता किन्तु यह अपराध के लिए किए जाने की दिशा में किया गया कार्य है”। कहने का आशय यह है कि अपराध इसीलिए अपूर्ण रह जाता है कि उसमें किए जाने के लिए अभी भी कुछ शेष रहता है, जिसे अपराध के करने के आशय रखने वाला व्यक्ति उसके अपने संकल्प, व्यापार की स्वतंत्र परिस्थितियों के कारण कर पाने में असमर्थ है। इस प्रकार निम्न दृष्टांतों में—

(क) बावस को तोड़कर खोलने का कार्य जेवरात की चोरी करने की दिशा में किया जाता है चोरी, अर्थात् जेवरातों का वस्तुतः हटाया जाना अर्भी मी किया जाना शेष है और यह न किया गया केवल इस कारण रह जाता है कि उसमें ऐसे जेवरात नहीं हैं जिन्हें हटाया जा सके।

(ख) बड़े चोरी के आवश्यक संगठनों को इसीलिए पूरा करने में असफल रहता है कि जेब में कोई चीज़ नहीं है।

इस धारा के अधीने दोषसिद्ध के लिए यह आवश्यक नहीं है कि अभियुक्त अंतिम प्रक्रम के सिवाय वास्तविक अपराध के प्रक्रम पूरे कर ले, यह पर्याप्त है यदि उसने प्रयत्न में अपराध करने की दिशा में कोई कार्य कर लिया है।

6.15 धारा 511 कभी भी केवल किसी अपराध को पूरा करने की दिशा में आपराधिक कार्य को ही और पूर्ववर्ती कार्यों को आच्छादित करने के लिए आशयित नहीं थी, यदि ऐसे कार्य अपराध करने के प्रयत्न के क्रम में किए जाते हैं तो वे उसे करने की दिशा में किए जाते हैं।

उपर्युक्त विचार-विमर्श से प्रतीत होता है कि ऐसी संतोषजनक और व्यापक परिभाषा तैयार कर पाना बहुत कठिन होगा जो ऐसे सभी मामले अधिकथित करे जाना किसी अपराध को करने की तैयारी समाप्त होती है और जहां उस अपराध को करने का प्रयत्न आरंभ होता है। प्रश्न केवल समय आधार स्थान की निकटता मात्र का नहीं है। अनेक अपराध आसानी से परिकल्पित किए जा सकते हैं उनके लिए सभी आवश्यक तैयारियां की जा सकती हैं। फिर भी, उस समय जब अपराध करने का प्रयत्न आरंभ होता है और उस समय जब वह पूरा होता है, के बीच काफी अंतराल बना रहेगा। धोखाधड़ी और उत्प्रेरित करने का अपराध किसी निश्चित बिन्दु पर अपराध है। वह समय, जो उस क्षण, जब कपट करने के लिए की गई तैयारियां धोखा किए जाने वाले व्यक्ति के मन पर थोपी जाती हैं और उस क्षण, जब उस परै प्रयुक्त धोखा से नह दो जाता है, के बीच बीता हुआ समय काल का महत्वपूर्ण अंतराल हो सकता है। उसकी ओर से, अनेक इच्छाओं और अनेक कार्यों की मध्यस्थिता भी हो सकती है, वे कार्य जिनके द्वारा वे तैयारियां उसके मन पर लाई जाती हैं। अनेक समय खण्डों में हो सकती है। फिर भी, तैयारी पूर्ण होने के पश्चात किया गया पहला कार्य, यदि अपराधी स्वयं सभी शक्तियों से भरे होता तो, समान रूपेण उस सृखंला में किए गए नियन्त्रणों कार्य के साथ ही प्रयत्न होगा।

इसके अतिरिक्त, धारा 511 में “प्रयत्न” शब्द की परिभाषा बहुत ही व्यापक अर्थों में है। ऐसा प्रतीत होता है कि प्रयत्न कार्यों की पृष्ठेलाके रूपमेंकियाजासकताहै और अपराधके किएजानेकीदशामेंकियागयाउनमेंसेकोईअपनेआपमेंदंडनीयहोगा औरयद्यपि, धारा में इन शब्दों का प्रयोग नहीं किया गया फिर भी इनका अर्थ और कुछ नहीं अपितु प्रयत्न के रूपमें दंडनीय ही होगा। इसमें यह नहीं कहा गया है कि वह अंतिम कार्य ही, जो व्यापक अर्थमें प्रयत्न का अंतिम भाग बनेगा, इस धारा के अधीन दंडनीय कार्य है। “जो कोई अपराध करनेकाप्रयत्नकरताहै” शब्दोंकास्पष्टरूपसेइतनाव्यापक अर्थ है कि इसमें अपराधके किएजानेकीदशामेंकोई कार्य आ जाताहै। “कोई कार्य” पद अंतिम कार्य की धारा को अपवृंजित करताहै।

6.16 उपर्युक्त विचार-विमर्श के आलोक में यह बहुत ही स्पष्ट है कि धारा 511 अच्छी तरह कार्य कर रही है और उसका लोप किए जाने की आवश्यकता नहीं है। इसलिए, नया अध्याय 5ख, जिसमें दो धाराएं 120ग और 120घ है, पुरास्थापित करने की आवश्यकता नहीं है। इस पर भी यदि आवश्यक हो तो धारा 511 की प्राप्ति में संशोधन किया जा सकता है।

पाद दिघण

1. रुसेल ऑन क्राइम, (1964) खंड 1 पृष्ठ 184 (डॉ. टर्नर द्वारा संपादित).
  2. अमरानंद मिश्रा बनांम विद्वार राज्य (1962) 2-एस सी आर 241.

## अध्याय 7

### राज्य के विरुद्ध अपराध

इस अध्याय में, राज्य के विरुद्ध अपराध सम्मिलित हैं। इसमें साम्राज्य निर्माताओं के अभिगम का रंग है। इस अध्याय में, 1870 के अधिनियम 27 द्वारा धारा 121क तथा 1898 के अधिनियम 4 द्वारा धारा 124क के अंतःस्थापन के सिवाय नगण्य संशोधन हुए हैं। ये अतिरिक्त धाराएं, साम्राज्य निर्माताओं का संगत समय पर संरक्षण करने के लिए विद्वेष के दुष्प्रेरण के अपराध के दंड के लिए विशेष उपबंध के अनन्मिप्रेर लोप के कारण छानि को दूर करने हेतु अंतःस्थापित की गई थीं। तथापि, कोई भी सरकार लोगों की एक छोटी मंडली उपबंध के अनन्मिप्रेर लोप के कारण छानि को दूर करने हेतु अंतःस्थापित की गई थी। भू-तल पर ऐसा कोई देश नहीं है जिसमें सामान्यतः धारा 123के अस्तित्व के विकास के भय को अनुज्ञात करना सहन नहीं कर सकती है। भू-तल पर ऐसा कोई देश नहीं है जिसमें सामान्यतः आंतकवादियों के नाम ज्ञात कोई छोटा अल्पसंख्यक समूह न हो, जो सदैव स्थापित सरकार के विरोध में कार्यरत हो। पृथक्तावादी क्रियाकलापों ने, ऐसे देशों में भी अपना स्थान बना लिया है जो समेकित व्यक्तित्व वाले प्रतीत होते थे। राजनैतिक व्यवहार के अनुज्ञेय मानदंडों का ज्ञान आवश्यक है जिनका अधिक्रमण दंडनीय होना चाहिए।

यह अध्याय उनके लिए दंड का उपबंध करता है जो भारत सरकार के विरुद्ध युद्ध करने, ऐसे अपराधों को करने के लिए घटयंत्र करने, ऐसे अपराधों को करने की तैयारी करने में जैसे युद्ध करने के आशय से आयुध, आदि संग्रहीत करना तथा युद्ध करने को डिजाइन के अस्तित्व को लिपाने में लगे हैं। धारा 124क, जो राजदोष के लिए दंड का उपबंध करती है, राष्ट्र पिता द्वारा भारतीय संहिता की राजनीतिक धाराओं के मध्य राजकुमार के रूप में वर्णित की गई थी। यहां यह उल्लेखनीय है कि राष्ट्र पिता महात्मा गांधी और बाल गंगाधर तिलक जैसे प्रख्यात व्यक्तियों का भी ब्रिटिश साम्राज्य के स्वर्णकाल के दौरान द्वारा 124क के अधीन विचारण किया गया तथा उन्हें दंडित किया गया था।

किसी लोकतांत्रिक संरचना में सरकार के प्रति राजदोह के उपदेश और विधिसम्मत राजनीतिक गतिविधि के बीच विभाजक रेखा साफ तौर पर खींची नहीं जा सकती। जहां सत्तारूढ़ सरकार की विधिसम्मत राजनीतिक आलोचना समाप्त होती है और राजदोह आरंभ होता है उसे संक्षेप में सुनिश्चित किया जा सकता है। सीमारेखा पतली और ढोलायमान है। जो कुछ पहले सामाज्यवादी शासकों के विरुद्ध राजदोह या अब वह हमारे उदारवादी संविधान के अधीन लोकतांत्रिक संरचना में एक विधिसम्मत राजनीतिक गतिविधि हो सकती है। इस अध्याय में सम्पूर्ण ध्यानों को निर्वचन संविधान की मूल भावनाओं के भीतर रहकर करना होगा।

द्विस अध्याय में पहली पांच धाराएँ उस बारे में हैं जिसे उच्च कोटि के देशद्रोह का कार्य कहा जा सकता है, भारत सरकार के विरुद्ध युद्ध करने का षड्यंत्र करना, युद्ध करने की तैयारी करना, ऐसे क्रियाकलापों को सुकर बनाना तथा सरकार अथवा राज्य के प्रसुत्यों को बल दाग आंकित करना।

अगली धारा राजद्रोह के दंड के लिए है फिर तीन धाराओं का लक्ष्य उनको दंड देकर विदेशी राज्यों के साथ मैत्रीपूर्ण संबंध बनाए रखना है जो अवांछित आक्रमक कार्यवाही द्वारा उन संबंधों को बिगाड़ने का प्रयत्न करते हैं, अध्याय की अंतिम तीन धाराएं, जो युद्ध कैदियों और राज्य कैदियों से संबंधित हैं, शांतिकाल के दौरान विशेष रूप से चूंकि ब्रिटिश शासन के दौरान “राजकैदी” के रूप में विनिर्दिष्ट प्रवर्ग अब नहीं रह गया है और उससे कम महत्वपूर्ण नाम “निवारक निरोध के अधीन व्यक्ति” दे दिया गया है, अब अधिक व्यावहारिक महत्व नहीं रख रहा है।

7.02 इस अध्याय के साथ उन विशिष्ट अपराधों की परिभाषा आरंभ होती है जिन्हें संदित्ता के निर्माताओं ने इसमें शामिल रह जाना ठीक समझा था। ऐसे अपराधों की, जिनके लिए संदित्ता में दंड विहित किया गया है, बड़ी संख्या लगभग 400 होने के आवजूद या संप्रदं भ्रातों की प्रकृति के कारण सर्वांगीण हो सकता है। सदोष, शक्तिकारक या समाज विरोधी आचरण के अन्य रूप, अन्य विशेष विधियों जैसे स्थल सेना अधिनियम, वायु सेना अधिनियम, द्वात्यादि के अधीन दंडनीय बनाए गए हैं। विधि आयोग ने, अपनी 42वीं रिपोर्ट में यह संप्रेक्षण किया था कि जहां किसी विशेष या स्थानीय विधि के अधीन अब दंडनीय कुछ अपराधों को दंड संदित्ता में शामिल करके उसके विस्तार को बढ़ाया जाना चाहिनीय हो सकता है वहां का प्रयत्न करना न तो आवश्यक है और न ही व्यवहार्य। फिर भी, संक्षेप में इन विशेष विधियों में से कुछ विधियां, जो देशद्रोह, राजद्रोह और सुरक्षा तथा एकता के विरुद्ध अन्य सदृश्य अपराधों के संबंध में हैं, निम्नवर्त उल्लिखित की जा सकती हैं:-

- (1) विदेशी भर्ती अधिनियम, 1874
  - (2) भारतीय विधि संशोधन अधिनियम, 1908
  - (3) शासकीय गुप्त बात अधिनियम, 1923
  - (4) दंड विधि संशोधन अधिनियम, 1938

(5) दंड विधि संशोधन अधिनियम, 1961  
 (6) विधिविरुद्ध क्रियाकलाप (निवारण) अधिनियम, 1967

7.03 यह स्पष्ट है कि देशदोष, राज्यदोष और सजातीय अपराध, जिन्हें राज्य की सुरक्षा के विरुद्ध अपराधों के रूप में वर्गीकृत किया जा सकता है, हमारी दंड संहिता की अपेक्षा अन्य देशों की संहिताओं में अधिक व्यापक रूप से बरते गए हैं। विशेष रूप से, यह ध्येतव्य है कि देशदोष तथा देशदोष संबंधी क्रियाकलाप व्यापक अर्थ सूचित करते हैं और राज्य के विरुद्ध युद्ध करने तथा राज्य के प्रधान पर हमला करने तक सीमित नहीं है। इस समस्या के प्रारंभिक अध्ययन पर ऐसा प्रतीत होता है कि दंड विधि की इस महत्वपूर्ण शाखा के कुछ उपबंधों को सशवत्त बनाना, उनका समेकन और पुनरीक्षण करना आवश्यक ज्ञेगा। तथापि, संशेधन विध्येयक में केवल दो परिवर्तन प्रस्तावित हैं, अर्थात् नई धारा 123क का अंतस्थापन और धारा 124क का प्रतिस्थापन तथा धारा 122क और 123 के अधीन कठिन कारावास के दंडादेश की प्रकृति के परिवर्तन इस निमित्त दाढ़िक उपबंधों के महत्व को ध्यान में रखते हुए, हम इस प्रश्न पर भी विचार करेंगे कि क्या विद्यमान उपबंधों, अर्थात् धारा 121 और 121क में कोई परिवर्तन आवश्यक है।

7.04. धारा 121 भारत सरकार के विरुद्ध युद्ध करने के प्रमुख अपराध के लिए और उस अपराध का दुष्प्रेरण करने के लिए अधिवा वह अपराध करने का प्रयत्न करने के लिए दंड, अर्थात् मृत्यु या आजीवन कारावास का दंड विद्वित करती है। न तो 42वीं रिपोर्ट में और न ही भारतीय दंड संहिता (संशोधन) विधेयक, 1978 में किसी परिवर्तन का संज्ञाव दिया गया है।

इसलिए, इस धारा में कोई परिवर्तन अपेक्षित नहीं है।

7.05. धारा 121क निम्नवत उपबंध करती है।

“121क. धारा 121 द्वारा देढ़नीय अपराधों को करने का घटयंत्र—जो कोई धारा 121 द्वारा देढ़नीय अपराधों में से कोई अपराध करने के लिए भारत के भीतर या बाहर घटयंत्र करेगा या केन्द्रीय सरकार को या किसी राज्य की सरकार को आपराधिक बल द्वारा आपराधिक बल के प्रदर्शन द्वारा आतंकित करने का घटयंत्र करेगा, वह आजीवन कारावास से, या दोनों में से किसी भाँति के कारावास से, जिसकी अवधि दस वर्ष तक की हो सकेगी। दंडित किया जाएगा और उसने से भी देढ़नीय होगा।

स्पष्टीकरण—इस धारा के अधीन घट्यंत्र गठित होने के लिए आवश्यक नहीं है कि उसके अनुसरण में कोई कार्य या अवैध लोप घटित हआ हो।”

धारा 121क षड्यंत्र के दो विभिन्न प्रकारों में दंड का उपबंध करती है। पहला भारत सरकार के विरुद्ध युद्ध करने का षड्यंत्र और दूसरा केन्द्रीय सरकार या किसी राज्य सरकार को बल द्वारा आतंकित करने का षड्यंत्र है। धारा 120ख को देखते हुए, पहले प्रकार के षड्यंत्र को बरतने के लिए किसी पुष्टक धारा की कोई आवश्यकता नहीं है। यदि ऐसे किसी षड्यंत्र का वस्तुतः परिणाम भारत सरकार के विरुद्ध युद्ध करना है अथवा ऐसा युद्ध करने का प्रयत्न भी है तो षड्यंत्रकारी धारा 120ख के साथ गठित धारा 121 के अधीन सृत्यु या आजीवन कारावास से दंडनीय होगे और यदि षड्यंत्र निष्फल हो जाता है तो वे उस अपराध के लिए उपबंधित कारावास की अधिकतम अवधि, अर्थात् 10 वर्ष की अवधि के अधे से दंडनीय होगी जो पर्याप्त हो सकेगी।

7.06. पठन, पर ऐसा यह कठिन प्रतीत होता है कि प्रयोजन, सम्प्रति “भारत के भीतर या बाहर” शब्दों द्वारा जो इस धारा में आते हैं पूरा हो जाता है। जब पिछली शाताव्दी में इसे अधिनियमित किया गया था तो खोपनिवेशिक दिनों के दौरान संहिता का राज्य क्षेत्रातीत लागू होना किसी भारतीय राज्य के राज्यक्षेत्र में सरकारी सेवकों द्वारा किए गए अपराधों तक सीमित था। “ब्रिटिश इंडिया के लिना” किए बहुतओं के निवेश द्वारा यह धारा स्पष्टतः ब्रिटिश प्रजातन के व्यावहारिक करवे के लिए आजिंह भी और विवेचिते के रूपी।

संहिता की धारा 1 और 4 को देखते हुए, जैसी कि वे इस समय हैं यह पूर्णतः स्पष्ट है कि धारा 121के भारत के बाहर किए गए विवेशियों के कार्यों को लागू हो सकती। इस पर, विधि आयोग द्वारा उसकी 42वीं रिपोर्ट में भी विचार किया गया था कि “भारत के भीतर या बाहर” का कोई व्यावहारिक लाभ नहीं रह गया है और उनका लोप किया जाता चाहिए।

7.07. 41वीं रिपोर्ट में यह सिफारिश भी की गई थी कि बहुवर्त्र के अपराध के रूप में केन्द्रीय सरकार या किसी राज्य सुरकार को आरंकित करने के अतिरिक्त, भारत की संसद या किसी राज्य के विधान-मंडल को आपराधिक बल द्वारा या आपराधिक बल के प्रदर्शन द्वारा आरंकित करने के विचार तक इसका विस्तार किया जाए। इस समय सादे कारबास का दिया जाना इस धारा के अधीन अनुज्ञेय है जो अपराध की गंभीरता को देखते हुए, समुचित नहीं है। तदनुसार, तत्कालीन विधि आयोग द्वारा यह प्रस्ताव किया गया था कि धारा 121का निम्नवत पनरीक्षण किया जाना चाहिए:-

“121क. भारत की संसद् या भारत सरकार या किसी राज्य के विधान-मंडल या सरकार को आंतंकित करने का घट्यन्त्र—जो कोई बल द्वारा या बल के प्रदर्शन द्वारा भारत की संसद् या सरकार को या किसी राज्य के विधान-मंडल या सरकार को आंतंकित करने का घट्यन्त्र करेगा, वह आजीवन कारावास से, या ऐसी अवधि के कठिन कारावास से, जिसकी अवधि 10 वर्ष तक हो सकेगी। दंडित किया जाएगा और जमनि से सभी दंडनीय होगा।

स्पष्टीकरण :—इस धारा के अधीन घट्यंत्र गठित होने के लिए यह आवश्यक नहीं है कि उसके अनुसरण में कोई कार्य या अवैध लोप गठित हुआ।

विधि आयोग ने, अपनी 42वीं रिपोर्ट में यह संप्रेक्षण किया कि यह अपराध, धारा 124 में वर्णित अपराधों के सदृश है। अतः, यह तर्क संगत होगा कि इसे उन तीन धाराओं के पश्चात जो, युद्ध करने के संबंध में है, लाया जाए और भारत के शत्रुओं की सहायता करने के बारे में एक नई धारा प्रस्तावित की जिसकी संख्या आयोग ने 123ख बताई।

7.08. घट्यंत्र के दूसरे प्रकार (पैरा 0.5 पूर्वोक्त) के संबंध में, 42वीं रिपोर्ट में यह सिफारिश की गई थी कि धारा 121क का संशोधन किया जा सकता है। किन्तु भारतीय दंड संहिता (संशोधन) विधेयक, 1978 में उसे स्वीकार नहीं किया गया था। प्रस्तावित संशोधन में भी आपराधिक बल द्वारा आतंकित करने के विचार को एक अपराध के रूप में संसद और राज्यों पर भी विस्तारित किया गया था। दूसरी ओर, धारा 121क के मूल पाठ में (जो 1951 के अधिनियम 3 द्वारा अंतःस्थापित की गई थी) संहिता की धारा 121 में उल्लिखित अपराध के लिए सभी प्रकार के घट्यंत्रों को आच्छादित करने के साधारण और व्यापक विस्तार का उपबंध है। कहने की आवश्यकता नहीं की कि :—

“या आपराधिक बल द्वारा या आपराधिक बल के सदस्यों द्वारा केन्द्रीय सरकार को या किसी राज्य सरकार को आतंकित करने का घट्यंत्र करेगा..... से दंडित किया जाएगा।”

शब्द “संसद या राज्य विधान-मंडल” को आच्छादित करने के लिए पर्याप्त है क्योंकि विधान-मंडल प्रत्येक लोकतांत्रिक सरकार का एक अनिवार्य भाग/खंड है। उक्त सिफारिशों के बारे में, संशोधनकारी विधेयक में कुछ भी उल्लिखित नहीं है।

7.09. इन उपबंधों, अर्थात् धारा 121क पर पूर्वोक्त रीति से गंभीरतापूर्वक विचार कर लेने पर हमारा यह अभिमत है कि इसमें कोई परिवर्तन आवश्यक नहीं है और हम यह कहते हैं कि विधेयक में किसी मुख्य नीति संबंधी परिवर्तन के अभाव का कोई परिणाम नहीं है। इसी प्रकार धारा 121, 122, 123 की जांच करने के पश्चात और इस बात को भी देखने के पश्चात कि विधि आयोग ने, अपनी 42वीं रिपोर्ट में किसी संशोधन का सुझाव नहीं दिया था और ये धाराएं वैसी ही बनी रहेंगी जैसी वे हैं सिवाय इसके कि “किसी भी भाँति के कारावास से” शब्दों के स्थान पर “कठिन कारावास से” शब्द रखे जाएंगे।

7.10. विधि आयोग ने, अपनी 42वीं रिपोर्ट में एक नई धारा 123क को अंतःस्थापित करने के लिए सिफारिश की थी, उसे संशोधनकारी विधेयक में शामिल किया गया है। विधि आयोग द्वारा सिफारिश की गई नई धारा 123क निम्नवत है :—

“123क. भारत के शत्रुओं की सहायता करना : जो कोई भारत के युद्धरत किसी शत्रु की या किसी देश के, जिसके विरुद्ध भारत के सशस्त्र बल संघर्षरत हैं, सशस्त्र बलों की किसी भी रीत से सहायता करेगा, वह, चाहे उस देश और भारत के बीच युद्ध की स्थिति विद्यमान हो या न हो, कठिन कारावास से, जिसकी अवधि दस वर्ष तक की हो सकेगी, दण्डित किया जाएगा और जुमनि से भी दण्डनीय होगा।

नई धारा 123क को अंतःस्थापित करने के लिए उक्त सिफारिश, भारतीय दंड संहिता (संशोधन) विधेयक में शामिल की गई है किन्तु विधेयक में प्रस्तावित धारा के साथ एक स्पष्टीकरण जोड़ा गया था। उक्त स्पष्टीकरण निम्नवत है :—

“स्पष्टीकरण—इस धारा में—

(i) “भारत के सशस्त्र बल” से सैनिक, नौसैनिक और वायुसैनिक बल अभिप्रैत हैं तथा सेना के कोई अन्य सशस्त्र बल इसके अन्वयत हैं;

(ii) “शत्रु” के अन्तर्गत कोई व्यक्ति या संघ के विरुद्ध बाह्य आक्रमण करने वाला देश अथवा ऐसे देश का कोई व्यक्ति भी है।”

7.11. विधेयक में प्रस्तावित धारा 123क विधि आयोग द्वारा डस्की 42वीं रिपोर्ट में की गई सिफारिश पर आधारित है। तथापि, विधेयक में एक स्पष्टीकरण जोड़ा गया है जो भारत के सशस्त्र बलों और “शत्रु” पदों के मुख्य धारा 123क के अंतर्गत आने वाले अपराध के परिप्रेक्ष्य में, जैसी विधि आयोग द्वारा सिफारिश की गई थी, स्पष्ट करता है। इसलिए, यह स्पष्टीकरण रखने में कोई तुक्षसान नहीं है।

7.12. विद्यमान धारा 124क राजदोह के अपराध को परिभाषित करती है। उसकी डस्की 42वीं रिपोर्ट में जिसका इस धारा के उल्लेख से किसी के मन में उत्पन्न होने की संभावना है, यह एक देसा उपबंध है जिसे मात्र इस कारण से दंड संहिता में स्थान मिला है कि प्रत्येक राज्य को, जाहे वहां कैसी भी सरकार वर्षों न हो, उन लोगों को दंड देने की शक्ति से युक्त होना पड़ता है जो अपने आवरण द्वारा राज्य की सुरक्षा और स्थिरता को जोखिम में डालते हैं अथवा देशदोह की ऐसी भावनाओं का प्रचार करते हैं जिनकी प्रवृत्ति राज्य के विघटन अथवा लोक अव्यवस्था की दिशा में हो सकती है।

7.13. इंग्लैंड में राजदोह का अपराध लगभग देशदोह से संयुक्त समाज के विरुद्ध अपराध है और यह प्रायः अल्प अंतराल द्वारा देशदोह के पहले होता है। राजदोह का उद्देश्य साधारणतः सरकार के विरोध में अशांति, बगावत और विरोध को बढ़ावा देना है और न्याय प्रशासन को अवमानना में लगता है तथा राजदोह की मूल प्रवृत्ति लोगों में विचटन और बगावत को भढ़काना है। राजदोह को कार्य में विश्वासवात के रूप में वर्णित किया गया है और विधि उन सभी व्यवहारों को राजदोह समझती है जिनका उद्देश्य अशांति या अपरीति को प्रदीपित करना, लोग अव्यवस्था पैदा करना, सिविल युद्ध की ओर ले जाना, स्प्राट या राज्य विधियां राज्य के संविधान के प्रति धृणा या अवमान को बढ़ावा देना और साधारणतः लोक अव्यवस्था के संवर्धन के सभी प्रयास करना है।

7.14. यह हांपेक्षणीय है कि राजनैतिक विधयों पर आलोचना अपने आप में राजदोहात्मक नहीं है। इसकी परीक्षा उस रीत में है जिस रीत से वह की जाती है। निष्पक्ष और ईमानदारी से मुक्त परिचर्चा अनुज्ञेय है। विधि के बल तभी दस्तक्षेप करती है जब परिचर्चा निष्पक्ष आलोचना की सीमाओं को पार कर जाती है और विशेष रूप से यह स्थिति तब होगी जब कैदी के आचरण का स्वामानिक परिणाम लोक अव्यवस्था का संवर्धन करना है।

यह उल्लेखनीय है कि विद्यमान धारा 124क में राजदोह की परिभाषा विधि द्वारा स्थापित सरकार के विरुद्ध अपरीति को उत्तराल अपराध के लिए तक सीमित है। संविधान या संसद या न्याय प्रशासन के प्रति अपरीति प्रदीपित करना, राजदोहपूर्ण गतिविधि के रूप में उल्लिखित नहीं है, दूसरी ओर जब कि डालैंड में किसी एक या अन्य रूप में लोक अव्यवस्था का संवर्धन राजदोहपूर्ण आचरण का अनिवार्य संघटक समझा जाता है। यह भावना धारा 124क की शब्दावली से नहीं निकल पाती है।

7.15. उस विरोधाभास के परिप्रेक्ष्य में, जो इस समय तक धारा 124क के आस-पास प्रकोप उत्पन्न कर रही है, स्पष्ट रूप से यह आवश्यक है कि अपराध के गठन को पुनरीक्षित किया जाए ताकि इसे अनुच्छेद 19(2) के अधीन विस्तीर्ण रूप से उचित संवर्धन में लगा जा सके। इस अनुच्छेद में उल्लिखित तत्व, जो राजदोह के अपराध से संगत है, भारत की अखंडता, राज्य की सुरक्षा और लोक अव्यवस्था है। यह धारा त्रुटीपूर्ण पाई गई है क्योंकि राजदोहात्मक युक्तियों में अन्तर्निहित “चातक प्रवृत्ति अथवा आशय” भारत की अखंडता या सुरक्षा अथवा लोक अव्यवस्था के द्वितों से अभिव्यक्त: संबंध नहीं की गई है। विधि आयोग ने, अपनी 42वीं रिपोर्ट में यह की अखंडता या सुरक्षा को खतरा होने की या लोक अव्यवस्था कारित होने की संभावना है, के रूप में व्यक्त करके हटाई जानी चाहिए।

7.16. राजदोह की परिभाषा में पहले से ही देखी गई दूसरी त्रुटि यह है कि इसमें (क) संविधान, (ख) विधान-मंडल और (ग) न्याय प्रशासन के प्रति अपरीति को गणना में नहीं लिया गया है जबकि वे सभी राज्य की सुरक्षा के प्रति उत्तरे ही विनाशक होंगे जिनमा कि कार्यकारी सरकार के प्रति अपरीति है। अन्य संहिताओं में राजदोह की परिभाषा करते समय, इन पक्षों पर ठीक-ठीक जोर दिया गया है और धारा 124क का उसमें उनका समावेश करने के लिए उनरीक्षण किया जाना चाहिए।

इस अपराध के लिए उपबंधित दंड बहुत ही अप्रचलित है। यह आजीवन कारावास या अन्यथा तीन वर्ष तक की अवधि का कारावास हो सकेगा, इनके बीच कुछ अन्य नहीं हैं। विधि आयोग ने यह संप्रेक्षण किया कि सात वर्ष की अवधि के कठिन कारावास और जुमनि का अधिकतम दंड नियत करके अपराध की गंभीरता के प्रति न्यायालयों द्वारा अधिक दृढ़ दंड दिए जाने की आवश्यकता है। यही कारण है कि विधि आयोग ने अपनी 42वीं रिपोर्ट में यह कहा कि इस धारा का निम्नवत पुनरीक्षण किया जाए।

“124क. राजदोह : जो कोई बोले गए या लिखे गए या शब्दों द्वारा या संकेतों द्वारा, या दृश्यरूपण द्वारा, या अन्यथा भारत के संविधान, या सरकार, या संसद, या किसी राज्य की सरकार या उस राज्य के विधान-मंडल या न्याय प्रशासन को, जो विधि द्वारा स्थापित हो, यह जाने हुए या आशय रखते हुए कि उसके द्वारा भारत या किसी राज्य की अखंडता या सुरक्षा को खतरा पहुंचने की या लोक अव्यवस्था कारित होने की संभावना है, उनकी ओर अपरीति प्रदीपित करेगा या प्रदीपित करने का प्रयत्न करेगा, कठिन कारावास से, जिसकी अवधि सात वर्ष तक हो सकेगी, दंडित किया जाएगा और जुमनि से भी दंडनीय होगा।

स्पष्टीकरण :—1. ‘अपरीति’ पद के अंतर्गत, शत्रुता, धृणा या अवमानना की भावनाएं सम्मिलित हैं।

स्पष्टीकरण :—2. अ

7.19. तत्कालीन विधि आयोग ने, अपनी 42वीं रिपोर्ट में यह सुझाव दिया था कि संहिता में संविधान की पुस्तक, राष्ट्रीय ध्वज, राष्ट्रीय प्रतीक और राष्ट्रगान का अपमान करने पर दंड के लिए एक उपबंध होना चाहिए। संविधान की प्रतियों को जलाना, राष्ट्रीय ध्वज या राष्ट्रीय सम्पत्ति को अपवित्र करना और राष्ट्रगान का जानबूझकर अपमान करना केवल देशदोह पूर्ण कृत्य ही नहीं है अपितु उनसे लोक अव्यवस्था कारित होने की संभावना है। इसलिए, उन्हें दंड संहिता में अपराध बनाया जाना पर्याप्त निर्देश है।

इस मामले में, संसद की विधायी सक्षमता समवर्ती सूची में बंदिक विधि और संघ सूची में अवशिष्ट सूची से संबंधित प्रविष्टि से व्युत्पन्न है। मुश्किल से यह कहा जा सकता है कि ऐसे उपबंध अयुक्तियुक्त रूप से अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता को कम करते हैं और लोक अव्यवस्था के हित में ऐसे निबंधन स्पष्ट रूप से होंगे।

7.20. विधि आयोग ने पहले ही सिफारिश की थी कि धारा 124ख के पश्चात नई धारा निम्नवत रूप से अंतःस्थापित की जाए :—

“124ख. संविधान की पुस्तक, राष्ट्रीय ध्वज, राष्ट्रीय संप्रतीक या राष्ट्रगान का अपमान—जो कोई जानबूझकर संविधान की पुस्तक या उसके किसी भाग को, राष्ट्रीय ध्वज, राष्ट्रीय संप्रतीक या राष्ट्रगान का उसे जलाकर, अपवित्र करके या अन्यथा, अपमान करेगा, वह दोनों में से किसी भाँति के कारावास से जिसकी अवधि तीन वर्ष तक की हो सकेगी, या जुमनि से, या दोनों से, दंडनीय होगा।

उपरोक्त सिफारिश दंड प्रक्रिया संहिता (संशोधन) विधेयक, 1978 के खंड 48 में सम्मिलित की गई थी।

7.21. इस धारा के अंतर्गत एक नई धारा 124ख भी अंतःस्थापित की जानी चाहिए। इस नई धारा के अंतर्गत जो कोई जानबूझकर भारत के संविधान या उसके किसी भाग का, राष्ट्रीय ध्वज, राष्ट्रीय संप्रतीक या राष्ट्रगान का उसे जलाकर, आदि अपमान करेगा, दंडनीय होगा। विधि आयोग ने अपनी 42वीं रिपोर्ट में यह संपेक्षण किया कि संविधान, राष्ट्रीय ध्वज, संप्रतीक और राष्ट्रगान, जिसमें संविधान को जलाना और राष्ट्रगान का जानबूझकर अपमान करता है, जो देश विरोधी है, का अपमान करने के लिए दंड का उपबंध होना चाहिए। अतः, उसने इस नई धारा को अंतःस्थापित करने की सिफारिश की। तथापि, इन सिफारिशों के आधार पर, राष्ट्र उपबंध होना चाहिए। अतः, उसने इस नई धारा को अंतःस्थापित करने की सिफारिश की। अतः, इस नई धारा 12ख को दंड प्रक्रिया संहिता में पुनःअंतःस्थापित करने की आवश्यकता नहीं है और इसे विधेयक के खंड 48 से हटाया जाए।

7.22. विद्यमान धारा 125 निम्नवत पढ़ी जाए :—

“125. भारत सरकार से मैत्री संबंध रखने वाली किसी एशियाई शक्ति के विरुद्ध युद्ध करना—जो कोई भारत सरकार से मैत्री का या शांति का संबंध रखने वाली किसी एशियाई शक्ति के सरकार के विरुद्ध युद्ध करेगा या ऐसा युद्ध करने वाले का प्रयत्न करेगा, या ऐसा युद्ध करने के लिए दुष्प्रेरण करेगा, वह आजीवन कारावास से, जिसमें जुमना जोड़ा जा सकेगा, या जुमनि दोनों में से किसी भाँति के कारावास से, जिसकी अवधि सात वर्ष तक की हो सकेगी, जिसमें जुमना जोड़ा जा सकेगा, या जुमनि से दंडित किया जाएगा।

7.23. धारा 125 भारत सरकार से मैत्री का या शांति संबंध रखने वाले किसी एशियाई शक्ति की सरकार के विरुद्ध युद्ध को अपराध बनाता है। “एशियाई संदर्भ” का संदर्भ अब अर्थहीन है और “मैत्री का या” शब्द अनावश्यक है। यह भारत के साथ शांति रखने वाले किसी विदेशी राज्य की सरकार को निर्दिष्ट करना, यह पर्याप्त होगा।

अपराध के लिए आजीवन कारावास का दंड असम्यक रूप से कठोर है। दूसरी ओर, यदि कोई कभी अपराध किया जाता है तो अपराधी को धारा में अब यथा उपबंधित जुमनि का दंड देकर मुक्त होनी किया जाना चाहिए। विधि आयोग ने पहले ही सिफारिश की थी कि दंड, किसी भी भाँति का कारावास, जिसकी अवधि 10 वर्ष से अधिक नहीं होगी और जुमनि का भी होना चाहिए।

धारा तदनुसार निम्नवत पुनर्रक्षित की जा सकती है :—

“125. भारत के साथ शांति का संबंध रखने वाले किसी विदेशी राज्य के विरुद्ध युद्ध करना—जो कोई भारत के साथ शांति का संबंध रखने वाले किसी विदेशी राज्य की सरकार के विरुद्ध युद्ध करेगा या ऐसा युद्ध करने का प्रयत्न करेगा या ऐसा युद्ध करने के लिए दुष्प्रेरण करेगा, वह किसी भी भाँति के कारावास से, जिसकी अवधि 10 वर्ष तक की हो सकेगी, दंडित किया जाएगा और जुमनि से भी दंडनीय होगा।”

7.24. यही सिफारिश भारतीय दंड संहिता (संशोधन) विधेयक, 1978 में शामिल की गई थी। विधेयक का खंड 49 निम्नवत है :—

“49. दंड संहिता की धारा 125 में, “भारत सरकार से मैत्री का या शांति का संबंध रखने वाली किसी एशियाई शक्ति” शब्दों के स्थान पर “भारत से शांति का संबंध रखने वाले किसी विदेशी राज्य” शब्द रखे जाएंगे।

इस प्रकार दंड की मात्रा घटाने की सिफारिश स्वीकार नहीं की गई थी। यह उल्लेखनीय है कि इस समय विद्यमान उपबंध में विद्वित दंड यह है कि आजीवन कारावास से जिसमें जुमना जोड़ा जा सकेगा या दोनों में से किसी भाँति के कारावास से जिसकी अवधि 7 वर्ष तक हो सकेगी.....”

जब पहले से ही दंड को घटाने के लिए उपबंध है तो फिर दंड की उपरी सीमा अभिव्यक्त रूप से घटाने की आवश्यकता नहीं है।

7.25. उपर्युक्त को ध्यान में रखते हुए, धारा 125 भारतीय दंड संहिता (संशोधन) विधेयक में यथाप्रस्तावित रूप में संशोधित की जा सकती है।

## आत्महत्या : दुष्प्रेरण और प्रयत्न

## I धारा 306—आत्महत्या का दुष्प्रेरण

भारतीय दंड संहिता की धारा 306 आत्महत्या के दुष्प्रेरण के लिए दंड का उपबंध करती है। यह निम्नवत् है:—

“306. आत्महत्या का दुष्प्रेरण : यदि कोई व्यक्ति आत्महत्या करे तो जो कोई ऐसी आत्महत्या का दुष्प्रेरण करेगा यह दोनों में से किसी भाँति के कारावास से, जिसकी अवधि 10 वर्ष तक की हो सकेगी, दंडित किया जाएगा और जुमनि से भी दंडनीय होगा।”

8.02 धारा 306 की संवैधानिकता को श्रीमती ज्ञानकौर बनाम पंजाब राज्य<sup>1</sup>में चुनौती दी गई थी। धारा 306 की संवैधानिकता को बनाए रखते हुए, उच्चतम न्यायालय ने अभिनिधारित किया कि धारा 306 एक सुस्पष्ट अपराध अधिनियमित करती है जो धारा 309 से स्वतंत्र अस्तित्व के लिए समर्थ है। न्यायालय ने यह संप्रेक्षण किया कि<sup>2</sup>:

“धारा 306 आत्महत्या के दुष्प्रेरण के लिए दंड विहित करती है जबकि धारा 309 आत्महत्या करने के प्रयत्न को दंडनीय बनाती है। आत्महत्या करने के प्रयत्न का दुष्प्रेरण धारा 306 के कार्यक्षेत्र से बाहर है और यह भारतीय दंड संहिता की धारा 107 के साथ गठित धारा 309 के अधीन ही दंडनीय है। कतिपय अन्य अधिकारिता में, यद्यपि आत्महत्या करने का प्रयत्न एक दाँडिक अपराध नहीं है फिर भी दुष्प्रेरण को दंडनीय बनाया गया है। वहाँ उपबंध में आत्महत्या के दुष्प्रेरण के लिए दंड और आत्महत्या करने के प्रयत्न के दुष्प्रेरण के लिए भी दंड का उपबंध है। इस प्रकार, वहाँ भी, जहाँ आत्महत्या करने के प्रयत्न के लिए, दंड वांछनीय नहीं समझा जाता है। फिर भी, उसका दुष्प्रेरण एक दाँडिक अपराध बनाया गया है। दूसरे शब्दों में, समाज के द्वित में संयुक्त व्यक्तियों के लिए सदयोग से की गई आत्महत्या और आत्महत्या करने के लिए सदयुक्त प्रयत्न दंडनीय बनाए गए हैं, ऐसा उपबंध ऐसे दाँडिक उपबंध के अभाव में सन्निहित खतरे को निवारित करने के लिए भी वांछनीय समझा जाता है।”

8.03. इंगलैण्ड और वेल्स में सुसाईंड ऐक्ट, 1961 में विधि के नियम को निरसित किया है, जिसके द्वारा किसी व्यक्ति के लिए आत्महत्या करना अपराध है (धारा 1), अधिनियम की धारा (1) दूसरे की आत्महत्या में सहायताधिता के लिए दाँडिक दायित्व आरोपित करती है। यह निम्नवत् है:—

“2(1) वह व्यक्ति, जो किसी अन्य को उसकी आत्महत्या में या आत्महत्या करने में दूसरे के द्वारा किए गए प्रयत्न में सहायता करेगा, दुष्प्रेरण करेगा, परामर्श देगा या प्राप्त कराएगा, अभ्यारोपण में सिद्धदोष होने पर, कारावास से, जिसकी अवधि 10 वर्ष तक की हो सकेगी, दंडनीय होगा।”

## II. धारा 309—आत्महत्या करने का प्रयत्न

8.04. दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 309 आत्महत्या करने के प्रयत्न को, सावा कारावास से, जिसकी अवधि एक वर्ष तक की हो सकेगी, या जुमनि से, या दोनों से दंडनीय बनाती है।

8.05. विधि आयोग ने, अपनी 42वीं रिपोर्ट में इस आत की परीक्षा की थी कि क्या आत्महत्या करने के प्रयत्न को दाँडिक अपराध के रूप में बनाया रखना चाहिए। आयोग ने धर्मशास्त्रों को निर्दिष्ट किया था, जिन्होंने कतिपय परिस्थितियों<sup>3</sup> में, किसी के जीवन को लेने की प्रथा को वैध माना था और ब्रिटेन में सुसाईंड ऐक्ट, 1961 के उपबंधों को भी निर्दिष्ट किया था, जिसमें आत्महत्या करने के प्रयत्न के अपराध को नहीं माना था। इन अभिमतों की जांच करने के पश्चात् आयोग ने, सिफारिश की थी कि धारा 309 कठोर और अनैचित्यपूर्ण है और इसे निरसित किया जाना चाहिए।

8.06. विधि आयोग की सिफारिशों के अनुसरण में, विधेयक का खंड 131, भारतीय दंड संहिता की धारा 309 का लोप करता है।

8.07. तत्पश्चात् अनेक महत्वपूर्ण न्यायिक विकास दुए हैं। राज्य बनाम संजय कुमार भाटिया<sup>4</sup> के मामले में, दिल्ली उच्च न्यायालय ने, खंडपीठ के लिए न्यायमूर्ति साचर, जो वह उस समय थे, के माध्यम से कहते हुए यह संप्रेक्षण किया कि धारा 309 को बनाए रखना कालदोष है और परिनियम पुस्तक पर इसे नहीं होना चाहिए। तथापि, इस मामले में इसकी संवैधानिकता के प्रश्न पर विचार नहीं किया गया था।

8.08 उसके कुछ समय के पश्चात् बाबे उच्च न्यायालय ने मारक्षति बनाम श्रीपति, दुबल बनाम भडाराष्ट्र राज्य<sup>5</sup> के मामले में न्यायमूर्ति सांवंत, जो वह उस समय थे, के माध्यम से धारा 309 की संवैधानिक विधिमान्यता की जांच की और यह अभिनिधारित किया कि यह धारा संविधान के अनुच्छेद 14 और 21 की अतिक्रमणकारी है। इस धारा को विभेदकारी प्रकृति की ओर मनमानी भी तथा अनुच्छेद 14 द्वारा गारंटी की गई समानता को अतिक्रमणकारी अभिनिधारित किया गया था। अनुच्छेद 21 का मिर्चन इस प्रकार किया था कि मृत्यु का और किसी आजीवन लेने वाले का अधिकार उसमें सम्मिलित है। परिणामस्वरूप, इसे अनुच्छेद 21 की अतिक्रमणकारी अभिनिधारित किया गया था।

8.09. आंध्र प्रदेश उच्च न्यायालय ने भी चेन्ना जगदीश्वर बनाम आंध्र प्रदेश राज्य<sup>6</sup> के मामले में धारा 309 की संवैधानिक विधिमान्यता पर विचार किया था। न्यायमूर्ति अमरेश्वरी ने, खंडपीठ की ओर से बोलते हुए इस तर्क को अस्वीकृत कर दिया कि अनुच्छेद 21 में मृत्यु का अधिकार सम्मिलित है। न्यायालय ने यह भी अभिनिधारित किया कि न्यायालयों को यह सुनिश्चित करने की पर्याप्त शक्ति है। उनके साथ अनपेक्षित कठोर व्यवहार या पूर्वाग्रह न किया जाए, जिन्हें देख-रेख और ध्यान दिए जाने की आवश्यकता है। न्यायालय ने अनुच्छेद 14 के अतिक्रमण को भी नकार दिया।

8.10. उच्चतम न्यायालय ने भी चेन्ना जगदीश्वर बनाम आंध्र प्रदेश राज्य<sup>7</sup> के मामले में धारा 309 की संवैधानिक विधिमान्यता पर विचार किया था। न्यायमूर्ति अमरेश्वरी ने, खंडपीठ की ओर से बोलते हुए इस तर्क को अस्वीकृत कर दिया कि न्यायालयों को यह सुनिश्चित करने की पर्याप्त शक्ति है। उनके साथ अनपेक्षित कठोर व्यवहार या पूर्वाग्रह न किया जाए, जिन्हें देख-रेख और ध्यान दिए जाने की आवश्यकता है।

“उपर जो कुछ अभिनिधारित और उद्धृत किया गया है उसके आधार पर हमारा कथन है कि दंड संहिता की धारा 309 को अपनी दाँडिक विधियां मानवीय बनाने के लिए परिनियम की पुस्तक से दृष्टाया जाना उचित होगा। यह एक ब्रुर और विवेकानन्द उपबंध है और इसका परिणाम किसी व्यक्ति को, जिसने पीड़ा भोगी है, पुनः (दोबारा) दंडित करना है और वह, आत्महत्या करने में अपनी असफलता के कार्य को धर्म, नैतिकता या लोकनीति के विरुद्ध नहीं कहा जा सकता तथा प्रयत्नन्ति आत्महत्या के कार्य का समाज पर कोई हानिकारक प्रभाव नहीं है। और आत्महत्या या आत्महत्या करने का प्रयत्न दूसरों को कोई अपडानि नहीं पहुंचाता है, जिसके कारण संबद्ध व्यक्तियों की वैयक्तिक स्वतंत्रता में राज्य का दस्तक्षेप अपेक्षित नहीं है।”

अतः, हम यह अभिनिधारित करते हैं कि धारा 309, अनुच्छेद 21 का अतिक्रमण करती है और इसलिए यह शून्य है। यह कहा जा सकता है कि हमारे द्वारा अपनाया गया मत के बजाय मानवीयकरण के हेतु को ही आगे बढ़ाएगा, जो कि आज की आवश्यकता है अपितु, सार्वभौमिक भी होगा क्योंकि धारा 309 को प्रभावित करके हम दाँडिक विधि के इस भाग को सार्वभौमिक विधि के अनुरूप बना देंगे।

8.11. किन्तु उच्चतम न्यायालय का यह विचार, श्रीमती ज्ञानकौर बनाम पंजाब राज्य<sup>10</sup> के मामले में एक बड़ी खंडपीठ द्वारा उलट दिया गया था, जिसमें न्यायमूर्ति वर्मा, जैसे कि वे उस समय थे, ने न्यायालय की ओर से बोलते हुए यह अभिनिधारित किया कि पी० रत्निम का मामला दोषपूर्ण रूप में विनिश्चित किया गया था, न्यायालय ने यह संप्रेक्षण किया<sup>11</sup>:

“जब कोई व्यक्ति आत्महत्या करता है, तो उसे कुछ सांपेश आपाराधिक कार्य करने पड़ते हैं और उन कार्यों के मूल्य को, अनुच्छेद 21 के अधीन “जीवन का अधिकार” के संरक्षण में खोजा या उसके भीतर शामिल नहीं माना जा सकता। “प्राण की पवित्रता” के महत्वपूर्ण पक्ष को भी अनदेखा नहीं किया जा सकता। अनुच्छेद 21 प्राण और दैदिक स्वतंत्रता की संरक्षा करने वाला एक उपबंध है और कल्पना के किसी भी विस्तार में “प्राण के संरक्षण” में “जीवन का समापन” को शामिल नहीं पढ़ा जा सकता। आत्महत्या करके अपने जीवन को समाप्त करने की किसी व्यक्ति को अनुज्ञा प्रदान करने का दर्शन, चाहे कोई भी हो, हम अनुच्छेद का कार्यान्वयन इस प्रकार कर पाना कठिन पाते हैं कि उसमें गारंटीकृत सूल अधिकार के एक भाग के रूप में “मृत्यु का अधिकार” भी सम्मिलित है। प्राणों का अधिकार अनुच्छेद 21 में सम्मिलित एक नैसर्गिक अधिकार है किन्तु आत्महत्या प्राणों का अनैसर्गिक समापन अथवा अंतकरण है और इसलिए “प्राण के अधिकार” की धारा से असंयोजनीय तथा असंगत है। समान और पूर्ण विनम्रता के साथ हम अन्य अधिकारों की प्रकृति के साथ जैसेकि वाक स्वातंत्र्य के अधिकार के साथ कोई समरूपता नहीं पाते हैं, जिससे यह अभिनिधारित करने का तुल्य आधार मिल सके कि “प्राण का अधिकार” में “मृत्यु का अधिकार” भी सम्मिलित है। समान, तुलना, अनुच्छेद 21 के संदर्भ में उपर्युक्त करण से अप्राप्यिक है। अन्य सूल अधिकार से संबंधित विनिश्चयों में जहाँ किसी अधिकार के प्रयोग के भीतर शामिल अभिनिधारित किया गया था, अनुच्छेद 21 में पी० रत्निम के मामले में लिए गए अभिमत के समर्थन के लिए उपलब्ध नहीं है।

अनुच्छेद 21 में “प्राण” शब्द का अन्तर विषय देने के लिए उसका अर्थान्वयन मानव गरिमा के साथ ज

असंगत है। “मृत्यु का अधिकार” यदि कोई है तो “प्राण के अधिकार” के साथ निहित रूप से असंगत है क्योंकि “जीवन के साथ मृत्यु है”।

8.12. अनुच्छेद 14 के अतिक्रमण के प्रश्न पर, न्यायालय पी० रत्ननम के मामले में न्यायमूर्ति अंसारिया द्वारा दिए गए अभिमत से सहमत था।

8.13. न्यायमूर्ति वर्मा ने यह संप्रेक्षण किया कि प्रयत्ननित आत्महत्या को दंडित करने का ऐसा दांडिक उपबंध बनाए रखने की बांधनीयता पर, जिसके साथ विधि आयोग द्वारा इसे हटाए जाने की सिफारिश भी है, यह उपर्दर्शित करने के लिए पर्याप्त नहीं है कि यह उपबंध अनुच्छेद 14 का अतिक्रमणकारी होने के कारण असंवैधानिक है। यदि उन तथ्यों का मूल्यांकन किया जाए, तो उपबंध की यह उपबंध अनुच्छेद 14 का अतिक्रमणकारी होने के कारण असंवैधानिक है। यदि उन तथ्यों का मूल्यांकन किया जाए, तो उपबंध की गंभीरता दंड देने के विषय में व्यापक विवेक द्वारा न्यून हो जाती है क्योंकि उसमें किसी न्यूनतम दंड को देने की अपेक्षा नहीं है तथा अधीन दोषसिद्ध पर दिया जाने वाला दंड ही सकता है। यह अभिनिश्चारित करने के लिए कि अनुच्छेद 14 का अतिक्रमण नहीं होता है। पी. एतिनम के मामले में इस पक्ष पर ध्यान दिया गया है।<sup>12</sup>

8.14. श्रीमती ग्यान कौर के मामले में उच्चतम न्यायालय के विनिश्चय ने इस प्रकार निरपेक्ष रूप से पुष्टि की है कि अनुच्छेद 21 में प्राण के अधिकार में मृत्यु का अधिकार शामिल नहीं है, परिणामस्वरूप धारा 309, जो आत्महत्या करने के प्रयत्न को दंडनीय घोषित है, असर्वैथानिक नहीं है।

8.15. ऐसी कोई चिन्तन धारा नहीं है, जो आत्महत्या करने के प्रयत्न के अपराध के अनपराधीकरण की वकालत करती हो, वे उन व्यक्तियों के अनुकम्पा और सहानुभूतिपूर्ण व्यवहार का अभिवाक करते हैं, जो अपने जीवन को समाप्त करने के प्रयत्न में असफल हो जाते हैं। वे यह तर्क देते हैं कि धारा 309 का हटाया जाना, आत्महत्या करने के प्रयत्न को आमंत्रण या प्रेत्साहन देने वाला नहीं है। होते हैं। 13

8.16. दूसरी ओर, कठिपय अन्य विकासों जैसे स्वापक औषधि व्यापार संबंधी अपराधों में वृद्धि, देश के विभिन्न भागों में आतंकवाद, मानव जम की घटना, आदि ने आत्महत्या करने के प्रयत्न को अपराध बनाए रखने की आवश्यकता पर पुनःविचार करने के लिए दिशा दी है। उदाहरण के लिए, किसी आतंकवादी या औषधि व्यापार को, जो साइनाइड गोली खाने के अपने प्रयत्न में असफल रहता है, अथवा मानव जम, जो आक्रमण के लक्ष्यों के साथ स्वयं को मारने के प्रयत्न में असफल रहता है, धारा 309 के अधीन आरोपित किया जाना होगा तथा अपराध साबित करने के लिए अन्वेषण करने होंगे। अपराधियों के ये समूह धारा 309 के अधीन उन अपराधियों से भिन्न प्रवार्ग के बंतर्गत आते हैं, जो मनोवैज्ञानिक तथा धार्मिक कारणों से आत्महत्या करने का प्रयत्न करते हैं।

8.17. तदनुसार हम सिफारिश करते हैं कि धारा 309 को, भारतीय दंड संहिता के अधीन एक अपराध के रूप में बनाए रखा जाए और विधेयक के खंड 131 को हटा देना चाहिए।

पाद-टिप्पणी

1. 1996 (2) स्केल 881 ।
  2. यथोक्त 891 ।
  3. विधि आयोग, 42वीं रिपोर्ट, पैरा 16.31, पृष्ठ 244 ।
  4. यथोक्त, पैरा 16.32, पृष्ठ 243 ।
  5. (1985) क्रि० ला० ज० 931 ।
  6. (1987) क्रि० ला० ज० 743 ।
  7. (1988) क्रि० ला० ज० 549 ।
  8. (1994) 3 एस सी सी 394 ।
  9. यथोक्त, 429 ।
  10. यथोक्त, टिप्पणी ।
  11. यथोक्त, 888 ।
  12. यथोक्त, 890 ।
  13. न्यायमिति आर० ए० जायोरदार (सेवानिवृत्त) “आत्महत्या का दुष्क्रिया”—“ए क्राइम आर ए क्राइ” (1996)।

## स्त्री और बालकों के विरुद्ध अपराध

## I. अलात् संग

विधि आयोग ने बलात्संग और संहबद्ध अपराधः अधिष्ठायी विधि, प्रक्रिया और साक्ष्य के कुछ प्रश्नों संबंधी अपनी 42वीं रिपोर्ट में बलात्संग को “स्वयं का चरम अतिक्रमण” के रूप में परिभाषित किया है। यह स्त्रियों के जीवन में एक अपमानजनक घटना है, जो अस्तित्व की है तथा निरहिता की भावना की ओर ले जाती है।<sup>1</sup> अन्य विधानों ने बलात्संग को एक आंतरिक हमले या लैंगिक आक्रमण के रूप में वर्णित किया है, जो स्त्री के लैंगिक स्वायत्तता पर नियंत्रण को हिंसक रूप से ल्हीनना कहा जाता है। बलात्संग शिकार व्यक्ति की शारीरिक और भावात्मक अखंडता तथा गरिमा को प्रभावित करने वाला एक हिंसक क्रत्य है।<sup>2</sup>

9.02. विधि आयोग ने अपनी 42वीं रिपोर्ट में धारा 375 में कुछ परिवर्तनों की सिफारिश की थी, जो बलात्तसंग के अपराध के संबंध में है। आयोग द्वारा धारा 375 में निम्नलिखित परिवर्तनों की सिफारिश की गई थी।

धारा 375 का “तीसरा” खंड ऐसे मैथुन को बलात्संग के रूप में परिभाषित करता है, जो उस स्त्री की सम्मति से, उसको मृत्यु या उपहति के भय में डालकर अभिग्राप्त की गई है। आयोग ने सिफारिश की थी कि “मृत्यु या उपहति” शब्द के पूर्व “या तो स्वयं उसको या उस स्थान पर उपस्थिति किसी अन्य को” शब्द जोड़े जाएं।

समति के प्रश्न पर आयोग ने यह इंगित किया था कि भारतीय देह सहिता की धारा 90 में “क्षति” शब्द सम्मिलित है, जिसका अर्थ व्यापक है। क्षति में मन, शरीर, प्रतिष्ठा या सम्पत्ति को पहुंचाई गई क्षति सम्मिलित है। तथापि, आयोग ने इस विषय पर किसी संशोधन की सिफारिश नहीं की थी।

9.03. आयोग ने यह भी सिफारिश की थी कि वैवाहिक बलात्संग को धारा 375 के क्षेत्र से हटा दिया जाना चाहिए और इसे एक पुस्तक अपराध के रूप में रखा जाना चाहिए। आयोग ने यह संप्रेक्षण किया कि<sup>3</sup>—

“धारा 375 का अपवाद यह उपबंध करता है कि जब पुरुष का अपनी पत्नी के साथ मैथुन बलात्संग नहीं है जबकि पत्नी 15 वर्ष से कम आयु की नहीं है। परि इसका कानूनी बलात्संग के लिए दंड वर्दी है जो पत्नी की आयु 12 वर्ष के बीच है तब दंड मुद्दा है, अर्थात् वह कारावास से, जिसकी अवधि दो वर्ष तक की हो सकती, या जुमनि से, या दोनों से दंडनीय होगा। स्वाभाविक है कि इस अपराध के लिए अभियोजन बहुत विरल है। हम समझते हैं कि इस अपराध को पूर्णतः धारा 375 के कार्यक्षेत्र से बाहर ले जाना और इसे तकनीकी कार्य में बलात्संग न कहना बांधनीय होगा। अपराध के लिए दंड भी एक पृथक् धंरा में उपबंधित किया जा सकता है।”

9.04. आयोग ने विधितः पृथक् हुई पत्नी और बलात्संग के अपराध की स्थिति पर भी विचार किया। यह सप्रेक्षण किया गया था कि :

“अपवाद के अधीन किसी, पति को अपनी पत्नी के साथ बलात्संग का दोषी नहीं ठहराया जा सकता, यदि उसकी आयु 15 वर्ष से अधिक है। यह अपवाद ऐसी एक विशेष स्थिति पर ध्यान रखने के लिए है अर्थात् जब पति और पत्नी न्यायिक पुथक्करण की डिक्री के अधीन या पारस्परिक सहमति द्वारा अलग-अलग रह रहे हैं। ऐसे मामले में विवाद तकनीकी रूप से बना रहता है और यदि पुरुष उसकी इच्छा के विरुद्ध या उसकी सम्मति के बिना उसके साथ मैथुन करता है तो उसे बलात्संग के अपराध से आरोपित नहीं किया जा सकता। यह ठीक नहीं प्रतीत होता है। इस समझते हैं कि ऐसी परिस्थितियों में किसी पुरुष द्वारा अपनी पत्नी के साथ उसकी सम्मति के बिना मैथुन बलात्संग के रूप में दण्डनीय होगा।”<sup>4</sup>

9.05. आयोग द्वारा सिफारिश किया स्पष्टीकरण 2. निम्नवत् है:

“किसी न्यायिक पृथक्करण की डिक्री के अधीन या पारस्परिक सम्मति द्वारा अपने पति से पृथक्तः रहने वाली स्त्री को, इस धारा के प्रयोजन के लिए, उसकी पत्नी नहीं समझा जाएगा।”

9.06. 42वीं रिपोर्ट में धारा 375 का निम्नानुसार संशोधन करने की सिफारिश की गई थी:-

“धारा 375—बलात्संग—जो पुरुष निम्न परिस्थितियों में, अपनी पत्नी के सिवाय किसी स्त्री के साथ मैथुन करता है वह पुरुष बलात्संग करता है। यह कहा जाता है—

(क) उसी स्त्री की इच्छा के विरुद्ध; या

(ख) उस स्त्री की सम्मति के बिना; या

(ग) उस स्त्री की सम्मति से जबकि उसकी सम्मति या तो स्वर्य उसको या उस स्थान पर उपस्थिति किसी अन्य मृत्यु या उपहारि के भय में डालकर अभिप्राप्त की गई है; या

(घ) उस स्त्री की सम्मति से, यह जानते हुए कि यह सम्मति इस विश्वास में दी गई है कि वह उसका पति है।

स्पष्टीकरण 1. बलात्संग के अपराध के लिए आवश्यक मैथुन गठित करने के लिए प्रवेशन प्रयात है।

स्पष्टीकरण 2. किसी न्यायिक पृथक्करण की दिक्षी के अधीन या पारस्परिक सम्मति द्वारा अपने पति से पृथक्तः रहने के लिए दोनों के सम्मेलन के लिए उसकी पत्नी समझा जाएगा।<sup>5</sup>

9.07. विद्यमान धारा 375 बलात्तसंग के लिए आजीवन कारावास या दोनों में से किसी भाँति के कारावास से, जिसकी अवधि 10 वर्ष की हो सकेगी, का अधिकतम दंड नियत करती है। आयोग ने सुझाव दिया है कि यह कठिन कारावास, जिसकी अवधि 14 वर्ष तक हो सकेगी, होनी चाहिए।

9.08. आयोग ने धारा 376क और धारा 376ख को शामिल करने की सिफारिश की थी। धारा 376क में ऐसी पत्नी के साथ, जिसकी आयु 12 से 15 वर्ष के बीच है और ऐसी पत्नी के साथ, जिसकी आयु 12 वर्ष से कम है, मैथुन को प्रमेदित किया है, ऐसी पत्नी के साथ, जिसकी आयु 15 वर्ष से अधिक है, उसकी सम्मति के बिना अपराध नहीं है। आयोग ने, यदि पत्नी की आयु 12 वर्ष से कम है, तो 7 वर्ष तक के कठिन कारावास की और किसी अन्य मामले में दोनों में से किसी भाँति के दो वर्ष तक अवधि के कारावास की सिफारिश की थी।

9.09. आरा 376ख में किसी स्त्री के साथ, जिसकी आयु 16 वर्ष से कम है किन्तु 12 वर्ष से कम नहीं है, उसकी सम्मति से भी क्रिए गए अवैध मैथिन को दोनों में से किसी भी भाँति के कारावास से, जिसकी अवधि 7 वर्ष हो सकेगी, दंडनीय बनाया है।

9.10 आयोग ने यह भी कहा कि अभियुक्त के लिए इस धारा के अधीन आरोप में यह सांबित करना प्रतिरक्षा होगी कि वह सदम्भव से यह विध्वास करता था कि स्त्री की आयु 16 वर्ष से अधिक है।<sup>6</sup>

9.11 42वीं रिपोर्ट एक योगदान बलात्संग संबंधी विधियों को सुधारने की दिशा में अभिरक्षात्मक बलात्संग की धारणा का पुरस्थापन था। आयोग ने, धारा 376ए, 376घ और 376ड, जोड़ने की सिफारिश की थी जो किसी लोक सेवक द्वारा या किसी स्त्रियों या बालकों की संस्था के अधीक्षक, आदि द्वारा और किसी अस्पताल के प्रबंधक द्वारा स्त्री रोगी के साथ, जो मानसिक असंतुलन से निर्दित रूपी है वस्त्र अभिरक्षा में बलात्संग के संबंध में है।

9.12 बलातसांग संबंधी विधि के उपर्युक्त असंशोधित बने रहे विधेयक 1979 में लोक सभा के विघटन के कारण भारतीय दंड संहिता (संशोधन) विधेयक पारित नहीं किया जाएगा।

9.13 इसी ओर भारत के उच्चतम न्यायालय ने कुछ मामले विनिश्चित किए, जिनमें बलात्संग के विस्तार का एक निर्बंधित दृष्टिकोण अपनाया गया तथा अभियुक्त को निर्मूक्त कर दिया गया। सुसंगत विनिश्चय प्रताप मिश्रा बनाम उड़ीसा राज्य<sup>7</sup> और तुकाराम बनाम महाराष्ट्र राज्य<sup>8</sup> के मामलों में है। पश्चात्वर्ती मामला जो, मधुरा बलात्संग के मामले में लोक प्रसिद्ध है, पुलिस थाने में हो पुलिस सिपाहियों द्वारा एक युवा लड़की के साथ, जिसकी आयु 14-16 वर्ष के बीच थी, बलात्संग अंतर्ग्रस्त था। मुम्बई उच्च न्यायालय ने, सत्र न्यायालय द्वारा अभियुक्त की निर्मूक्त का आदेश पलट दिया था और उन्हें विभिन्न अवधियों के कठिन कारावास से देढ़ादिष्ट किया था। उच्च न्यायालय इस विनिश्चय पर पहुंचा था कि पुलिस कर्मियों ने इस तथ्य का फायदा उठाया था कि मधुरा अपने भाई द्वारा फाइल की गई एक शिकायत में अंतर्ग्रस्त थी और वह पुलिस थाने में रात के अंधेरे के समय में अकेले थी। इससे साबित हो गया कि उसने किसी भी संम्बन्धित में संभोग के लिए समर्पित नहीं दी है। उच्चतम न्यायालय ने, रिकार्ड पर उपलब्ध साक्ष्य का मूल्यांकन करने के पश्चात, यह निश्चय किया कि परिस्थितिजन्य साक्ष्य ऐसी थी कि वह “दोष के युक्तियुक्त” साक्ष्य की ओर नहीं ले जाती थी और मुम्बई उच्च न्यायालय के विनिश्चय को पलट दिया तथा अभियुक्तों को निर्मूक्त कर दिया। इस पर चार विधि प्राध्यापकों को निर्णय की आलोचना करते हुए, भारत के मुख्य न्यायमूर्ति को एक पत्र लिखना पड़ा। इस खुले पत्र के कारण मदिला संगठनों तथा भारतीय समाज के विभिन्न भागों से राष्ट्रव्यापी विरोधपत्रों को जन्म दिया।<sup>9</sup> उनकी सामूहिक बलात्संग संबंधी विधि के सुधार के लिए भी संघ सरकार ने सार्वजनिक अभियान का उत्तर दिया तथा बलात्संग संबंधी विधियों में सुधार का विषय विधि शायोग को निर्दिष्ट कर दिया।

9.14 विधि आयोग ने “बलात्तसंग और सट्टबद्द अपराध; अधिष्ठायी विधि, प्रक्रिया और साक्ष्य में कुछ प्रश्न” संबंधी अपनी 84वीं रिपोर्ट 1980 में सरकार को भेज दी।

9.15. आयोग ने सम्मति की परिभाषा और न्यूनतम आयु से नवचे की स्त्रियों के साथ बलात्संग पर विशेष ध्यान दिया। आयोग ने 42वीं रिपोर्ट में सम्मिलित कुछ सिफारिशों पर भी विचार किया। आयोग ने पूर्ववर्ती रिपोर्ट में दिए गए कुछ सुझावों को, जिनमें बलात्संग नियन्त्रण बताए गए थे, छोड़ दिया।

- (1) उचित बलात्संग;
  - (2) आलिका पत्नी के साथ बलात्संग; और
  - (3) बलात्संग, अर्धात् 12-16 वर्ष की आयु के बीच स्त्री के साथ उसकी सम्मति से किया गया

उपर्युक्त ग्रन्थांकण को न मानने के लिए आयोग द्वारा दिए गए कारण निम्नलिखित हैं।<sup>10</sup>

“.....आयोग अब ऐसा महसूस करता है कि ऐसी पुनः संरचना अब बलात्संग के लिए अपराधियों के विचारण के प्रश्न पर वर्तमान चिन्तन के अनुरूप नहीं होगी और इसलिए धारा 375 की संरचना को परिवर्तित नहीं किया जाना चाहिए। आयोग द्वारा उसकी पूर्ववर्ती रिपोर्ट में सिफारिश किए जाने से अब तक बलात्संग के अपराध के अभिगम में आमूल और आंतिकारी परिवर्तन हो गए हैं; इसका महापातक होना प्रायः विशिष्ट जताया जाता है और उन वीमत्स तथा घृणाजनक परिस्थितियों द्वारा प्रकाश में लाया जाता है जिनमें अपराध किया गया है। निर्णय विधि में अपराध के आवश्यक संघटकों को कल्पित कर दिया है और बलात्संग के अपराध से संबंधित पदले से सुस्थापित विधि में अस्थिरता ला दी है। आयोग यह महसूस करता है कि पुनः संरचना से अनिश्चयता आएगी और धारा 375 में विकृति होगी जिसे आयोग के अभिभाव में अपनी वर्तमान तर्कपूर्ण और सुसंगत संरचना बनाए रखना चाहिए।”

परिणामस्वरूप आयोग ने, धारा 375क और 375ख के लोप की सिफारिश की। इसके बजाए, आयोग ने बालिका पत्नी के साथ बलात्संग (धारा 375क) को एक पृथक धारा में रखने के बजाए साधारण धारा 375 में बनाए रखने की सिफारिश की। धारा 375ख का, जो किसी स्त्री के साथ जिसकी आयु 12-16 वर्ष के बीच है, उसकी सम्मति से बलात्संग के संबंध में है, पूरी तरह लोप किया गया और आयोग ने, धारा 376ग, 376घ और 376ङ को, जो अभिरक्षा में बलात्संग के संबंध में है, बनाए रखा, किन्तु उन्हें, क्रमशः धारा 376क, 376ख और 376ग के रूप में पुनः संबंधित कर दिया।

9.16 सम्मति के प्रश्न पर, आयोग ने यह संप्रेक्षण किया कि वे केवल पूर्व रिपोर्ट में दिए गए सुझावों को ही समिलित नहीं करेंगे अपितु आयोग ने और संशोधनों का सुझाव दिया जो धारा 375 के प्रयोजनों के लिए “स्वतंत्र सम्मति” की धारणा को मजबूत बनाएंगे, आयोग ने महसूस किया कि “सम्मति” शब्द अपार्याप्त है और “इसे स्वतंत्र तथा स्वैच्छिक सम्मति” वाक्यांश द्वारा प्रतिस्थापित किया जाना चाहिए। आयोग ने यह संप्रेक्षण किया।<sup>11</sup>

“दूसरे छंड में, “सम्मति” शब्द के स्थान पर “स्वतंत्र और स्वैच्छिक सम्मति” पद का रखा जाना यह स्पष्ट कर देता है कि सम्मति उस सम्मति से जिसे मौन द्वारा विवक्षित कहा जाता है, सुभिन्न, सक्रिय सम्मति होनी चाहिए।”

आयोग ने यह और कहा कि :

“क्या सिफारिश किए गए संशोधन के अधीन कि न्यायालय के लिए यह खुला नहीं होगा कि वह स्त्री की ओर से, उसकी कायरता या दब्खुपन के कारण उसके मौन से अथवा ऐसी परिस्थितियों से जैसा कि लड़की ने जब अपराधी ने उसे खींचा तो या उसके दायों को पकड़ा तब डरते अनुसरण किया या स्त्री मौन बनी रही और चिल्लाई नहीं या विरोध नहीं किया या सहायता के लिए चीखी नहीं से उसकी सम्मति का निष्कर्ष निकालो।”

अद्योग वे यह और कहा कि ।<sup>12</sup>

“हमारे द्वारा सिफारिश किए गए तीसरे खंड के उपांतरण केवल तभी सम्मति को दृष्टित नहीं कर देते जब स्त्री को मृत्यु या उपहर्ति के भय में रख कर अभिप्राप्त की जाती है अपितु तब भी जब वह किसी व्यक्ति के (जिसमें वह स्वयं है) शरीर, मन, प्रतिष्ठा या सम्पत्ति को कारित किए जाने वाली किसी “क्षति” के भय में रखकर अभिप्राप्त की जाती है और तब भी जब उसकी सम्मति किसी आपराधिक अभित्रास में, अर्थात् उसको या किसी ऐसे व्यक्ति को, जिससे वह हितबद्ध है, किसी क्षति या खतरे के भय में रखने के लिए आशयित या परिकलित किन्हीं शब्दों या काव्यों द्वारा अभिप्राप्त की जाती है या जब उसे उसकी प्रतिष्ठा या सम्पत्ति या किसी अन्य व्यक्ति की, जिससे वह हितबद्ध है, प्रतिष्ठा को किसी क्षति का भय दिखाकर अभिप्राप्त की जाती है। इस प्रकार यदि सम्मति किसी स्त्री को उसके बालक या माता-पिता को क्षति के बारे में मिथ्या और लज्जाजनक अफवाहों फैलाने का भय दिखाने के पश्चात् अभिप्राप्त की जाती है या उसके शरीर, प्रतिष्ठा या सम्पत्ति के अन्य भय दिखाकर अभिप्राप्त की जाती है तो वह सम्मति भी, संशोधित किए जाने के लिए सिफारिश किए गए तीसरे खंड के अधीन सम्मति नहीं होगी।”

9.17 आयोग ने, सम्मति की आयु संबंध में महत्वपूर्ण सिफारिश की थी। भारतीय दंड संहिता के बनाए जाने से लेकर अब तक अनेक बार धारा 375 के अधीन अपराध को यथालागू सम्मति की आयु संशोधित की गई है। 84वीं रिपोर्ट में एक चार्ट के रूप में लेखान्वित के रूप में इसे प्रदर्शित किया गया है जो निम्नवत् है: <sup>13</sup>

### चार्ट

वर्ष	भारतीय दंड संहिता की धारा 375 के खंड 5 के अधीन सम्मति की आयु	मा० दं० सं० की धारा 375 के अपवाद में उल्लिखित आयु	बाल विवाह अवरोध अधिनियम, 1938 के अधीन विवाह न्यूनतम
1860	10 वर्ष	10 वर्ष	—
1891	12 वर्ष	12 वर्ष	—
(1891 का अधिनियम 10) (मा० दं० सं० के संशोधन पश्चात)	14 वर्ष	13 वर्ष	—
1925 (मा० दं० सं० के संशोधन के पश्चात)	14 वर्ष	13 वर्ष	14 वर्ष
1929 (बाल विवाह अधिनियम के पारित होने के पश्चात)	16 वर्ष	15 वर्ष	15 वर्ष
1940 (दंड संहिता और बाल विवाह अधिनियम के संशोधन के पश्चात)	16 वर्ष	15 वर्ष	16 वर्ष
1978	16 वर्ष	15 वर्ष	16 वर्ष

9.18. ऐसा कि उपर्युक्त चार्ट से देखा जा सकता है, 1978 में बाल विवाह अवरोध अधिनियम, 1938 के संशोधन के पश्चात बालिकाओं के लिए विवाह की न्यूनतम आयु बढ़ाकर 18 वर्ष कर दी गई है। आयोग ने, सिफारिश की कि चूंकि ऐसी स्त्री के साथ विवाह जिसकी आयु 18 से कम है, प्रतिषिद्ध है .....ऐसी स्त्री के साथ, जिसकी आयु 18 वर्ष से कम है, मैथुन भी प्रतिषिद्ध होना चाहिए।

9.19. 84वीं रिपोर्ट में धारा 376 में किसी परिवर्तन की सिफारिश नहीं की गई है जो बलात्संग के अपराध के लिए दंड का उपबंध करती है। आयोग का यह अभिमत था कि न्यूनतम दंड विहित करके न्यायिक विवेक को नियन्त्रित नहीं करना चाहिए।

9.20. 84वीं रिपोर्ट द्वारा "तथ्य की भ्रांत" धारणा की व्यापक संकल्पना लाकर बलात्संग के शिकार व्यक्ति की नैतिकता या लैंगिक पूर्ववृत्त की परीक्षा समाप्त कर दी गई है। धारा 375 का खंड ख, तथ्य की व्यापक भ्रांत धारणा के अधीन इसे अनुज्ञात करती है जिसमें पहचान की संकीर्ण मूल भी सम्मिलित है।

9.21. विधि आयोग द्वारा उसकी 84वीं रिपोर्ट में की गई सिफारिशों के परिणामस्वरूप, सरकार ने, अन्य बातों के साथ, भारतीय दंड संहिता में संशोधन करने के लिए, दंड विधि (संशोधन) विधेयक, 1980 लोक सभा में पुरास्थापित किया था। सरकार ने, विधि आयोग की निम्नलिखित सिफारिशों स्वीकार की थी:—

1. सम्मति की धारा को, स्वतंत्र और स्वैच्छिक सम्मति के रूप में, स्वीकार करना,
2. न्यायिक रूप से पृथक्कृत पत्नी और पत्नी के बीच विभेद करना, और
3. आयोग की 42वीं रिपोर्ट में यथासिफारिश की गई अभिरक्षा में बलात्संग की तीन धारणाओं को स्वीकार करना।

9.22. विधेयक में दो या उससे अधिक व्यक्तियों द्वारा गैर बलात्संग के पृथक अपराध को पुरास्थापित करके एक महत्वपूर्ण परिवर्तन किया गया है।

9.23. विधेयक संसद की संयुक्त समिति को भेजा गया था। समिति द्वारा किए गए परिवर्तन निम्न थे:—

1. विवाहित बलात्संग की आयु घटा दी गई। धारा 375 का अपवाद यह अधिकथित करता है कि पुरुष द्वारा अपनी पत्नी के साथ मैथुन बलात्संग नहीं है जबकि पत्नी 15 वर्ष से कम आयु की नहीं है। समिति ने, यह आयु घटाकर 12 वर्ष कर दी है।
2. एक नई धारा 376क अंतःस्थापित की गई थी जो न्यायिक रूप से पृथक्कृत पत्नी के साथ उसकी सम्मति के लिए मैथुन के संबंध में है। समिति ने, न्यायिक रूप से पृथक्कृत पत्नी के साथ बलात्संग के लिए कम दंड उपबंधित किया है।
3. समिति ने, धारा 375 में स्वतंत्र और स्वैच्छिक सम्मति की विस्तारित धारणा को स्वीकार नहीं किया।

9.24. संयुक्त समिति द्वारा रिपोर्ट किए गए प्रस्ताव विधेयक में उसके अंतिम पठन के प्रक्रम पर एक परिवर्तन किया गया था। वह आयु जिस पर पत्नी के साथ मैथुन, बलात्संग नहीं है, 15 वर्ष बनाई रखी गई थी।

9.25. संसद ने दंड विधि (संशोधन) अधिनियम, 1983 अधिनियम दिया था जिसकी प्रमुख विशेषताएं जहां तक भारतीय दंड संहिता में बलात्संग के अपराध का संबंध निम्नलिखित था:—

1. बलात्संग के दंड में बढ़ि।
2. सामूहिक बलात्संग और अभिरक्षा में बलात्संग के बीच विभेद और उनके लिए कठोरतर शास्त्रिय।
3. गर्भवती स्त्रियों के साथ बलात्संग का पृथक प्रवर्ग।
4. न्यायिक रूप से पृथक पत्नी के साथ बलात्संग को विशिष्ट मानना और उसके लिए बलात्संग के अन्य दृष्टिकोणों की अपेक्षा कम दंड के लिए उपबंध।
5. ऐसी स्त्री के साथ बलात्संग के दंड में जिसकी आयु 12-15 वर्ष के बीच कमी करना।
6. विकृतचित्त स्त्री या ऐसी स्त्री जो मत्त है, बलात्संग को सुभिन्न करना।

9.26. तदनुसार धारा 375 और 376 संशोधित की गई थी और नई धारा 376क, 376ख और 376ग अंतःस्थापित की गई थी। विधि आयोग की सभी प्रमुख सिफारिशों समाविष्ट कर ली गई है।

ये उपबंध निम्नवत् हैं:

"375. बलात्संग—जो पुरुष एत्स्मिनपश्चात अपवादित दशा के सिवाय किसी स्त्री के साथ निम्नलिखित छह भाँति की परिस्थितियों में से किसी परिस्थिति में मैथुन करता है वह पुरुष "बलात्संग" करता है, यह कहा जाता है:—  
पहला—उस स्त्री की इच्छा के विरुद्ध।  
दूसरा—उस स्त्री की सम्मति के बिना।

तीसरा—उस स्त्री की सम्मति से, जबकि उसकी सम्मति, उसे या ऐसे किसी व्यक्ति को, जिससे वह हितबद्ध है, मूल्य या उपदाति के भय में डालकर अभिप्राप्त की गई है।

चौथा—उस स्त्री की सम्मति से, जबकि वह पुरुष यह जानता है कि वह उस स्त्री का पति नहीं है और उस स्त्री ने सम्मति इसलिए दी है कि वह विश्वास करती है, कि वह ऐसा पुरुष है जिससे वह विधिपूर्वक विवाहित है या विवाहित होने का विश्वास करती है।

पांचवां—उस स्त्री की सम्मति से, जबकि ऐसी सम्मति देने के समय, वह विकृतचित्त या मतता के कारण या उस पुरुष द्वारा व्यक्तिगत रूप में या किसी अन्य व्यक्ति के माध्यम से कोई संज्ञा शून्यकारी या अस्वास्थ्यकर पदार्थ किए जाने के कारण उस बात की, जिसके बारे में वह सम्मति देती है, प्रकृति और परिणामों को समझने में असमर्थ है।

छठा—उस स्त्री की सम्मति से या बिना सम्मति के जबकि वह सोलह वर्ष से कम आयु की है।  
स्पष्टीकरण—बलात्संग के अपराध के लिए आवश्यक मैथुन गठित करने के लिए प्रवेशन पर्याप्त है।

अपवाद—पुरुष का अपनी पत्नी के साथ मैथुन बलात्संग नहीं है जबकि पत्नी पन्द्रह वर्ष से कम आयु की नहीं है।

"376. बलात्संग के लिए दंड—(1) जो कोई उपधारा (2) द्वारा उपबंधित मामलों के सिवाय बलात्संग करेगा वह दोनों में से किसी भाँति के कारावास से, जिसकी अवधि सात वर्ष से कम की नहीं होगी, किन्तु जो आजीवन या दस वर्ष तक की हो सकेगी, दंडित किया जाएगा और जुमनि से भी दंडनीय होगा, किन्तु यदि वह स्त्री, जिससे बलात्संग किया गया है उसकी पत्नी है और ब्राह्म वर्ष से कम आयु की नहीं है, तो वह दोनों में किसी भाँति के कारावास से, जिसकी अवधि दो वर्ष तक की हो सकेगी या जुमनि से या दोनों से, दंडित किया जाएगा।

परन्तु न्यायालय ऐसे पर्याप्त और विशेष कारणों से, जो निर्णय में उल्लिखित किए जाएंगे, सात वर्ष की अवधि के कारावास का दंडादेश दे सकेगा।

(2) जो, कोई—

(क) पुलिस अधिकारी होते हुए,—

(i) उस पुलिस थाने की सीमाओं के भीतर, जिसमें वह नियुक्त है, बलात्संग करेगा; या

(ii) किसी भी थाने के परिसर में, चाहे वह ऐसे पुलिस थाने में, जिसमें वह नियुक्त है; स्थित है या नहीं, बलात्संग करेगा; या

(iii) अपनी अभिरक्षा में या अपने अधीनस्थ किसी पुलिस अधिकारी की प्रतिरक्षा में किसी स्त्री से बलात्संग करेगा; या

(छ) लोक सेवक द्वारे हुए, अपनी शासकीय स्थिति का लाभ उठाकर, किसी स्त्री से, जो ऐसे लोक सेवक के रूप में उसकी अभिरक्षा में या उसके अधीनस्थ किसी लोक सेवक की अभिरक्षा में है, बलात्संग करेगा; या

(ग) तत्समय प्रवृत्त किसी विधि द्वारा या उसके अधीन स्थापित किए जेल, प्रतिप्रेषण गृह या अभिरक्षा के अन्य स्थान के या स्थितियों या बालकों की किसी संस्था के प्रबंध या कर्मचारिवृन्द में होते हुए, अपनी शासकीय स्थिति का लाभ उठाकर ऐसी जेल, प्रतिप्रेषण गृह, स्थान या संस्था के किसी निवासी से बलात्संग करेगा; या

(घ) किसी अस्पताल के प्रबंध या कर्मचारिवृन्द में होते हुए, अपनी शासकीय स्थिति का लाभ उठाकर उस अस्पताल में किसी स्त्री से बलात्संग करेगा; या

(ङ) किसी स्त्री से, यह जानते हुए, वह गर्भवती है, बलात्संग करेगा; या

(च) किसी स्त्री से, जो बारह वर्ष से कम आयु की है, बलात्संग करेगा; या

(छ) सामूहिक बलात्संग करेगा,

वह कठोर कारावास से, जिसकी अवधि दस वर्ष से कम नहीं होगी किन्तु जो आजीवन हो सकेगी, दंडित किया जाएगा और जुमनि से भी दंडनीय होगा।

परन्तु न्यायालय ऐसे पर्याप्त और विशेष कारणों से, जो निर्णय में उल्लिखित किए जाएं, वोनों में से किसी भाँति के कारावास का, जिसकी अवधि दस वर्ष से कम की हो सकेगी, दण्डादेश दे सकेगा।

**स्पष्टीकरण—1.** जहां व्यक्तियों के समूह में से एक या अधिक व्यक्तियों द्वारा, सबके सामान्य आशय को अप्रसर करने में किसी स्त्री से बलात्संग किया जाता है वहां ऐसे व्यक्तियों में से हर व्यक्ति के बारे में यह समझा जाएगा कि उसने इस उपधारा के अर्थ में सामूहिक बलात्संग किया है।

**स्पष्टीकरण—2.** “स्त्रियों या बालकों की किसी संस्था” से स्त्रियों और बालकों को ग्रहण करने और उनकी देखभाल करने के लिए स्थापित या अनुरक्षित कोई संस्था अभिप्रेत है चाहे उसका नाम अनायालय हो या अपेक्षित स्त्रियों या बालकों के लिए गृह हो या विधवाओं के लिए गृह या कोई भी अन्य नाम हो।

**स्पष्टीकरण—3.** “अस्पताल” से अस्पताल का अदाता अभिप्रेत है और इसके अन्तर्गत ऐसी किसी संस्था का अदाता है जो उल्लंघन (आरोग्य स्थापन) के दौरान व्यक्तियों को या चिकित्सीय ध्यान या पुनर्वास की अपेक्षा रखने वाले व्यक्तियों को, ग्रहण करने और उनका उपचार करने के लिए है।

**376क.** पृथक् रहने के दौरान किसी पुरुष द्वारा अपनी पत्नी के साथ संभोग—जो कोई अपनी पत्नी के साथ, जो पृथक्करण की किसी डिनी के अधीन या किसी प्रथा रुढ़ि के अधीन उससे पृथक् रह रही है, उसकी सम्भाँति के बिना मैथुन करेगा, वह दोनों में से किसी भाँति के कारावास से, जिसकी अवधि दो वर्ष तक की हो सकेगी, दंडित किया जाएगा और जुमनि से भी दंडनीय होगा।

**376ख.** लोक सेवक द्वारा अपनी अभिरक्षा में की किसी स्त्री के साथ संभोग—जो कोई लोक सेवक द्वारे हुए, अपनी शासकीय स्थिति का लाभ उठाकर किसी स्त्री को, जो ऐसे लोक सेवक के रूप में उसकी अभिरक्षा में है या उसके अधीनस्थ किसी लोक सेवक की अभिरक्षा में है, अपने साथ ऐसा मैथुन करने के लिए उत्प्रेरित या विलुब्ध करेगा, जो मैथुन अधीक्षक या प्रबंधक द्वारे हुए, अपनी शासकीय स्थिति का लाभ उठाकर, जेल, प्रतिप्रेषण-गृह स्थान या संस्था की किसी स्त्री निवासी को, अपने साथ ऐसा मैथुन करने के लिए उत्प्रेरित या विलुब्ध करेगा, जो बलात्संग के अपराध की कोटि में नहीं आता है, वह दोनों में से किसी भाँति के कारावास से, जिसकी अवधि पांच वर्ष तक की हो सकेगी, दंडित किया जाएगा और जुमनि से भी दंडनीय होगा।

**376ग.** जेल, प्रतिप्रेषण-गृह, आदि के अधीक्षक द्वारा संभोग—जो कोई तत्समय प्रवृत्त किसी विधि द्वारा या उसके अधीन स्थापित किसी जेल, प्रतिप्रेषण-गृह या अभिरक्षा के अन्य स्थान का या स्त्रियों या बालकों की किसी संस्था के संबंध में, “अधीक्षक” के अन्तर्गत कोई ऐसा व्यक्ति है जो ऐसी जेल, प्रतिप्रेषण स्थान या संस्था में ऐसा कोई पद धारण करता है, जिसके आधार पर वह उसके निवासियों पर किसी प्राधिकार या नियंत्रण का प्रयोग कर सकता है।

**स्पष्टीकरण—1.** किसी जेल, प्रतिप्रेषण-गृह या अभिरक्षा के किसी अन्य स्थान या स्त्रियों या बालकों की किसी संस्था के संबंध में, “अधीक्षक” के अन्तर्गत कोई ऐसा व्यक्ति है जो ऐसी जेल, प्रतिप्रेषण स्थान या संस्था में ऐसा कोई पद धारण करता है, जिसके आधार पर वह उसके निवासियों पर किसी प्राधिकार या नियंत्रण का प्रयोग कर सकता है।

**स्पष्टीकरण—2.** स्त्रियों या बालकों की किसी “संस्था” पद का वही अर्थ है जो धारा 376 की उपधारा (2) के स्पष्टीकरण 2 में है।

**376घ.** अस्पताल के प्रबंध या कर्मचारिवृन्द आदि के किसी स्वदस्य द्वारा उस अस्पताल में किसी स्त्री के साथ संभोग—जो कोई, किसी अस्पताल के प्रबंध में होते हुए या किसी अस्पताल में कर्मचारिवृन्द में होते हुए, अपनी शासकीय स्थिति का लाभ उठाकर उस अस्पताल में, किसी स्त्री के साथ, ऐसा मैथुन करेगा, जो बलात्संग की कोटि में नहीं आता है, वह दोनों में से किसी भाँति के कारावास से, जिसकी अवधि पांच वर्ष तक की हो सकेगी, दंडित किया जाएगा और जुमनि से भी दंडनीय होगा।

**स्पष्टीकरण—“अस्पताल”** पद का वही अर्थ है जो धारा 376 की उपधारा (2) के स्पष्टीकरण 3 में है।

**9.27.** अब हम राष्ट्रीय महिला आयोग (रा. म० आ०) की सिफारिशों तथा प्रश्नावली के प्रत्युत्तर में, अन्य सुझावों की परीक्षा करेंगे। राष्ट्रीय महिला आयोग की निम्नलिखित सिफारिशें हैं:—

1. धारा 375 का पैरा “छह” में 16 वर्ष की आयु के प्रति निर्देश से संशोधन किया जाए ताकि उसमें स्त्रियों की वयस्कता की आयु 18 वर्ष बढ़ाने के लिए उपबंध किया जा सके।

2. अपवाद में भी 15 वर्ष के प्रति निर्देश को 18 वर्ष में परिवर्तित करने का परिणामिक संशोधन किया जाना है जो पुरुष द्वारा अपनी पत्नी के साथ बलात्संग के विषय में जबकि पत्नी 15 वर्ष से कम आयु की नहीं है।

3. बलात्संग के दंड के लिए उपबंध करने वाली धारा 376 का इस प्रकार संशोधन किया जाए:

(क) पुरुष द्वारा अपनी पत्नी के साथ, जिसकी आयु 15 वर्ष से अधिक है, के साथ बलात्संग के लिए 2 वर्ष के कारावास के दंड के प्रति निर्देश को बढ़ाकर 5 वर्ष किया जाना प्रस्तावित है। [धारा 376 उपबंध (1)(क)]

(छ) उपधारा (2) में उपबंधित दंड, जो न्यूनतम 10 वर्ष का कारावास है, बढ़ाकर आजीवन कठिन कारावास का दंड किए जाने का प्रस्ताव है। साथ ही साथ उस बलात्संग के लिए दंड को, जब स्त्री की आयु 12 वर्ष से कम है, इस धारा से बाहर ले जाने और उच्चतम दंड का उपबंध करने के लिए एक पृथक् धारा के रूप में बरतने का प्रस्ताव है। ऐसी एक नई धारा सम्मिलित करके किया जाना अपेक्षित है, अर्थात् धारा 376 की उपधारा (3) जो निम्नवत होगी:

“जो कोई उस स्त्री के साथ, जिसकी आयु 12 वर्ष से कम है, बलात्संग करेगा, वह कठिन कारावास से, जिसकी अवधि 10 वर्ष तक की हो सकेगी, दंडित किया जाएगा और जुमनि से भी दंडनीय होगा।

यह भी सिफारिश की गई है कि भारतीय दंड संहिता में 3 नई धाराएं, अर्थात् 376ड़ 376च और 376छ शामिल की जाएं।

**धारा 376 ड़ :** धारा 376क से 376घ तक बालकों के विरुद्ध अपराध—जो कोई 376 क से धारा 376 घ तक (जिसमें दोनों धाराएं सम्मिलित हैं) के अधीन कोई अपराध करेगा, वह, यदि स्त्री 10 वर्ष से कम आयु की है तो दोनों में से किसी भाँति के कारावास से, जिसकी अवधि 10 वर्ष तक की हो सकेगी, दंडित किया जाएगा और जुमनि से भी दंडनीय होगा।

**धारा 376च :** छेड़छाड़ का अपराध—जो कोई किसी स्त्री को रुष्ट करने के आशय से कोई शब्द उच्चारित करता है या कोई ध्वनि करता है या संकेत करता है या कोई वस्तु प्रदर्शित करता है या किसी सार्वजनिक स्थान पर इस आशय से कोई अन्य कार्य करता है कि ऐसा शब्द या ध्वनि सुनी जाएगी या ऐसा संकेत या वस्तु देखी जाएगी या ऐसे कार्य पर ऐसी स्त्री द्वारा ध्यान दिया जाएगा या महसूस किया जाएगा, वह छेड़छाड़ का अपराध करेगा।

**धारा 376छ :** छेड़छाड़ के लिए दंड:— जो कोई छेड़छाड़ का अपराध करेगा, वह दोनों में से किसी भाँति के कारावास से जिसकी अवधि 5 वर्ष की हो सकेगी, दंडित किया जाएगा और जुमनि से भी दंडनीय होगा।

**9.28.** राष्ट्रीय अपराध अभिलेख व्यूरो की नवीनतम रिपोर्ट जिसका नाम “भारत में अपराध” है, के अनुसार, 1994 में स्त्रियों के विरुद्ध अपराध के 98,948 मामले पंजीकृत किए गए थे, जबकि 1993 में इनकी संख्या 83,954 और 1992 में 79,037 थी। यह 1994 में राष्ट्रीय स्तर पर, स्त्रियों के विरुद्ध अपराध में 17.9 प्रतिशत की वृद्धि है जो बलात्संग, व्यपद्वरण और अपराध के अधीन रजिस्ट्रीकृत मामलों में महत्वपूर्ण वृद्धि है। रिपोर्ट में यह उल्लेख है कि दिल्ली, राजस्थान, तमिलनाडु, मध्य प्रदेश, हिमाचल प्रदेश, कर्नाटक और पांडिचेरी को “अति अपराधोनुसूख” राज्यों के रूप में प्रवर्गीकृत किया गया है। 1994 में मध्य प्रदेश में बलात्संग का उ

जहां तक नगरों की बात है दिल्ली और मुम्बई में राष्ट्रीय स्तर पर बलात्संग के अधीन मामलों का अधिक रिकार्ड बना रहा। राष्ट्रीय स्तर पर बलात्संग के शिकार व्यक्तियों की संख्या 16-30 के आयु समूह में अधिकतम थी जो कुछ शिकार व्यक्तियों का 56.3 प्रतिशत है किन्तु महानगरों में स्थिति पूर्णतः भिन्न थी जिसमें कुल शिकार व्यक्तियों का 50 प्रतिशत ऐसी स्थितियों थीं जिनकी आयु 16 वर्ष से कम थी।<sup>14</sup>

दिल्ली राज्य महिला आयोग ने, अपनी “दिल्ली में बालिकाओं और स्त्रियों की स्थिति” संबंधी रिपोर्ट (1997) में यह इंगित किया है कि दिल्ली में “बलात्संग की दर” इतनी अधिक है कि वह सम्पूर्ण देश की दर से दुगुनी है। 1993 के दौरान 233 बलात्संग के मामले रिपोर्ट किए गए थे जो बढ़कर 1994 में 321, 1995 में 362 और 1996 में 470 हो गए। 1996 के अपराध संबंधी आंकड़ों के विश्लेषण से यह पता लगता है कि बलात्संग के 88 प्रतिशत मामलों में नातेदार और परिचित अंतर्वर्लित थे और 89 प्रतिशत मामलों में अपराध घर पर किया गया था। दिल्ली में रिपोर्ट में यह उल्लेख किया है कि रिपोर्ट किए गए मामलों में 60 प्रतिशत ऐसे मामले हैं जिनमें 16 वर्ष से कम आयु की लड़कियां हैं और 1993 में बलात्संग के पीड़ित व्यक्तियों का 18 प्रतिशत ऐसा था जिनकी आयु 10 वर्ष से कम थी। जबकि सम्पूर्ण देश में इसका प्रतिशत 5 है। बलात्संग के शिकार व्यक्तियों का लगभग 42 प्रतिशत, देश में 23 प्रतिशत की तुलना में 10 से 16 वर्ष की आयु समूह का था।<sup>15</sup>

9.29. युमेन कमीशन आन दी स्टेट्स आफ दी बुमेन, अपनी स्त्रियों के विरुद्ध हिंसा के प्रारूप घोषणापत्र में यह घोषित करता है कि “हिंसा” स्त्रियों के स्वतंत्रता के मानव अधिकारों के उपभोग को अकृत कर देता है। “भारत द्वारा दाल ही में अनुसर्वित, कन्वेशन फार दि एलीमिनेशन आफ आल फार्स आफ डिश्क्रिमिनेशन अंगेस्ट बुमेन (सीर्च डी ए डब्ल्यू 1979)” स्त्रीलिंग आधारित हिंसा की बात नहीं करता है। वे साधारण रूप से सहमत हैं कि स्त्रियों के विरुद्ध हिंसा, उनके प्राण, स्वतंत्रता और गरिमा के मूल अधिकार का अतिलंबन है।

9.30. एक चिन्मनधारा ऐसी है कि भारतीय दंड संहिता में बलात्संग की विद्यमान परिभाषा संकीर्ण है और इसके अंतर्गत स्त्रियों द्वारा अनुभूत लैंगिक हिंसा के विभिन्न रूप नहीं आते हैं।<sup>16</sup> वर्तमान परिभाषा, लिंग द्वारा प्रवेशन के सबूत और शिकायतकर्ता द्वारा सम्मति के अभाव की अपेक्षा करता है। बलात्संग के विचारण में सम्मति निर्णयिक भूमिका निभाती है।

9.31. और न्यायालयों द्वारा यथा निर्वचन की गई धारा 354 (स्त्री की लज्जा भंग करने के आशय से उस पर हमला या आपराधिक बल का प्रयोग) और धारा 509 शब्द, लंगनिशेप या कार्य, जो किसी स्त्री की लज्जा का अनादर करने के लिए आशयित है) स्त्रियों पर लैंगिक हमले के संवारित मामले नहीं आते हैं।

9.32. इस अभिमत के प्रस्तावक यह तर्क देते हैं कि बलात्संग को परखने वाले भारतीय दंड संहिता की धाराएं (धारा 375 और 376) तथा धारा 354 और 509 निरसित की जाएं और लैंगिक हमले को व्यापक रूप से परिभाषित करने वाले उपबंधों द्वारा प्रतिस्थापित किया जाएं जिनमें स्त्रियों पर लैंगिक के सभी रूप, बलात्संग संहित, समिलित हैं।

9.33. डापर निर्दिष्ट बात पर गमीर चिंतन करने के पश्चात विधि आयोग का यह अभिमत है कि बलात्संग का अपराध, जिसमें अभिरक्षा में बलात्संग भी है, उसके दंड, नीचे पैरा 9.34 में कथित उपतंत्रों के अधीन रहते हुए, भारतीय दंड संहिता में बनाए रखे जाएं।

9.34. विधि आयोग यह सिफारिश करता है कि धारा 375 में खंड “तीसरा” निम्नवत संशोधित किया जाए:

धारा 375—जो पुरुष.....बलात्संग करता है, वह कहा जाता है—

पहला—.....

दूसरा—.....

तीसरा—उस स्त्री की सम्मति से जबकि उसकी सम्मति उसे या ऐसे किसी व्यक्ति को, जिससे वह हितबद्ध है, मृत्यु या उपराति या किसी अन्य क्षति के भय में डालकर अभिभाव की गई है।

“या किसी अन्य क्षति” शब्द इस खंड के क्षेत्र का उन व्यक्तियों द्वारा, जो न्याय, प्राधिकार, संरक्षण अथवा सामाजिक आर्थिक प्रमुखता की स्थिति में हैं, बलात्संग की स्थितियों के लिए, उपबंध करके विस्तार कर देती है। इन मामलों में कौटुम्बिक बलात्संग और अन्य दृष्टित शामिल होंगे जहां बलात्संग का शिकार व्यक्ति पूरी तरह उस अपराधी पर अग्रिम है जो प्रथम स्थिति में है।

राष्ट्रीय महिला आयोग ने, सिफारिश की है कि धारा 375 का खंड “लह” में (उसकी सम्मति या सम्मति के बिना बलात्संग) में 16 वर्ष की आयु के प्रति निवेश से 18 वर्ष करने के लिए संशोधन किया जाए। (विधि आयोग ने, यह अनुमोदित किया कि राष्ट्रीय महिला आयोग द्वारा प्रस्तावित प्रभार, धारा 361) विधिपूर्ण संरक्षकता में व्यपहरण—16 से 18 वर्ष से परिवर्तित आयु में आयु बढ़ाने की दृष्टिकोण से, विशिष्टतया यह आवश्यक है।

तथापि, विधि आयोग ने, धारा 375 (पुलव का अपनी पत्नी के साथ मैथुन बलात्संग) के अपवाद में राष्ट्रीय महिला आयोग द्वारा प्रस्तावित परिवर्तन को पृष्ठांकित नहीं करती है। परिणामस्वरूप, राष्ट्रीय महिला आयोग द्वारा सुझाई गई दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 198(6) में कोई संशोधन की आवश्यकता नहीं है।

विधि आयोग की यह राय है कि बालिका के साथ बलात्संग का अपराध और उसके लिए दंड विद्यमान धारा 376 (च) के अंतर्गत उपबंधित है। परिणामस्वरूप, राष्ट्रीय महिला आयोग द्वारा यथा सिफारिश धारा 376 की नई उपधारा (3) को सम्मिलित करने की आवश्यकता नहीं है।

9.35. स्त्री और बालिका पर लैंगिक अतिक्रमण में वृद्धि के मुद्रवे पर विचार करने पर विधि आयोग ने, यह सिफारिश की कि धारा 354 में स्त्री की लज्जा भंग करने के विद्यमान अपराध को लैंगिक हमले के अपराध में जोड़ा जाए और दंड में दो वर्ष से 5 वर्ष की वृद्धि की जाए, तदनुसार, धारा 354 निम्नलिखित रूप से संशोधित की जाए:

“धारा 354:— स्त्री की लज्जाभंग करने के आशय से उस पर हमला या आपराधिक बल का प्रयोग—जो कोई किसी स्त्री की लज्जा भंग करने या उस पर लैंगिक हमला करने के आशय से या यह संभाव्य जानते हुए कि तद्दारा वह उसकी लज्जा भंग करेगा या उस पर लैंगिक, हमला करेगा, या आपराधिक बल का प्रयोग करेगा वह दोनों में से किसी भाँति के कारबास से, जिसकी अवधि पांच वर्ष तक हो सकेगी, दंडित किया जाएगा और जुमानि का भी दायी होगा।

हमारे दृष्टिकोण से, उपरोक्त रीति से धारा 354 के परिधि का विस्तार, स्त्री और बालिका पर बलात्संग के सिवाय लैंगिक अतिक्रमण के विभिन्न प्रक्रोपों में जाएगा।

विधि आयोग का यह अभिमत है कि छेड़छाड़ का अपराध धारा 509 की परिधि के भीतर आता है और राष्ट्रीय महिला आयोग द्वारा यथा सिफारिश नई धारा 376च की कोई आवश्यकता नहीं है। तथापि, विधि आयोग यह मदसूस करता है कि दंड की मात्रा में 1 वर्ष से 3 वर्ष तक और जुमानि में वृद्धि की जाए। तदनुसार, हम सिफारिश करते हैं कि धारा 509 का निम्नवत रूप से संशोधन किया जाए।

धारा 509: शब्द, अंग विक्षेप या कार्य जो किसी स्त्री की लज्जा का अनादर करने के लिए आशयित है, जो कोई शब्द कहेगा, कोई ध्वनि या अंग विक्षेप करेगा, कोई वस्तु प्रदर्शित करेगा, इस आशय से कि स्त्री द्वारा ऐसा शब्द या ध्वनि सुनी जाए या ऐसा अंग विक्षेप या वस्तु देखी जाए अथवा ऐसी स्त्री की एकान्तता का अतिक्रमण करेगा, वह दोनों में से किसी भाँति के कारबास से, जिसकी अवधि तीन वर्ष तक हो सकेगी, दंडित किया जाएगा और जुमानि का भी दायी होगा।

## II. द्विविवाह

9.36. धारा 394 द्विविवाह को किसी व्यक्ति के ऐसे कार्य के रूप में परिभाषित करती है जो उपने पति या अपनी पत्नी के जीवित रहते हुए भी, विवाह करता है किन्तु यह केवल उन्हीं मामलों में जहां पश्चात्वर्ती विवाह उसकी स्वीकृति के अधीन शून्य है।

9.37. हिन्दू विवाह अधिनियम, 1955 के अधिनियम तक इस धारा का प्रभाव केवल इसाईयों और पारसी पर पड़ता था किन्तु इस अधिनियम के प्रवर्तन में आने के पश्चात हिन्दू भी इस विवाह के कार्य क्षेत्र के भीतर आ गए हैं। मुसलमान और कुछ जनजातियां जो अपनी स्वीकृति के अनुसार, द्विविवाह करने के लिए अनुज्ञात हैं, अपवर्जित हैं।

9.38. विधि आयोग ने, अपनी 42वीं रिपोर्ट में इस धारा को निम्नवत पुनरीक्षित किया था।

“4.94. द्विविवाह: जो कोई, विवाहित होते हुए, पुनः विवाह ऐसी दशा में करेगा जिसमें ऐसा पश्चात्वर्ती विवाह पूर्वतर विवाह के विद्यमान रहने के कारण शून्य है, वह द्विविवाह करता है।

स्पष्टीकरण—जहां किसी सक्षम न्यायालय की डिक्री द्वारा किसी अधिनियम के अधीन विवाह का विघटन हो गया है। किन्तु पृष्ठकर उस अधिनियम के उपबंधों के आधार पर, जिसके अधीन उनका विवाह विघटित हुआ है, विनिर्दिष्ट अवधि के दौरान पुनःविवाह करने से प्रतिष्ठित है, वहां इस धारा के प्रयोजनों के लिए, यह समझा जाएगा कि उसके विघटन के होते हुए भी, उस अवधि के दौरान विवाह करने वाला अपवर्जित जिस व्यक्ति के साथ विवाह हो रहा है उस व्यक्ति को अपने ज्ञान के अनुसार तथ्यों की वास्तविक स्थिति की जानकारी दे दें।”

आयोग ने, महसूस किया कि द्विविवाह के लिए दंड “अनावश्यक रूप से अधिक” था और इसलिए इसे सात वर्ष से घटाकर तीन वर्ष किया जाए।<sup>17</sup>

9.39. आयोग ने, धारा 495 के अधीन द्विविवाह के गुहतर के लिए दंड में, अर्थात् जहां द्विविवाह को पूर्व विवाह के तथ्य को उस व्यक्ति से लिपा कर किया जाता है जिससे पश्चात्वर्ती विवाह किया जाए, उसके लिए दस से सात वर्ष तक कटौती की भी सिफारिश की है।<sup>18</sup>

9.40. किन्तु दंड प्रक्रिया संहिता विधेयक (खंड 98) ने, धारा 499 के अंतर्गत द्विविवाह के लिए दंड की कटौती की सिफारिश को स्वीकार नहीं किया है।

9.41. विधेयक में स्पष्टीकरण 1 महत्वपूर्ण रूप से जोड़ा गया है जो यह अनुच्छान करता है कि किसी व्यक्ति के बारे में यह समझा जाएगा कि उसने पुनः विवाह किया है भले ही ऐसा विवाह करने, अनुष्ठित करने या निष्पादित करने में कोई भी विधिक त्रुटि है।

द्विविवाह के लिए अभियोजन चल सके इसके लिए अभियोजन को सबसे पहले दर्शित करना चाहिए। दूसरे विवाह के समय विधिमान्य विवाह विद्यमान था जहां दोनों में से किसी विवाह का सबूत असंतोषजनक है वहां दोषसिद्धि नहीं होगी। विधेयक में धारा 494 के स्पष्टीकरण 1 में समझी गई कल्पना पुरस्थापित की गई है। ऐसे द्वितीय विवाह को, करने, मनाने या निष्पादित करने में विधिक त्रुटियों के बावजूद उसे विधिमान्य समझता है। इससे अभियुक्त अपने आपको द्विविवाह के अपराध का दोषी होने से बचाने के लिए द्वितीय विवाह में अनुष्ठानों की अनिष्टादान प्रतिक्रिया नहीं ले सकता है।

स्पष्टीकरण में यह माना जाने वाला उपबंध हिन्दू विवाह अधिनियम, 1955 के विस्तार पर न्यायिक विनिश्चयों के परिणामस्वरूप, शामिल किया गया था। उच्चतम न्यायालय ने भावुराव बनाम महाराष्ट्र राज्य 19 के मामले में यह अभिनिधारित किया कि द्विविवाह का अपराध तब तक साबित नहीं होता जब तक कि यह स्थापित नहीं हो जाता है कि दूसरा विवाह उचित अनुष्ठानों और सम्यक रूप के साथ किया गया था। यह निश्चय इस आधार पर किया गया था कि हिन्दू विवाह अधिनियम की धारा 17 में “अनुष्टापित” शब्द का प्रयोग किया गया था। तदनुसार, न्यायालय ने, यह अभिनिधारित किया कि धारा 17 के प्रयोजन के लिए यह में “अनुष्टापित” शब्द का प्रयोग किया गया था। उचित ग्रहकर्म और सम्यक रूप में किया आवश्यक था कि वह विवाह जिसके अधिनियम के उपबंधों के कारण धारा 494 लागू होती है, उचित ग्रहकर्म और सम्यक रूप में किया गया होना चाहिए। चुनौती विधि किसी विनिर्दिष्ट ग्रहकर्म की अपेक्षा नहीं करती है अपितु रुदि के अनुसार, विवाह कर्म को मान्यता देती है। अतः, यह अवधारित करना अत्यंत कठिन हो जाता है कि कौन सा या कौन से ग्रहकर्म वस्तुतः अनिवार्य थे। भावुराव के विनिश्चय को उच्चतम न्यायालय द्वारा पश्चात्वर्ती दो विनिश्चयों में, अर्थात् केवल राम बनाम डिमाचल प्रदेश प्रशासन<sup>20</sup> और प्रिया बाला बनाम सुरेश चन्द्र<sup>21</sup> में दुहराया गया था। परिणामस्वरूप अभियोजन पर यह दर्शित करने का काफी भार आ जाता है कि दूसरा विवाह सभी सम्यक औपचारिकताओं के साथ किया जाता है। यह भार अधिकतर मामलों में द्विविवाह का अपराध साबित करने के लिए विवाह सभी सम्यक औपचारिकताओं के साथ किया जाता है। इससे यह सिफारिश भी विधेयक में धारा 494 के स्पष्टीकरण 1 के रूप में समिलित की गई है।

धारा 494 में स्पष्टीकरण 2 जोड़ा गया है जिसके द्वारा यह स्पष्ट किया गया है कि जहां विवाह विघटन की डिक्री के पश्चात एक विनिर्दिष्ट अवधि के भीतर पक्षकारों का पुनःविवाह सुसंगत विवाह-विच्छेद विधि में प्रतिषिद्ध है वहां ऐसा पुनःविवाह द्विविवाह के तुल्य है। स्पष्टीकरण 2 निम्नवर्त है:

स्पष्टीकरण-2: “जहां किसी सक्षम न्यायालय की डिक्री द्वारा विवाह का विघटन हो गया है किन्तु पक्षकार उस अधिनियमित के उपबंध के आधार पर, जिसके अधीन उसका विवाह विघटित हुआ है, विनिर्दिष्ट अवधि के बौरान पुनःविवाह करने से प्रतिषिद्ध है वहां इस धारा के प्रयोजनों के लिए यह समझा जाएगा कि विघटन के होते हुए भी, उस अवधि में अस्तित्वान है।”

उच्चतम न्यायालय ने, सरला मुदगल<sup>22</sup> के मामले में यह अभिनिधारित किया कि पहले विवाह के अस्तित्व में बने रहने के दौरान दूसरे विवाह के प्रयोजन के लिए एक विवाही धर्म (हिंदूत्व) से बहुविवाही धर्म (इस्लाम) में धर्म परिवर्तन करता है तो दूसरा विवाह न्याय, साम्य और सद्भाव आदि का अतिलंघन करेगा। न्यायालय ने, यह भी अभिनिधारित किया कि धर्म त्यागी पति, द्विविवाह विवाह न्याय, साम्य और सद्भाव आदि का अतिलंघन करेगा। न्यायालय ने, यह भी अभिनिधारित किया कि धर्म त्यागी पति, द्विविवाह विवाह न्याय, साम्य और सद्भाव आदि का अतिलंघन करेगा। इस प्रकार, न्यायालय ने, विवाह पर धर्म परिवर्तन के प्रमाव की आवत अनिश्चयता को छटा दिया है।

9.42. हम धारा 494 में एक और स्पष्टीकरण 3 जोड़े जाने की सिफारिश करते हैं जिससे विवाह को संदेह से परे रखने के लिए सरला मुदगल के मामले में उच्चतम न्यायालय द्वारा अधिकृत सिद्धांत को शामिल किया जा सके।

स्पष्टीकरण 3: जब कोई व्यक्ति, पूर्ववर्ती विवाह के अस्तित्व में बने रहने के बौरान, पुनःविवाह करने के प्रयोजन के लिए एक धर्म से दूसरे धर्म में धर्म परिवर्तन करता है तो वह द्विविवाह का अपराध करता है।

### III. जारकर्म

9.43. प्रारूप भारतीय दंड संहिता संबंधी पहली रिपोर्ट में जारकर्म को अपराध नहीं बनाया गया था तथापि, प्रथम विधि आयोग ने प्रारूप भारतीय दंड संहिता संबंधी अपनी दूसरी रिपोर्ट में, इस विधेयक पर सम्यक विचार करने के पश्चात यह निश्चय किया कि इस अपराध को संहिता से बाहर करना परामर्श नहीं था।<sup>23</sup>

9.44. धारा 497 के अधीन जारकर्म का अपराध विवाह-विच्छेद (सिविल) कार्यवाहियों में जारकर्म के कदाचार की तुलना में बहुत सीमित है। अपराध उस पुरुष द्वारा तभी किया जाता है जब वह किसी अन्य पुरुष की पत्नी के साथ पश्चात्वर्ती की सम्मति या मौनानुकूलता के बिना मैथुन करता है। पत्नी जारिणी होते हुए भी, तुष्ट्रेरक के रूप में भी दंडनीय नहीं हैं। इसके लिए दंड दोनों में से किसी भाँति का कारावास, जिसकी अवधि 5 वर्ष तक की हो सकेगी या जुर्माना या दोनों है।

9.45. विधि आयोग ने, अपनी 42वीं रिपोर्ट में धारा 497 को इस उपांतरण के साथ वर्तमान रूप में बनाए रखने की सिफारिश की थी कि उस पत्नी को भी, जो अपने पति से भिन्न किसी व्यक्ति के साथ लैंगिक संबंध रखती है, जारकर्म के लिए दंडित किया जाना चाहिए। आयोग ने यह भी सिफारिश की थी कि 5 वर्ष के कारावास का दंड “किसी भी परिस्थिति में अवास्तविक और अनपेक्षित है और इसे घटाकर 2 वर्ष किया जाना चाहिए”<sup>24</sup>। आयोग ने, सिफारिश की कि यह धारा निम्नवर्त पुनरीक्षित की जा सकती है।

“497. जारकर्म—यदि कोई पुरुष ऐसी स्त्री के साथ, जो किसी अन्य पुरुष की पत्नी है और जिसका किसी अन्य पुरुष की पत्नी होना वह जानता है या विश्वास करने का कारण रखता है, उस पुरुष की सम्मति या मौनानुकूलता के बिना ऐसा मैथुन करेगा जो बलात्संग के अपराध की कोटि में नहीं आता तो वह पुरुष और स्त्री दोनों, जारकर्म के अपराध के दोषी होंगे और दोनों में से किसी भाँति के कारावास से, जिसकी अवधि दो वर्ष तक हो सकेगी, या जुर्माने से या दोनों से, दंडित किए जाएंगे।”<sup>25</sup>

9.46. धारा 497 की संवैधानिकता को अनुच्छेद 32 के अधीन सोममिती विष्णु बनाम भारत संघ<sup>26</sup> के मामले में अनुच्छेद 19 में समानता के अधिकार का अतिक्रमणकारी होने के लिए चुनौती दी गई थी। चुनौती का यह आधार था कि यह धारा पुरुष और स्त्री के बीच अविवेकी वर्गीकरण करती है और अन्यायोचित रूप से स्त्रियों को वे अधिकार देने से दंकार करती है जो पुरुषों को दिए गए हैं। यह धारा पति को जारकर्म का अधिकार प्रदान करती है किन्तु जारकर्मी की पत्नी को ऐसा करने का कोई अधिकार प्रदान नहीं करती है। उच्चतम न्यायालय ने, इस विवाह को अस्वीकार कर दिया तथा धारा 497 की संवैधानिकता को बनाए रखा।

भारतीय दंड संहिता (संशोधन) विधेयक, 1978 का खंड 199, धारा 497 जैसाकि है:

“497. जो कोई ऐसे व्यक्ति के साथ जो, यथास्थिति, किसी अन्य व्यक्ति की पत्नी या पति है और जिसका किसी अन्य व्यक्ति की पत्नी या पति होना वह जानता है या जिसे यह विश्वास करने का कारण है, उस व्यक्ति की सम्मति या मौनानुकूलता के बिना ऐसा मैथुन करेगा जो बलात्संग के अपराध की कोटि में नहीं आता, वह जारकर्म करता है, और दोनों में से किसी भाँति के कारावास से, जिसकी अवधि पंच वर्ष तक हो सकेगी, या जुर्माने से, या दोनों से, दंडनीय होगा।”

भारतीय दंड संहिता (संशोधन) विधेयक ने, प्रतिस्थापित धारा 497 में विवाह के मुकाबले में जारकर्म के अपराध में दोनों लिंगों के बीच समानता की धारणा प्रस्तुत की है। तथापि, आयोग यह सिफारिश करता है कि खंड 199 की शब्दावली का निम्नलिखित रूप में उपांतरण किया जाए जिससे दोनों लिंगों की धारणा प्रकाश में आ सके। तदनुसार, खंड 199 निम्नवर्त पट्टा जाएगा:

“धारा 497: जो कोई ऐसे व्यक्ति के साथ जो, यथास्थिति, किसी अन्य व्यक्ति की पत्नी या पति है और जिसका किसी अन्य व्यक्ति की पत्नी या पति होना वह जानता है या जिसे यह विश्वास करने का कारण है, उस व्यक्ति की सम्मति या मौनानुकूलता के बिना

#### IV. प्रकृति विरुद्ध अपराध

9.48. धारा 377 गुदामैथुन, अप्रकृत मैथुन और पशुगमन जैसे प्रकृति विरुद्ध अपराधों के संबंध में है। यह धारा 1955 में दंड को और कठोर बनाकर आजीवन कारावास से या दोनों में से किसी भाँति के कारावास से, जिसकी अवधि 10 वर्ष तक हो सकेगी, और जुमनि से दंडनीय बनाकर संशोधित की गई थी। धारा 377 निम्नवर्त है:

“धारा 377:— जो कोई किसी पुरुष, स्त्री या जीवजंतु के साथ प्रकृति की व्यवस्था के विरुद्ध स्वेच्छया इन्द्रिय भोग करेगा वह आजीवन कारावास से या दोनों में से किसी भाँति के कारावास से, जिसकी अवधि 10 वर्ष तक हो सकेगी, दंडित किया जाएगा।”

9.49. विधि आयोग ने, अपनी 42वीं रिपोर्ट में यह सिफारिश की थी कि पशुगमन के मामलों को रोगात्मक प्रकटीकरण के रूप में मानकर आपराधिक विधि द्वारा उनकी उपेक्षा की जानी चाहिए।

9.50. तथापि, आयोग ने, मध्यसूच में किया कि “भारतीय समाज सब मिलाकर, समलिंग कामुकता को अनुमोदित करता है और यह अनुमोदन द्वारा प्राप्त है कि इस वाहिक अपराध के रूप में समझे जाने के लिए उचित ठहराए, भले ही प्रौढ़ इसमें छिपे तौर पर लगते हैं।” और यह स्पष्टिका किया कि “अप्रकृत मैथुन” इस समय जैसा है उससे कम गंभीर रूप से दंडनीय अपराध बनाए रखना चाहिए किन्तु जहां यह किसी प्रौढ़ व्यक्ति द्वारा किसी अवयस्क बालक या आलिका के साथ किया जाता है वहां दंड अधिक होना चाहिए। अतः, आयोग ने यह सिफारिश की थी कि धारा 377 निम्नवर्त पुनरीक्षित की जाएः—

“377. अप्रकृत मैथुन—जो कोई किसी पुरुष, स्त्री या जीवजंतु के साथ प्रकृति की व्यवस्था के विरुद्ध स्वेच्छया या इन्द्रिय भोग करेगा वह किसी भाँति के कारावास से, जिसकी अवधि दो वर्ष तक हो सकेगी, या जुमनि से या दोनों से दंडनीय होगा; और जहां ऐसा अपराध 18 वर्ष से अधिक की आयु वाले व्यक्ति द्वारा उस आयु वाले व्यक्ति के साथ किया जाता है तो कारावास सात वर्ष तक बढ़ाया जा सकेगा।

स्पष्टीकरण—इस धारा में वर्णित अपराध के लिए आवश्यक इन्द्रिय भोग गठित करने के लिए प्रवेशन पर्याप्त है।”

भारतीय दंड संहिता (संशोधन) विधेयक (खंड 160) ने, विधि आयोग की उक्त सिफारिश को अंगीकृत किया है।

9.51. देश में बाल लैंगिक दुरुपयोग की बढ़ती घटना के परिप्रेक्ष्य में हम सिफारिश करते हैं कि जहां प्रकृति विरुद्ध अपराध 18 वर्ष की आयु वाले किसी व्यक्ति द्वारा किया जाता है वहां किसी भाँति के कारावास का, जिसकी अवधि दो वर्ष से कम नहीं होगी, किन्तु जो सात वर्ष-तक बढ़ाई जा सकेगी, न्यूनतम आजापक दंड होना चाहिए। तथापि, न्यायालय को निर्णय में अभिलिखित किए जाने वाले पर्याप्त और विशेष कारणों में दंड को कम करने का विवेकाद्धिकार होगा। परिणामस्वरूप, धारा 277 निम्नवर्त संशोधित की जाएः—

“धारा 377. प्रकृति विरुद्ध अपराधः—जो कोई किसी पुरुष या स्त्री के साथ प्रकृति की व्यवस्था के विरुद्ध स्वेच्छया इन्द्रिय भोग करेगा वह किसी भाँति के कारावास से, जिसकी अवधि दो वर्ष तक हो सकेगी, या जुमनि से, या दोनों से दंडनीय होगा, और जहां ऐसा अपराध 18 वर्ष की आयु से अधिक वाले व्यक्ति द्वारा उस आयु के व्यक्ति के साथ किया जाता है तो वह किसी भाँति के कारावास से, जो दो वर्ष से अन्यून अवधि का न होगा किन्तु जो सात वर्ष तक बढ़ाया जा सकेगा और जुमनि से दंडनीय होगा:

परन्तु न्यायालय निर्णय में अभिलिखित किए जाने वाले पर्याप्त और विशेष कारणों के लिए दो वर्ष से अन्यून अवधि के लिए किसी भाँति के कारावास का दंड अधिरोपित कर सकेगा।

स्पष्टीकरण—इस धारा में वर्णित अपराध के लिए आवश्यक इन्द्रिय भोग गठित करने के लिए, प्रवेशन पर्याप्त है।”

#### V. बालकों का लैंगिक दुरुपयोग

9.52. बालकों का लैंगिक दुरुपयोग पिछली दशावधि के “नई” विभीषिका में से एक माना जाता है। बालक का लैंगिक दुरुपयोग किसी बड़े व्यक्ति, जो बालक के मुकाबले में न्यास की शक्ति को अपने कब्जे में रखता है, प्रायिक रूप से लैंगिक आशय के साथ बालक का “शारीरिक या मानसिक अतिक्रमण” द्वारा किसी प्रकार से किया जाता है, यह कार्य किसी बालक के प्रति जननांग को प्रौढ़ द्वारा दिखाकर या बालक को वहीं कार्य करने के लिए समझाकर या प्रौढ़ द्वारा बालक के जननांग का स्पर्श कर या बालक से अपना जननांग स्पर्श करवाकर या बालक को मुद्रित और दृश्य दोनों प्रकार के अश्लील साहित्य में अन्तर्गत करके, बालक के साथ सुख, योनि या गुदा संभोग करके या वाचिक या अन्य सुखाव देकर या अश्लील प्रस्ताव करके भिन्न रूपों में किया जा सकता है। इसके

अतिरिक्त, सड़लाना या उंगली करना, स्पर्श करना या दृश्य रतिकृता या ऐसा कोई प्रयत्न भी बालक का लैंगिक दुरुपयोग हो सकता है।<sup>28</sup>

9.53. ब्राह्म इन इंडिया में रिपोर्ट किए गए आंकड़ों के अनुसार, बलात्संग के मामलों के कुल शिकार व्यक्तियों में से बालकों की संख्या 25 प्रतिशत से अधिक थी। बालकों के बलात्संग से संबंधित यह प्रवृत्ति 1990 की तुलना में बढ़ रही है।

1993 में, बालकों के साथ बलात्संग के 3393 मामले रिपोर्ट किए थे जबकि 1994 में यह संख्या बढ़कर 3986 हो गई। रिपोर्ट के अनुसार, 1994 के दौरान बालकों के बलात्संग की राज्यवार घटनाएं मध्य प्रदेश में सबसे अधिक थीं, बालकों के बलात्संग के मामलों की संख्या बढ़ा 809 थी, उत्तर प्रदेश में 538, राजस्थान में 205, और दिल्ली में 206 थीं। दिल्ली, मुंबई जैसे महानगरों में 10 वर्ष के आयु समूद्र और 10-16 वर्ष के आयु समूद्र के भी बालकों के बलात्संग के अधिक शिकार व्यक्तियों की रिपोर्ट की गई थी।<sup>29</sup>

दिल्ली में बालकों के लैंगिक दुरुपयोग का अध्ययन करते समय, दिल्ली पुलिस को यह पता चला कि 16 वर्ष से कम आयु वाले बालकों के साथ लौजामांग या छेड़छाड़ उत्पीड़न के अपराधों (धारा 354 दंड प्रक्रिया संहिता) और प्रकृति विरुद्ध लैंगिक अपराधों (धारा 377 दंड प्रक्रिया संहिता) की जानकारी सहज रूप से उपलब्ध नहीं थी। जानकारी 1994 से ली गई थी जिसमें कुल 291 मामले अभिलिखित किए गए थे जिनमें से 69 बालिकाएं 16 वर्ष से कम आयु की थीं (31 प्रतिशत), प्रकृति विरुद्ध अपराधों की बाबत 24 मामलों में 22 बालकों के मामले थे जिनसे यह उपराखित होता था कि शिकार व्यक्तियों में 95 प्रतिशत व्यक्ति 16 वर्ष से कम आयु के बालक थे।<sup>30</sup>

देश में बालक लैंगिक दुरुपयोग के विस्तार पर सही आंकड़े प्राप्त करना कठिन है किन्तु अंधकार में प्रकाश की भी रेखा होती है कुछ गैर-सरकारी संगठनों ने, बालक लैंगिक दुरुपयोग पर अध्ययन किया है और प्रारंभिक निष्कर्ष सुखद नहीं है। संवाद नामक बंगलौर अधारित गैर-सरकारी संगठन को 348 कालिज जाने वाली लड़कियों से पता चला कि विद्यार्थियों का 47 प्रतिशत लैंगिक दुरुपयोग के अध्ययन हुआ था। लगभग 45 प्रतिशत ने ऐसे दुरुपयोग का 14 वर्ष से आयु के पूर्व अनुभव किया था। सवाधिक सामान्य अपराधी जात पुरुष कौशिक बदस्य था। ऐसे ही निष्कर्ष दिल्ली आधारित एक गैर-सरकारी संगठन साक्षी द्वारा सरकारी और प्राइवेट स्कूलों की 357 बालिकाओं पर किए गए अध्ययन से भी निकला था। यह पाया गया कि 63 प्रतिशत बालकों ने, लैंगिक दुरुपयोग के किसी न किसी रूप के भोगा था, लगभग 22 प्रतिशत ने गंभीर लैंगिक दुरुपयोग भोगा था और इन मामलों के 29 प्रतिशत में यह दुरुपयोग ऐसे व्यक्ति द्वारा किया गया था जिस पर वह पूरी तरह विश्वास करती थी। 1995 में बालकों के लैंगिक दुरुपयोग के 19 मामलों में उनके द्वारा किए गए विश्लेषण में यह पाया गया था कि अधिकतर मामलों में शिकार व्यक्ति 1 और 12 वर्ष के बालक थे।

9.54. भारत का सविधान बालकों के विशेष संरक्षण का उपबंध करता है। अनुच्छेद 15(3) राज्य का स्त्रियों और बालकों के लिए विशेष उपबंध करने की शक्ति प्रदान करता है। अनुच्छेद 39(च) यह उपबंध करता है कि बालकों को स्वतंत्र और गरिमामय वातावरण में स्वस्य विकास के अवसर और सुविधाएं दी जाएं और बालकों और अल्पवय व्यक्तियों की शोषण से तथा नैतिक और अर्थीक वरित्या से रक्षा की जाए। यह उपबंध सविधान में, संविधान (चालीसवां संशोधन) अधिनियम, 1978 द्वारा जोड़ा गया था। अनुच्छेद 45 सभी बालकों को 14 वर्ष की आयु पूरी करने तक निःशुल्क और अनिवार्य शिक्षा देने के लिए राज्य आदिष्ट करता है।

9.55. 1945 में, बालकों का कल्याण और उनका अधिकार संयुक्त राष्ट्र के लिए गहरी चिन्ता का विषय बना हुआ है। महासभा के पहले कार्यों में से एक कार्य संयुक्त राष्ट्र बाल निधि (यूनिसेफ) को स्थापित करता था। 1959 में बालकों के अधिकार संबंधी घोषणा को प्रारूपित किया गया था, जो “मानव बालक के प्रति उस सर्वोत्तम कार्य करने का उत्तरदायी है, जो उसे करना है, के आधार पर बालकों के द्वित में प्राइवेट और सार्वजनिक कार्यवाही में सार्वादी स्तंभ के रूप में कार्य कर रहा है।” इस घोषणा से अंतर्राष्ट्रीय बालकों के अधिकार संबंधी अभिसमय का प्रारूपण किया गया, जिसे 20 नवम्बर, 1985 को महासभा द्वारा सर्वसम्मति से अंगीकार किया गया था। 187 राज्योंने, अभिवचन का अनुसरण कर दिया है। भारत में यह अन्य समय 11 जनवरी, 1993 से प्रवर्तन में आया है। अभिसमय के कुछ उपबंध विशिष्ट: अनुच्छेद 34, 35 और 36 विनिर्दिष्ट रूप से बालकों को लैंगिक अपराधों और अतिक्रमण से संरक्षण के संबंध में हैं। अभिसमय का अनुच्छेद 34 पक्षक

9.57. महिला आलिकों के लैंगिक दुरुपयोग के सभी अन्य रूपों की शुराई को रोकने के लिए विधि आयोग ने भाग 4 के पैरा 9.35 में यथाकथित धारा 354 के संशोधन के लिए सिफारिश की है, जो पर्याप्त होनी चाहिए। इसके अतिरिक्त, भाग 4 के पैरा 9.52 में विधि आयोग की यह सिफारिश की कि प्रौढ़ व्यक्तियों द्वारा ऐसे पुरुष या स्त्री दोनों व्यक्तियों के साथ, जिनकी आयु 18 वर्ष से कम है, भारतीय दंड संहिता की धारा 377 के अधीन पुरुष और महिला, दोनों वर्ग के आलिकों के लैंगिक दुरुपयोग को आच्छादित करने के लिए पर्याप्त होगी।

9.58. विधि आयोग की इस में विद्यमान धारा 376 (2)(4) और विधि आयोग की धारा 377 का संशोधन करने के लिए सिफारिशें आलिकों के लैंगिक दुरुपयोग के संबंध में समूचित है। परिणामस्वरूप, विधि आयोग, भारतीय दंड संहिता संशोधन विधेयक के खंड 146 में यथा सुझाई गई नई धूरा 354(क) को शामिल करने की सिफारिश नहीं करता है।

9.59. लैंगिक बल दुरुपयोग विभिन्न रूपों में किया जा सकता है, जैसे मैथून, संभोग और लैंगिक हमला। ऐसे मामले जिनमें योनि में पीड़ादायक प्रवेशन अंतर्गत है, भारतीय दंड संहिता 375 के अधीन आ जाते हैं। यदि पीड़ादायक मूल प्रवेशन या गुदा में पीड़ा दायक प्रवेशन का कोई मामला है, तो भारतीय दंड संहिता की धारा 377 प्रकृति विरुद्ध अपराध, अर्थात् प्रकृति की व्यवस्था के विरुद्ध किसी पुरुष, स्त्री या जीवजंतु के साथ इन्द्रिय भोग की समुचित रूप से देखभाल करने के लिए पर्याप्त है। यदि कार्य ऐसे हैं जैसे कि योनि में या गुदा में अंगुली या किसी निर्जीव वस्तु का प्रवेशन किसी स्त्री या किसी महिला आलक पर किया जाता है, तो भारतीय दंड संहिता की प्रस्तावित धारा 354 के उपबंध, इसके अधीन अधिक कठोर दंड भी निहित है, का आपय लिया जा सकता है और जहां तक पुरुष आलक की आत है, भारतीय दंड संहिता के, उपहति "आपराधिक बल" या "हमला" जैसी भी स्थिति में हो, से संबंधित दांडिक उपबंध लागू होंगे। स्वामाविक रूप से भारतीय दंड संहिता की धारा 354 के अधीन आने वाले लैंगिक हमले/आपराधिक बल का प्रयोग, धारा 377 के अधीन आने वाले प्रकृति विरुद्ध अपराधों के बीच एक सुभिन्नता रखनी है। अतः, भारतीय दंड संहिता की धारा 377 के अधीन दंडनीय प्रकृति विरुद्ध अपराधों या मात्र लैंगिक हमला या मात्र आपराधिक बल का लैंगिक उपयोग, जो भारतीय दंड संहिता की धारा 354 को बलात्संगा की परिधि के भीतर आकर्षित कर सकती है, जो निश्चित अर्थसहित एक विशिष्ट और धोरत अपराध है, को एक साथ लाना उचित नहीं हो सकता। कहने की आवश्यकता नहीं कि इन अपराधों में से कोई अपराध करने का प्रयत्न भी भारतीय दंड संहिता की धारा 511 के फलस्वरूप दंडनीय है। इसलिए, इस निमित्त विधि में कोई अन्य या/और परिवर्तन आवश्यक नहीं है।

#### पाद टिप्पणी

- विधि आयोग, 84वीं रिपोर्ट, पैरा 1.2, पृष्ठ 1(1980)।
- देखिए, सुष्णने बाउनमिलर, अगेस्ट अबर ब्रिल बेन, वेमेन एण्ड रेप (1990), लोटिका सरकार, "ऐप ए ह्यूमन राइट्स वर्सस ए पट्टीयाचल इंटरप्रेटेशन, आई इंडियन जर्नल आफ जेंडर स्टडीज 69(1994), फ्लाईया आनेस, "प्रोटेक्टिंग बुमेन अगेस्ट बाइलोस 27 अर्थिक और राजनैतिक साप्ताहित (ईंडीडल्लू) 19(1992); उसी लेखक द्वारा भी, स्टेट, जैंडर एंड डि रिहटोरिक आफ लॉ रिफार्म (1995) लरेन कलाकृ एंड डिजरालिविस, रेप-डि प्राइवेट आफ कोइलिसिव सेक्युरिटीटी (1977)।
- विधि आयोग, 42वीं रिपोर्ट, पैरा 16, 115 पृष्ठ 277।
- यथोक्त।
- यथोक्त, पैरा 16, 117, पृष्ठ 277-278।
- यथोक्त, पैरा 16, 120, पृष्ठ 278।
- ए आई आर 1977 एस सी 1307।
- ए आई आर 1979 एस सी 185।
- देखिए, बसुधा बामबार, विधि, शक्ति और न्याय 237-287 (द्विसरा प्रसंस्करण, 1992)।
- विधि आयोग, 84वीं रिपोर्ट, टिप्पणी 1, पैरा 2.21, पृष्ठ 9।
- यथोक्त पैरा 2.8 पृष्ठ 6।
- यथोक्त, पैरा 2.9 पृष्ठ 6।
- यथोक्त पैरा 2.19 पृष्ठ 8।
- देखिए, "आपराई इन क्लाइम अपेस्ट बुमेन: रिपोर्ट", हिन्दू (दिल्ली प्रसंस्करण) 9-12-1996।
- देखिए, "दिल्ली शेम बुमेन मोस्ट अनसेफ", दिल्ली राज्य महिला आयोग की रिपोर्ट के विष्लेषण पर सम्मिलित, हिन्दूस्तान टाइम्स (दिल्ली प्रसंस्करण), 3-2-1991।
- राष्ट्रीय महिला आयोग की तदर्थ समिति द्वारा तैयार किया गया लैंगिक हमला
- प्राह्ल विधेयक, 1993 के उपबंध देखिए, शोमेना खन्ना और रत्न कपूर नारीवादी विधिक बनुसंघन केन्द्र, नई दिल्ली द्वारा तैयार लैंगिक अपराधों से संबंधित विधियों के सुधार पर जापन भी देखिए।
- रिपोर्ट पैरा 20.10, पृष्ठ 323।
- यथोक्त, पैरा 20.10।
- ए आई आर 1865, एस सी 1964।
- ए आई आर 1966, एस सी 1964।
- ए आई आर 1971, एस सी 1153।
- सरला मुद्रगल बनाम भारत संघ, ए आई आर 1995-एस सी 153।
- प्राह्ल, भारतीय दंड संहिता की द्वितीय रिपोर्ट 134-35 (1847) विधि आयोग।
- भारतीय दंड संहिता की 42वीं रिपोर्ट, पैरा 20.18, पृष्ठ 327(1971)।
- यथोक्त।
- ए आई आर 1985 एस सी 1618, 1985 (बनुपूरक) एस सी सी 137।
- "सक्षी" नई दिल्ली द्वारा बाल लैंगिक दुरुपयोग सांहित्य।
- सचवाद्देस, होरोविंड और कार्डिली आल लैंगिक दुरुपयोग 58-59 (लेज प्रकाशन, 1990)।
- जमोद के "सी एस ए लिंगल एंड इनवेस्टिगेटिंग पर्सेक्युटिव", शील बर्से (ईडी) चाइल्ड विकेन्टम राइट्स: रिपोर्ट आफ इंटरनेशनल कांफ्रेस आन चाइल्ड सेक्चर अब्यूज, विकेन्टम पर्सेक्युटिव इनवेस्टिगेशन एंड द्राइल प्रोसेजर 11 से 13 (1996)।
- याइनर (दिल्ली प्रसंस्करण) तारीख 7-11-1996, पृष्ठ 3, देखिए "इनसेक्टियस फादर पाइजन प्रिसेनेट डाटर ट्रू डेथ" इंडियन एक्सप्रेस-एक्सप्रेस न्यूजलाइन्स (दिल्ली प्रसंस्करण), 3-12-1996 भी देखिए।

#### अध्याय 10

##### भाग ले जाने का आनुषंगिक अपराध

भारतीय दंड संहिता को दंड विधि की प्रारम्भिक संहिता के रूप में एक आदेश विधान, और लार्ड मैकाले की महान प्रतिभा का स्मारक कहा जाता है, जिनके पर्यवेक्षण के अधीन इसे तैयार किया गया था। संहिता राज्यक्षेत्रीय और साथ ही राज्यक्षेत्रतर अपराधों के संबंध में है।

धारा 4 संहिता का, राज्यक्षेत्रतर अपराधों तक विस्तार करती है। तदनुसार, संहिता के उपबंध किसी व्यक्ति द्वारा किसी ऐसे प्रौढ़ या वायुयान पर, जो भारत में रजिस्ट्रीकृत है, वह जाहे जहां भी हो, किए गए किसी अपराध को भी लागू होते हैं।

समुद्र "जलादशयुता" की समस्या से निपटने के लिए, जो पिछली शताब्दी में बहुत सामान्य थी, दो विशेष विधान अधिनियमित किए गए थे, अर्थात्:—

- नाविधकरण अपराध अधिनियम, 1894; और
- वाणिज्य प्रौढ़ परिवर्तन अधिनियम, 1894.

किन्तु संहिता के निर्माताओं ने, कभी भी "वायुदशयुता" के अपराध के बारे में नहीं सोचा था, जिसे आजकल आमतौर पर "वायुयान भगा ले जाना" कहा जाता है, इसलिए संहिता के बल व्यक्ति के अपहरण के अपराधों तक सीमित है, वायुयान या वाहनों के अपहरण तक नहीं, इसलिए संहिता में, "वायुयान भगा ले जाने" के अपराध को शामिल करने की आवश्यकता महसूस की गई है।

##### भारतीय दंड संहिता में वर्तमान स्थिति

10.02. भारतीय दंड संहिता की धारा 362 अपहरण के अपराध के संबंध में है, जो निम्नवत है:—

"362. अपहरण—जो कोई किसी व्यक्ति को किसी स्थान से जाने के लिए बल द्वारा विवरण करता है या किन्तु प्रवंचनापूर्ण उपायों द्वारा उत्प्रेरित करता है, वह उस व्यक्ति का अपहरण करता है, यह कहा जाता है। किसी व्यक्ति के अपहरण को गठित करने के लिए आवश्यक संघटक निम्न हैं:—

- कि व्यक्ति को किसी स्थान से ले जाया गया हो; और
- इस प्रकार ले जाया जाना—

(क) बल के प्रयोग द्वारा बाध्यता के अधीन, या

(ख) प्रवंचनापूर्ण साधनों द्वारा उत्प्रेरण हो—

(1) स्वयं द्वारा अपहरण मैलिक अपराध के रूप में दंडनीय नहीं है,

(2) किन्तु यदि यह धारा 364 से 369 तक, सिवाय धारा 366क, 366ख और 368 के, बल या धोखा के अतिरिक्त, किसी अन्य अतिरिक्त तत्व के कारण व्यवहृत प्रवार्गों के लंतर्गत आता है, तो यह उन धाराओं के अधीन दंडनीय अपराध होगा।

निरपवादत: धारा 362, किसी (व्यक्ति) के 'अपहरण' की समस्या के संबंध में है किन्तु वायुयान भगा ले जाने के अपराध में, वायुयान एक विधिक 'व्यक्ति' है। इसके अतिरिक्त, वायुयान भगा ले जाने का अपराध करते समय, वायुयान के भीतर या तो यात्रियों के रूप में या कर्मदिल के सदस्यों के रूप में या दोनों के रूप में, व्यक्ति हो सकते हैं।

किन्तु विधित: भारतीय दंड संहिता की धारा 362 के अधीन वायुयान भगा ले जाने के अपराध को लाना बहुत कठिन होगा क्योंकि संहिता के निर्माताओं द्वारा इस अपराध की कभी कल्पना भी नहीं की गई थी और समाज की प्रगति के साथ-साथ, सम्पत्ति और प्रतिशोध की धारणा भी बढ़ी, जो समाज में नए अपराधों को जन्म देती है और उनमें से एक अपराध वायुयान भगा ले जाने का आधिक अपराध है।

भारतीय दंड संहिता में "वायुमान भगा ले जाने" को सम्मिलित करने का प्रस्ताव

10.03. पिछले कुछ समय से वायुयान भगा ले जाने के नए अपराधों में बृद्धि हुई है। विभिन्न देशों और साथ ही

भारत के विधि आयोग ने, अपने 26 दिसम्बर, 1995 के पत्र में वायुयान या अन्य वाहनों को भगा ले जाने की समस्या को सुलझाने के लिए सुझाव मांगे थे। उक्त पत्र की मद 13 में यह कथन है कि—

“पिछले कुछ समय से आंतकवाद से ग्रस्त हमारे देश के कुछ भागों में वायुयान और वाहनों को भगा ले जाने के मामलों में बहुतायत हो गई है। इस बात को ध्यान में रखते हुए, यह महसूस किया गया है कि किसी वायुयान या वाहन को भगा ले जाना भारतीय दंड संहिता के अधीन दंडनीय बनाया जाए। क्या आप समझते हैं कि इन दोनों अपराधों के लिए एक समान दंड होना चाहिए अथवा इसे अपराध की गंभीरता के अनुसार, कम-ज्यादा होना चाहिए और फलक पर या उड़ान में किसी वायुयान को भगा ले जाने की दशा में, भयोपरापी दंड होना चाहिए।”

इसी प्रकार भारतीय दंड संहिता, 1860 संबंधी अपनी प्रश्नावली में (मद 10 पृष्ठ 36) में विधि आयोग ने, भारतीय दंड संहिता में इस अपराध को शामिल करने के लिए राय जाननी चाही है, अर्थात्—

- (i) वायुयान को भगा ले जाने, और
- (ii) वाहन को भगा ले जाना।

प्रश्नावली में इस विकल्प का सुझाव दिया गया है कि क्या इन दोनों अपराधों के लिए एक समान दंड होना चाहिए अथवा इसे अपराध की गंभीरता के अनुसार कम, ज्यादा होना चाहिए और फलक पर या उड़ान में किसी वायुयान को भगा ले जाने की दशा में, भयोपरापी दंड होना चाहिए।

### विधि आयोग की पूर्ववर्ती रिपोर्ट (42वीं)

10.04. भारत के विधि आयोग ने जून, 1971 को अपनी 42वीं रिपोर्ट प्रस्तुत की है। उक्त रिपोर्ट (मद 16.96, पृष्ठ 296) में भगा ले जाने से अनुशंसिक अपहरण की समस्या पर विचार किया गया था। आयोग का यह सुझाव मिला था कि वायुयान या अन्य यान को भगा ले जाने के अपराध को समाविष्ट करने के लिए संशोधन किया जाना चाहिए ताकि उनको दंडित किया जा सके, जो अप्रत्यक्ष रूप से व्यक्तियों का उस स्थान पर परिवहन कारित करते हैं, जो उनका आशयित गंतव्य नहीं है। दूसरे शब्दों में, प्रत्यर्पण चाहा गया था ऐसे संशोधन की आवश्यकता के लिए इस आधार पर जो दिया गया था कि ऐसे मामलों में मध्यस्थता, कम से कम जहां तक यात्रियों का संबंध है, परोक्ष है। तथापि, विधि आयोग ने अपना यह अभिमत व्यक्त किया कि ऐसे मामले, बाध्यता की परोक्ष प्रकृति के होते हुए भी, धारा 362 के भीतर आने वाले समझे जा सकते हैं और इसलिए कोई संशोधन आवश्यक नहीं है।

तिस पर भी, भारतीय दंड संहिता (संशोधन) विधेयक, 1978 में एक नई धारा 362क के रूप में वायुयान भगा ले जाने के अपराध को शामिल करने का प्रयत्न किया गया है।

### भारतीय दंड संहिता में धारा 362क का अंतःरूपान

10.05. भारतीय दंड संहिता (संशोधन) विधेयक, 1978 के खंड 14.9 द्वारा एक नई धारा 362क जोड़े जाने का प्रस्ताव है। प्रस्तावित धारा, जो वायुयान भगा ले जाने और यानों के भगा ले जाने के अर्थ की व्याख्या करती है और उक्त अपराध के लिए दंड भी विद्वित करती है, निम्नवत् है—

“362क(1). उड़ान भरते हुए किसी वायुयान में, जो भारत में रजिस्ट्रीकृत वायुयान है, अथवा भारतीय आकाश मार्ग के ऊपर उड़ते हुए किसी अन्य वायुयान में, जो कोई विधिविरुद्धतया, बलपूर्वक या बल दिखाकर या उसकी धमकी देकर अथवा किसी अन्य प्रकार के अभिन्नास से ऐसे वायुयान को ऐसे स्थान पर, जो उसके गंतव्य स्थान से मिल्ने हो, उतारने के प्रयोजन के लिए या किसी अन्य प्रयोजन के लिए अभिगृहीत करेगा या उस पर नियंत्रण का प्रयोग करेगा, अथवा उसे अभिगृहीत करने या उस पर नियंत्रण का प्रयोग करने का प्रयत्न करेगा उसके बारे में यह कहा जाएगा कि उसने भगाकर ले जाने का अपराध किया है और जो कोई भगाकर ले जाएगा वह आजीवन कारावास से दंडित किया जाएगा और जुमनि का भी दायी होगा।

(2) भारत में किसी यान या भारत में रजिस्ट्रीकृत किसी यान पर, जो कोई विधिविरुद्धतया, बलपूर्वक या बल दिखाकर या उसकी धमकी देकर अथवा किसी अन्य प्रकार के अभिन्नास से ऐसे यान को किसी ऐसे स्थान पर, जो उस गंतव्य स्थान से मिल्ने हो, ले जाने के प्रयोजन के लिए अथवा किसी अन्य प्रयोजन के लिए अभिगृहीत करेगा या नियंत्रण का प्रयोग करेगा अथवा अभिगृहीत करने या नियंत्रण का प्रयोग करने का प्रयत्न करेगा उसके बारे में यह कहा जाएगा कि उसने भगाकर ले जाने का अपराध किया है और जो कोई भगाकर ले जाएगा वह कठिन कारावास से जिसकी अवधि दस वर्ष तक की हो सकेगी, दंडित किया जाएगा और जुमनि का भी दायी होगा।

### स्पष्टीकरण—इस धारा में—

(i) उस अवधि के अंतर्गत, जिसके द्वारा कोई वायुयान को उड़ान भरने के प्रयोजन के लिए शक्ति का प्रयोग

किया जाता है उस समय तक की अवधि भी होगी जबकि उस उड़ान की समाप्ति पर अवतरण स्थल, यदि कोई हो, समाप्त होता है;

(ii) “यान” के अन्तर्गत कोई जलयान भी है किन्तु वायुयान उसके अन्तर्गत नहीं है।

10.06. उपर्युक्त के अतिरिक्त, निम्नलिखित अपराध भी विधेयक में अंतर्विष्ट हैं—

I. भारतीय दंड संहिता की धारा 103 को प्रतिस्थापित करना (विधेयक का खंड 35 (घ)) विधेयक का खंड 35, जो धारा 103 को संगत उपबंध 35(घ) द्वारा प्रतिस्थापित करता है।

“उपधारा 35(घ) सरकार या किसी स्थानीय प्राधिकारी या सरकार के स्वामित्व या नियंत्रणाधीन किसी निगम के प्रयोजनों के लिए प्रयुक्त या प्रयुक्त किए जाने के लिए आशयित किसी सम्पत्ति की रिष्टि, जहां ऐसी रिष्टि सम्पत्ति का आशयित विनाश करने या उसे पर्याप्त नुकसान पहुंचाने के लिए की गई हो, या

(d) वायुयान को भगा ले जाना, या

(e) अभिवृत्स।”

तथापि, यह खंड प्राइवेट वायुयान के साथ की जाने के लिए आशयित रिष्टि के संबंध में नहीं है।

II. भारतीय दंड संहिता की धारा 105 को प्रतिस्थापित करना (विधेयक का खंड 37)

भारतीय दंड संहिता की धारा 105 को प्रतिस्थापित करने के लिए विधेयक का खंड 37 निम्नवत है—

“105. सम्पत्ति की प्राइवेट प्रतिरक्षा का अधिकार तब आरंभ होता है जब सम्पत्ति के संकट की युक्तियुक्त आशंका प्रारंभ होती है, और

(क) .....

(ख) .....

(ग) रिष्टि, आपराधिक अतिचार, वायुयान को भगा ले जाना या अभिवृत्स के विरुद्ध यह अधिकार तब तक बना रहता है जब तक अपराध करता रहता है।”

III. भारतीय दंड संहिता की धारा 426 से 432 तक और 434 से 440 तक को प्रतिस्थापित करना (विधेयक का खंड 179 और 180)

खंड 179 में, भारतीय दंड संहिता की धारा 426 से 432 तक को प्रतिस्थापित करने का प्रस्ताव है। इसी प्रकार, खंड 180 में धारा 434 से 440 तक को प्रतिस्थापित करने का प्रस्ताव है। वायुयान की रिष्टि से संबंधित विधेयक की सबसे महत्वपूर्ण प्रस्तावित धारा निम्नवत है—

“432. जो कोई किसी कार्य को करके, जिससे वह किसी वायु मार्ग बीकन या विमानक्षेत्र के प्रकाश को, या वायुमार्ग या विमान-क्षेत्र पर या उसके पास के किसी प्रकाश को, जो विधि के अनुपालन में लागाया गया है, या वायुयान के मार्गदर्शन के लिए प्रदर्शित या उपयोग की जाने वाली किसी अन्य वस्तु को नष्ट करके, या हटाकर या कम उपयोगी बनाकर रिष्टि करेगा, जो कार्य अभिवृत्स का अपराध नहीं है, वह दोनों में से किसी भाँति के कारावास से, जिसकी अवधि सात वर्ष तक की हो सकेगी, या जुमनि से, या दोनों से, दंडित किया जाएगा।

10.07. भारतीय दंड संहिता (संशोधन) विधेयक, 1978 यद्यपि राज्य सभा द्वारा पारित कर दिया गया था किन्तु तत्कालीन लोक समा के विघ्नन के कारण अधिनियम नहीं बन सका। इसी बीच वायुयान भगा ले जाने की समस्या बड़ गई थी और इस ज्वलंत समस्या से निपटने के लिए कोई प्रभावी विधान बनाने की तात्कालिक आवश्यकता महसूस की गई थी। इसलिए दो मूल अधिनियम 1982 में प्रवर्तन में आए और संशोधनों के पश्चात के अधिनियम निम्नवत जाने जाते हैं—

(i) यान हरण निवारण—अधिनियम, 1982

(ii) यान हरण निवारण (संशोधन) अधिनियम, 1993

(iii) सिविल विमानन सुरक्षा विधिविरुद्ध कार्यदमन अधिनियम, 1982

(iv) सिविल विमानन सुरक्षा विधिविरुद्ध कार्यदमन (संशोधन) अधिनियम, 1994

### यान हरण निवारण अधिनियम, 1982

10.08 यह अधिनियम वायुयान के विधिविरुद्ध जब्ती के दमन और उससे संबद्ध विषयों के लिए अभिसमय को प्रभावी बनाने के लिए अधिनियमित किया गया था। उक्त अधिनियम (1982 का खंड) 15 नवम्बर, 1982 से अस्तित्व में आया।

अधिनियम की धारा 3 भगा ले जाने की अपराध की निम्नवृत्त व्याख्या करती है:—

3. (1) जो कोई उड़ानरत वायुयान पर, विधिविरुद्धतया, बल या बल की धमकी द्वारा अथवा किसी अन्य प्रकार के अभिन्नास द्वारा उस वायुयान का अभिग्रहण कर लेता है या उस पर नियंत्रण कर लेता है, वह ऐसे वायुयान के हरण का अपराध करता है।

(2) जो कोई किसी वायुयान के संबंध में उपधारा (1) में निर्दिष्ट कार्यों में से कोई कार्य करने का प्रयत्न करता है, अथवा ऐसे कार्य करने के किए जाने का दुष्प्रेरण करता है, उसकी बाबत भी यह समझा जाएगा कि उसने ऐसे वायुयान के हरण का अपराध किया है।

(3) इस धारा के प्रयोजनों के लिए, किसी वायुयान को किसी भी समय, उसी क्षण से जब उसके सभी आदारी द्वारा उड़ान के लिए यात्रियों के चढ़ जाने के पश्चात बंद कर दिए जाते हैं, उस क्षण तक जब तक कि ऐसा कोई द्वारा उड़ान के पश्चात यात्रियों के उत्तरने के लिए खोल नहीं दिया जाता है, उड़ानरत समझा जाएगा, तथा किसी वायुयान के विवश होकर उत्तरने की दशा में उड़ान को तब तक जारी समझा जाएगा जब तक कि उस देश के, जिसमें इस प्रकार विवश होकर उत्तरना पड़ता है, सक्षम प्राधिकारी उस वायुयान की तथा उस पर के व्यक्तियों और सम्पत्ति की जिम्मेदारी नहीं संमाल लेते हैं।

धारा 4, भगा ले जाने के अपराध के लिए दंड विहित करती है। इसमें यह कथन है कि जो कोई भगा ले जाने का अपराध करेगा वह आजीवन कारावास से दंडित किया जाएगा और जुमानि से भी दंडनीय होगा।

धारा 7 प्रत्यर्पण से संबंधित उपबंधों की व्याख्या करती है। तदनुसार, अधिनियम के अधीन अपराध अभिसमय देशों के साथ भारत द्वारा की गई सभी प्रत्यर्पण संधियों और इस अधिनियम के प्रारंभ की तारीख पर जिनका भारत पर विस्तार है और जो बाध्यकर है, में प्रत्यर्पणीय अपराधों के रूप में सम्मिलित और उसके लिए उपबंधित समझे जाएंगे।

10.09. यह अधिनियम, 1994 में संशोधित किया गया था (1994 का 39)। इस संशोधन के माध्यम से किसी पुलिस अधिकारियों, अधिसूचना द्वारा भगा ले जाने के अपराधियों को गिरफतार करने, अन्वेषण करने और उसका अभियोजन करने के लिए सक्षम बनाया गया था। संशोधनकारी अधिनियम में विशेष अभिहित न्यायालय की स्थापना का भी उपबंध किया गया था और अभिहित न्यायालय जब तक की इसके विरुद्ध संहिता नहीं किया जाता, यह उपधारणा करेगा कि अभियुक्त ने ऐसा अपराध किया था।

### सिविल विमानन सुरक्षा विधिविरुद्ध कार्यदमन अधिनियम, 1982

10.10. यह अधिनियम सिविल विमानन सुरक्षा विधिविरुद्ध कार्य दमन और उससे संबद्ध विषयों के लिए अभिसमय को प्रभावी बनाने के लिए अधिनियमित किया गया था, यह अधिनियम 15 नवम्बर, 1982 से प्रवृत्त हुआ।

अधिनियम की धारा 3 किसी वायुयान के फलक पर, उड़ान आदि में हिंसा करने के अपराध को परिभ्रामित करती है। धारा 3 निम्नवृत्त है—

“3. (1) जो कोई विधिविरुद्धतया और साशय—

(क) उड़ानरत किसी वायुयान पर किसी व्यक्ति के प्रति हिंसा का ऐसा कार्य करता है, जिससे ऐसे वायुयान की सुरक्षा के संकटापन होने की संभावना है; या

(ख) सेवारत किसी वायुयान को नष्ट करता है या ऐसे वायुयान को किसी ऐसी रीति में नुकसान पहुंचाता है, जिससे वह उड़ान के अयोग्य हो जाए या जिससे उड़ान में उसकी सुरक्षा के संकटापन होने की संभावना है; या

(ग) सेवारत किसी वायुयान पर किसी प्रकार की कोई ऐसी युक्ति या पदार्थ रखता है या रखवाता है, जिससे उस वायुयान के नष्ट होने की संभावना है या ऐसे नुकसान पहुंचाता है, जिससे वह उड़ान के अयोग्य हो जाता है या उसे इस प्रकार नुकसान पहुंचाता है, जिससे उड़ान में उसकी सुरक्षा के संकटापन होने की संभावना है; या

(घ) ऐसी जानकारी, जिसके बारे में वह यह जानता है कि वह मिथ्या है, संसूचित करता है, जिससे उड़ानरत वायुयान की सुरक्षा संकटापन हो जाती है।

वह आजीवन कारावास से दंडित किया जाएगा और जुमानि से भी दंडनीय होगा।

(2) जो कोई उपधारा (1) के अधीन कोई अपराध करने का प्रयत्न करता है या उसके किए जाने का दुष्प्रेरण करता है उसकी बाबत भी यह समझा जाएगा कि उसने ऐसा अपराध किया है और उसे वहीं दंड दिया जाएगा, जो ऐसे अपराध के लिए उपबंधित है।

10.11. यह अधिनियम, संशोधनकारी अधिनियम (1994 का 14) द्वारा संशोधित किया गया था और रिष्ट की भी व्याख्या करने के लिए धारा 3 के जोड़ी गई थी। यह निम्नवृत्त है:

मूल अधिनियम की धारा 3 के पश्चात निम्नलिखित आराएं अंतःस्थापित की जाएंगी, अर्थात्—

धारा 9क मी भूल अधिनियम में अंतःस्थापित की गई थी और तदनुसार अभिहित न्यायालय, जब तक कि प्रतिकूल संबित नहीं होता है यह उपधारणा करेगा कि अभियुक्त ने अधिनियम में उल्लिखित ऐसा अपराध किया था।

इस प्रकार यह पूर्णतः स्पष्ट है कि यह विशेष अधिनियम विमान और उसके प्रचालन में रिष्ट के बारे में प्रभावी रीति से और निश्चित रूप से भारतीय दंड संहिता (संशोधन) विधेयक, 1978 में प्रस्तावित धारा 432 (खंड 179) से बेहतर रीति से कार्य करता है।

इस प्रकार ये दोनों विशेष विधान सिविल विमानन के भगा ले जाने, रिष्ट से संबंधित अपराधों के साथ, प्रभावी रीति से, निष्टाने के लिए पर्याप्त हैं।

### भारतीय दंड संहिता के मुकाबले में विशेष विधान

10.12. संहिता के निर्माताओं के लिए संहिता को सभी अपराधों के लिए सर्वांगीण बना पाना असंभव था। संहिता की धारा 5 महत्वपूर्ण है और शुद्धिमत्तापूर्वक सभी पूर्व विद्यमान विशेष या स्थानीय विधियों को छोड़ दिया गया था। संहिता के बाल साधारण अपराधों के संबंध में हैं, जो अपराध स्थानीय या विशेष सिद्धांत के अंतर्गत आते हैं, वे अपराध इसके अंतर्गत नहीं आते हैं, साधारण कथन विशेष कथन का अल्पीकरण नहीं करते, के साधारण सिद्धांत के अनुसार विशेष या स्थानीय विधि की यह व्यावृत्ति है। इसका तात्पर्य यह है कि साधारण शब्द विशेष का अल्पीकरण नहीं करते, दूसरे शब्दों में साधारण शब्द, विशेष विधान को, निरसित या उपांतरित नहीं करते (सेवार्ड बनाम बोरा 10, ऐसी 68)।

10.13. इस धारा का प्रभाव संहिता की धारा 2 में अंतर्विष्ट इस साधारण निरसन का विशेषण है, जिसमें अपराध के दंड के लिए सभी अन्य विधियों को निरसित किया गया है। इस प्रकार संहिता, एक साधारण संहिता होने के लिए आशयित थी, इसे सर्वांगीण और मात्र उसी प्रकार दंडनीय घोषित किए गए थे जैसे कि वे उसके पूर्व थे।

इसीलिए साधारण खंड अधिनियम, 1897 की धारा 26 में यह उपबंध है कि:—

“जहाँ कि कोई कार्य या लोप दो या अधिक अधिनियमितियों के अधीन कोई अपराध गठित करता है वहाँ अपराधी उन दोनों अधिनियमितियों के या उनमें से किसी के भी अधीन अभियोजित और दंडित किए जाने के दायित्व के अधीन होगा किन्तु उसी

(संविधान के अनुच्छेद 20(2) में दोहरा दंड भी देखिए।)

किन्तु निःसंदेह यह उपधारणा की जाती है कि किसी में भी कोई ऐसी बात नहीं है, जो दूसरे का प्रवर्तन अपवर्जित करे। दूसरे शब्दों में, जहाँ कोई विशेष स्थानीय अधिनियम अपनी निजी शास्त्रियां विहित करता है, तो उनके सर्वांगीण होने की उपधारणा की जाती है, जब तक कि अधिनियम में साधारण विधि की व्यावृत्त की कोई बात न हो। इसके अतिरिक्त, यह सुस्थापित विधि है कि जहाँ कोई कार्य, संहिता के अधीन और साथ ही किसी विशेष या स्थानीय विधि के अधीन दंडनीय है वहाँ अधिमानी क्रम उसे विशेष विधि के अधीन दोषसिद्ध किया जाता है और संहिता के अधीन नहीं, इस कारण से कि विशेष कथन साधारण कथन का अल्पीकरण नहीं करते और साथ ही साथ इस कारण से भी कि विशेष अधिनियम मूलतः ऐसे अपराधों को दंडित करने के लिए बनाए जाते हैं।

इसके अतिरिक्त, भारतीय दंड संहिता (संशोधन) विधेयक, 1978 के खंड 3 में, भारतीय दंड संहिता की धारा 5 को निम्नवृत्त प्रतिस्थापित करने का प्रस्ताव है।

“इस संहिता में की कोई बात किसी विशेष या स्थानीय विधि के उपबंधों पर प्रभाव नहीं डालती।”

### वायुयान या यानों को भगा ले जाने की समस्या—सारांश

10.14. भारतीय दंड संहिता में विद्यमान साधारण उपबंध में किसी सम्पत्ति पर विधिविरुद्ध कब्जा करने को चोरी माना जाता है और जब यह बलपूर्वक इसका उपयोग किया जाता है तो वह लूट होगी और यह वह पांच या उससे अधिक व्यक्तियों द्वारा की जाती है तो वह डकैती मानी जाती है। किन्तु अपराध के नए अपराध जैसे वायुयान या यानों को भगा ले जाने की विशा परिप्रेक्ष्य में 1978 के फलस्वरूप, विनिर्दिष्ट अपराध बनाया जा रहा है। प्रसंगवश प्राइवेट प्रतिरक्षा से संबंधित उपबंधों में कुछ परिवर्तनों का सुझाव दिया गया है और यह परिवर्तन वायुयान को भगा ले जाना या अभियंस जोड़कर धारा 103 और 105 में किया जाना है। रिष्ट से संबंधित अन्य

इसलिए, वायुयानों को भगा ले जाने की बाबत भारतीय दंड संहिता (संशोधन) विधेयक, 1978 में यथा प्रस्तावित धारा 362क की अब आवश्यकता नहीं रह गई है। परिणामस्वरूप भारतीय दंड संहिता की धारा 103 और 105 में संशोधन के लिए, जो सम्पत्ति के संबंध में है, जिसमें वायुयानों को भगा ले जाना सम्मिलित है, रिप्टि के बारे में है, भारतीय दंड संहिता (संशोधन) विधेयक, 1978 के छंट 35 और 37 के अधीन प्रस्तावित प्रतिवर्तन आवश्यक नहीं होगे। यह उल्लेख करने की आवश्यकता नहीं कि वायु सेवा आदि के प्रति रिप्टि को अपराध माना गया है और उपर उल्लिखित विशेष अधिनियमितियों के अधीन दंडनीय बनाया गया है। अतः, भारतीय दंड संहिता की धारा 432 में भी, भारतीय दंड संहिता (संशोधन) विधेयक, 1978 में यथा प्रस्तावित कोई संशोधन अपेक्षित नहीं है।

10.15. उपर्युक्त विचारविमर्श के परिप्रेक्ष्य में यह सिफारिश की जाती है कि भारतीय दंड संहिता में धारा 362को अंतस्थापित किया जाना अपेक्षित नहीं है। इसी प्रकार, वायुयान धारा ले जाना और विमान सेवा आदि के प्रति रिस्टि के अपराध को आच्छादित करने के लिए भारतीय दंड संहिता की धारा 103, 105, 432 को संशोधित करना आवश्यक नहीं है।

10.16. किन्तु इस अपराध की समूर्ण विश्व में प्रचुरता से वृद्धि हो रही है। किसी देश का विधान, जब विमान भगा ले जाने का अपराध या अपराधी के लिए अधिकारिता के दो या अधिक देशों में उत्पन्न होती है, तब असफल हो जाता है। समय की मांग यह है कि इस अपराध के निवारण के लिए अंतरराष्ट्रीय सहयोग अपेक्षित है। इसलिए इस समस्या की ओर अंतरराष्ट्रीय प्रवृत्ति को देखना बहुत ही आवश्यक है। विशेष रूप से जबकि अपराध एक अनवरत अपराध है और उस पर दो या अधिक देशों की अधिकारिता होती है, संदोप में, अंतरराष्ट्रीय प्रवृत्ति से संबंधित विचारविमर्श और वायुयान भगा ले जाने से संबंधित अभिसमय केवल हमारी सिफारिशों के लिए ही नहीं अपितु शैक्षिक मूल्यों के लिए भी उपयोगी होगे।

वायुयान भगा ले जाने के अपराध से संबंधित अंतरराष्ट्रीय प्रवृत्ति और अभिसमय

10.17. वायुयान भगा ले जाना अंतरराष्ट्रीय और राष्ट्रीय अपराधों की नामावली में एक समसामयिक पारंपर्यन है और अंतरराष्ट्रीय तथा राष्ट्रीय स्तर पर इसके नियंत्रण की आवश्यकता को राज्यों द्वारा मन्यता मिलनी आरंभ ही हुई है। अपने व्यापक अर्थ में भगा ले जाना सिविल विमानन की सुरक्षा के विरुद्ध एक कार्य है और दश्युता के सदृश्य है।

टोकियो अभियासमय, 1963

10.18. अनुच्छेद 12 के अनुसार, जब फलक पर कोई व्यक्ति बल द्वारा या बल का भय दिखाकर उड़ान में किसी वायुयान में हस्तक्षेप, अधिग्रहण या नियंत्रण के सदोष प्रयोग का कोई कार्य विधिविरुद्ध करता है या जब ऐसा कार्य किया जाने वाला है तब संविदाकारी राज्य वायुयान उसके विधिक कमांडर को पुनःनियंत्रण दिलाने का या वायुयान पर अपना नियंत्रण बनाए रखने का प्रयास समुचित करेगा और संविदाकारी राज्य जब वायुयान उत्तरेगा, तो उसके सभी यात्रियों तथा कर्मीदल को यथाशीघ्र व्यवहार्य उनकी यात्रा समुचित करेगा और संविदाकारी राज्य जब वायुयान तथा उसका स्थारा उन व्यक्तियों को लौटाएगा, जो उसके कब्जे के विधितः डकदार होंगे। चालू रखने की अनुशा देगा और वायुयान तथा उसका स्थारा उन व्यक्तियों को लौटाएगा, जो उसके कब्जे के विधितः डकदार होंगे। अनुच्छेद 13 यह और उपबंध करता है कि संविदाकारी राज्य ऐसे किसी व्यक्ति का परिदान करेगा और वह तथ्यों की तत्काल प्रारंभिक जांच करेगा। उपर्युक्त उपर्याखों से यह स्पष्ट है कि “भगा ले जाना” शब्द को परिभाषित करने का कोई प्रयत्न नहीं किया गया है अपितु यह संविदाकारी राज्य पर कठिपय आव्याहारण मात्र अधिरोपित करता है तथा भगा ले गए वायुयान और उसके यात्रियों की उन व्यक्तियों को, जो उसके कब्जे के डकदार हैं, बापसी पर और उसके यात्रियों की तब कर्मीदल को यथासंभव व्यवहार्य उनकी यात्रा बनाए रखने की अनुशा पर अधिक जोर देता है।

हेग अभिसमय, 1970

10.19. अनन्देद । यह उपबंध करता है कि कोई व्यक्ति, जो उड़ान में वायुयान के फलक पर

(क) अवैध रूप से बल द्वारा या बल के भय द्वारा या अभिन्नास के किसी अन्य रूप द्वारा उस वायुयात को विधिविरुद्धतया अभिगृहीत करता है या उस पर नियंत्रण करता या प्रेषा कोई कार्य करते हैं।

(ब) ऐसे किसी व्यक्ति का सह-अपराधी है, जो ऐसा कोई कार्य करता है या करने का प्रयत्न करता है, .... का अपराध करता है।

यह उपबंध भी “भगा ले जाने” शब्द को परिभाषित नहीं करता है अपितु “उसके आवश्यक संघटकों का उल्लेख मात्र करता है। इस पर भी, अंतरराष्ट्रीय विधि के अनुसार, भगा ले जाने के अपराध के अनिवार्य तत्व विस्तृतिविवृत हैं।

- (i) बल, या उसके भय या अभिन्नास के किसी अन्य रूप का विधिविरुद्ध प्रयोग;
  - (ii) उपर उल्लिखित कार्य, वायुयान को अभिगृहीत करने या उस पर नियंत्रण करने की दृष्टि से करना;
  - (iii) उक्त कार्य उड़ान में वायुयान के फलक पर किए गए होने चाहिए;
  - (iv) उस व्यक्ति का सह-अपराधी, जो उपर उल्लिखित कार्य करता है, या करने का प्रयत्न करता है, भी भगा हो जाने के अपराध का दोषी है।

ऊपर उल्लिखित आवश्यक तत्व वैसे ही हैं, जो टोकियो अभिसमय, 1963 के अनुच्छेद 11 में उल्लिखित हैं। हेग अभिसमय, 1970 में एकमात्र नई बात यह है कि इसमें उस व्यक्तिके, जो ऐसा कोई कार्य करता है या करने का प्रयत्न करता है, सह-अपराधी को समिलित किया गया है।

मांट्रियाल अभियान, 1971

10.20 आई० सी० ए० ओ० द्वारा 8 से 23 सितम्बर, 1971 तक माटियाल में एक सम्मेलन बुलाया गया था। इस सम्मेलन के परिणामस्वरूप, एक अभिसमय (सिविल विमानन, सुरक्षा विधिविरुद्ध कार्यवद्मन माटियाल अभिसमय, 1971 के नाम से जार) अंग्रीकार किया गया था। माटियाल अभिसमय का अनुच्छेद 1 यह उपबंध करता है यदि वह लिपिविरुद्धता और अव्यवहार

(क) किसी वायुयान के फलक पर किसी व्यक्ति के विरुद्ध द्विसा का कोई कार्य करता है, यदि वह कार्य उस वायुयान की सुरक्षा को खतरे में डालने के लिए संभाव्य है:

(ख) सेवा में किसी वायुयान को नष्ट करता है या ऐसे वायुयान को नुकसान करित करता है, जो उसे उड़ान के लिए अक्षम बना देती है, या उड़ान में उसकी सुरक्षा को खतरे में डालना संभव्य है: या

(ग) सेवा में किसी वायुयान पर, किसी साधन द्वारा, वह चाहे जो हो, कोई युक्ति या पदार्थ रखता है या रखा जाना कारित करता है, जिससे उस वायुयान का नष्ट होना संभाव्य है या ऐसा नुकसान कारित होता है, जो उसे उड़ान के लिए अक्षम बना देती है या वायु नैवदन प्रसुविधाओं को नुकसान कारित करती है या उस प्रचालन में हस्तक्षेप करती है, यदि कोई कार्य उड़ान में सुरक्षा या वायुयान को खतरे में डालने के लिए संभाव्य है: या

(घ) वायु नौवहन प्रस्तुविधाओं को नष्ट करता है या नुकसान पहुंचाता है या उस के प्रचालन में दस्तक्षेप करता है, यदि ऐसा कार्य उड़ान में सुरक्षा या वायुयान को खतरे में डालने के लिए संभाव्य है: या

(ड) ऐसी जानकारी संसूचित करता है, जिसे वह जानता है कि मिथ्या है और उसके द्वारा उड़ान में किसी वायुयान की सुरक्षा को खतरे में डालता है।

इसके अतिरिक्त, यह और उपबंध है कि कोई व्यक्ति तभी अपराध करता है यदि वह उपर उल्लिखित अपराधों में से कोई अपराध करने का प्रयत्न करता है या यदि वह ऐसे व्यक्ति का सह अपराधी है, जो ऐसा कोई कार्य करता है या करने का प्रयत्न करता है।

निःसंवेद, इस अभिसमय के अनुच्छेद 1 के अधीन भाग ले जाने के अपराध की संकल्पना को और व्यापक बनाया गया था। इस अभिसमय के अधीन राज्य पक्षकारों को यह वचनबद्ध करता है कि वे भाग ले जाने वालों को भयोपकारी दंड देने का उपबंध करेंगे। अन्य उपबंध वैसी ही है, जो हेंग अभिसमय में हैं। यह कहना गलत नहीं होगा कि यह हेंग अभिसमय का साधारण मात्र है। वस्तुतः, यदि मांटियाल समय के उपबंधों को, एक हेंग अभिसमय के प्रोटोकाल के रूप में अंगीकार किया होता तो अधिक बेहतर होता।

भगा ले जाने के अपराध के संबंध में सार्वभौमिक अधिकारिता का सिद्धांत

10.21 जलदृश्यता के अपराध के संबंध में, सार्वभौमिक अधिकारिता का सिद्धांत विश्व स्तर पर मान्यताप्राप्त है, इसे भगा ले जाने का साधारणत: वायु जलदृश्यता के रूप में वर्णित किया जाता है। इसलिए, सार्वभौमिक अधिकारिता का सिद्धांत भगा ले जाने के अपराध के संबंध में लागू होना चाहिए। किसी अपराध के संबंध में सार्वभौमिक अधिकारिता से यह अभिप्रेत है कि अपराध अंतरराष्ट्रीय

समुदाय के हितों के विरुद्ध हुआ है और ऐसे अपराध का दमन करने के लिए सभी राज्य, अपराध के संबंध में अधिकारिता का प्रयोग कर सकते हैं। भगा ले जाने के संबंध में हेग अभिसमय, 1970, सभी राज्यों को पर्याप्त सीमा तक सार्वभौमिक अधिकारिता का प्रदान करने की दिशा में काफी आगे बढ़ गए हैं। यदि कोई अपराधी या अभिकथित अपराधी, किसी राज्य के राज्यक्षेत्र के भीतर है, तो उसे अभिरक्षा में लेने के लिए, और यदि वह प्रत्यर्पित नहीं किया जाता है, तो उसका मामला अभियोज्य प्राधिकारियों के समक्ष रखे जाने के लिए दोनों अभिसमयों में कठिनपय उपबंध है।

यद्यपि, दोनों में से कोई, अभिसमय प्रत्यर्पित करने के कर्तव्य का या अभियोजित करने के अपरिवृत्त कर्तव्य का सूजन नहीं करता है, इस पर भी प्राधिकारी उसी रीति से अपने विनिश्चय करने के कर्तव्याधीन हैं, जैसे उस राज्य की विधि के अधीन किसी साधारण अपराध या गंभीर प्रकृति के अपराध की दशा में करते हैं। यदि विनिश्चय सकारात्मक है, तो उपर उल्लिखित सार्वभौमिक अधिकारिता संबंधी खंड यह सुनिश्चित करता है कि न्यायालय मामले को सुनने के लिए सक्षम होगे।

### अंतरराष्ट्रीय दंड न्यायालय की स्थापना के लिए प्रस्ताव

10.22 अंतरराष्ट्रीय दंड न्यायालय को स्थापित करने का विचार नहीं है। इस विषय पर प्रथम विश्वयुद्ध की समाप्ति से अब तक काफी चर्चा की जा चुकी है। इस तथ्य के कारण इसने प्रायिक रूप ले लिया है कि हेग अभिसमय, 1970 में राजनैतिक पक्ष पर्याप्त रूप से विनियमित नहीं किए गए हैं। 14 सितंबर, 1970 को, संयुक्त राष्ट्र के तत्कालीन महासचिव ने यह प्रस्ताव किया था कि भगा ले जाने वालों को विचारण के लिए अन्तरराष्ट्रीय अधिकरण के समक्ष लाया जाना चाहिए। उनके विचार से, प्रस्तावित अंतरराष्ट्रीय अधिकरण सभी लोगों और राज्यों के हितों की प्रतिरक्षा करेगा और यदि सरकारें भगा ले वालों को अधिकरण के समक्ष लाए जाने के लिए वचन दें तो यह प्रभावी होगा कि अंतरराष्ट्रीय दंड न्यायालय को स्थापित करने के लिए कारणों में से एक कारण यह है कि यदकिं दाराष्ट्रीय न्यायालय के किसी अंतरराष्ट्रीय अपचारी को दंडित कर पाना कठिन होगा।

इस संबंध में, निम्नलिखित तीन प्रकार के प्रस्ताव किए गए हैं:-

- (1) संयुक्त राष्ट्र द्वारा प्रशासनिक एक पृथक न्यायालय,
- (2) अंतरराष्ट्रीय न्यायालय की एक विशेष पीठ, या
- (3) अंतरराष्ट्रीय अभिसमयों द्वारा एक न्यायालय।

किन्तु, चूंकि अभी भी अनेक राज्य भगा ले जाने वालों के विरुद्ध कठोर उपाय करने के लिए, तैयार प्रतीत नहीं होते हैं तथा अंतरराष्ट्रीय संबंधों और कार्यों की वर्तमान स्थिति को देखते हुए, सभी यात्रियों और उनके सामान की पूरी तरह तलाशी वाले निवारक उपाय, भगा ले जाने की घटनाओं को निवारित करने अथवा कम से कम उन्हें कम करने का सर्वोत्तम साधन गठित करते हैं।

### भगा ले जाने वालों की प्रत्यर्पण की समस्याएं

10.23 विद्यमान विधि में एक और कमी, भगा ले जाने वालों के प्रत्यर्पण के संबंध में है। अभिकथित अपराधियों का प्रत्यर्पण केवल तभी आबद्ध कर है जब उस आशय की कोई संधि हो। इसके अतिरिक्त, कुछ प्रत्यर्पण संधियों में भगा ले जाना प्रत्यर्पण अपराध के रूप में सम्मिलित नहीं है। प्रायः प्रत्यर्पण संधियां यह भी उपबंध करती हैं कि राज्य अपने निजी राष्ट्रीयों को या ऐसे व्यक्तियों को जिन्होंने राजनीतिक प्रकृति के अपराध किए हों, प्रत्यर्पित करने की बाध्यता के अधीन नहीं है और राज्यों की ऐसे भगा ले जाने वालों को प्रत्यर्पित करने में अदिनच्छा, जिन्होंने राजनीतिक देनुओं के लिए कार्य किया है, अवबोध योग्य है, किसी वायुयान को भगा ले जाना मात्र ही प्रायः वह सार्व रह जाता है जिसमें कोई व्यष्टिक उस देश से भगा कर निकल सकता है जहां उसका राजनीतिक सामाजिक या धार्मिक उत्पीड़न होगा कि अन्य राज्यों से उसे उस देश में वापस भेजने की अपेक्षा की जाए जहां वह ऐसा उत्पीड़न भुगतता है किन्तु जब तक ऐसा व्यष्टि दंडित नहीं किया जाता यह खतरा रहता है कि कुछ कम समय देनु वाले अन्य व्यक्ति भी उसका अनुसरण करने के लिए क्षुध होंगे। अतः, यह खंड का विषय है कि हेग और मार्टियल अभिसमय उन राज्यों से ऐसे भगा ले जाने वालों को अभियोजित करने की अपेक्षा नहीं करते जो प्रत्यर्पित नहीं किए जाते हैं।

जहां तक उन राज्यों के विरुद्ध कार्यवाही का संबंध है जो प्रत्यर्पित या अभियोजित करने से इंकार करते हैं वहां यह सुझाव दिया जा सकता है कि शिकायों अभिसमय में संशोधन किया जाए जिसने ए सी ए ओ के परिषद को ऐसे सदस्य राज्यों को राज्यों से या आई सी ए ओ से सभी सेवाओं के निलंबन का आदेश करने के लिए संशक्त किया था जो भगा ले जाने वालों को प्रत्यर्पित करने या अभियोजित करने से इंकार करते हैं, यह सदस्य राज्यों के बीच पहले की गई वायु सेवा संधियों पर अभिभावी होगा। यदि सदस्यों राज्यों को ऐसा संशोधन स्वीकार करने और आई सी ए ओ के सदस्य न बने रहने के बीच चुनाव करने के लिए बाध्य किया गया तो वे संभवतः संशोधन को स्वीकार करेंगे व्योकि वे आई सी ई ओ की सदस्यता के फायदा को होना पसंद नहीं करेंगे। दुर्भायपूर्ण यह कि ऐसा संशोधन जब उसे 1973 में आई सी ए ओ सभा में प्रस्तुत किया गया तो अंगीकार नहीं किया जा सका क्योंकि यह अपेक्षित 67.

मत प्राप्त कर पाने में असफल रहा। इसे केवल 65 मत अर्थात् अपेक्षित संख्या से अधिक केवल 2 कम मत मिल सके।

### प्रत्यर्पण और भारतीय विधि

10.24 भारत में, प्रत्यर्पण अधिनियम, 1962 विद्यमान है। यह अधिनियम अन्य राज्यों के साथ प्रत्यर्पण संविस्तर करता है यदि वह राज्य अपराध में, जिसके अंतर्गत वायुयान भगा ले जाने का अपराध है, अभियुक्त के प्रत्यर्पण का उपबंध करता है।

इसके अतिरिक्त, यानहरण निवारण अधिनियम, 1962 की धारा 2(2) यह उपबंध करती है कि इस अधिनियम के अधीन अपराधों को प्रत्यर्पण अधिनियम, 1962 के लागू किए जाने के प्रयोजनों के लिए, ऐसे वायुयान के बारे में, जो किसी कन्वेशन देश में अधिस्ट्रीकृत है, किसी भी समय जब वह वायुयान उड़ानरत है, यह समझा जाएगा कि वह उस की देश अधिकारिता के भीतर है चाहे वह तस्मय किसी अन्य देश की अधिकारिता के भीतर हो या न हो।

10.25 उपर्युक्त विचार-विमर्श के प्रकाश में ऐसा प्रतीत होता है कि सिविल विमानन का अंतरराष्ट्रीय न्यायालय होना तात्कालिक आवश्यक है। प्रस्तावित न्यायालय वायुयान भगा ले जाने, वायु सेवा में रिट्रिट के ऐसे अपराधों को निपटाएगा जहां अधिकारिता दो या अधिक देशों में उत्पन्न होगी। विधि आयोग यह जानता है कि अंतरराष्ट्रीय विधि में संधे सिफारिश करना उसकी अधिकारिता के भीतर नहीं है फिर भी, यह सिफारिश प्रासारिक रूप से और अंतरराष्ट्रीय सिविल विमानन के अपराध को निवारित करने के हित में की जा रही। इसलिए, भारत सरकार से यह आशा की जाती है कि वह जैसे और जब संभव हो यह सिफारिश अंतरराष्ट्रीय शिष्टाचार के साथ प्रस्तुत करेगा।

### यान, आदि को भगा ले जाना

10.26 गत कुछ समय से देश के विभिन्न भागों में यान भगा ले जाने के अपराध में वृद्धि हुई है आतंकवादी जैसे बदमाशों द्वारा कमी-कमी यात्री यान को दूर तक ले जाने से कानून और व्यवस्था के प्रशासन के लिए समस्याएं उत्पन्न हो गई हैं।

10.27 इस संबंध में, यह प्रस्तावित है कि इस समस्या को सुलझाने के लिए भारतीय दंड संदित्त में संशोधन अपेक्षित है। यद्यपि, भारतीय दंड संदित्त का अध्याय 17 "सम्पत्ति के विरुद्ध अपराध" सम्पत्ति के विरुद्ध अपराध से संबंधित है किन्तु यानों को भगा ले जाने से संबंधित नहीं है जैसा कि यानों को भगा ले जाने की देश में यानों को स्वामित्व लेने का देतु नहीं है। भगा ले जाने में, साधारणतया, आतंक, निष्क्रितिधन की मांग, प्रति सौदेबाजी करके देतु किया जाता है। किन्तु दूसरे शब्दों में, भारतीय दंड संदित्त के अध्याय 17 में, एकमात्र देतु अंतरः स्वामित्व के प्रयोजन के लिए सम्पत्ति को लेना है। यदि यानों को भगा ले जाने के लिए अपराधी इस अध्याय और साथ ही भारतीय दंड संदित्त की धारा 362 के अधीन निवारित किये जाएं जो यान में या यान के बाहर किसी व्यक्ति के अपहरण के संबंध में है तो अभियोजन को आपराधिक मनःस्थिति सावित करने में समस्या का समान करना पड़ सकता है। दूसरी समस्या अपराध के पीछे वास्तविक दल को दंडित करने में हो सकती है।

इस सिद्धांत की स्थापना की किसी अपराध में मानसिकता भली ही वस्तुपरक हो, उद्देश्य होना चाहिए, अब कुछ शताब्दी पुरानी हो गई है। इस सिद्धांत के उद्भव की खोज करने में रूसल ने अपनी "क्राइम" (ग्राहवा संस्करण पृष्ठ 23) में कहा: इस नई संकल्पना की किसी प्रसिद्ध अपराध को किया जाए, किसी व्यक्ति को दें तब तक अन्तर्गत नहीं करना चाहिए जब तक कि इसके अतिरिक्त, उसे नैतिक रूप से निर्देशीय न समझा जा सके, सुविष्यात इस आदर्श कथन के रूप में प्रकाश में आई "केवल कार्य किसी ओपराध नहीं बनाता यदि उसका मन ही अपराधी न हो" इस आदेश कथन का अर्थ यह है कि कोई कार्य किसी व्यक्ति को दोषी नहीं बनाता जब तक कि उसका आशय दोषपूर्ण न हो, आपराधिक वायित्व के नैतिक परीक्षण को प्रस्तुत करता है जो विधि में चिरकालिक है क्योंकि कामन ला में किसी अपराध के लिए किसी व्यक्ति को तब तक सिद्धांत नहीं ठहराया जा सकता जब तक कि शारीरिक और मानसिक दोनों, तत्व अपराध में उपस्थित न हों।

### कानूनी अपराध

10.28 आपर

यथापि, यह सत्य है कि केवल कार्य किसी को अपराधी नहीं बनाता है यदि उसका मन भी अपराधी न हो तांडिक विधि का एक आधारभूत सिद्धांत है, फिर भी, विधान-मंडल ऐसे अपराध का सूजन कर सकती है जिसमें एकमात्र कार्य का किया जाना अंतर्गत हो। कार्य करने वाले व्यक्ति का आशय या उसकी मनःस्थिति चाहे जो हो, अपराधिक किसी अपराध का संघटक मात्र है या नहीं, प्रत्येक मामले में किसी विशिष्ट अधिनियमिति के शब्दों पर निर्भर करना चाहिए। प्रिया काउंसेल ने श्रीनिवास मल के मामले में यह संप्रेक्षण किया कि ऐसे अपराधों का सीमित वर्ग जो प्रायिकतः सापेक्षतः लघु प्रकृति के होते हैं, अपराध, बिना देवी मन के किया जा सकता है। इस वर्ग को साधारणतः विधि निषेध के कारण दोषपूर्ण कार्य कहा जाता है, और प्रतिषेध जनसाधारण की संरक्षा के लिए या साधारण भलाई के संवर्धन के लिए आशयित है और इसलिए अपराध के आवश्यक संघटक के रूप में अपराधिक मनःस्थिति पर तब तक जोर नहीं दिया जाता जब तक कि विधान-मंडल द्वारा अभिव्यक्त शब्दों में व्यक्ति न किया गया हो। तथापि, जहाँ तक भारतीय दंड संहिता का संबंध है इसके अधीन प्रत्येक अपराध में वस्तुतः अपराधिक आशय अधिकार आपराधिक मनःस्थिति का विचार सम्मिलित है। आशय मन की उन सभी विधियों का होतक है जिन्हें प्रश्नात् अपराध का सूजन करने वाला परिनियम इसलिए आवश्यक समझता है कि अभियुक्त स्वर्ण में दोष को नियन्त करने की विधि में हो।

कहने की आवश्यकता नहीं कि अपराध का गठन करने के लिए कार्य के साथ, कठिपय कानूनी अपराधों की दशा के सिवाय, सेवा अपराधिक आशय या ऐसी उपेक्षा या कर्तव्य के प्रति उदासीनता या ऐसे परिणामिक कार्य हों, जो विधि द्वारा अपराधिक आशय के तुल्य माने जाते हैं। तथापि, आशय सकारात्मक सबूत होने में समर्थ नहीं है। यह केवल अपराधिक कार्यों से ही उपलक्षित हो सकता है। साधारण नियम के रूप में प्रत्येक स्वस्थ्य व्यक्ति से उसके कार्यों के आवश्यक या स्वाभाविक और संभाव्य परिणामों का आशय रखने की उपधारण की जाती है और विधि की यह उपधारण तब तक प्रचलन में रहेगी जब तक कि न्यायालय सभी साक्षों पर विचार करने के पश्चात् इस युक्तियुक्त आशंका को स्वीकार नहीं कर लेता कि ऐसा आशय विद्यमान नहीं था। तथापि, यह उपधारण निश्चायक नहीं है और स्वर्ण में दोषसिद्ध उचित ठहराने के लिए पर्याप्त नहीं है और इसे अन्य साक्ष्य द्वारा अनुप्रूपित होना चाहिए।

10.29 गुरुत्व इतनी है कि इसे चौटी के रूप में छोड़ा नहीं जा सकता, इसलिए इसे एक पृथक अपराध बनाया जाने की तत्काल आवश्यकता है। इसलिए शंकाओं से बचने के लिए, यान को भगा ले जाने, आदि के अपराध को भारतीय दंड संहिता में शामिल करने की सिफारिश की जाती है। इस अपराध को “कानूनी अपराध” बनाने से सभी विरोधाभास (जैसे उक्त अपराध अध्याय 17 के अंतर्गत आता है या नहीं) समाप्त हो जाएंगे।

10.30 उपर्युक्त के परिप्रेक्ष्य में, यह सिफारिश की जाती है कि—

I. भारतीय दंड संहिता (संशोधन) विधेयक, 1978 (खंड 149) में यथा उल्लिखित धारा 362 (क) (1) का लोप दिया जा सकता है किन्तु खंड (2) को भारतीय दंड संहिता में निम्नवत अंतःस्थापित किया जा सकता है।

धारा 362क. भारत में किसी यान या भारत में रजिस्टीकृत किसी यान पर जो कोई विधि विरुद्धता, बलपूर्वक या बल दिखाकर या उसकी धमकी देकर अधिवा किसी अन्य प्रकार के अभित्रास से ऐसे यान को किसी ऐसे स्थान पर जो गंतव्य स्थान से भिन्न है ले जाने के प्रयोजन के लिए अधिवा किसी अन्य प्रयोजन के लिए अभिगृहीत करेगा या नियंत्रण का प्रयोग करेगा अथवा अभिगृहीत करने या नियंत्रण का प्रयोग करने का प्रयत्न करेगा उसके बारे में यह कहा जाएगा कि उसने भगाकर ले जाने का अपराध किया है और जो कोई भगाकर ले जाएगा वह कठिन कारावास से जिसकी अवधि दस वर्ष तक की हो सकेगी दंडित किया जाएगा और जुमनि का भी तायी होगा।

स्पष्टीकरण—इस धारा में—

(i) “यान” के अंतर्गत कोई जलयान भी है किन्तु वायुयान उसके अंतर्गत नहीं है।

II. भारतीय दंड संहिता (संशोधन) विधेयक, 1978 की धारा 432 (खंड 179) को छोड़ा जा सकता है।

III. ऊपर उल्लिखित स्पष्टीकरण में, “डेलीकाप्टर, एयर ग्लाइडर आदि” शब्द अंतःस्थापित किए जा सकते हैं। यह निम्नवत होगी:—

(i) यान के अंतर्गत कोई जलयान जिसमें डेलीकाप्टर या एयर ग्लाइडर आदि है, भी हैं किन्तु वायुयान उसके अंतर्गत नहीं है।

या

“डेलीकाप्टर, एयर ग्लाइडर आदि” शब्द यान द्वारा निवारण अधिनियम, 1982 की धारा 2क और साथ ही सिविल विमान सुरक्षा विधिविरुद्ध कार्यदमन अधिनियम, 1982 में भी अंतःस्थापित किए जा सकते हैं।

IV. यदि आवश्यकता हो तो ऊपर उल्लिखित विशेष विधानों में आवश्यक परिवर्तन किए जा सकते हैं।

## अध्याय 11

### दस्तावेज—इसकी परिभाषा का विस्तार

धारा 463 “कूटरचना” शब्द को परिभाषित करती है। यह धारा उपबंध करती है कि जो कोई किसी मिथ्या दस्तावेज या दस्तावेज के किसी भाग को इस आशय से रचता है कि लोक को या किसी व्यक्ति को नुकसान या क्षति कारित की जाए, या किसी दावे या फक का समर्थन किए जाए, या कारित किया जाए कि कोई व्यक्ति संपत्ति अलग करे या कोई अभिव्यक्त या विवक्षित संविदा करे या इस आशय से रचता है कपट करे, या कपट किया जा सके, वह कूट करता है। धारा 464 मिथ्या दस्तावेज की रचना को परिभाषित करती है और उन विभिन्न स्थितियों को बतलाती है जब किसी व्यक्ति को यह कहा जा सकता है कि वह मिथ्या दस्तावेज की रचना करता है। कंप्यूटर के क्षेत्र में नवीनतम वैज्ञानिक उपलब्धियों को देखते हुए और किसी दस्तावेज की प्रतिलिपि की कूटरचना के संदर्भ में आयी दाविद अभियोजन के दायित्व से बचने के लिए पिछली क्षति या कपट को छिपाने के लिए किसी दस्तावेज की कूटरचना की विवक्षाओं को देखते हुए आयोग “दस्तावेज” शब्द के विस्तार की ओर परीक्षा करने का प्रस्ताव करता है।

11.02. कम्प्यूटरों के प्रयोग से कपट किया जाना—इलैक्ट्रॉनिक विकास के साथ-साथ अनेक संव्यवहार कंप्यूटरों के माध्यम से किए जाते हैं। नई दिल्ली नगरपालिक परिषद में कपट का द्वाल ही में हुआ घोटाला कम्प्यूटरों के प्रयोग के माध्यम से बिजली के बिलों में कम्प्यूटर कपट का एक दृष्टित है।

कम्प्यूटर अपराध का शीर्षक द्वाल में ही स्काटिश ला कमीशन की रिपोर्ट का एक विषय बन गया है इस संबंध में स्काटिश ला कमीशन ने व्यवहार के विशिष्ट रूपों का अभिज्ञान किया है जब कि इंगलिश प्रतिपक्षी ने पांच मुख्य शीर्षक विनिर्दिष्ट किए हैं। तथापि, दोनों दशाओं में तीन निर्णयक मुद्रे सामने आते हैं, अर्थात्—

- (i) विधिविरुद्ध वित्तीय फायदा या आंकड़ों में अपराधीकृत संशोधन या उसका हटाया जाना सुनिश्चित करने की स्कीम में कम्प्यूटर की अंतर्गत होता; (ii) कम्प्यूटर प्रणाली का अनधिकृत प्रयोग या उसमें रखे गए आंकड़ों तक अनधिकृत पहुंच सुनिश्चित करना और (iii) जानकारी की चोरी।

आटी कमीशन (यूके) (i) ने, कम्प्यूटर कपट और दुरुपयोग का त्रैवार्षिक सर्वेक्षण किया है। कमीशन 1984-87 तक के अपने सर्वेक्षण में, इंगलैड और वेल्स के भीतर कपट की कुल 118 घटनाओं को खोज पाने में सफल हुआ था जिनमें कुल दानि 2.5 मिलियन पौंड से कुछ अधिक थी। यह भी अभियान किया गया है कि समाशोधन बैंकों ने, कम्प्यूटर कपट से होने वाली दानि को पूरा करने के लिए 85 मिलियन पौंड की राशि अलग रख ली है। आटी कमीशन (यूके) को यह और पता लगा कि कम्प्यूटर कपट की संकल्पना का विस्तार गतिविधियों के व्यापक परिधि तक है जो जटिल मल्टीमिलियन पौंड कपट से लेकर बैंक के आटोमैटिक ट्रेलर मशीनों के दुरुपयोग तक फैला हुआ है।

इसलिए कम्प्यूटर कपटों को भारतीय दंड संहिता के अध्याय 18 के कार्यक्षेत्र के भीतर सुनिश्चित रूप से, “दस्तावेज” शब्द का विस्तार करके शीघ्र लाना आवश्यक है जो दस्तावेजों से संबंधित अपराधों के विषय में है।

11.03. “दस्तावेज” शब्द की परिभाषा भारतीय दंड संहिता की धारा 29 में निम्न प्रकार से दी गई है:—

“29. दस्तावेज—शब्द किसी भी विषय का घोतक है जिसको किसी पदार्थ पर अक्षरों, अंकों या चिह्नों के साधन द्वारा, या उनसे एक से अधिक साधनों द्वारा अभिव्यक्त या वर्णित किया गया हो जो उस विषय के साक्ष्य के रूप में उपयोग किए जाने के लिए आशयित हो या उपयोग किया जा सके।

स्पष्टीकरण—1. यह तत्वजीवन है कि किस साधन द्वारा या किस पदार्थ पर अक्षर, अंक या चिह्न बनाए गए हैं, या यह कि साक्ष्य किसी न्यायालय के लिए आशयित हो या नहीं, या उसमें उपयोग किया जा सकता है या नहीं।

#### दृष्टित

किसी संविदा के निर्धनों को अभिव्यक्त करने वाला लेख, जो उस संविदा के साक्ष्य के रूप में उपयोग किया जा सके, दस्तावेज है। बैंककार पर दिया गया चैक दस्तावेज है। मुख्यालनामा दस्तावेज है। मानचित्र या रेखांक, जिसको साक्ष्य के रूप में उपयोग में लाने का आशय हो या जो उपयोग में लाया जा सके, दस्तावेज है। जिस लेख में निर्देश या अनुदेश अंतर्विष्ट हों, वह दस्तावेज है।

स्पष्टीकरण—2. अक्षरों, अंकों या चिह्नों से जो कुछ भी वर्णित या अन्य प्रथा के अनुसार व्य

## दृष्टांत

के एक विनिमयपत्र की पीठ पर, जो उसके आदेश के अनुसार देय है, अपना नाम लिख देता है। वाणिज्यिक प्रणा के अनुसार व्याख्या करने पर इस पृष्ठांकन का अर्थ है कि धारक को विनिमयपत्र का भुगतान कर दिया जाए। पृष्ठांकन दस्तावेज है और इसका अर्थ उसी प्रकार से लगाया जाना चाहिए मानो हस्ताक्षर के उपर “धारक को भुगतान करो” शब्द का प्रभाव रखने वाले शब्द लिख दिए गए हों।

स्पष्ट रूप से यह परिभाषा यद्यपि व्यापक प्रकृति की है किंतु भी हाल में हुए इलैक्ट्रानिक विकास को देखते हुए, स्पष्टतः एक उपर्युक्त अंतर्विष्ट किया जाना आवश्यक है। विधि आयोग ने अपनी 42वीं रिपोर्ट के पैरा 2.56 में यह संप्रेक्षण किया था कि:

“2.56. इन सभी तीनों अधिनियमों में मुख्य विचार एक ही है और उस “विषय” पर लोर दिया गया है जो अभिलिखित किया गया है और उस उपादान पर नहीं, जिस पर विषय अभिलिखित है। कुल मिलाकर हम यह महसूस करते हैं कि दंड संहिता में “दस्तावेज” शब्द की उसके अपने प्रयोजन के लिए परिभाषा होनी चाहिए और धारा 29 के साथ बनाए रखनी चाहिए।

धारा 29 के साथ दिए गए दो दृष्टांत हम समझते हैं, कि सहायक है। पहला दृष्टांत धारा में प्रयुक्त “साक्ष्य” शब्द के अर्थ की अस्पष्टता को स्पष्ट करने में सहायक है और यदि न्यायालयों के विचार के अनुसार है।

11.04. यह ध्यान देने योग्य है कि फोरजरी एंड काउंटर फीटिंग ऐक्ट, 1881 (यू० के०) की धारा 8(1) में “लिखित” शब्द से निम्नलिखित अभिप्रेत है:—

“.....इस अधिनियम के इस भाग में लिखा से अभिप्रेत है.....

- (क) कोई दस्तावेज, चाहे वह औपचारिक प्रकृति का या अनौपचारिक प्रकृति का;
- (ख) डाकघर द्वारा निर्गत या विक्रीत कोई स्टांप;
- (ग) कोई अन्तर्राष्ट्रीय राजस्व स्टांप, और
- (घ) कोई फिल्म, टेप साउंड ट्रैक या अन्य युक्ति जिसपर या जिसमें किसी यांत्रिक, इलैक्ट्रानिक या अन्य साधन द्वारा जानकारी अभिलिखित या भंडारित की जाती है।”

फ्रांड (2) में एरलिज एंड पेरी ने भाग-5-102 में यह संप्रेक्षण किया है:

“विशिष्टतया, यह कहा जाता है कि धारा 8(1) (घ) में प्रयुक्त “कोई युक्ति जिस पर या जिसमें यांत्रिक इलैक्ट्रानिक या अन्य साधन द्वारा यह जानकारी अभिलिखित या भंडारित की जाती है” शब्दों में किसी पेमेंट कोई कार्ड पर मैग्नेटिक स्ट्राइप भी सम्मिलित है। स्टाइक स्पष्टतः एक ऐसी युक्ति है जिस पर किसी धारक के खाते के बारे में कूटकूट जानकारी अभिलिखित और भंडारित की जाती है। स्मार्ट कार्ड पर प्रयुक्त इलैक्ट्रानिक चिप को भी नहीं लागू होना चाहिए। अतः यह कहा जा सकता है कि जानकारी कार्ड पर भी भंडारित है किन्तु क्या कार्ड एक “युक्ति” है। प्रस्तुत है कि यदि यह धारा 8(1) (घ) के अंतर्गत “दस्तावेज” नहीं है तो स्पष्ट है कि चैक कार्ड और क्रेडिट कार्ड कम से कम लिखतों के तुल्य होने के लिए आशयित हैं क्योंकि उन्हें अभिव्यक्त रूप से लिखतों के विशेष प्रवर्ग में शामिल किया गया है जिनको कब्जे में रखना अपराध हो सकता है। पेमेंट कार्ड के अन्य रूप इस प्रकार शामिल नहीं हैं किन्तु यह आशयजनक होगा कि क्रेडिट कार्ड लिखत हो और डेबिट कार्ड लिखत हों।”

11.05. अन्य विधानों में “दस्तावेज” की परिभाषा का सर्वेक्षण करना बहुत उपयोगी होगा। ब्लैक की ला डिक्शनरी (3) के अनुसार दस्तावेज से अभिप्रेत है—

“ऐसी लिखत जिसको अक्षरों, अंकों या चिह्नों के साधन द्वारा ऐसे विषय के रूप में अभिलिखित किया गया हो जिसे साक्ष्य के रूप में प्रयोग किया जा सकता हो। इस अर्थ में दस्तावेज शब्द लेखों, सुद्धित, शिला मुद्रित या छायाकृत शब्दों, मुद्राओं, हल्कों या प्रस्तरों जिन पर अभिलेख कारे या उत्कीर्णत किए जाते हैं, छायाचित्रों और चित्रों, मानचित्रों या रेखांकों को लागू हो सकता है। अभिलेखों, प्रस्तर या रत्न पर हो सकते हैं या काष्ठ और साथ ही कागज या चम्पत्रों पर हो सकते हैं।”

भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1972 की धारा 3 के अधीन “दस्तावेज” से ऐसा कोई विषय अभिप्रेत है जिसको किसी पदार्थ पर अक्षरों, अंकों या चिह्नों के साधन द्वारा या उनमें से एक से अधिक साधनों द्वारा अभिव्यक्त या वर्णित किया गया है जो उस विषय के अभिलेखन के प्रयोजन से उपयोग किए जाने के लिए आशयित हो या उपयोग किया जा सके।

## दृष्टांत

लेख दस्तावेज है;

मुद्रित, शिला मुद्रित या फोटोचित्रित शब्द दस्तावेज है;

मानचित्र या रेखांक दस्तावेज है;

आदुपट्ट या शिला पर उत्कीर्ण लेख दस्तावेज है;

उपहासंक दस्तावेज है।

सिविल एविंडंस ऐक्ट, 1968 (यू० के०) की धारा 10(1) के अधीन “दस्तावेज” शब्द निम्नवत परिभाषित है:—

“दस्तावेज” एक लिखित कागज या बैसा ही कुछ जिसे साक्ष्य के रूप में रखा जा सके।

“दस्तावेज” में लिखित रूप में दस्तावेज के अतिरिक्त निम्नलिखित सम्मिलित है:—

(क) कोई मानचित्र, रेखांक, रेखाचित्र या आरेखण;

(ख) कोई छायाचित्र;

(ग) कोई डिस्क, टेप, साउंड ट्रैप या अन्य युक्ति जिसमें ध्वनि या अन्य आंकड़े (दृश्य प्रतिमाएं नहीं) इस प्रकार सनिविष्ट हैं कि वे उससे (किसी अन्य उपस्कर की सहायता सहित या उसके बिना) पुनः उत्पन्न किए जाने में सक्षम हों, और

(घ) कोई फिल्म, नेगेटिव ट्रैप या अन्य युक्ति जिसमें एक या अधिक दृश्य प्रतिमाएं इस प्रकार सनिविष्ट हैं कि उनसे उसे (यथा पूर्वोक्त) पुनः उत्पन्न किया जा सके।

कंपनी संशोधन विधेयक, 1996 के खंड II के अधीन, कंपनी अधिनियम, 1956 में निम्नलिखित धारा अंतःस्थापित करने का प्रस्ताव किया गया था।

“610 क. (1) तत्समय प्रवृत्त किसी अन्य विधि में अंतर्विष्ट किसी भारत के होते हुए भी—

(क) किसी दस्तावेज की माइक्रो फिल्म या ऐसी माइक्रो फिल्में सन्निविष्ट प्रतिमा या प्रतिमाओं की (चाहे बढ़ाया गया हो या नहीं) पुनः प्रस्तुति, या

(ख) .....

(ग) किसी दस्तावेज में अंतर्विष्ट और किसी कम्प्यूटर द्वारा पुनः प्रस्तुत मुद्रित प्रति में सम्मिलित कोई कथन (जिसे इसमें इसके पश्चात कम्प्यूटर प्रिंट आडट कहा गया है) यदि उपधारा (2) में उलिखित शर्तें पूरी हो जाती हैं; इस अधिनियम के प्रयोजनों के लिए एक दस्तावेज भी समझा जाएगा.....

(2) किसी कम्प्यूटर प्रिंट आडट की बाबत उपधारा (2) में निर्दिष्ट शर्तें निम्नलिखित होंगी, अर्थातः—

(क) कागज पर या कम्प्यूटर नेटवर्क, पलापी, डिस्केट मैग्नेटिक, कार्टिज ट्रैप, सी० डी० रोम या किसी अन्य कम्प्यूटर पाठ्य मिडिया पर कंपनी द्वारा पाइल की गई किन्हीं विवरणियों और दस्तावेजों से पुनः प्राप्त या उपाप्त किए गए कथन में अंतर्विष्ट जानकारी;

(ख) .....

(ग) .....

11.06. इस प्रकार यह स्पष्ट है कि इलैक्ट्रानिक के क्षेत्र में नवीनतम वैज्ञानिक छायाचित्रों को ध्यान में रखते हुए, “दस्तावेज” शब्द के विस्तार को बढ़ाने की प्रवृत्ति है। परिणामस्वरूप, कम्प्यूटरों के माध्यम से किए गए कपटों का मुकाबले करने की स्पष्ट आवश्यकता है। इससे भारतीय दृढ़ संहिता की धारा 29 के अधीन दस्तावेज शब्द को व्यापक रूप से परिभाषित करने की आवश्यकता जन्म लेती है। इस संबंध में, विधेयक के खंड 11 को निर्दिष्ट करना उचित है जो दृढ़ संहिता की धारा 28 का संशोधन करने के लिए है।

विधेयक के खंड 11 के उपर्याद (क) के अधीन यह उपर्याद है कि दृढ़ संहिता की धारा 29 में “अभिव्यक्त या वर्णित” शब्दों के स्थान पर “अभिव्यक्त या अभिलिखित” शब्द रखे जाएंगे। खंड 11 के उपर्याद के परिणामस्वरूप, भारतीय दृढ़ संहिता की धारा 29 में “अंकों और चिह्नों” शब्दों के स्थान पर “अंकों, प्रतिमाओं और चिह्नों या ध्वनियों” शब्द रखे जाएंगे।

11.07. विधि आयोग ने, अपनी 42वीं रिपोर्ट में पैरा 2.57 में, दृढ़ संहिता की धारा 29 की भाषा का कुछ परिवर्तन करने के लिए सिफारिश की थी। यह देखा गया है कि दस्तावेज शब्द संबंधित धारा 29 के अधीन परिभाषा, पृथक प्रकार के दस्तावेज को शामिल करने के लिए काफी व्यापक है। तथापि, कुछ आंशकाएं ध्यान में आई हैं कि क्या इसमें ध्वनि या प्रतिमा के यांत्रिक अभिलेख सम्मिलित हैं। आयोग ने सिफारिश की थी कि इसमें टेपरिकार्ड जैसी यांत्रिक युक्तियां, जिनका प्रायः प्रयोग किया जाता है, सम्मिलित की जानी चाहिए। आयोग ने, प्रतापसिंह कैरा (ए आई आर 1964), एस० सी० 72-86 पैरा 15) के मामले में उच्चतम न्यायालय के विनिश्चय को निर्दिष्ट किया था कि किसी ट्रैप पर अभिलिखित वार्तालाप एक अच्छा साक्ष्य है और स्पष्टतः यदि कोई व्यक्ति ट्रैपरिकार्ड

की कृतरचना करता है तो उस उसी रीति से दंडित किया जाना चाहिए जैसे मिथ्या दस्तावेज तैयार करने वाले व्यक्ति को दंडित किया जाता है। आयोग ने उसे, धारा 29 में एक दृष्टांत जोड़कर स्पष्ट करने की सिफारिश की थी। आयोग ने यह सिफारिश की थी कि धारा 29 का निम्नवत पुनरीक्षण किया जाना चाहिए।

“29. दस्तावेज—दस्तावेज शब्द किसी भी विषय का शब्दक है जिसको किसी पदार्थ पर अक्षरों, अंकों या चिह्नों के साधन द्वारा या उनसे एक या अधिक साधनों द्वारा अभिलिखित किया गया हो जो इस विषय के साक्ष्य के रूप में उपयोग किए जाने को आशयित हो या उपयोग किया जा सके।”

स्पष्टीकरण—1. यह तत्त्वज्ञान है कि किस साधन द्वारा या किस पदार्थ पर अक्षर, अंक या चिह्न बनाए गए हैं, या यह कि साक्ष्य किसी न्यायालय के लिए आशयित है या नहीं, या उसमें उपयोग किया जा सकता या नहीं।

### दृष्टांत

निम्नलिखित दस्तावेज हैं—

(क) मानचित्र या रेखांक;

(ख) व्यांचित्र;

(ग) किसी धारु, प्रस्तर या वृक्ष पर लेख;

(घ) फिल्म, टेप या अन्य युक्ति जिस पर ध्वनि या प्रतिभा अभिलिखित की जाती है।

स्पष्टीकरण—2. अक्षरों, अंकों या चिह्नों से जो कुछ भी वाणिज्यिक या अन्य प्रथा के अनुसार समझा जाता है, वह इस धारा के अर्थ के अंतर्गत अक्षरों, अंकों या चिह्नों द्वारा अभिलिखित हुआ समझा जाएगा। चाहे वह वस्तुतः अभिव्यक्त न ही किया गया हो।

### दृष्टांत

क एक विनिमय पत्र की पीठ पर, जो उसके आदेश के अनुसार देय है, अपना नाम लिख देता है। वाणिज्यिक प्रथा के अनुसार समझा गया अर्थ यह है कि धारक को विनिमय पत्र का भुगतान कर दिया जाए। पृष्ठांकन दस्तावेज है और उसका अर्थ उसी प्रकार से लगाया जाना चाहिए मानो दस्तावेज के ऊपर “धारक को भुगतान करो” शब्द या तत्प्रभाव वाले शब्द लिख दिए गए हों।”

हस प्रकार विधेयक के खंड 11 के उपखंड (क) के अधीन “अभिव्यक्त या वर्णित” शब्दों के स्थान पर, अभिव्यक्त, वर्णित या अभिलिखित शब्दों का प्रस्तावित प्रतिस्थान, दस्तावेज शब्द के विस्तार को, उसके अर्थ के अंतर्गत “अभिलिखित” किए गए किसी विषय को भी लाकर विस्तार करने के लिए आशयित है। यह तर्क दिया जा सकता है कि भारतीय दंड संहिता की धारा 29 के अधीन दस्तावेज शब्द की परिभाषा में “अभिलिखित” शब्द के अंतःस्थापन के फलस्वरूप, किसी डिस्क, टेप, साउंडट्रैक या अन्य युक्ति पर या उसमें अभिलिखित कोई विषय, जिसमें कोई जानकारी यात्रिक, इलैक्ट्रोनिक या अन्य साधनों द्वारा अभिलिखित या मंडारित की जाती है, विधेयक के खंड 11 के अनुसार “दस्तावेज” की प्रस्तावित परिभाषा की परिवर्ति के भीतर आ जाएंगे। जिस पर भी विषय दोनों पक्षों में तर्क योग्य है। तदनुसार यह परामर्श है कि “दस्तावेज” शब्द की परिभाषा, फोरजरी एंड काउंटर फिल्डिंग एवं, 1881 (यू.के.0) की धारा 8(1) (घ) के अधीन दी गई “दस्तावेज” की परिभाषा के अनुसार की जाए।

11.08. इसीलिए, भारतीय दंड संहिता की धारा 29 में यथा परिभाषित “दस्तावेज” शब्द की परिभाषा में वृद्धि की जा सकती है ताकि इसमें विनिर्दिष्ट रूप से कोई हिंस्क, टेप, साउंडट्रैक या कोई अन्य युक्ति, जिस पर या जिसमें कोई विषय यात्रिक, इलैक्ट्रोनिक या अन्य साधनों द्वारा अभिलिखित या भंडारित किया जाता है, सम्मिलित हो सकें। ये शब्द ऊपर डिम्बूत फोरजरी एंड काउंटर फिल्डिंग एवं, 1881 (यू.के.0) की धारा 8(1) (घ) में भी आते हैं। इस प्रयोजन को अभिग्राह्य करने के लिए, विधेयक के खंड 11 के अनुसार जोड़े जाने के लिए प्रस्तावित संशोधन के अंतरिक्ष, हम यह सिफारिश करते हैं कि भारतीय दंड संहिता की धारा 29 में निम्नानुसार एक नया स्पष्टीकरण भी अंतःस्थापित किया जाए।

“स्पष्टीकरण—3. “दस्तावेज” शब्द के अंतर्गत कोई डिस्क, टेप, साउंडट्रैक या अन्य युक्ति भी है जिस पर या जिसमें कोई विषय या प्रतिभा या ध्वनि, यात्रिक या अन्य साधनों द्वारा अभिलिखित या मंडारित की जाती है।”

धारा 29 में पूर्वावक्त प्रस्तावित संशोधन से, ऊपर उपदर्शित रीति के अनुसार, भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872 की धारा 3 के अधीन दस्तावेज शब्द की परिभाषा में परिणामिक संशोधन भी आवश्यक होंगे।

### पाद-टिप्पणी

- अडिट कमीशन (यू.के.0)।
- एश्लीज एंड मेरी आन प्राफ—संस्करण, अध्याय 5 पैरा 5.012।
- ब्रॉनस ला डिक्शनरी, 5वा संस्करण, पृष्ठ 432।

### अध्याय 12

#### भारतीय दंड संहिता (संशोधन) विधेयक, 1978

भारतीय दंड संहिता को गत शताब्दी के मध्य में परिनियम पुस्तक का स्थान मिला था और इसे तत्कालीन विधि आयोग द्वारा विधि है, इस प्रकार लगभग 134 वर्ष से भी अधिक पुरानी है और इसे अद्यतन बनाने का कार्य भारत के विधि आयोग द्वारा, 1969 में प्रारंभ किया गया था और आयोग ने अपनी 42वीं रिपोर्ट 1971 में प्रस्तुत की थी। सरकार ने, विधि आयोग द्वारा की सरकारीपूर्वक जांच करने के पश्चात, 1972 में एक सर्वांगीण विधेयक राज्य सभा में पुरास्थापित किया था। संयुक्त संसदीय समिति ने लगभग 4½ वर्ष तक उसकी संवीक्षा की। संसदीय समिति द्वारा अंतिम रूप दिए जाने के पश्चात यह विधेयक नवम्बर, 1978 में राज्य सभा में पारित नहीं हो पाया था। तथापि, यह लोक सभा में पारित नहीं हो पाया व्योक्ति लोक सभा 1979 में विधायित हो गई थी। किसी न किसी कारण से विधेयक पुनरास्थापित नहीं किया गया। भारत सरकार ने, फिर भी, भारतीय विधि आयोग को भारतीय दंड संहिता का व्यापक पुनरीक्षण करने और समुचित सिफारिशों देने का निर्देश दिया।

12.02 चूंकि, विधेयक के उपर्युक्त मुख्य रूप से 42वीं रिपोर्ट में की गई सिफारिशों द्वारा आधारित हैं। अतः, हम विधि आयोग की 42वीं रिपोर्ट, उसके द्वारा की गई सिफारिशों और इस बीच परिस्थितियों में हुए परिवर्तनों की जांच करने और परिवर्तन करने की आवश्यकता का अपना निजी मूल्यांकन करने तथा विधेयक के विभिन्न खंडों में, जहाँ कहीं यह आवश्यक हों, उपांतरण भी उपर्युक्त करने का प्रस्ताव करते हैं।

वर्तमान विधेयक में 151 संशोधन, 95 प्रतिस्थापन, 32 लोप और 25 अंतःस्थापन हैं। इनके अंतिरिक्ष, विद्यमान अध्याय 7 में नई धाराएं 130क से 140 प्रतिस्थापित की गई हैं तथा अध्याय 19 के अधीन विद्यमान शीर्षक “सेवा संविदाओं के आपाराधिक भंग के विषय में” के बजाय शीर्षक को “एकांता संबंधी अपराध” के रूप में परिवर्तित करके धारा 490, 491 और 492 को प्रतिस्थापित किया जाना है। इसके अंतिरिक्ष, दो नए अध्याय, अर्थात् 5ख और 18क अंतःस्थापित किए गए हैं और अध्याय 23 का, जिसमें अपराधों को करने के प्रयत्नों के विषय में शीर्षक के अधीन धारा 511 ही है, लोप किया गया है। धारा 161 से 165क तक का लोप किया गया है और उसे प्राप्ताचार निवारण अधिनियम, 1988 में ले जाया गया है। इसके अंतिरिक्ष, कुछ धाराओं या खंडों या उपखंडों को पुनरास्थापित किया गया है। प्रस्तावित विधेयक के पश्चात धारा 228क (करियर अपराधों आदि से पीड़ित व्यक्ति की पहचान का प्रकटन) और धारा 304ख (दबेज मृत्यु), 1983 के अधिनियम 43 और 1986 के अधिनियम 40 द्वारा क्रमशः अंतःस्थापित की गई हैं। धारा 375 और 376 (यौन अपराध) और अध्याय का शीर्षक, 1983 का अधिनियम 43 द्वारा 375, 376, 376क, 376ख, 376ग और 376घ द्वारा प्रतिस्थापित किए गए हैं। धारा 405 के स्पष्टीकरण 1 में आशिक संशोधन किया गया है। इसके अंतिरिक्ष, एक नया अध्याय 20क, जिसमें एक नई धारा 498क ही है, 1983 के अधिनियम 46 द्वारा अंतःस्थापित की गई है।

1978 के विधेयक में 207 खंड हैं, खंड 1, 6, 7, 8, 12, 16, 39, 40, 44, 46, 47, 49, 50, 51, 53, 55, 56, 57, 59, 60, 61, 62, 65, 69, 70, 71, 72, 73, 74, 75, 76, 77, 78, 79, 80, 81, 82, 83, 84, 85, 86, 87, 88, 89, 90, 92, 95, 96, 97, 98, 99, 100, 101, 102, 103, 104, 105, 106, 107, 108, 109, 112, 113, 114, 115, 116, 117, 118, 120, 121, 126, 127, 129, 132, 133, 135, 136, 138, 139, 140, 141, 142, 143, 147, 148, 150, 153, 154, 156, 157, 158, 185, 186, 189, 191, 192, 193, 195, 200, 202, 205, और 207 नाम्य मात्र हैं।

अन्य खंडों में प्रस्तावित परिवर्तन इस देश के आधारित वाहिक परिनियम को, उसकी खामियों को दूर करने, उसे अद्यतन बनाने के लिए और अधिकतम आवश्यकताओं को उपयोगी बनाने के लिए किए गए हैं। उनके नए अपराधों को शामिल किए जाने का प्रस्ताव है जिनके परिणामस्वरूप, दंड प्रक्रिया संहिता की प्रथम अनुसूची में बड़े पैमाने पर परिवर्तन करना होगा।

हमने विधेयक के इन खंडों का सरकारीपूर्वक अध्ययन किया है और हम पाते हैं कि सोचे गए कुछ परिवर्तन, विधि आयोग द्वारा उसकी 42वीं रिपोर्ट में की गई सिफारिशों से परे हैं। इसीलिए, हम इनमें से प्रत्येक खंड की जांच करना, जैसाकि पहले ही उपर्युक्त कर चुके हैं, आवश्यक समझते हैं।

### खंड 2 से 8

12.03 अध्याय 2 साधारण स्पष्टीकरण का उपबंध करता है, धारा 6 से 52 तक में विभिन्न परिभाषा और स्पष्टीकरण अंतर्विष्ट हैं। परिभाषा का उद

बहुधा पुनरावृत्ति की आवश्यकता से बचना है। परिभाषाएं निर्बन्धनकारी और अनन्य हो सकती हैं किन्तु कभी-कभी वे सम्मिलित और अपवर्जित करने वाली भी हो सकती हैं, अर्थात् उसमें कतिपय बातें सम्मिलित और कतिपय अन्य बातें अपवर्जित हो सकती हैं। यह सुस्थापित है कि परिभाषा अलग से नहीं पढ़ी जानी चाहिए अपितु उसे उस वाक्यांश के संदर्भ में, जो इसे परिभाषित करता है, पढ़ा जाए। क्योंकि किसी परिभाषा का कृत्य किसी शब्द या वाक्यांश को संक्षिप्त तथा निश्चयता देना है जो अन्यथा अस्पष्ट और अनिश्चित जाए। वेनगार्ड फालार एंड जनरल इंश्योरेंस कंपनी लि, मद्रास बनाम मैसर्स प्रेसर एंड रौस और अन्य (ए० आई० वो जाएगा। वेनगार्ड फालार एंड जनरल इंश्योरेंस कंपनी लि, मद्रास बनाम मैसर्स प्रेसर एंड रौस और अन्य (ए० आई० 1960 एस० सी० 971) के मामले में न्यायालय ने यह संप्रेक्षण किया कि “यह सुस्थापित है कि संक्षेपाक्षरों की सभी कानूनी आरो 1960 एस० सी० 971) के मामले में न्यायालय ने यह संप्रेक्षण किया कि “यह सुस्थापित है कि संक्षेपाक्षरों की सभी कानूनी परिभाषाएं, परिभाषा के उन खंडों में, जिन्होंने इनका सृजन किया है, मिन्न-मिन्न रूप से अभिव्यक्त विशेषणों के अधीन रहते हुए, पढ़ी जाएं और ऐसा हो सकता है कि वहां भी जहां परिभाषा, जहां तक परिभाषित शब्द के लिए कहा गया है, भी उसका एक अनिश्चित है, वहां तक व्यापक है, संभव है कि उस शब्द का अधिनियम की मिन्न-मिन्न धाराओं में विषय बस्तु पर निर्भर करते हुए, कुछ मिन्न ‘अर्थ हो।’”

धारा 6 अधिकथित करती है कि संहिता (भारतीय दंड संहिता) में सर्वत्र अपराध की हर परिभाषा, हर दंड, उपबंध आदि, “साधारण अपवाद” शीर्षक वाले अध्याय में अंतर्विष्ट अपवादों के अध्यधीन समझा जाएगा ताकि उन अपवादों की ऐसी परिभाषा, दंड उपबंध या दृष्टित में दुरुराया न गई हो।

धारा 7 यह जोड़ती है कि हर पद जिसका स्पष्टीकरण सहिता के किसी भाग में किया गया है, सहिता के हर भाग में उस स्पष्टीकरण के अनुरूप ही प्रयोग किया गया है।

इन ध्यायों में सहित में प्रयोग किए गए शब्द और स्पष्टीकरण परिभाषित हैं।

विधि आयोग ने, अपनी 42वीं रिपोर्ट में स्पष्ट रूप से यह संप्रेक्षण किया कि न तो परिभाषाएं और न ही साधारण खंड अधिनियम में अंतर्विष्ट अर्थान्वयन सीमा के सिवाय, लागू होते हैं किन्तु फिर भी, यह कहा कि कुछ हद तक अतिव्याप्ति है। परिणामस्वरूप, दुर्दीरी आवृत्ति है जिसे अभिव्यक्त रूप से यह उपबंध करके हटाया जा सकता है कि साधारण खंड अधिनियम संहिता के निर्वचन के लिए लागू होगा। कुछ सीमा तक आयोग ने, सिफारिश की थी कि कठिपय ऐसी धाराओं का, जिनमें परिभाषाएं अंतर्विष्ट हैं लोप किया जाए जो साधारण खंड अधिनियम में भी हैं। इस विचार से विधि आयोग ने धारा 8, 9 और 10 को जो लिंग, वचन, पुरुष, स्त्री को परिभाषित करती है, हटाने की सिफारिश की थी। विधेयक में खंड 5 के फलस्वरूप, धाराएं 8, 9 और 11 हटा दी गई हैं। विधेयक में यह दसी रूप में हैं जिसमें वे साधारण खंड अधिनियम में पाए जाते हैं।

साधारण खांड अधिनियम, 1897 के अनुशीलन से यह पता लगेगा कि उसमें अंतर्विष्ट परिभाषाएं और अर्थान्वयन के साधारण नियम विनिर्दिष्ट रूप से, एक बहुत सीमित सीमा के सिवाय, लागू नहीं बनाए गए हैं, यह अच्छी तरह से स्वीकार्य है कि सभी दाँड़िक परिनियमों का कठोरतापूर्वक अर्थ निकाला जाए और न्यायालय यह अवश्य देखें कि आरोपित कोई कार्य या लोप, संहिता में प्रयुक्त शब्दों के सादे अर्थ के भी अपराध के तुल्य है और दाँड़िक परिनियमों के अर्थान्वयन में शब्द की खींचतान नहीं की जानी चाहिए, इसका मूलाभूत सिद्धांत यह है कि संदेह के सामले में व्यक्ति के अनुकूल अर्थान्वयन को अधिमान दिया जाना चाहिए। मारतीय दंड संहिता के निमंत्तियों ने, साधारण अपवाद के अध्यय में परिभाषाओं को शामिल करते समय अधिष्ठायी विधि के इस साधारण विस्तार को ध्यान में रखा था। यह भी एक स्वीकृत सिद्धांत है कि दंड विधि का सार तत्व उसकी बाबत एुणागुण पर व्यापक होता है जो उसे विधि घोषित करता है। इस प्रकार बहुधा परिभाषाओं में अंतर्निहित अर्थ और उद्देश्य का आरोपित अपराध के प्रति निर्देश से अर्थ निकालना महत्व धारण कर लेता है। यह अवधारित करने के लिए कि कोई मामला परिनियम के क्षेत्र के भीतर है उसकी भाषा सुस्पष्ट और महत्व धारण कर लेता है। यह अवधारित करने के लिए कि व्याय कहना है और किस प्रकार उसका निर्वचन करना है। इन पहलुओं को ध्यान में न्यायालय को सुकर बनाने वाली होनी चाहिए कि व्याय कहना है और किस प्रकार उसका निर्वचन करना है। इन पहलुओं को ध्यान में रखते हुए, यह बेहतर है कि दंड संहिता की परिभाषाओं को, उनका लोप करने के बजाय जैसी कि विधि आयोग द्वारा उसकी 42वीं परिषेक में सिफारिश की गई थी, बनाए रखा जाए। परिणामस्वरूप, धारा 8.9 और 11 में किसी परिवर्तन की सिफारिश नहीं करते हैं।

ફાંડ ૭

12.04 खंड के फलस्वरूप धारा 18 ते 21 तक को प्रतिस्थापित किया जाना है। विद्यमान धारा 18 में यह कथन है कि “भारत” से जम्मू-कश्मीर राज्य के सिवाय भारत का राज्यक्षेत्र अभिप्रेत है। जैसा कि विधि आयोग द्वारा इंगित किया गया है कि यह स्पष्ट करने के लिए इस पर राज्य में संशोधन करना आवश्यक है कि भारतीय दंड संहिता का विस्तार उसी रूप से भारत के राज्यक्षेत्रीय जल पर है जिस प्रकार उसका विस्तार भू राज्यक्षेत्र पर है। विधि आयोग ने अपनी 42वीं रिपोर्ट में धारा 18 में एक संशोधन का सुझाव दिया था, अर्थात् “भारत” से भारत का राज्यक्षेत्र जिसके अंतर्गत राज्यक्षेत्र जल है, अभिप्रेत है किन्तु इसमें जम्मू-कश्मीर का राज्यक्षेत्र सम्मिलित नहीं है। इस संशोधन की सिफारिश करने में विधि आयोग ने संहिता का भारत के भू-भाग राज्य क्षेत्र और साथ ही अन्तर्राष्ट्रीय जल पर विस्तार करने में अधिक जोर दिया था। यद्यपि, खंड 2 में “राज्यक्षेत्रीय अधिकारिता” अधिक स्पष्ट रूप से आ जाती है किन्तु यह जम्मू-कश्मीर राज्य पर संहिता के विस्तार के संबंध में मौन है। अनेक कार्यशालाओं में और साथ ही न्यायालय के

निर्णयों में तथा विधिक सदस्यों तथा न्यायशास्त्रियों द्वारा यह आवाज उठाई गई है कि भारतीय दंड संहिता के लागू होने का विस्तार सम्पूर्ण देश (जिसके अंतर्गत जम्मू-कश्मीर है) पर किया जाए। यद्यपि, यह प्रशंसनीय उद्देश्य है फिर भी, नई धारा 18 उसकी अनुरूपता में नहीं है।

विद्यमान धारा 1 इस प्रकार है। “संहिता का नाम और उसके प्रवर्तन का विस्तार—यह अधिनियम भारतीय दंड संहिता कहलाएगा और इसका विस्तार जम्मू-कश्मीर राज्य के सिवाय सम्पूर्ण भारत पर होगा।” “विस्तार सम्पूर्ण भारत पर होगा” शब्द 1950 में एक संशोधन “राज्य के सिवाय” शब्द 1951 में प्रतिस्थापित किए गए थे। विद्यमान धारा 18 भारत को इस प्रकार परिभाषित करती है। भारत से जम्मू-कश्मीर राज्य के सिवाय भारत का राज्यक्षेत्र अभिप्रेत है। इस बात पर ध्यान दिया जाना चाहिए कि यह धारा 1950 में प्रतिस्थापित की गई थी। इन दोनों धाराओं को एक साथ पढ़ने पर ऐसा प्रतीत होता है कि आशय दंड संहिता का विस्तार जम्मू-कश्मीर राज्य पर करने का नहीं था। जैसा कि धारा 1 से भी देखा जा सकता है। तथापि, धारा 18 में यथापरिभाषित भारत कुछ अनुपयुक्त है क्योंकि भारत का राज्यक्षेत्र जम्मू-कश्मीर राज्य को अपवर्जित करते हुए है। फिर भी, विधेयक में वर्तमान वर्तमान धारा 1 को स्पष्ट नहीं किया गया है जब कि भारत की विद्यमान परिभाषा, जैसी की धारा 18 में नई धारा 18 के प्रतिस्थापन द्वारा चाही गई है जो इस प्रकार है, “भारत” शब्द से जहां कहीं वह इस संहिता में आता है, वह राज्यक्षेत्र अभिप्रेत है जिस पर इस संहिता का विस्तार है, तद्वारा स्पष्ट रूप से यह अर्थ निकलता है कि यह संहिता जम्मू-कश्मीर राज्य को लागू नहीं होगी। 42वीं रिपोर्ट में विधि आयोग ने उस रीति से कुछ भिन्न रीति में धारा 18 के संशोधन के लिए सिफारिश की थी जिस रीति में वह हमें विधेयक के अधीन प्रतिस्थापित की जाने के लिए बालित नई धारा 18 में मिलता है। इस विषय की सतर्कतापूर्वक जांच करके और यह भी ध्यान में रखते हुए, कि विधेयक में धारा 1 के प्रति कोई निर्देश भी नहीं है, प्रस्तावित नई धारा द्वारा विद्यमान धारा 18 को प्रतिस्थापित करने की कोई आवश्यकता नहीं है। तथापि, बात को यदि आवश्यक है, तो स्पष्ट करने के लिए और किसी अस्पष्टता को हटाने के लिए, अर्थात् इस संहिता के लागू होने के प्रयोजन के लिए भारत का निर्बंधित अर्थ उन राज्यक्षेत्र तक होगा जिन पर इस संहिता का विस्तार है, जैसा कि विद्यमान धारा 1 में मिलता है, प्रस्तावित नई धारा 18 को उपयुक्त रूप से लिखा जा सकता है।

विद्यमान धारा 19 “न्यायाधीश” को और धारा 20 “न्यायालय” को परिभाषित करती है। “न्यायाधीश” पद के निर्वचन के संबंध में कुछ उलझनें हैं। धारा 19 को नई धारा द्वारा प्रतिस्थापित करना चाहा गया है। विद्यमान धारा 19 निम्नवत है:-

“न्यायाधीश”—“न्यायाधीश” शब्द न केवल दूर ऐसे व्यक्ति का द्योतक है, जो पद रूप से न्यायाधीश अभिहित हो, किन्तु उस दूर व्यक्ति का भी द्योतक है,

जो किसी विधि-कार्यवादी में, चाहे वह सिविल हो या दाइक, अंतिम निर्णय या ऐसा निर्णय, जो उसके विरुद्ध अपील न होने पर अंतिम हो जाए या ऐसा निर्णय, जो किसी अन्य प्राधिकारी द्वारा पुष्ट किए जाने पर अंतिम हो जाए, देने के लिए, विधि द्वारा सशक्त किया गया हो, अथवा

जो उस व्यक्ति निकाय में से एक हो, जो व्यक्ति-निकाय ऐसा निर्णय देने के लिए विधि द्वारा सशक्ति किया गया हो।

विधि आयोग ने, अपनी 42वीं रिपोर्ट में इसमें कुछ स्थामियां देखी और यह सिफारिश की कि दृष्टांतों का लोप किया जा सकता है और धारा को उपर्युक्त रूप से संजोधित किया जा सकता है। अब वह धारा जिसे प्रतिस्थापित करना चाहा गया है निम्नवत है:—

“न्यायाधीश” शब्द न केवल प्रत्येक ऐसे व्यक्ति का द्योतक है जो शासकीय तौर पर न्यायाधीश के रूप में अभिवृद्धि है बल्कि निम्नलिखित का भी द्योतक है, अर्थात्:—

(क) प्रत्येक व्यवित्त—

(i) जो किसी विधिक कार्यवाही में, चाहे वह सिविल हो या दाढ़िक, अंतिम निर्णय या ऐसा निर्णय, जो उसके विरुद्ध आपील न किए जाने पर अंतिम होगा या ऐसा निर्णय, जो किसी अन्य प्राधिकारी द्वारा पुष्टि किये जाने के लिए अंतिम होगा, देने के लिए विधि द्वारा सशक्त है, या

(ii) जो उन व्यष्टि-निकायों में से एक है जो व्यष्टि-निकाय ऐसा निर्णय देने के लिए विधि द्वारा सशक्त है, और

(ਖ) ਕੋਈ ਮਜਿਸਟ੍ਰੇਟ।"

“अंतिम निर्णय” देने पर जोर बनाए रखते हुए और इसकी सिफारिश करते हुए एकमात्र परिवर्तन, जो किया गया है, मजिस्ट्रेट का शामिल किया जाना है। हम विधेयक द्वारा परस्थापित किए जाने के लिए बांधित परिवर्तन पर्याप्त करते हैं।

विद्यमान धारा 20 “न्यायालय को न्यायाधीश या न्यायाधीशों के निकाय के रूप में परिभाषित करती हैं जब ऐसे न्यायाधीश या न्यायाधीशों को न्यायिकतः कार्य करने के लिए विधि द्वारा सशक्त किया गया हो और वह न्यायिकतः कार्य कर रहा हो। विधि आयोग ने, अपनी 42वीं रिपोर्ट में इस धारा की भाषा की जांच करके यह संप्रेक्षण किया कि परिभाषा अनावश्यक रूप से लंबी है और यह मुझाव दिया गया कि उसे सरल बनाया जाना चाहिए। जैसा कि उपर उल्लिखित है धारा 19 में “न्यायाधीश” की परिभाषा जैसी कि हमें विधेयक में मिलती है, व्यापक है और उन सभी शब्दों की पुनः पुनरावृत्ति आवश्यक नहीं है। धारा 20 जैसी कि परिवर्तन के पश्चात विधेयक में मिलती है, सरल और पर्याप्त है।

विद्यमान धारा 21 लोक सेवक को परिमाणित करती है। उसमें व्यक्तियों के बे प्रवार्ग अंतर्विष्ट हैं जो “लोक सेवक” के अर्थ के भीतर आते हैं। दाँड़िक न्याय प्रशासन की पुष्टि से लोक सेवक की आरणा महत्वपूर्ण है। धारा 21 में लोक सेवक की परिमाणा का दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 197 के साथ लीटर्बैधन है जिसके अधीन किसी सेवक के अभियोजन के लिए मंजूरी आवश्यक है। अब वह सुस्थापित है कि यदि वह कार्य, जिसके लिए शिकायत की गई है, अभियुक्त के पदीय कर्तव्य से संबद्ध है या युक्तियुक्त रूप से यह पाया जाता है कि वह उसके पदीय कर्तव्यों के निर्वहन में किया गया था, तो धारा 197 आकर्षित होती है और उसके अभियोजन के लिए मंजूरी आनिवार्य है। इसलिए यह पता लगाना आवश्यक हो जाता है कि अभियुक्त धारा 21 में यथा परिमाणित लोक सेवक है या नहीं। विधि आयोग ने, विद्यमान धारा की जांच करने के पश्चात्, यह संप्रेक्षण किया कि धारा 21 में लोक सेवकों के विभिन्न प्रवर्गों की व्यापक गणना मूलतः ऐसे सेवकों द्वारा निर्वहन किए जा रहे कृत्यों पर आधारित है और यह मी देखा कि विशेष रूप से 1958 और 1964 के संशोधनकारी अधिनियमों द्वारा खंड 12 के पुनर्गठन के पश्चात् पर्याप्त अतिव्याप्ति है और खंडों में कठोर पुनरीक्षण आपेक्षित है। विधेयक में नई धारा 21 निम्नवत है:—

21. "लोक सेवक" से निम्नलिखित अभिप्रेत है, अर्थात्:—

- (i) कोई व्यक्ति, जो सरकार की सेवा में है या सरकार से वेतन पाता है अथवा किसी लोक कर्तव्य के पालन के लिए सरकार से फीस या कमीशन के रूप में पारिश्रमिक पाता है;

(ii) कोई व्यक्ति जो किसी स्थानीय प्राधिकारी की सेवा में है या उससे वेतन पाता है;

(iii) कोई व्यक्ति जो सरकार के स्वामित्व या नियंत्रणाधीन किसी निगम की सेवा में है या उससे वेतन पाता है;

(iv) कोई न्यायाधीश, जिसके अंतर्गत कोई ऐसा व्यक्ति भी है जो स्वयं या किसी व्यष्टि निकाय के सदस्य के रूप में न्यायनिर्णयन कृत्यों का निर्वहन करने के लिए विधि द्वारा सशक्त है;

(v) कोई व्यक्ति जिसे न्याय प्रशासन के संबंध में, किसी कर्तव्य का पालन करने के लिए किसी न्यायालय द्वारा विशेष रूप से प्राधिकृत किया गया है, और इसके अंतर्गत ऐसे न्यायालय द्वारा नियुक्त किया गया कोई समापक, रिसीवर अथवा कमीशनर् भी है;

(vi) कोई मध्यस्थ या अन्य व्यक्ति, जिसको किसी न्यायालय द्वारा अथवा किसी सक्षम लोक प्राधिकारी द्वारा कोई मामला या विषय, विनिश्चय या रिपोर्ट के लिए निर्देशित किया गया है;

(vii) कोई व्यक्ति जो किसी विधि के द्वारा या अधीन मान्य अथवा अनुमोदित किसी परीक्षा के संबंध में किसी लोक-निकाय द्वारा पारीकृत या इनविजिलेंटर के रूप में नियोजित है या नियुक्त किया गया है।

**स्पष्टीकरण**—“लोक-निकाय” पद के अंतर्गत निम्नलिखित हैं:—

- (क) किसी केन्द्रीय, राज्य या प्रान्तीय अधिनियम के द्वारा या अधीन स्थापित अथवा सरकार द्वारा गठित कोई विश्वविद्यालय, शिक्षा बोर्ड या अन्य निकाय अथवा संस्था;

(ख) कोई स्थानीय प्राधिकारी;

(viii) कोई व्यक्ति जो ऐसा पद धारण करता है जिसके आधार पर वह निर्वाचक नामावली तैयार करने, प्रकाशित बनाए रखने या पुनरीक्षित करने के लिए अथवा निर्वाचन या निर्वाचन के किसी भाग का संचालन करने के लिए सशक्त या

(ix) कोई व्यक्ति जो ऐसा पद धारण करता है जिसके आधार पर वह किसी लोक कर्तव्य पालन के लिए विधि द्वारा नियुक्त या अपेक्षित है।

स्पष्टीकरण—1. उपरोक्त खंडों में से किसी के अंतर्गत आने वाले व्यक्ति लोक सेवक हैं चाहे वे सरकार द्वारा नियन्त्रित किए गए हों या नहीं।

स्पष्टीकरण—2. किसी पद या ओहदे को वस्तुतः धारण करने के कारण ऊपर के खंडों के अंतर्गत आने वाला व्यक्ति ज्ञेय सेवक है जो उस व्यक्ति के उस पद या ओहदे को धारण करने के अधिकार में कोई भी विधिक त्रुटि हो।

विधि आयोग ने, अपनी 42वीं रिपोर्ट में, धारा 21 में विभिन्न खंडों की सतर्कतापूर्वक जांच करने के पश्चात् कठिपय परिवर्तनों का सुझाव दिया था, नई धारा में शामिल किया गया है। इस संदर्भ में, विधि आयोग ने, उच्च न्यायालयों और उच्चतम न्यायालय के विभिन्न निर्णयों की जांच की है।

विद्यमान धारा का तत्त्वानी उपबंध निष्ठवत है:-

बारंदवां—हर व्यक्ति, जो—

- (क) सरकार की सेवा या वेतन में हो, या किसी लोक-कर्तव्य के पालन के लिए सरकार से फीस या कमीशन के रूप में पारिश्रमिक पाता हो;

- (छ) स्थानीय प्राधिकारी की, अथवा केन्द्र, प्रान्त या राज्य के अधिनियम द्वारा या अधीन स्थापित निगम की अथवा कम्पनी अधिनियम, 1956 (1956 का 1) की धारा 617 में यथापरिभाषित सरकारी कम्पनी की, सेवा या वेतन में हो।

यह देखा जा सकता है कि यह छंड लोक कर्तव्य पर महत्व देता है। जी० ए० मानदियो बनाम अजमेर राज्य (1956 एस०सी०आर० 682) में उच्चतम न्यायालय ने यह उपर्युक्त किया है कि वेतन और लोक कर्तव्य की अपेक्षाएँ संचित हैं। न्यायालय ने, यह संप्रेक्षण किया है कि “इसलिए यदि, विशिष्ट मामले के तथ्यों पर, न्यायालय इस निष्कर्ष पर पहुंचता है कि यदि कोई व्यक्ति केवल सरकार की सेवा या वेतन में नहीं है किन्तु वह ऐसे लोक कर्तव्य का अनुपालन भी करता है जो उसे सरकार के कृत्यों के लिए सौंप गए हैं या उसे ऐसे उस व्यक्ति तत्काल सदायता के लिए, जो किसी भी दशा में कर्तव्यों का अनुपालन कर रहा है और जो सरकार का अधिकारी है जो अतः, वह भारतीय छंड संहिता की धारा 21(9) के अर्थात् निर्गत सरकार का कोई अधिकारी है। उच्चतम न्यायालय ने यह दृष्टिकोण अजमेर राज्य बनाम शिवाजी लाल (1959(2) एस०सी०आर० 739) में दोहराया है। इस संप्रेक्षणों को देखने के पश्चात् विधि आयोग की यह राय है कि “लोक सेवक पद आसानी से परिभाषित नहीं किया जा सकता और न ही किसी न्यायालय ने ऐसी किसी परिभाषा को परिभाषित करने का प्रयास किया है।”

उक्त उल्लिखित विभिन्न पद्धुलओं पर विचार करके विधि आयोग ने अपनी 42वीं रिपोर्ट में घारा 21 को प्रतिस्थापित करने की सिफारिश की है। विधेयक में (नई घारा 21) में दी गई “लोक सेवक” की परिमाण में विधि आयोग द्वारा की गई सिफारिशें मुख्य रूप से अंतर्विष्ट हैं। तथापि, विधि आयोग ने एक विनिर्दिष्ट खंड को सम्मिलित किए जाने का उल्लेख किया है, अर्थात् कोई व्यक्ति जो संसद् या राज्य विधान-मंडल का सदस्य है। विभिन्न राजनैतिक विकासों को देखते हुए, और जहां राजनीति के अपराधीकरण के अनेक उदाहरण अभिधित किए जाते हैं ऐसा एक उपबंध होना आवश्यक है। किन्तु ऐसा प्रभावी उपबंध किसी रीति से किया जा सकता है।

इस आशय के विचारान उपबंध की लोक कर्तव्य का निर्वहन करने के लिए पारिश्रमिक प्राप्त करने वाला कोई व्यक्ति, साधारण रीति से उनको आच्छादित कर सकता है क्योंकि वे कुछ पारिश्रमिक प्राप्त कर रहे हैं और लोक कर्तव्य का निर्वहन भी कर रहे हैं। विधि आयोग ने, अपनी 42वीं रिपोर्ट में स्पष्ट रूप से सिफारिश की थी कि इन लोगों को विनिर्दिष्ट रूप से सुसंगत उपबंधों के अधीन लोक सेवकों के रूप में शामिल किया जाना चाहिए। किन्तु प्रश्न यह उठेगा कि भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम की धारा 17 और दंड प्रक्रिया संदिता की तत्संबंधी धारा 197 में भी उपयुक्त संशोधन आवश्यक होगो अथवा नहीं क्योंकि इन उपबंधों के गठन से यह पता लगेगा कि जो सरकारी सेवा से और यथास्थिति, राज्य सरकार या केन्द्रीय सरकार द्वारा अपवारी अधिकारी को हटाने की शक्ति पर दिया गया है। किन्तु विधायकों के मामले में, ये उपबंध, जो मंजूरी किए जाने का उपबंध करते हैं, ऐसा विचार नहीं करते कि किसी विधायक की दशा में, जिसे किसी दृष्टिकोण के द्वारा के कार्य के लिए जब वह अपने पदीय कर्तव्यों का निर्वहन कर रहे हों या निर्वहन करने के लिए तात्पर्यित हो, अभियोजित किया जाता है, तब मंजूरीकर्ता प्राधिकारी किसे होना चाहिए क्योंकि वे कर्तव्य आहे जितनी सीमित सीना हक्क हों, उनके द्वारा विधान-मंडल के सदस्य होने के कारण किया जा रहा यह लोक कर्तव्य हो सकता है। यह तर्क-संगत है कि यह शक्ति केवल विधान-मंडल के पीठासीन अधिकारी को होनी चाहिए व्यक्ति कार्यवाहियां या ऐसी कार्यवाहियों से संबद्ध होइ कार्य, जिनमें भत्ता दालना या पद व्याप्त करना है, भी विशेषाधिकार प्राप्त प्रवर्ग के भीतर आते हैं और यह केवल पीठासीन अधिकारी ही है, जो यह विनिष्टव्य कर सकता है कि किसी कार्य का विधायक से लोक कर्तव्य के साथ संबद्ध था या नहीं। परिणामतः, कलाचार करने वाले विधायकों के मामले में मंजूरी देने वाले प्राधिकारी विधान-मंडलों के पीठासीन अधिकारी ही हो सकते हैं। जब सक्षमंजूरी का उपबंध करने वाले उपबंधों में भी ऐसे परिवर्तन नहीं किए जाते हैं, सुसंगत उपबंधों में उन्हें लोक सेवकों के रूप में शामिल कर लैना मात्र उचित नहीं हो सकता। यदि, तर्क के लिए ही, भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम की धारा 19 या दंड प्रक्रिया संदिता की धारा 197 के अधीन मंजूरी आवश्यक नहीं होगी तो यह कहना व्यंग ही होगा कि केवल ऐसा संरक्षण अन्य लोक सेवकों को दिया जा सकता है और विधान-मंडल के सदस्यों को नहीं जो लोक कर्तव्य के पालन के कारण लोक सेवकों के प्रवर्ग में आते हैं। जब तक ऐसे प्रमुख परिवर्तन नहीं किए जाते तब तक उन्हें एक नया खंड अंतःस्थापित करके और किसी संगत दांडिक उपबंध के अधीन उन्हें लाकर धारा 21 के अधीन लोक सेवकों के परिधि के भीतर लाना मात्र ही अवांछनीय और अन्यथिक अनुचित होगा।

### खंड 10

12.05. विद्यमान धारा 25 "कपटपूर्वक" पद को परिभाषित करता है—कोई व्यक्ति किसी आत को कपटपूर्वक करता है, यह कहा जाता है कि यदि वह उस बात को कपट करने के आशय से करता है, अन्यथा नहीं। "कपटपूर्वक" पद कुछ धाराओं, अर्थात् 206, 207, 208, 242, 243, 247, 252, 253, 261, 262, और धारा 421 से 424 में आता है। विद्यमान धारा 23 "सदोष अभिलाभ" और सदोष द्वानि पदों को परिभाषित करती है। धारा 24 के अनुसार, कोई व्यक्ति कोई कार्य बेर्इमूर्ही से करता है यदि वह उसे इस आशय से करता है कि किसी अन्य को सदोष अभिलाभ करित करे या किसी अन्य व्यक्ति को सदोष द्वानि सदोष करे। ये परिभाषाएं स्पष्ट शब्दों में हैं किन्तु यही बात "कपटपूर्वक" की परिभाषा के बारे में नहीं की जा सकती। तथापि, न्यायालयों ने यह संप्रेक्षण किया है कि परिभाषा लागू होने के लिए एक पक्ष को कुछ लाभ और दूसरे पक्ष को तत्संबंधी हानि होना आवश्यक है। उच्चतम न्यायालय ने डॉ. एस. दत्त ब्रानाम उत्तर प्रदेश राज्य [(1966)(1) एस. सी. आर. 493]] के मामले में, यह संप्रेक्षण किया कि धारा 25 में "कपट करने का आशय" शब्द केवल धोखा देने के आशय को ही नहीं अपितु उसके द्वारा उसको दिए गए धोखे के परिणामस्वरूप किसी व्यक्ति को कोई कार्य करने या कार्य का लोप करने के आशय को भी उपदर्शित करता है, जो वह अपने लाभ के लिए करे। विभिन्न मर्मों की जांच करके, विधि आयोग ने परिभाषा में परिवर्तन की थी ताकि इसके अर्थ को और स्पष्टरूप दिया जा सके। विधेयक में सुझाए गए संशोधन इस प्रयोजन को पूरा करते हैं।

### खंड 11

12.06. विद्यमान धारा 29 दस्तावेज को परिभाषित करती है और उसमें स्पष्टीकरण है। साध्य अधिनियम की धारा 3 और साधारण खंड अधिनियम की धारा 3(18) मी "दस्तावेज" शब्दों को परिभाषित करती है। इन तीनों धाराओं के पठन से यह पता लगता कि इन सभी तीनों अधिनियमों में विचार एक ही है और जोर उस विषय पर है कि जिसे अभिलिखित किया गया है। विधि आयोग ने, अपनी 42वीं रिपोर्ट में इन सभी अधिनियमों के उपबंधों की जांच की और संशोधन की सिफारिश की। यह भी संप्रेक्षण किया कि विद्यमान परिभाषा, अपने स्पष्टीकरणों सहित दस्तावेज के द्वारा किसी को सम्मिलित करने के लिए काफी व्यापक है। एक शंका यह व्यक्ति को गई थी कि व्या इसमें ध्वनि या प्रतिमा में यांत्रिक अभिलेख जैसे टेप, अभिलेख, आदि, जो प्रायः उपयोग में लाए जाते हैं, सम्मिलित हैं या नहीं। इन पक्षों पर विचार करते हुए, विधि आयोग ने, उसके आशय को स्पष्ट करने के लिए परिभाषा की भाषा में कुछ परिवर्तन करने का सुझाव दिया था। इसी आधार पर खंड 11 में "विशेष रूप से अभिव्यक्त, वर्णित या अभिलिखित" शब्द और "अक्षरों, प्रतिमाओं, चिह्नों या ध्वनियों" शब्द प्रतिस्थापित किए जाने की वांछा की गई है। इस विषय पर विस्तृत परिचर्चा "दस्तावेज—उसकी परिभाषा का विस्तार" शीर्षक अध्याय 11 में देखी जा सकती है। अत्र या दृश्य प्रोयोगिकों तथा कम्प्यूटरों में हुए परिवर्तनों को दृष्टि में रखते हुए, यह सिफारिश की जाती है कि विद्यमान धारा में एक अन्य स्पष्टीकरण 3 जोड़ा जा सकता है। इसलिए, हम यह सिफारिश करते हैं कि स्पष्टीकरण 3 जोड़ा जाए, अर्थात्—"दस्तावेज पद में ऐसी डिस्क, टेप, साउंड ट्रैक या अन्य युक्ति भी सम्मिलित है, जिस पर या जिसमें कोई विषय या प्रतिमा या ध्वनि, यांत्रिक या अन्य साधनों द्वारा अभिलिखित और भंडारित की जाती है।"

### खंड 12

12.07. इस खंड के अधीन विद्यमान धारा 31, 32 और 33, जो अधिनियम में निर्दिष्ट "वित्त" शब्द को परिभाषित करती है, लोप किया जाना चाहिए है। विधि आयोग की 41वीं रिपोर्ट के परिशीलन से यह पता लगता है कि इस धारा के लोप की सिफारिश इस आधार पर की गई थी कि वे साधारण खंड अधिनियम में परिभाषित हैं। हमने गोभीरतपूर्वक विचार करने के पश्चात पहले ही यह कहा है कि ऐसे शब्द, जो साधारण खंड अधिनियम में परिभाषित हैं और जो भारतीय दंड संहिता के अन्य उपबंधों में, विनिर्दिष्ट रूप से पाए जाते हैं विभिन्न कारणों से जिनका पहले ही उल्लेख किया गया है, बनाए रखना चाहिए। हन्हीं कारणों से हमारा यह अभिभव है कि विद्यमान धारा 31, 32 और 33 को बनाए रखने में कोई अपहार्न नहीं है और खंड 12 का लोप कर दिया जाए।

### खंड 13

12.08. इस खंड के फलस्वरूप "कोई व्यक्तियों द्वारा" शब्दों को, जहाँ कहीं भी वे जाते हैं, "दो या अधिक व्यक्तियों द्वारा" शब्दों द्वारा प्रतिस्थापित किया जाए। कुछ निर्णयों के परिशीलन से यह पता लगता कि धारा की भाषा में, विशेष रूप से "कोई व्यक्तियों द्वारा" पद का अर्थ विद्यमान की जांच की आवश्यकता को करने में, आन्वयिक दायित्व का सिद्धांत सम्मिलित है, उस दायित्व का मूल तत्व सामान्य आशय की विधिमान्यता है। धारा 34 स्पष्ट करती है कि जब कोई आपराधिक कार्य कई ऐसे व्यक्तियों द्वारा सामान्य आशय द्वारा प्रेरित है, जो उस आशय को अप्रसर करने में संयुक्त रूप से किया जाता है तब ऐसे व्यक्तियों द्वारा हर एक व्यक्ति उसके लिए उसी प्रकार दायित्व के अधीन है मानो वह कार्य अकेले उसी ने किया हो। बारेड कुमार घोष बनाम समाट [ए० आई० आर० 1925 पी० सी० (1)] के मामले से लेकर अब तक धारा 34 के विस्तार के बारे में न्यायालयों द्वारा अनेक निर्णय दिए गए हैं। "कोई व्यक्तियों द्वारा" पद की जांच इस प्रश्न के प्रति निर्देश से की गई है कि धारा 34 के लिए क्या कम से कम दो व्यक्ति भागीदार होने चाहिए और क्या एकल जात अपराधी को, धारा 34 को लागू करके दोषसिद्ध किया जा सकता है। यदि

तथ्य वह दर्शाएं कि उसने कम से कम एक और अन्य अज्ञात अपराधी के साथ मिलकर अपराध किया है। विधि आयोग ने, यह देखते हुए कि ऐसी अस्पष्टता न रहे, अपनी 42वीं रिपोर्ट में, "कोई व्यक्तियों द्वारा" शब्दों के स्थान पर "दो या अधिक व्यक्तियों द्वारा" शब्दों को प्रतिस्थापित करने की सिफारिश की थी व्योंकि यह पद संपेक्षतः व्यापक और अस्पष्ट है। यह संशोधन करने से धारा 34 की भाषा और स्पष्ट हो जाती है। इसलिए, धारा 35 और 38 में भी आने वाले "कोई व्यक्तियों द्वारा" पद को "दो या अधिक व्यक्तियों द्वारा" पद से प्रतिस्थापित किया जा सकता है।

### खंड 14

12.09. इस खंड के अधीन धारा 40 को एक अन्य धारा द्वारा प्रतिस्थापित किए जाने का प्रस्ताव है। विद्यमान धारा 40 में तीन खंड हैं जो "अपराध" पद की तीन भिन्न-भिन्न परिभाषाएं करते हैं। पहले खंड में यह उपबंध है कि इस धारा के खंड 2 और 3 में वर्णित अध्यायों और धाराओं में के सिवाय उल्लिखित "अपराध" शब्द, इस संहिता द्वारा दंडनीय की गई किसी बात का दोतक है। खंड 2 यह अधिकायित करता है कि अध्याय 4, अध्याय 5 और उसमें प्रगाणित अनेक धाराओं में "अपराध" शब्द "इस संविदा के अधीन या किसी विशेष या स्थानीय विधि के अधीन दंडनीय बात का दोतक है।" खंड 3 के अनुसार, "उसमें उल्लिखित 8 धाराओं की बाबत "अपराध" का अर्थ उस दशा में वही है, जिसमें कि विशेष या स्थानीय विधि के अधीन दंडनीय बात ऐसी विधि के अधीन 6 मास या उससे अधिक के कारावास से, चाहे वह जुमनि रहित या सहित हो, दंडनीय हो।

इस बात पर ध्यान दिया जाता है कि "अपराध" पद का एक निश्चित अर्थ है। विद्यमान धारा में अस्पष्टता का अभाव है और यह साधक नहीं है। विधि आयोग ने, अपनी रिपोर्ट में इस बात पर संकेत दिया कि जब कभी संहिता की किसी विशिष्ट धारा में आने वाले "अपराध" शब्द के अर्थ के संबंध में कोई प्रश्न उठता है तो हमें धारा 40 देखनी होगी और उन खंडों का पठा लगाना होगा जिसमें प्रश्नगत धारा का उल्लेख है। साधारण खंड अधिनियम की धारा 3(38) में यह कथन है कि "अपराध" से सेवा, कोई कार्य या लोप अभिप्रेत होगा, जो किसी तत्समय प्रवृत्त विधि द्वारा इण्डनीय किया गया है। इस परिभाषा में भाषा संक्षिप्त है और दंड संहिता के अधीन सभी अपराधों को सम्मिलित करने के लिए पर्याप्त होगी क्योंकि ये किसी कार्य या लोप का परिणाम है, जो संहिता के अधीन दंडनीय है। तथापि, कुछ ऐसी धाराएं हैं, जिनमें "मृत्यु या आजीवन कारावास से दंडनीय अपराध" पद आता है। विधि आयोग ने, यह सुझाव दिया कि मृत्युदंड से दंडनीय अपराधों के लिए, एक पृथक परिभाषा होनी चाहिए, जिससे विद्यमान धारा 40 को प्रतिस्थापित किया जाना अपेक्षित है। "मृत्यु या आजीवन कारावास से दंडनीय अपराध" पद अनेक धाराओं, जैसे 115, 118, 120ख, 388, 389, 506 आदि में आता है। विधि आयोग द्वारा यह सुझाव भी दिया गया था और जैसाकि विधेयक में प्रस्तावित है, एक नई धारा 40 में मृत्यु से दंडनीय अपराध की परिभाषा, जहाँ कहीं भी "मृत्यु या आजीवन कारावास से दंडनीय अपराध" पद आता है, समाविष्ट होगी। इस पद को भी "मृत्युदंड" शब्द द्वारा प्रतिस्थापित किया जाना है, जो अधिक विनिर्दिष्ट होगा और विधेयक में वह पोत है कि उन सभी धाराओं में "मृत्युदंड" पद का प्रयोग किया गया था। खंड 14 के अधीन यथाप्रस्तावित धारा 40 के प्रतिस्थापन के रूप में संशोधन, जिसमें "मृत्युदंड" को परिभाषित किया गया है। समुचित परिवर्तन है। हमारे सुविचारित मत और जैसा कि पहले कहा जा चुका है, भारतीय दंड संहिता को स्वतः पूर्ण संहिता बनाने के लिए यह बेदल द्वारा किया गया है, को इस आधार पर प्रतिस्थापित करने की वांछा की गई है कि "अपराध" शब्द साधारण खंड अधिनियम में स्पष्ट रूप से परिभाषित किया गया है और विद्यमान धारा 40 में, जो अपराध को परिभाषित करती है, अपराध की परिभाषा में स्पष्टता है। विधि आयोग ने इस प्रस्तावित धारा 40 के अधीन यथाप्रस्तावित धारा 40 को नई धारा द्वारा प्रतिस्थापित किया गया है, जिसमें मृत्यु दंड की परिभाषा की गई है। यदि कोई इस धारा को जानना चाहे, तो उसे साधारण खंड अधिनियम द

(2) कोई व्यक्ति किसी व्यक्ति को “करने के लिए वैध रूप से आबद्द” कहा जाता है जब वह इस बात को करने के लिए विधि द्वारा आबद्द है, या जब उसका वह बात न करना अवैध है।

यह ध्यान दिया जाए कि विद्यमान धारा की परिभाषा के अनुसार, कोई व्यक्ति केवल वही आह करने के लिए वैध रूप से आबद्द है, जो जिसका लोप किया जाना उसके लिए अवैध है और “अवैध” शब्द उस हर बात को लागू होता है, जो अपराध है या जो प्रतिषिद्ध है या जो सिविल कार्यालयी के लिए आधार उत्पन्न करती है। विधि आयोग ने, इस बात पर भी ध्यान दिया कि ये परिभाषाएँ बुद्धिकार हैं, और उनकी कुछ कठिनाइयां सामने आई हैं जैसा कि न्यायालयों द्वारा किए गए विनिश्चयों में देखा जा सकता है, जिसमें अलीं मुहम्मद आदमअली बनाम सन्नाट (ए० आई० आर० पी० सी० 147) में दिया गया प्रिवी काउंसिल का विनिश्चय ही है। विधि आयोग द्वारा उसकी 42वीं रिपोर्ट में दंड संहिता में “अपराध” पद की परिभाषा का लोप करने और साधारण खंड अधिनियम में इस शब्द की व्यापक परिभाषा बनाने की सिफारिश की गई थी क्योंकि इससे न्यायालयों द्वारा इंगित किठाइनाई का निराकरण हो जाएगा। तथापि, यदि उस बात का, जिसका विधि द्वारा लोप किया जाना आविष्ट है, प्रश्नगत विशिष्ट अधिनियम के अधीन अपराध नहीं बनाया जाता है, तो कठिनाइयों का सूजन करने वाली स्थितियां उत्पन्न हो सकती हैं। विधि आयोग ने, अपनी 42वीं रिपोर्ट में अन्य शब्दों में “करने के लिए वैध रूप से आबद्द” पदों की वर्तमान परिभाषा के अधीन जब तक विधि किसी व्यक्ति द्वारा किसी विशिष्ट बात को करने का आदेश भी कई शब्दों में नहीं करती है कि व्यक्ति वह बात करने का लोप नहीं करेगा तब तक व्यक्ति को वह कार्य “करने के लिए वैध रूप से आबद्द” नहीं समझा जा सकता। इस विचार से नई धारा को प्रतिस्थापित करने की वांछा की गई, जो ठीक प्रतीत होती है।

#### खंड 16

12.11. इस खंड के अधीन विद्यमान धारा 48, 49 और 50 को, जो क्रमशः “जलयान, वर्ष, मास, धारा” को परिभाषित करती है इन कारणों से लोप किए जाने की वांछा की गई है कि ये साधारण खंड अधिनियम में परिभाषित किए गए हैं। उपर खंड 12 आदि की बात उल्लिखित उन्हीं कारणों से, धारा का लोप किया जाना आवश्यक नहीं है और तदनुसार विधेयक के खंड 16 का लोप किया जाता है।

#### खंड 17

12.12. विद्यमान धारा 52 “सद्भावपूर्वक” शब्द को परिभाषित करती है। धारा 52क “संत्रय” शब्द को परिभाषित करती है। इस खंड के अनुसार, वे दोनों धाराएं नई धाराओं द्वारा प्रतिस्थापित की जाती हैं। विद्यमान धारा 52 में “सद्भावपूर्वक” की परिभाषा उससे मिलती है, जो हमें साधारण खंड अधिनियम में मिलती है। साधारण अधिनियम में सद्भावपूर्वक शब्द निम्नलिखित रूप से परिभाषित है:—

“कोई बात सद्भावपूर्वक की गई समझी जाएगी जहां कि वह तथ्यतः ईमानदारी से की गई है, चाहे वह अपेक्षा से की गई या नहीं।”

देखा जा सकता है कि जहां तक अन्य विधियों का संबंध है, साधारण खंड अधिनियम की परिभाषा यह अधिकथित करती हुई प्रतीत होती है कि किसी कार्य को सदभावी बनाने के लिए प्रयोजन की ईमानदारी मात्र पर्याप्त है। दंड संहिता के अधीन सम्यक् देखरेख और ध्यान पर जोर दिया गया है। उच्चतम न्यायालय के हरभाजन सिंह बनाम पंजाब राज्य (1965 एस सी आर 235-245) के मामले में, पंजाब उच्च न्यायालय के निर्णय को उल्लटो हुए फिर भी यह संप्रेक्षण किया कि “ईमानदारी का तत्व, जो साधारण खंड अधिनियम द्वारा विहित परिभाषा द्वारा आंभ किया गया है, संहिता की धारा 52 द्वारा विहित परिभाषा द्वारा पुरस्थापित नहीं किया गया है।” यह भी देखा जा सकता है कि धारा 52 में परिभाषा की भाषा साधारण खंड अधिनियम की तुलना में सकारात्मक रूप से है। उच्चतम न्यायालय के संप्रेक्षण से यह देखा जा सकता है कि संहिता अभिव्यक्ततः ईमानदारी की अपेक्षा अपवर्णित नहीं करती है। तथापि, संहिता देखरेख और ध्यान के पक्ष पर जोर देती है किन्तु सद्भावपूर्वक विचार में ईमानदारी की अविनिहित है। इसलिए सर्वांगीण दृष्टि से धारा 52 का प्रतिस्थापन उचित ही है। विद्यमान धारा 52क, 1942 में पुरस्थापित की गई थी और यह अधिकथित करती है कि धारा 130 और 157 में के सिवाय, जहां संश्रय उस व्यक्ति को पत्ती या पति द्वारा दिया जाता है, “संत्रय” शब्द के अंतर्गत किसी व्यक्ति को आश्रय, भोजन, पेय आदि देना सम्मिलित है। विधि आयोग ने, इस बात पर ध्यान दिया कि साधारण परिभाषा में धारा 130 और 157 का विशेष उल्लेख अनुचित है और धारा 52क को पुनरीक्षित किया जाना है। विधेयक में इस खंड के अधीन पुरस्थापित किए जाने के लिए वाचित नई धारा निम्नवत है:—

“52क संत्रय—“संत्रय” से किसी व्यक्ति को आश्रय देना अभिप्रेत है और इसके अंतर्गत किसी व्यक्ति को भोजन, पेय, धन, वस्त्र, आद्युध, गोलाबारूद अथवा प्रबद्धरण के साथ देना या पकड़े जाने से बचने के लिए किसी व्यक्ति की, किसी भी रूप में सहायता करना भी है।”

यह देखा जा सकता है कि प्रस्तावित धारा में संश्रय शब्द स्पष्ट और सुनिश्चित है। इसलिए, हम धारा 52 और 52क के प्रतिस्थापन की सिफारिश करते हैं।

#### खंड 18

12.13. इस खंड के अधीन विद्यमान धारा 53 को प्रतिस्थापित करने की वांछा की गई है। प्रस्तावित धारा 53 विभिन्न प्रकार के दंड प्रमाणित करती है। इस नई धारा 54 के अधीन दंड के कुछ नए रूप जैसे कि सामुदायिक सेवा, पदधारण करने की निर्वाता, प्रतिकर संदाय करने का आदेश और लोक परिनिदा जैसे गए हैं। दंड देने की नीति और प्रस्तावित परिवर्तनों पर पहले दी अध्याय 2 में विस्तृत रूप से चर्चा की गई है। उस अध्याय में कथित कारणों से हम लोक परिनिदा के सिवाय, दंड के उन नए रूपों का परिवर्धन पृष्ठाक्रित नहीं करते हैं।

#### खंड 19

12.14. इस खंड के अधीन दंड संहिता की धारा 54 और 55क का लोप करने की वांछा की गई है। धारा 54 मूल्य दंडादेश के लघुकरण के लिए यह उपबंध करती है कि हर मामले में, जिसमें सुधूरतः दंडादेश दिया गया हो, उस दंड का आपरात्री की सम्मति के बिना भी समुचित सरकार इस संहिता द्वारा उपबंधित किसी अन्य दंड में लघुकरण कर सकती है। धारा 55 आजीवन कारावास के उद्देश्य को समुचित सरकार द्वारा 14 वर्ष के कारावास की अवधि को लघुकरण किए जाने का उपबंध करती है। धारा 55क इस समुचित सरकार को परिभाषित करती है, जो धारा 54 और धारा 55 के अधीन शक्तियों का प्रयोग कर सकती है, अर्थात् केन्द्रीय और राज्य सरकारें। विधि आयोग ने दंड प्रक्रिया संहिता संबंधी अपनी 42वीं रिपोर्ट में दंड प्रक्रिया संहिता: 1898 की धारा 402(1) साथ ही साथ दंड संहिता की धारा 54, 55 और 55क की जांच करके यह देखा था कि दंड प्रक्रिया संहिता, 1898 की धारा 402(3) में यथा उल्लिखित समुचित सरकार कुछ अस्पष्ट है। तथापि, विधि आयोग ने इस बात पर ध्यान दिया कि धारा 54, 55 और 55क में लघुकरण की बाबत उपबंधों के अधिकार की दंड प्रक्रिया संहिता, 1898 में पुनरावृत्ति हुई है और यह सिफारिश की थी कि इस पुनरावृत्ति को हटाया जाना चाहिए और विधि एवं स्थान पर, अर्थात् दंड प्रक्रिया संहिता में कथित होनी चाहिए। विषय के इस दृष्टिकोण से विधि आयोग ने अपनी 42वीं रिपोर्ट में इन तीनों धाराओं को हटाने की सिफारिश की थी। उस आधार पर खंड 19 विधेयक में शामिल किया गया है। 1973 की दंड प्रक्रिया संहिता में इस सिफारिश पर ध्यान दिया गया है और उसे नए तौर पर संबंधाक्रित धाराओं, अर्थात् धारा 432 और धारा 433 में सम्मिलित किया गया है। इस बात पर ध्यान दिया जा सकता है कि विधि आयोग ने दंड प्रक्रिया संहिता, 1898 से संबंधी अपनी पांचवीं रिपोर्ट में यह उल्लेख किया था कि अस्पष्टता, विशेष रूप से समुचित सरकार की परिभाषा के संबंध में, को दृटाने के लिए धारा 54, 55 और 55क के कुछ उपबंधों का समावेश करके धारा 402 को पुनरीक्षित किया जाना चाहिए। धारा 432(7) में “समुचित सरकार” का अर्थ दिया गया है और वह अस्पष्टता, जो धारा 55क की भाषा में विधि आयोग द्वारा देखी गई है, दूर कर दी गई है। जहां तक लघुकरण का संबंध है, मारतीय दंड संहिता की धारा 54 और 55 के उपबंध सम्यक् रूप से दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 421 में सम्मिलित कर लिए गए हैं इसलिए, खंड 19, जिसके अधीन धारा 54, 55 और 55क के लोप की वांछा की गई है, उपर यथादर्शित दंड प्रक्रिया संहिता में किए गए परिवर्तनों को देखते हुए बहुत ज्ञानी उचित है।

#### खंड 20

12.15. इस खंड के अधीन “20 वर्ष का कारावास” शब्दों के स्थान पर “20 वर्ष का कठिन कारावास” शब्द प्रतिस्थापित किए जाने हैं। अध्याय 2 में यथाचर्चित कुछ निर्णय के परिप्रेक्ष्य में यह आवश्यक है।

#### खंड 21

12.16. इस खंड के आधार पर, धारा 64 और 65 को पुनरीक्षित धाराओं द्वारा प्रतिस्थापित किया जाना है। ये पुनरीक्षित धाराएं जुमनि आदि देने में व्यतिक्रम किए जाने के लिए दंड का उपबंध करती है और ये संशोधन आनुषंगिक हैं तथा ये संशोधन किए जाएं।

#### खंड 22

12.17. पुनरीक्षित धारा 64 और 65 के परिप्रेक्ष्य में धारा 66 का लोप किया जाए।

#### खंड 23

12.18. इस खंड के अधीन धारा 67 और 68 के बीच जुमनि से दंडनीय अपराध की दशा में जुर्माना देने में व्यतिक्रम किए जाने पर कारावास अधिरोपित करने का उपबंध करने के लिए पुनरीक्षित धाराओं द्वारा प्रतिस्थापित किए

## खंड 25

12.20. इस खंड के अधीन जुमनि के उद्घरण के लिए समय सीमा और कुछ अपराधों से मिलकर बने अपराधों के लिए दंड की अधिकारी का उपबंध करने के लिए धारा 70, 71 और 72 के स्थान पर पुनरीक्षित धाराएं प्रतिस्थापित की जाएं। पुनरीक्षित धाराएं इन सभी पहलुओं पर व्यापक हैं और इनका संशोधन किया जाए।

## खंड 26

12.21. इस खंड के अधीन दंड के रूप में एकांत परिरोध का उपबंध करने के लिए धारा 73 और 74 का लोप किया जाना चाहिए है। पूर्वतर रिपोर्ट में विधि आयोग ने यह संप्रेक्षण किया कि आधिकारिक विचारों में यह दंड अप्रचलित है। इसलिए इसका लोप किया जाए क्योंकि एकांत परिरोध भारतीय दंड संहिता जैसे परिनियम के अधीन एक साधारण दंड नहीं हो सकता है। यह जेल में अनुशासन की दशा में, आवश्यक हो सकेगा जिसके लिए कारागार विधि का उपबंध किया जाए। इसलिए, इन दो धाराओं का लोप करना आवश्यक है।

## खंड 27

12.22. इस खंड के अधीन नई धारा 74क, 74ख, 74ग और 74घ समिलित की जानी चाहिए है। नई धारा 74क सामुदायिक सेवा के दंड के अधिरोपण का उपबंध करता है। हम अध्याय 2 में इस पहलु पर चर्चा कर चुके हैं। हम इस निष्कर्ष पर पहुंचे हैं कि सामुदायिक सेवा के रूप में दंड व्यावहारिक रीति में निष्पादित नहीं किया जा सकता है। प्रस्तावित धारा 74ख पीड़ितों को प्रतिकर के लिए दंड का उपबंध करती है। दंड प्रक्रिया संहिता संबंधी अपनी रिपोर्ट में हमने ऐसे प्रतिकर के लिए उपबंध करने के लिए धारा 35 में उपर्युक्त संशोधन प्रस्तावित किए हैं और दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 74ख में उल्लिखित सभी पहलुओं को उसमें समिलित करने के लिए कहा है। इसलिए, हम नई धारा 74क और 74ख को जोड़ने या समिलित करने की सिफारिश नहीं करते हैं।

तथापि, धारा 74ग उपधारा (3) के अंतर्गत अधिष्ठायी दंड के अतिरिक्त, लोक परिनिदा के रूप में दंड अधिरोपण करने का उपबंध करती है और यह अध्याय 12, 13 धारा 272 से 276, 383 से 389, 403 से 409, 415 से 420 में उल्लिखित अपराधों और अध्याय 1 के अन्तर्गत अपराधों तथा विधेयक के अंतर्गत प्रस्तावित नई धारा 420क और 462क के अधीन अपराधों तक सीमित है। ये ऐसे सभी अपराध हैं जहां कोई व्यक्ति लोक कर्तव्य के पदों में के ऐसे अपराध करता है। इसलिए, लोक परिसंघ का अतिरिक्त दंड दितकर प्रभाव डालेगा।

नई धारा 74घ अतिरिक्त दंड, अर्थात् पद धारण करने से निर्दृता के अधिरोपण को उपबंध करता है। यह लोक सेवकों को लागू होता है। हम अध्याय 2 में इस पहलु पर चर्चा कर चुके हैं और हम इस निष्कर्ष पर पहुंचे हैं कि इस पहलु को सुसंगत अधिनियमों या नियमों के अधीन अनुशासनात्मक कार्रवाई करने के लिए संबद्ध विभाग पर छोड़ दिया जाए। अतः, हम इस नई धारा 74घ को समिलित करने की सिफारिश नहीं करते हैं। परिणामस्वरूप, परिनिदा के रूप में अतिरिक्त दंड का उपबंध करने के लिए नई धारा 74ग, 74क के रूप में पुनः संख्याक्रित की जा सकती है और जोड़ी जाए।

## खंड 31

12.23. प्रस्तावित नई धारा 94—विद्यमान धारा 94 यह अधिकथित करती है कि हत्या और मृत्यु से दंडनीय उन अपराधों को, जो राज्य के विरुद्ध हैं, छोड़कर कोई बात अपराध नहीं है, जो ऐसे व्यक्ति द्वारा की जाए, जो उसे करने के लिए ऐसी धमकियों से विश्वा किया गया हो, जिसे उस बात को करते समय उसकी युक्तियुक्त रूप से यह आशंका करित हो गई हो कि अन्यथा परिणाम यह होगा कि उस व्यक्ति को तत्काल मृत्यु हो जाए। तथापि, यहां आशंका इस प्रभाव की है कि उस कार्य को करने वाले व्यक्ति ने अपनी हड्डी से अपने को इस स्थिति में न डाला हो। यह धारा यह सिद्धांत समिलित करती है कि यदि किसी व्यक्ति को कोई कार्य करने के लिए बल या धमकियों द्वारा विश्वा किया जाए तो उस कार्य के लिए वह दंडित नहीं किया जाएगा। तथापि, इसके बारे अपवाद है। विधि आयोग ने, अपनी 42वीं रिपोर्ट में यह सुझाव दिया कि विवाद्यता के अपराध का सप्तोग विस्तार किया जा सकता है ताकि उनमें “नजदीकी नारेदारों” को धमकी शामिल हो सके जिसमें माता-पिता, पति-पत्नी, पुत्र या पुत्री को पुनर्गठित किया जा सकता है। नई धारा में दो अपवाद और निरोधकारी उपबंध किया गया है।

एक विचार यह भी व्यक्त किया गया है कि कोई व्यक्ति नजदीकी या निकट नारेदार नहीं हो सकता किन्तु ऐसा व्यक्ति हो सकता है जिसमें बाध्य किया गया व्यक्ति बहुत अधिक हितबद्ध हो और यह कि “जिसमें वह व्यक्ति हतबद्ध हो” की धारणा भारतीय दंड संहिता में नई नहीं है क्योंकि वह दमें भारतीय दंड संहिता की धारा 97 में संनिविष्ट मिलती है। हम इस अभिनियम के हैं कि किसी अन्य व्यक्ति को धमकियों का ऐसा समावेश जिसमें कार्य करने वाला व्यक्ति हितबद्ध है, बहुत ही व्यापक होगा और न्यायशास्त्र के सिद्धांतों की दृष्टि से स्वीकार्य विचार नहीं हो सकता है। फिरौती के लिए आलकों के व्यपहरण की द्वाल में धमकियों को देखते हुए, शिकार व्यक्ति को मृत्यु या घोर शारीरिक क्षति करित करने की धमकियां देना जो सामान्य घटनाएं बन गई है। इसलिए, नजदीकी रिश्तेदारों जैसे माता-पिता, पुत्र-पुत्री आदि को धमकियों का समावेश पर्याप्ततः प्रयोजन को पूरा करेगा।

यह ध्यान देने योग्य है कि विद्यमान धारा 97 में दो अपवाद इत्या और राज्य के विरुद्ध अपराध है और धमकी तत्काल मृत्यु की है कि वह व्यक्ति अपराध करे उस दद जिस तक वह इस उपबंध के अधीन फायदा पाता है। धारा 99 उन निर्बन्धनों को प्रगाणित करती है जो प्राइवेट प्रतिरक्षा का अधिकार करने के संबंध में है। धारा 100 उन परिस्थितियों को प्रगाणित करती है जिनके अधीन शरीर की प्राइवेट प्रतिरक्षा के अधिकार का विस्तार मृत्यु करित करने तक है। धारा 309 का अपवाद 2 इस आशय का है कि आपराधिक मानव वध इत्या नहीं है। यदि अपराधी प्राइवेट प्रतिरक्षा के अधिकार को सद्भावपूर्वक प्रयोग में लाते हुए उसको दी गई शक्ति का अतिक्रमण कर दे और पूर्व चिन्तन के बिना और ऐसी प्रतिरक्षा के प्रयोजन के लिए जितनी अपहानी करना आवश्यक हो उससे अधिक अपहानी करने के किसी आशय के बिना उस व्यक्ति की मृत्यु करित कर दे।

एक प्रश्न यह उठता है कि उन अपराधों की प्रकृति क्या होगी जो धमकी के अधीन या प्रतिस्थापित की जाने वाली नई धारा के अधीन विवरित है। क्या यह किसी परिस्थितियों के अधीन आपराधिक मानव वध होगा जो हत्या की कोटि में नहीं आता है। मृत्यु करित करना आपराधिक मानव वध की कोटि में आता है। प्रश्न यह है कि यह हत्या की कोटि में आता है या नहीं, यह आनुषंगिक परिस्थितियों पर निर्भर करता है। यदि वे धारा 300 की अपेक्षाओं को पूरा कर देती हैं तो हत्या होगी। यह पक्ष न्यायालयों में विचार का विषय होगा जब वे धारा 94 के फायदे का विस्तार कर रहे हों तब हम इन स्पष्टीकरण के साथ धारा 94 के प्रतिस्थापन की सिफारिश करते हैं।

प्रस्तावित नई धारा 94क और 94ख—इस खंड के अधीन दो और नई धाराएं 94क और 94ख को अंतःस्थापित करने की वांछा की गई है। धारा 94क किसी कंपनी पर प्रथम आत्मंतिक और कठोर दायित्व डालने और संबंध कंपनी को दंडित करने के लिए है। जब कभी उसका कोई कर्मचारी कंपनी के कामकाज को अप्रसर करने में कोई अपराध करता है। यह इसे भी विनिर्दिष्ट करती है कि ऐसा अपराध गठित करने वाला कोई ऐसा कार्य, जिससे वह अपराध बनता है, प्रबंध, निदेशक बोर्ड या किसी ऐसे व्यक्ति द्वारा, जो अन्य कर्मचारियों के नियंत्रण की स्थिति में है या कंपनी की नीति और कारबाह के विकास की स्थिति में है, कार्य का अतिक्रमण करके या तो प्राधिकृत निवेदित, आदि, अनुसमर्पित या सुगम किया जाता है। धारा 94क (2) उस अपराधों के वर्ग की चर्चा करता है जिनमें आपराधिक मानसिक दशा का अस्तित्व एक शर्त है और किसी कर्मचारी द्वारा, वह चाहे जिसे किसी स्थिति में हो, किए गए अपराध के लिए कंपनी पर आत्मंतिक दायित्व नियत करती है। धारा 94ख, धारा 94क की अनुप्राप्त धारा है जिसके अधीन ऐसे व्यक्ति, जो कंपनी के कारबाह के संचालन के लिए उस कंपनी के भारासाधक या उत्तरदायी कर्मचारी द्वारा किए गए अपराध के लिए आन्वयिक रूप से दायी बनाया गया हो तो और इन दोनों उपबंधों में अंतर्निहित सम्पूर्ण धारणा यह है कि ऐसे व्यक्ति, जो कंपनी के कार्यक्रम के भारासाधक हो तो उसके कर्मचारी संदैव आन्वयिक रूप से दायी होने चाहिए जो इसलिए दंडित करता है कि उनसे यह आशा की जाती है कि वे कर्तव्य के प्रति निष्ठा और कंपनी के कामकाज के प्रबंध में सतर्क कर्तव्य का प्रयोग करें, और यदि वे किसी भी रीति से कर्तव्य के अतिलंघन द्वारा किसी कर्मचारी द्वारा उस प्रकृति के किसी अपराध को प्राधिकृत करें, निवेदन करं आदेश दें, अनुसमर्थन करे या सुकर बनाए तो समस्या के प्रति उत्तरदायी होने चाहिए। हमने सतर्कतापूर्वक उपबंधों के प्रत्येक अंश की जांच है। अनेक कार्यशालाओं में भारतीय दंड संहिता में, जो एक अधिष्ठायी विधि है, इन दोनों उपबंधों को शामिल करने की वाद्धनीयता के बारे में विस्तृत चर्चा और विचार विमर्श किए गए थे। यह उल्लेख करने की आवश्यकता नहीं है कि यदि भारतीय दंड संहिता के अधीन अपराधों में से कोई अपराध किया जाता है तो भारतीय दंड संहिता के उपबंध लागू होने चाहिए और आन्वयिक दायित्व की धारणा को सुसंगत उपबंधों द्वारा, जिसके अंतर्गत दुष्प्रेरण, प्रयत्न और घटनाएं व्यक्त हैं, ध्यान में रखा जाएगा। उसके अतिरिक्त, वे अपराध जो कंपनी के कामकाज के प्रति निर्देश से किए गए परिकल्पन के जाकरते हैं, पूर्णतः भिन्न प्रकृति के होंगे और उनमें से कुछ कानूनी हो सकेगा। ऐसी अन्य अनेक विशेष अधिनियमितियां हैं जो एक व्यापक सीमा तक ऐसे अपराधों को आचारित कर लेती हैं जो कंपनी द्वारा किए जाने के योग्य हो सकते हैं। एकाधिकार और अपरोधक व्यापारिक व्यवहार अधिन

सभी मामलों में आत्मरक्षा का अधिकार नहीं हो सकता। आत्मसंरक्षण का देतुक प्रत्येक व्यक्ति में सन्निहित है। 1860 की संहिता में लोखक, रतन लाल और धीरज लाल ने "ला आफ क्राइस्ट" (23 अंडायक 1, 1987) पृष्ठ 273 पर यह कहा है कि:—

"हम विधिविरुद्ध आक्रमण को रोकने के प्रयोजन के लिए सद्भावपूर्वक किए गए कार्यों को एक व्यापक वर्ग को, संहिता के उपबंधों के प्रवर्धन से निकालने का प्रस्ताव करते हैं। अध्याय के इस भाग में इमने उतनी ठीक रीति से जितना कि विषय हमें प्रतीत होता है प्राइवेट प्रतिरक्षा के अधिकार की सीमाओं को स्वीकार करने की परिमाणा को प्रस्तुत करने का प्रयत्न किया है। यह सोचा जा सकता है कि अन्य इस अधिकार के प्रयोग में एक स्वचंद्रदत का विद्या ज्ञान अनुज्ञात किया है और हम स्वयं इस अभिमत के हैं कि यदि हम उत्तरदायी और उच्च ज्ञान सम्पन्न लोगों के लिए विधि बनाते हैं जो अपने द्वारों में विधि को लेने के अभ्यस्त हैं और क्षमता को रोकने में संयम की सीमा रेखा से परे चले जाते हैं तो उसके लिए अतिरिक्त निर्बंधनों का उपबंध करना सुविधाजनक होगा। इस देश में खतरा दूसरी ओर है लोग अपने आप की सहायता करने में बहुत कम आन्यस्त हैं। जो दृत्यांतों गुहों द्वारा व्यक्तिसंहित डॉक्यूमेंट के द्वारा आहत करने वाली रीति में की गई रिप्रिटियों का क्लूर लूटमार का दंड सहते हैं। अत्यंत मदत्वपूर्ण बात है और साथ ही साथ भारत के द्वितीयां समाज को भी हमारे समक्ष प्रस्तुत करते हैं। ऐसी परिस्थितियों में हम आत्मरक्षा के अधिकार के प्रयोग पर निर्बंधनों को बढ़ा देने की अपेक्षा मनुष्यों के व्यवहार को उन्नत करना और उन्हें प्रोत्साहित करना बाह्यनीय समझते हैं। हमारा यह अभिमत है कि वे सभी बुराइयां, जिनके उस अधिकार के दुरुपयोग से उत्पन्न होने की संभावना है, उस बुराई की अपेक्षा बहुत कम गंभीर है, जो एक व्यक्ति को, डॉक्यूमेंट के समुदाय का विरोध करने की नियंत्रण की सही सीमा का उल्लंघन करने में प्रतीत होती है, प्राण दंड देने से उत्पन्न होती है।"

यदि हम वर्तमान परिवृष्टि पर विचार करें तो पते हैं कि लेखकों द्वारा उल्लिखित ऐसे अपराधों की बाबत प्रतिरक्षा का परिवर्तन नहीं हुआ है। इसलिए, आत्मरक्षा के अधिकार पर आधारित शरीर और सम्पत्ति की प्राइवेट प्रतिरक्षा की विधि आत्मंतिक रूप से आवश्यक है।

विद्यमान धारा 96 से 106 प्राइवेट प्रतिरक्षा के अधिकार का विश्लेषण करती है और उसे परिसीमित करती है। ये उपबंध प्रायः न्यायालयों के समक्ष निर्वचन और लागू किए जाने के लिए आए हैं। धारा 96 में कथन है कि कोई बात अपराध नहीं है जो इस अधिकार के प्रयोग में की जाती है। इस अधिकार का पश्चात्वर्ती धाराओं में से पहलुओं से विश्लेषण किया गया है अर्थात् शरीर की प्रतिरक्षा और संपत्ति की प्रतिरक्षा। धारा 97 इन दोनों पहलुओं को परिमाणित करती है जबकि धारा 98 और 99 दोनों पहलुओं को लागू होती है। धारा 100, 101, 102 और 106 शरीर की प्रतिरक्षा से संबद्ध हैं और धारा 103, 104 और 105 संपत्ति की प्रतिरक्षा से संबद्ध हैं।

विधि आयोग ने अपनी 42वीं रिपोर्ट में इन उपबंधों को इस प्रकार साथ लाने की पुनःव्यवस्था करने का प्रस्ताव किया था कि शरीर की प्रतिरक्षा में अधिकार से संबंधित उपबंध एक धारा में है और संपत्ति की सुरक्षा से संबंधित उपबंध उपधारा में है। यह उनकी सरलता से समझने और उनका लागू होना सुकर बनाने के प्रयोजन के लिए सुझाया गया था। विधेयक में धारा 97 और 98 की बाबत कोई परिवर्तन प्रस्तुत नहीं किया गया है। धारा 99 के संबंध में विधि आयोग ने धारा 99 के विभिन्न खंडों पर विचार करने के पश्चात्, उस धारा में एक नए उपबंध की सिफारिश की थी जिससे कि धारा 97 द्वारा प्रदत्त उन्नुक्ति को प्राइवेट प्रतिरक्षा के अधिकार के पश्चात्, उस धारा में एक नए उपबंध की सिफारिश की थी जिससे कि धारा 97 द्वारा प्रदत्त उन्नुक्ति को प्राइवेट प्रतिरक्षा के अधिकार के अतिरिक्त संरक्षण केवल तभी दिया जाना चाहिए जब लोक सेवक न्यायालय के आदेश के अनुसरण में कार्य करता है। धारा 99 के अधीन का आने वाले दीसरे पैरा को विधि आयोग ने इटाने की सिफारिश की है। यह ध्यान दिया जा सकता है कि विद्यमान धारा 99 के दीसरे पैरा में अधिकथित निर्बंधन, अर्थात् उन दशाओं में जहां लोक प्राधिकारियों की सहायता प्राप्त करने के लिए समय है, प्राइवेट प्रतिरक्षा का अधिकार विवरित है। तथापि जहां लोक प्राधिकारियों की सहायता प्राप्त करने के लिए पर्याप्त समय था अर्थात् नहीं यह प्रत्येक मामले में तथ्य का प्रश्न है। यदि यह निर्बंधन पूरी तरह दटा दिया जाए जो उस कार्यों की बाबत भी, जहां तक्तालिक खतरा नहीं है विशेष रूप से, जो संपत्ति से संबंधित है, सुरक्षा की दृष्टि से लोग उस अधिकार के प्रयोग का अवलोकन ले सकते हैं भले ही उनके साथ संपत्ति के खतरे से बचने के प्रयोजन के लिए पर्याप्त समय रहा हो। इसलिए, हमारा यह अभिमत है कि यह निर्बंधन बनाए रखना चाहिए।

विधेयक के खंड 32 के अधीन विद्यमान धारा 99 को प्रतिस्थापित करने की वांछा है और तीसरे खंड को पूरी तरह हटाया जाना अपेक्षित है। इसलिए इसमारी यह सिफारिश है कि विद्यमान धारा का तीसरा पैरा प्रस्तावित धारा में शामिल किया जाना चाहिए और खंड पुनःव्यवस्थित किया जाना चाहिए।

विद्यमान धारा 100 किसी डमलावर को मार देना उचित ठहराती है उसके अधीन विभिन्न खंडों में प्रगणित गंभीर अपराधों की आशंका कारित होती है और उन्हें धारा 99 के उपबंधों के अध्ययन पढ़ा जाना चाहिए। धारा यह अधिकथित करती है कि शरीर की प्राइवेट प्रतिरक्षा के अधिकार का विस्तार धारा 99 में वर्णित निर्बंधनों के अधीन रहते हुए, डमलावर की स्वेच्छया मृत्यु कारित करने या कोई अन्य अपहानि कारित करने तक है, यदि वह अपराध, जिसके कारण खंड 1 से 6 तक में प्रगणित वर्णनों के किसी अवसर के कारण

होती है। इन खंडों, 1 से 6 तक में मृत्यु, घोर उपहारि, बलात्संग, प्रकृति विरुद्ध काम करना, व्यपहरण या अपहरण, सदोष परिरोध जैसे गंभीर अपराध उल्लिखित हैं। विधि आयोग ने विद्यमान धारा 100 की जांच करने के पश्चात् तीसरे, चौथे और पांचवें खंड की बाबत किसी संशोधन का सुझाव नहीं दिया। तथापि, अन्य परिवर्तन का सुझाव दिया जाता है अर्थात् पांचवें खंड में अपहरण की बाबत अधिकार का प्रयोग सीमित होना चाहिए जहां अपहरण संहिता के अधीन दंडनीय है व्योकि अपहरण अपने आप में ही दंडनीय नहीं है जब तक कि यह धारा 364 से 369 तक में विनिर्दिष्ट किसी एक या अधिक आशय के साथ नहीं किया जाता है। विधेयक के खंड 33 के अधीन कुछ और परिवर्तन जोड़े गए हैं। खंडों को "क से ड" तक के रूप में संख्यांकित किया गया है। इंदिया मोग के आशय से किया गया हमला भी जोड़ा गया है और अपहरण की बाबत यह संहिता के अधीन दंडनीय होना चाहिए। तथापि, खंड 3 ऐसा है जो ठीक उसी आशय का है, जैसा कि विद्यमान धारा में खंड छठा। इसलिए प्रस्तावित परिवर्तन अपेक्षित है।

विद्यमान धारा 101 के अधीन "डमलावर की मृत्यु से भिन्न कोई अपहानि स्वेच्छा कारित करने" शब्दों के स्थान पर विधेयक के खंड 34 में "डमलावर की मृत्यु से भिन्न कोई अपहानि स्वेच्छा कारित करने या उसकी मृत्यु अस्वेच्छा कारित करने के मामले हो सकते हैं। उदाहरणार्थ डमलावर और उपेक्षापूर्ण कार्य द्वारा मृत्यु यह परिवर्तन ठीक प्रतीत होता है।

धारा 103 यह उपदर्शित करता है कि कब व्यक्ति संपत्ति की प्रतिरक्षा में कार्य कर सकता है और खंड 1 से 4 तक में उन अपराधों को प्रगणित करता है जिनकी बाबत इस अधिकार का विस्तार होता है। इस धारा के अधीन अधिकार का विस्तार केवल तभी नहीं होता जब वह प्रकार प्रगणित अपराध किए जाते हैं अपितु तब भी जब करने का प्रयत्न किया जाता है। विधि आयोग ने, अपनी 42वीं रिपोर्ट में यह कहा है कि दूसरा खंड रात्रि गृहमेदन का उल्लेख करता है किन्तु रात्रि में प्रचलन गृह अतिचार का नहीं जो उतनी ही कठोरता से दंडनीय है जितना कि रात्रों गृहमेदन और प्रायः यह विनिश्चित करना कठिन हो जाता है कि अपराधी ने प्रचलन गृह अतिचार किया था अथवा गृहमेदन। विधि आयोग ने यह भी संप्रेषण किया चूंकि संपत्ति के विषय में अपराधों से संबंधित अध्याय 17 में कठिप्रय संशोधन किए जाने हैं। जहां रात्रों गृहमेदन एक पृथक अपराध नहीं रह जाएगा और इस आधार पर दूसरे खंड का भी लोप करने की सिफारिश की। विद्यमान खंड 4 आपराधिक अतिचार के वर्धित रूपों को भी शासित करता है। विद्यमान धारा 441 आपराधिक अतिचार को, 442 गृह अतिचार को, 443 रात्रों प्रचलन गृह अतिचार को, 445 गृहमेदन को और 446 रात्रों गृहमेदन को परिमापित करती है। ये धारा 4 विद्यमान संहिता में, भारत में अभिभावी परिस्थितियों को विचार में लेते हुए उसमें सम्मिलित की गई थी। विधि आयोग ने अपने 42वीं रिपोर्ट में अध्याय 17 के अधीन अपराधों, अर्थात् संपत्ति से संबंधित अपराधों के संबंध में विचार करते हुए इन उपबंधों को हटाए जाने और "चोरी" के अधीन एक नई धारा 445 प्रतिस्थापित करने की सिफारिश की थी। हमने उपदर्शित करने के खंड 182 की जांच करते समय इन परिवर्तनों पर विचार किया है और हमारा यह अभिमत है कि प्रस्तावित परिवर्तन प्रशंसनीय है। परिणामस्वरूप, विधि आयोग द्वारा धारा 103 के खंड "दूसरे" की बाबत प्रस्तावित परिवर्तनों को समाविष्ट किए जाने की आवश्यकता है। विधि आयोग ने यह भी सिफारिश की थी कि अग्रिंद्राम द्वारा रिप्रिट में अपराध से संबंधित खंड 3 को विस्फोटक पदार्थ द्वारा रिप्रिट जोड़कर व्यापक बनाया जाना चाहिए।

विधेयक की प्रस्तावित धारा 103 में सरकार किसी निगम के प्रयोजनों के लिए प्रयुक्त किए जाने के लिए आशयित किसी संपत्ति गृह की रिप्रिट के अपराध से संबंधित नया खंड (घ) है।

प्रस्तावित धारा में दो और नए खंड (ड) और (च) जोड

धारा में किसी परिवर्तन का प्रस्ताव नहीं किया है। तथापि, यह सिफारिश की थी कि पैरा 5 का लोप किया जाए जो रात्रि-गृहभेद के संबंध में है। नई धारा गृह अतिवार के संबंध में है जिस पर खंड 132 के अधीन हमने विचार किया है और उसके अधीन अनुमोदित परिवर्तनों के कारण खंड 5 का तदनुसार लोप किया जाना है। तथापि नई धारा में हमें खंड (ग) मिलता है जिसमें वायुयान भाग ले जाने का भी उल्लेख है। धारा 103 के प्रति निर्देश से खंड 35 में परिवर्तनों पर विचार करते समय हमने यह संप्रेरण किया था कि खंड (च) का, जो “वायुयान को भाग ले जाने” के संबंध में है, लोप किया जाना चाहिए। उसी कारण से प्रस्तावित नई धारा 105 में खंड (ग) में “वायुयान को भाग ले जाना” शब्दों का लोप किया जाना होगा।

#### खंड 38 से खंड 44

12.26 भारतीय दंड संहिता के अधीन “दुष्प्रेरण एक पृथक एक सुभिन्न अपराध है परन्तु यह तब जब कि दुष्प्रेरित की गई आत अपराध हो। एक साधारण नियम के बारे में दुष्प्रेरण का आरोप असफल हो जाता है यदि साधिकारी अपराध मूल दमलावर के विरुद्ध साबित न हो तो पाता है। उच्चतम न्यायालय ने जमुना सिंह (ए आई आर 1967 एस सी 553) के मामले में यह अभिनिधारित किया कि विधि में यह उन्हें कहा जा सकता है कि कोई व्यक्ति कतिपय अपराध के दुष्प्रेरण के लिए कभी भी सिद्धदोष नहीं किया जा सकता जबकि दुष्प्रेरण के परिणामस्वरूप उस अपराध को करने के लिए अधिकथित व्यक्ति दोषमुक्त हो गया हो। और दुष्प्रेरण के जेल का ग्रन्थन दुष्प्रेरण की प्रकृति और उस रीति पर निर्भर करता है जिस रीति से दुष्प्रेरण किया गया था।

अध्याय 5 में धारा 107 से 120 तक दुष्प्रेरण के संबंध में है। धारा 107 दुष्प्रेरण को तीन शीर्षों के अधीन वर्गीकृत करती है अर्थात् उकसाकर या बहयंत्र कर या साधाय सदायता देकर। धारा 107 और 108 दोनों में इन्हें स्पष्ट किया गया है। विधि आयोग ने, अपनी 42वीं रिपोर्ट में धारा 120क की जांच की जो यह अधिकथित करती है कि जब दो या अधिक व्यक्ति अपराध करने या करवाने के लिए सम्मिलित होते हैं तो वे उस अपराध को करने के अपराधिक बहयंत्र के दोषी होते हैं। चाहे उनके कोई भी पक्षकार करार के अतिरिक्त उसके अनुसरण में, कोई कार्य करता है या नहीं और यह नोट किया कि वे व्यक्ति, जो आरंभिक रूप से अपराध करने के बहयंत्र के दोषी हैं, जैसे ही उस बहयंत्र के अनुसरण में कोई कार्य दुष्प्रेरण के लिए दोषी हो जाते हैं और 1913 में धारा 120क और 120ख के अधिनियम के पश्चात जिनमें बहयंत्र भी, उसी रीति से जैसे कि दुष्प्रेरण है, दंडनीय बना दिया गया है। बहयंत्र द्वारा किसी अपराध के दुष्प्रेरण ने अपनी सुरक्षात खो दी है और इसलिए अध्याय 5 में उस सभी निर्देशों का जिसमें धारा 107 “षड्यंत्र द्वारा दुष्प्रेरण भी है, लोप किया जाना चाहिए। विधि आयोग ने, धारा 108 और 108क की भी जांच की थी और कुछ विनिश्चित मामलों को निर्दिष्ट कर के यह सिफारिश की थी कि स्पष्टीकरण 2 और 3 को सम्मिलित और प्रतिस्थापित किया जा सकता है और स्पष्टीकरण 5 को पुनः लिखा जा सकता है और स्पष्टीकरण 5क जो बहयंत्र द्वारा दुष्प्रेरण के बारे में उल्लेख करता है, का लोप किया जा सकता है। तदनुसार उसी के अनुसार विधि आयोग ने सिफारिश की थी कि धारा 108 और 108क को सम्मिलित और प्रतिस्थापित किया जा सकता है। भारतीय दंड संहिता (संशोधन) विधेयक, 1978 के खंड 38 में इन्हीं सिफारिशों को कुछ परिवर्तनों द्वारा सम्मिलित किया गया है। कुल मिलाकर खंड 38 में यथा उल्लिखित धारा 108, विधि आयोग द्वारा की गई सिफारिशों के अनुरूप है, इसलिए, हम किसी और परिवर्तन की सिफारिश नहीं करते।

धारा 115 और 116 अपराध के सफल दुष्प्रेरण के लिए दंड के संबंध में है। धारा 115 विनिर्दिष्ट रूप से “मृत्यु या आजीवन कारावास” से दंडनीय अपराध के असफल दुष्प्रेरण के लिए दंड के संबंध में है। यह स्पष्ट किया था कि “मृत्यु या आजीवन कारावास” शब्द अस्पष्ट है और इनके अंतर्गत राजदोह भी आ सकता है। इसलिए, उन्होंने इसें ऐसे मृत्यु से दंडनीय अपराधों तक सीमित करने की सिफारिश की थी जिनके लिए मृत्यु हो अथवा विधि द्वारा उपबंधित दंडों में से मृत्यु दंड ही एक मात्र दंड है और तदनुसार, इस धारा के पुनरीक्षण की सिफारिश की थी। विद्यमान धारा 116 कारावास से दंडनीय अपराधों के लिए, जब अपराध नहीं किया जाता है, दंड विधित पुनरीक्षण की सिफारिश की थी। विद्यमान धारा 115 और 116 के बीच परस्पर अतिव्यापित से बचने के लिए यह वांछनीय है कि धारा 116 में, “मृत्यु से दंडनीय अपराध नहीं है” शब्दों को अंतःस्थापित करके मृत्यु से दंडनीय अपराधों को उपर्युक्त किया जाए। विधि आयोग ने, यह भी नोट किया कि दुष्प्रेरण के लिए अधिकतम, दंड, यदि वह अपराध नहीं किया जाता है तो, दीर्घतम अवधि का एक चौथाई ही हो और यह बहुत कम या और इसे अपराध के लिए उपबंधित अधिकतम अवधि के आधे तक बढ़ाया जाना चाहिए। विधि आयोग ने धारा 116 के दूसरे पैरा की भी जांच की और यह सिफारिश की कि जहां दुष्प्रेरण एक ऐसा प्राइवेट व्यक्ति है, अधिक कठोरतापूर्वक किया जाना चाहिए। धारा 117 लोक साधारण द्वारा या दस से अधिक व्यक्तियों की किसी भी संघर्ष के वर्ग द्वारा किसी अपराध के किए जाने के दुष्प्रेरण को लागू होनी है। विधि आयोग ने कुछ उच्च न्यायालयों के निर्णयों पर विचार करके यह सिफारिश की कि एक नई धारा 117क अंतःस्थापित की जाए जो इस आशय की हो कि जो कोई किसी वर्ग द्वारा, जिसकी आयु 15 वर्ष से कम है, कारावास से दंडनीय किसी अपराध के किए जाने का दुष्प्रेरण करता है, चाहे अपराध किया गया हो या नहीं, वह किसी भी वर्गन के ऐसे कारावास से बंदित किया जाना चाहिए उस अपराध के लिए उपबंधित नहीं जिसकी अवधि उस अपराध के लिए उपबंधित कारावास की दीर्घतम अवधि की दुगुनी हो सकेगी। इसी प्रकार, विधि आयोग ने धारा 118 और 119 की भी जांच की और कुछ लघु लघु परिवर्तनों का सुझाव दिया जैसे कि मृत्यु से दंडनीय अपराध शब्द प्रतिस्थापित किए जाएं। शामिल किए जाने के लिए बांधित नए उपबंध के परिशीलन से यह पता चलेगा कि वे विधि आयोग की सिफारिशों के अनुरूप हैं और हमारा यह भी अभिमत है कि परिवर्तन न्यायसंगत है।

विधेयक के खंड 39 में सुझाए गए परिवर्तन लघु प्रकृति के हैं।

#### खंड 45

12.27 उस खंड के अधीन एक नया अध्याय 5ख अंतःस्थापित किए जाने की वांछा की गई है। जिसके अधीन नई धारा 120ग और 120ध हैं जिनमें प्रयत्न और प्रयत्न के अपराध के लिए दंड प्रभाषित हैं। विद्यमान धारा 511 का लोप कियां जाना चाहा गया है। हमने सरकारतापूर्वक इस खंड और अध्याय 6 में इन दोनों नई धाराओं के विस्तार की जांच की है और सिफारिश करते हैं कि धारा 511 बनाए रखी जाए और इस खंड को हटा दिया जाए।

#### खंड 47

12.28 इस खंड के अधीन एक नई धारा 23क अंतःस्थापित करने की वांछा की गई है। नई धारा यह अधिकथित करती है कि जो कोई भारत से बाहर किसी शत्रु की या किसी देश को, जिसके विरुद्ध भारत के सशस्त्र बल कार्यरत है, सशस्त्र बलों की किसी भी रीति से सहायता करेगा वह चाहे विदेश या भारत के बीच युद्ध की स्थिति विद्यमान हो या नहीं, दंडनीय होगा। विधि आयोग ने, अपनी 42वीं रिपोर्ट में एक नई धारा अंतःस्थापित करने की सिफारिश की थी किन्तु विधेयक में हम पाते हैं कि धारा में एक स्पष्टीकरण भी जोड़ा गया है जो व्याख्यातमक प्रकृति की है। हमारा भी यह अभिमत है कि नई धारा अंतःस्थापित की जा सकती है।

#### खंड 48

12.29 इस खंड के अधीन विद्यमान धारा 124 को, जो राजदोह के संबंध में है, उसी संख्या वाली एक नई धारा द्वारा प्रतिस्थापित करने की वांछा गई है। विद्यमान धारा 124क में उल्लिखित अधिकारी खंड नई धारा में है। इसके अतिरिक्त, कतिपय कार्य सम्मिलित किए गए हैं। नई धारा में यह उल्लिखित है कि जो कोई, बोले गए या लिखे गए शब्दों द्वारा या संकेतों द्वारा या दृश्यरूपण द्वारा या अन्यथा, भारत की या किसी अन्य राज्य की अखंडता या सुरक्षा का संकटापन करने या लोक अव्यवस्था पैदा करने के आशय से अथवा यह जानते हुए कि उसके द्वारा ऐसा होना संभाव्य है संविधान के प्रति या भारत की सरकार या विधान-संदल या न्यायप्रशासन के प्रति अप्रीति प्रदीप्त करने का प्रयत्न करेगा वह दंडनीय होगा। “अप्रीति” पद वही है सिवाय इसके कि अप्रीति शब्द का लोप किया गया है। यह परिवर्तन संसद, विधान-संदल, न्याय प्रशासन के प्रति अप्रीति के अपराध में परिवर्तन के अनुरूप है जो विद्यमान धारा में नहीं थे। इन दोनों उपबंधों पर विचार करने पर हमारा यह अभिमत है कि विधेयक में जो परिवर्तन किए गए हैं वे किए जा सकते हैं। हमने इन सभी पहलुओं पर अध्याय 7 में विस्तृत रूप से विचार किया है और हमने ऐसे परिवर्तन कर्यों किए जाने चाहिए।

इस खंड के अधीन एक नई धारा 124ख भी अंतःस्थापित करने की वांछा की गई है। इस नए खंड के अधीन, जो कोई भारत के संविधान या उसके किसी भाग के, राष्ट्रीय ध्वज की, राष्ट्रीय संप्रतीक की या राष्ट्रीय गान के, राष्ट्रीय ध्वज आदि जला करके जानबूझकर अवमानना करेगा, वह दंडनीय होगा। विधि आयोग ने अपनी 42वीं रिपोर्ट में यह संप्रेक्षण किया था कि संविधान, राष्ट्रीय ध्वज संप्रतीक और राष्ट्रीय गान की अवमानना के लिए दंड का एक उपबंध होना चाहिए जिसमें संविधान का जलाया जाना और राष्ट्रीय गान की जानबूझकर अवमानना करना शामिल किया जा सकता है तो जो देश विरोधी कार्य है। इसलिए, उन्होंने इस नई धारा के अंतःस्थापन की सिफारिश की थी। उन सिफारिशों के आधार पर राष्ट्र गौरव अपमान निवारण अधिनियम, 1971 अधिनियमित किया गया है। इसलिए, इस नई धारा 124ख को अंतःस्थापित किया जाना

#### खंड 54

12.31 विभिन्न अपराधों के, जो हो रहे हैं, अडे पैमाने पर बलवा को देखते हुए, विधि आयोग ने अपनी 42वीं रिपोर्ट में यह संप्रेक्षण किया था कि बलवा को प्राथमिक स्तर पर ही जो देना बांधनीय होगा और समाज विरोधी तत्वों द्वारा लाठियां, चाकू और अन्य आयुध एकत्र करने का भी उल्लेख किया था जो रिप्टि करने के लिए प्रवृत्त है और ऐसी तैयारी को रोकने की दृष्टि से विधि आयोग ने एक नई धारा 147क के अंतःस्थापन की सिफारिश की थी। तदनुसार, विधेयक के खंड 54 द्वारा एक नई धारा 147क जोड़े जाने की बांधा की गई है। हम उस प्रस्तावित अंतःस्थापन से सहमत हैं।

#### खंड 58

12.32 इस खंड के अधीन एक नई धारा 153ग जोड़ने की बांधा की गई है। धारा 153क और 153ख, 1972 में अध्याय में जोड़ी गई थी जो लोक प्रशास्ति के विरुद्ध अपराधों के संबंध में है। धारा 153क के अधीन जो कोई बोले गए या लिखे गए शब्दों द्वारा असौदार्द, दुर्मिलाना, आदि का संवर्धन करेगा अथवा विभिन्न समूहों के बीच धर्म के आधार पर शत्रुता को बढ़ाने की दृष्टि से कोई कार्य करेगा या किसी आन्दोलन आदि का संगठन करेगा, वह दंडनीय होगा। धारा 153ख के अधीन बोले गए या लिखे गए शब्दों आदि के द्वारा ऐसा कोई लालून लगाएगा या प्रछान्न करेगा, परामर्श देगा, प्रचार करेगा, सलाह देगा या प्रकाशित करेगा, या किसी वर्ग के व्यक्तियों की आधिकारी के संबंध में जो किसी धर्म, भाषा, जाति या समुदाय के हों, ऐसा करेगा वह भी दंडनीय होगा। विधि आयोग ने अपनी 42वीं रिपोर्ट में इन धाराओं के विधायी इतिहास की खोज करके केंद्राधनाथ के मामले में (एं आई आर 1962 एस सी 905) उच्चतम न्यायालय के निर्णय को निर्दिष्ट किया जिसमें धारा 124क की विधिमान्यता बनाए रखी गई। तकों की समतुल्यता पर विधि आयोग ने, यह नोट कियान्ति धारा 153क की विधिमान्यता का भी अनुसमर्थन किया जा सकता है। उसके पश्चात विधि आयोग ने धारा 153क के विस्तार पर विचार किया और यह संप्रेक्षण किया कि धारा 153क के स्पष्टीकरण के विशेषपूर्ण आशय के बिना किसी राजनीतिक दल की आलोचना करने में किसी व्यक्ति के कार्य की ओर ईमानदारों से की गई आलोचना का संरक्षण करता है। तथापि, विधि आयोग ने, धारा 153ग के अंतःस्थापन की सिफारिश नहीं की। इस प्रक्रम पर यह देखा जा सकता है कि विधिमान धारा 505 लोक रिप्टि कारक वक्तव्यों के अपराधों के संबंध में है और यह अधिकथित करती है कि जो कोई रक्षा सेवाओं के कार्मिकों को भय कारित करने के आशय से या लोक आदि को भय कारित करने की दृष्टि से कोई वक्तव्य रखेगा, प्रकाशित करेगा या परिचालित आदि करेगा, वह दंडनीय होगा। विधि आयोग ने, अपनी 42वीं रिपोर्ट में इस धारा को हटाने की सिफारिश, की थी। तथापि, धारा 153क और 153ख में कुछ परिवर्तन करने की भी सिफारिश की जानी जा रही है और उसमें धारा 505क मूल तत्व सिवाय सैनिक, नौसैनिक आदि का लोप किया है। स्पष्टतः, इस कारण से कि रक्षा कार्मिकों के विरुद्ध इन अपराधों पर, उन सेवाओं को लागू तत्संबंधी अधिनियमों में उपबंध किया गया है। हमने इस अध्याय में इस बात पर पहले ही चर्चा की है जो सशस्त्र बलों आदि के विरुद्ध अपराधों के संबंध में है। हम सहमत हैं कि धारा 153ग को, तदनुसार जोड़ा जा सकता है।

#### खंड 63 और 64

12.33 विधेयक के खंड 63 और 64 भारतीय दंड संहिता की धारा 161, 162 और 163 का संशोधन करने के लिए है। चूंकि, इन धाराओं को पहले ही प्रष्टाचार निवारण अधिनियम द्वारा निरसित कर दिया गया है। इसलिए, खंड 63 और 64 का लोप किया जाना है।

#### खंड 66

12.34 इस खंड के अधीन एक नई धारा 166क को अंतःस्थापित करने की बांधा की गई है जो लोक सेवकों द्वारा या उससे संबंधित अपराधों के संबंध में है। यह उल्लेखित है कि धारा 161 से 165क तक के जो कदाचार है, अपराधों के संबंध में है, भारतीय दंड संहिता से इन्हें हटाया जा चुका है और उन्हें प्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1988 के अधीन अपराध बनाया गया है। शेष धाराएं 158 से 171 तक लोक सेवक द्वारा किए गए अपराधों के प्रकारों के संबंध में हैं। विद्यमान धारा 166 लोक सेवकों द्वारा क्षतिकारित करने के आशय से विधि की अवज्ञा के अपराधों के संबंध में है। विधि आयोग ने, अपनी 42वीं रिपोर्ट में यह संप्रेक्षण किया था कि संहिता किसी लोक सेवक द्वारा इस प्रकार के कदाचार को गणना में नहीं लेती है, जहां वह कदाचार घृस खाकर करता है। यह और संप्रेक्षण किया गया है कि यह सुनिश्चित करना बांधनीय है कि कोई लोक सेवक अपने पद के कर्तव्यों में कृत्य कर रहा हो, ऐसा कोई कार्य नहीं करेगा जो अपने आप में सदोष है या कोई ऐसा विधिपूर्ण कार्य अन्यथा सदोष रीति में नहीं करेगा। इस दृष्टि से विधि आयोग ने यह सिफारिश की थी कि ऐसे कदाचार दंडित करने के लिए शास्ति होगी और नई धारा 166क के अंतःस्थापन की भी सिफारिश की थी। नई धारा 166क की प्रस्तावित अंतर्वस्तु धारा 166 की अंतर्वस्तु से जैसी कि वह रखी थीं, भिन्न है। इसमें “विद्वेषपूर्ण किसी व्यक्ति को कोई क्षति कारित हो” शब्द जोड़ दिए हैं अन्यथा धारा में निहित भावना कभी रख नहीं है। इसलिए, धारा 166क अंतःस्थापित की जा सकती है।

#### खंड 68

12.35 इस खंड के अधीन अध्याय 9 में जो लोक सेवकों द्वारा या उसमें संबंधित अपराधों के विषय में है, एक नई धारा

167क अंतःस्थापित करने की बांधा की गई है। विधि आयोग ने, अपनी 42वीं रिपोर्ट में यह नोट किया था कि उनकी पूर्वतर रिपोर्ट, अर्थात् 29वीं रिपोर्ट में भी यह सिफारिश की गई थी कि बेर्इमान ठेकेदारों द्वारा बड़े पैमाने पर सरकार को छलने की समस्या का सामना करने के लिए, जो वे माल का प्रदाय करते या कार्य निष्पादित करते समय करते हैं, ऐसे ठेकेदारों की बाबत अप्राधिकृत समुदाय विनिर्दिष्ट उपबंधों के अधीन दंडनीय बनाया जाना चाहिए। ऐसा नोट करते हुए विधि आयोग ने, अपनी 42वीं रिपोर्ट में एक नई धारा 167क के अंतःस्थापन की सिफारिश की थी। उपबंध के परिशीलन से यह पता लगेगा कि यह विधेयक के वर्तमान परिवृश्य में, जहां लोक संकर्मों का बड़े पैमाने पर निष्पादन किया जा रहा है, यह प्रशंसात्मक है। इसलिए, हम सहमत हैं कि धारा 167क अंतःस्थापित की जा सकती है।

#### खंड 91

12.36 इस खंड के अधीन अध्याय 11 में, जो मिथ्या साक्ष्य, उनमें अपराधों और लोक न्याय के विरुद्ध अपराधों के संबंध में है, नई धारा 198क और 198ख अंतःस्थापित करने की बांधा की गई है। बेर्इमान व्यक्ति, मुकदमेदारी के तौर कभी-कभी न्यायालयों से असंबंध प्रयोजनों के लिए भी लाभ पाने के लिए मिथ्या चिकित्सीय प्रमाणपत्रों का उपयोग करने में फिचिक्चाते नहीं हैं। विधि आयोग ने, सिफारिश की थी कि मिथ्या चिकित्सीय प्रमाणपत्र जारी करना और उनका उपयोग करना नए उपबंधों के अधीन विनिर्दिष्ट रूप से दंडनीय बनाया जाना चाहिए। रिपोर्ट से हमें यह पता चलता है कि इस प्रकार की सिफारिश करने में आयोग ने, यह नोट किया था कि लोग साधारणतः चिकित्सीय प्रमाणपत्र स्वीकार कर रहे हैं क्योंकि वे डाक्टरों द्वारा जारी किए जाते हैं और इसलिए एक विनिर्दिष्ट उपबंध रखना बेहतर होगा। कार्यशालाओं में और विशेषरूप से राष्ट्रीय संबंधों में इस बात पर विस्तृत रूप से विचार-विमर्श किया था कि विभिन्न व्यक्तियों द्वारा जारी किए गए चिकित्सीय प्रमाणपत्रों की संव्यवहृत करने के लिए एक प्रथक अपराध बनाया जाना चाहिए तथा विशेषरूप से उन्होंने भाग लिया था, उस आशय की सर्वसम्मति मिली थी की उपबंध अनावश्यक है और यदि किसी दिए गए मामले में कोई मिथ्या प्रमाणपत्र जानबूझकर इस आशय से दिया जाता है कि इसका न्यायिक कार्यवाहियों में उपयोग किया जाना चाहिए और यदि कोई व्यक्ति ऐसे प्रमाणपत्र का उपयोग करता है तो उसे भारतीय दंड संहिता की धारा 197 के अधीन वह दंडनीय होगा। उसके अतिरिक्त, धारा 198 साधारण है और इसके अंतर्गत ऐसे दस्तावेज के साक्ष्य के जबाब में उपयोग या उपयोग करने का प्रयत्न हो सकता है। निष्पापूर्वक विचार करने के पश्चात और इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए कि चिकित्सा व्यवसायी को उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम, जो एक प्रवर्गी अधिनियम है, के उपबंध के भीतर लाया गया है। हम सोचते हैं कि नई धारा 198क और 198ख को जोड़ा जाना अनावश्यक है परिणामतः, खंड 91 का लोप किया जाता है।

#### खंड 93

12.37 संहिता का अध्याय 11 मिथ्या साक्ष्य के अपराधों और लोक न्याय के विरुद्ध अपराधों के संबंध में है। विद्यमान धारा 206 और 207 न्यायालय के आदेश के अधीन संपत्ति के अभिग्रहण को निवारित करने के लिए परिकल्पित कानिपय कपटपूर्वक कार्यों को दंडित बनाते हैं। धारा 206 संपत्ति को समपद्धरण किए जाने में या निष्पादन में अभिग्रहीत किए जाने से निवारित करने के लिए उसे कपटपूर्वक हटाने या छिपाने के संबंध में है। यह देखा जा सकता है कि धारा 206 ऐसी संपत्ति की हटाने या उसे छिपाने के संबंध में है जब कि धारा 207 ऐसी संपत्ति के कपटपूर्वक दावा के संबंध में है। ऐसी संपत्ति को इस प्रकार से हटाने या उसमें हस्तक्षेप करने से निष्पादन के लिए कोई विनिर्दिष्ट उपबंध नहीं है। यदि संपत्ति एक बार किसी न्यायालय के आदेश द्वारा कुछ विधिपूर्वक कुर्क कर ली जाती है तो यह आबद्ध है कि किसी प्रकार का हटाया जाना या हस्तक्षेप किया जाना, चाहे वह कपटपूर्वक हो या अन्यथा, नहीं होना चाहिए। विधि आयोग ने, अपनी 42वीं रिपोर्ट में इस पहलू पर विचार करके यह इंगित किया था कि यदि किसी न्यायालय के आदेश द्वारा कोई जांगम संपत्ति एक बार विधिपूर्वक कुर्क कर ली गई है तो उस संपत्ति का

છંડ 100

12.39. अध्याय 11 में विद्यमान धारा 229 जूरी सदस्य या असेसर का प्रतिरूपण से संबंधित है। इसमें कोई सुसंगति नहीं है। इसलिए, इस धारा का तोप करने का सुझाव ठीक रूप से है। तथापि, विधि आयोग ने अपनी 42वीं रिपोर्ट में धारा 229, अर्थात् धारा 229क और 229ख के स्थान पर दो नई धारा प्रतिस्थापित करने की सिफारिश की है। उस सिफारिश के अनुसार, धारा 229क संक्षियों में छस्त्रक्षेप के अपराध से संबंधित धारा और 229ख किसी ऐसे व्यक्ति, जो जमानत पर है या न्यायालय में उपसंजात होने के लिए ब्रांड पर है, द्वारा असफलता के अपराध से संबंधित है। तथापि, खंड 100 के अधीन उन्हें धारा 229 और 229क के रूप में संभायांकित किया गया है। आपराधिक विचारणों के वर्तमान परिदृश्य में पर्याप्त विलंब विभिन्न कारणों, विशेष रूप से किसी एक या इस कारण से शास्त्रियों के और अनेक मामलों में मुश्यतः धमकियों और भ्रष्ट साधनों आदि के कारण द्वारा न हो पाने से होती है और इसी प्रकार, उन व्यक्तियों की अनुपस्थिति, जो जमानत पर हैं, भी है। इसलिए इस खंड के अधीन प्रस्तावित ये दोनों धाराओं की, जो विधि आयोग की सिफारिशों के अनुरूप हैं, अत्यधिक आवश्यकता है।

छांड 110

12.40. विद्यमान धारा 254 और 263क सिवके के असली रूप में परिदान और बनावटी स्टांपों का उपयोग करने के अपराधों के संबंध में है जो अध्याय 12 में आते हैं। जिसमें सिवकों और सरकारी स्टाकों से संबंधित अपराधों पर विचार किया गया है। आपराधिक कृत्यों के नए सार प्रकाश में आ रहे हैं, अर्थात्, विक्रेता मशीन में धातु-पिंडों का बेईमानीपूर्वक उपयोग, सिवके के स्थान पर किसी अन्य वस्तु के प्रवेशन द्वारा दुरुपयोग। यद्यपि, विधि आयोग द्वारा 1971 में यह सिफारिश की गई थी जैसा कि हम आज भी देखते हैं कि ऐसी मशीनें बड़े पैमाने पर लोक प्राधिकरणों अथवा प्राइवेट प्रतिष्ठानों द्वारा और ऐसे स्थानों में, जहां ऐसी सेवाएं प्रदान की जाती हैं, उपयोग में लाई जा रही हैं। इस खंड के अधीन धारा 254क का अंतःस्थापन प्रशंसात्मक है क्योंकि उससे ऐसी व्याधि का मुकाबला किया जाएगा।

ਖੋਡ 111

12.41. इस खंड के अधीन नई धाराएं 263क, 263ख और 263ग अंतःस्थापित की जानी हैं। ये धाराएं भी बनावटी डाक स्टापों से संबंधित अपराध और ऐसे अपराधों को करने की तैयारी से संबंधित हैं। विद्यमान धारा 263क यह अधिकथित करती है कि जो किसी बनावटी स्टाप को बनाएगा, जानते हुए चलाएगा, उसका व्यवहार करेगा या उसका विक्रय करेगा या अपने पास रखेगा, दंडित किया जाएगा। उसके स्थान पर नई धारा प्रतिस्थापित की जानी है। प्रस्तावित नई धाराओं में हम अपराधों को पाते हैं और ऐसे अपराध शामिल किए गए हैं और आजकल लोगों द्वारा स्टापों के बड़े पैमाने पर उपयोग को ध्यान में रखते हुए तथा उनके दुरुपयोग को रोकने के लिए, ऐसे उपबंधों का रखा जाना बेहतर होगा।

ਖੰਡ 112

12.42. अध्याय 13 की धाराएं 264 से 267 तक तोलने और मापने के लिए छोटे उपकरणों के उपयोग और छोटे बाट या माप को कब्जे में रखने या उन्हें बनाने या बेचने के अपराधों के संबंध में है। 42वीं रिपोर्ट में विधि आयोग ने बड़े पैमाने पर ऐसे अपराधों के किए जाने को ध्यान में रखते हुए, यह सिफारिश की थी कि दंड एक वर्ष का या दो वर्ष होना चाहिए और उस सिफारिश के आधार पर खांड 112 में उप धाराओं में एक वर्ष के स्थान पर 'दो वर्ष' रखे जाने की अपेक्षा की गई है।

इस परिप्रेक्षण में, कार्यशालाओं में इस बात पर प्रकाश ढाला गया कि वया बाट और माप मानक अधिनियम, 1976 को दृष्टि में रखते हुए, धारा 13 में उन धाराओं को बनाए रखना आवश्यक होगा अथवा नहीं। धारा 50-70 के दाँड़िक उपबंधों के अनुशीलन तथा अधिनियम के विस्तार और उद्देश्यों की जांच से यह पता लगोगा कि इस अधिनियम को अधिनियमित करने में मुख्य प्रयोजन यह था कि माप और बाट के मानक स्थापित हो जाएं और व्यापार तथा वाणिज्य में उनका प्रयोग किया जाए। यह कथन, “खोटे बाट या माप” की परिभ्रान्ती की जांच से भी स्पष्ट हो जाता है कि जिनसे अभिग्रेत है ऐसा कोई बाट या माप जो 1976 के इस अधिनियम के द्वारा उसके अधीन स्थापित मानक के अनुरूप नहीं है। इसलिए, ऐसा कोई अतिक्रमण, अर्थात् मानकेतर बाट और मापों का सर्वजन्मी उपयोग करना अपराध के तुल्य है। “कपटपूर्वक” शब्द जिसका भारतीय दंड संहिता की धारा 264, 265 और 266 तीनों में ही प्रयोग किया गया है और “जिसका क्षोटा होना वह जानता है” शब्द जो भारतीय दंड संहिता की धारा 266 और 267 में आते हैं, बाट और माप मानक अधिनियम के भाग 6 में प्रगतिशील विभिन्न अपराधों में नहीं मिलते हैं। इसका तात्पर्य यह है कि इन धाराओं के अधीन दंडीय किसी अपराध के लिए आपराधिक मनःस्थिति या कपट के किसी तत्व का प्रश्न सुरांगत नहीं है जबकि भारतीय दंड संहिता के अध्याय 13 में उन अपराधों की बाबत ऐसी मनःस्थिति एक मदत्वपूर्ण उपादान है। यह भी देखा जा सकता है कि बाट और माप मानक अधिनियम के अधीन दंडीय अपराधों की बाबत दंड बहुत ही कम है और उसमें किसी निदेशक या उसमें उल्लिखित किसी प्राधिकृत अधिकारी द्वारा ही शिकायत फाइल की जा सकती है और ऐसा कोई प्राइवेट नागरिक, जो पीड़ित व्यक्ति है, न्यायालय में अभियोजन नहीं चला सकता। इसलिए यह उचित है कि भारतीय दंड संहिता में उक्त धाराएं जैसी वे हैं, बनाए रखी जानी चाहिए और खंड 112 के अप्रस्तावित दंड बढ़ा देना चाहिए।

ਖੰਡ 119

12.43. इस खंड के अधीन एक नई धारा 279क को अंतःस्थापित किए जाने का प्रस्ताव है। विद्यमान धारा 279 केवल एक ही किस्म के अपराध, अर्थात् लोक मार्ग पर उतावलेपन से वाहन चलाने या हांकने से संबंधित एक ही अपराध के संबंध में है। नई धारा के अधीन किसी लोक मार्ग पर असुरक्षित या अति लदे हुए यान को चलाने के अपराध को भी दंडित किए जाने की बांद्धा की गई है। सड़क यातायात के परिमाण में वृद्धि और/या अविवेकपूर्ण उपयोग को, चाहे वे सड़क पर चलने लायक हो या नहीं, ध्यान में रखते हुए, ऐसे उपबंध की अत्यधिक आवश्यकता है।

ਖੰਡ 122

12.44. अध्याय 14 में विद्यमान धारा 292, लोक स्वास्थ्य, सुरक्षा, सुविधा, शील और नैतिकता पर प्रभाव डालने वाले अपराधों के संबंध में है और अश्लील पुस्तकों, आदि के विक्रय आदि को ढंगनीय बनाती है। यह धारा 1969 में संशोधित की गई है। अश्लीलता के परीक्षण के संबंध में उसका निर्धारण अनेक उंपादनों पर निर्भर करता है और इस द्वारा निर्णय भी दिए गए हैं “कामोदीवीपक” क्या है और “कामुक” व्यक्तियों के लिए रुचि क्या है और चरित्र बिराङ्गने वाली या भ्रष्ट करने की प्रवृत्ति क्या है अथवा क्या नहीं है, इनके विनिश्चय में सदैव व्यावहारिक समस्याएं हैं। विधि आयोग ने, अपनी 42वीं रिपोर्ट में यह संप्रेक्षण किया था कि इस प्रयत्नपूर्वक की गई परिभाषा की अपेक्षा नया अपवाद अधिक महत्वपूर्ण है जो इस आधार पर प्रतिरक्षा अनुज्ञात करता है कि प्रकाशन, कला या विज्ञान या साहित्य या विद्या के हित में है। यह वस्तुतः “विशेषज्ञ साक्ष्य” पर निर्भर करेगा जो साक्ष्य अधिनियम की धारा 45 के अधीन अनुज्ञेय होगी। विधि आयोग ने, तथापि, यह सिफारिश की थी कि यदि धारा में ही विनिर्दिष्ट रूप से ऐसे विशेषज्ञ साक्ष्य के ग्राहय के लिए उपबंध किया जाए तो अधिक सुरक्षित होगा। दमारा भी यह अभिमत है कि इस प्रश्न पर किसी मामले में तथ्यों और परिस्थितियों की आबत ऐसा विशेषज्ञ साक्ष्य कि वे कामोदीवीपन आदि प्रकृति की हैं या नहीं उसी के अनुसार धारा में उल्लिखित किया जाना चाहिए जिसकी विधि आयोग द्वारा की गई सिफारिश पर विशेषक के खंड 122 के अधीन धारा 292 में एक नई उपधारा अंतःस्थापित करने की वाद्धा की गई है, जो एक समुचित परिवर्तन होगा।

ਖੱਡ 123

12.45. धारा 292 के पश्चात् एक नई धारा 292क अंतःस्थापित की जानी है। इस धारा के अधीन नई धारा घोर अशिष्ट या मड़दी सामग्री या भयादोहन के लिए आशयित सामग्री के मुद्रण आदि के अपराध के संबंध में है। इस नई धारा के अनुशीलन से यह पता चलता है कि इसे अंतःस्थापित करने का उद्देश्य लोक शिक्षण के लिए अभिप्रेत समाचार पत्रों, नियतकालिक पत्रिकाओं पर अन्य प्रदर्शनों को ऐसी रीति से प्रकाशित करने से रोकने के लिए है। यह ऐसे मुद्रणों आदि पर, जो घोर अशिष्ट है, अच्छी रोक होगी। यह धारा, यदि अपराध पुनः उसी प्रकार किया जाना है जैसा कि धारा 292 में मिन्नता है तो उसके लिए न्यूनतम दंड का उपबंध करती है। इस नई धारा में सद्भापूर्वक आदि से संबंधित स्पष्टीकरण भी है। स्पष्टीकरण 2 न्यायालय को कतिपय मार्गदर्शी सिद्धांत देता है और यह उपबंध करता है कि न्यायालय द्वारा अपेक्षित व्यक्तित्व के साधारण दंड की बाबत कतिपय बातों को ध्यान में रखना चाहिए। तथापि, हमारा यह अमिमत है कि दंड 3 वर्ष का किया जाना चाहिए ताकि वह अंतःस्थापित की जाने वाली नई धारा 292क को व्याख्या हो सके और अध्याय 2 में दंड देने की नीति पर हमारी सिफारिशों के अनुरूप इस प्रस्तावित नई धारा 292क के अधीन भी दंड, कारावास और जुमना होना चाहिए।

अंक १३४

12.46. विद्यमान धारा 294क लाटरी कार्यालय रखने के अपराध के संबंध में है। इस खंड के अधीन इस धारा को नई धारा 294क और 294ख द्वारा उत्तरस्थापित करने की वांछा की गई है। विद्यमान धारा यह अधिकथित है कि जो कोई ऐसी कोई लाटरी, जो न निकालने के प्रयोजन के लिए कोई कार्यालय या स्थान रखेगा, कारावास से दंडित किया जाएगा और यह किसी क्रम के संदाय के किसी प्रस्ताव के प्रकाशन के संबंध में भी है। नई धारा अधिक व्यापक है और विभिन्न प्रक्रमों को प्रारणित करती है व्याध आवश्यक दंड विहित करती है। लाटरियों के प्रचुरोदयवन की आधुनिक प्रकृति को देखते हुए, नई धारा प्रशंसात्मक है और यह अवैध अध्योग द्वारा उसकी 42वीं रिपोर्ट में की गई सिफारिशों के अनुसार है। इसी प्रकार, धारा 294ख, यद्यपि एक नई धारा है, लाटरी टिकटों के विक्रय, वितरण के अपराधों की बाबत दंड विहित करती है। धारा 294ख किसी राज्य लाटरी के, तत्संबंधी सरकारों द्वारा अधिकरण के बिना लाटरी टिकटों के विक्रय, वितरण के संबंध में है और ऐसे विक्रय दंडनीय बनाती है। इसमें उत्तरनिहित उद्देश्य, अर्थात् राज्य लाटरी टिकटों का अवैध व्यापार रोकना स्पष्ट है। अध्याय 2 में दंड विषयक नीति संबंधी हमारी सिफारिशों में अनुरूप स प्रस्तावित नई धाराओं 294क और 294ख के अधीन दंड, कारावास और जमनि का होना चाहिए।

ਅੰਦ 125

12.47. इस खंड में धारा 302 को उसी संख्या वाली एक नई धारा द्वारा प्रतिस्थापित करने की वांछा की गई है। धारा 302 के धीन कोई व्यक्ति, जो हस्ता करेगा वह मृत्यु या आजीवन कारावास से दंडित किया जाएगा। इस प्रश्न पर किस प्रकार के मामलों में न्युटंड दिया जा सकेगा। उच्चतम न्यायालय द्वारा अनेक मामलों में विचार किया गया है और “विरल से विमुक्तना” पापाते उनी

संकल्पना विकसित की गई है। किन्तु प्रस्तावित धारा में यह प्रगणित करने की वांछा की गई है कि किस प्रकार के मामलों में मृत्युदंड दिया जा सकता है। हमने इस पक्ष पर अध्याय 3 में विचार किया है और इस निश्चय पर पहुंचे थे कि उक्त अध्याय में ऐसे मामलों के सभी प्रवर्ग नहीं हो सकते। परिणामतः, धारा 302 को, जैसी वह है, उसी रूप में छोड़ देना चाहिए और खंड 125 को हटा दिया जाए।

#### खंड 128

12.48. इस खंड के अधीन एक नई धारा 304ख अंतःस्थापित करने की वांछा की गई है। प्रारंभ में ही हमने इस बात की ओर संकेत किया था कि 1986 में, 1986 के संशोधनकारी अधिनियम 43 द्वारा विद्यमान धारा 304ख, जो दंड मृत्यु के संबंध में है, अंतःस्थापित की गई थी। इसलिए, इस नई धारा, अर्थात् इस खंड के अधीन 304ख को वहीं संख्या नहीं दी जा सकती। स्पष्ट है कि विधेयक काफी पुराना है। तथापि, नई धारा के अनुशेलन से पता चलता है कि वे सभी अपराधी, जो उतावलेपन से या उपेक्षावूर्धक यान चलाएंगे या मृत्यु या क्षति कारित करने के पश्चात, उचित समय के भीतर किसी पुलिस याने को इतिलाएं किए बिना भाग जाएंगे, यह दायित्व से भाग जाने की एक घटना, “मारो और भागो” है। इसलिए, इस उपबंध को जैसा उपर उल्लिखित है, अंतःस्थापित किया जा सकता है किन्तु इसकी संख्या 304ख नहीं हो सकती। हम सिफारिश करते हैं कि इसे 304क में उपधारा (2) के रूप में अंतःस्थापित किया जाए।

#### खंड 130

12.49. इस खंड के अधीन धारा 307 और 308 को अंतःस्थापित करने की वांछा की गई है। साधारणतः, दोनों धाराएं कई बातों में विद्यमान धाराओं के सदृश्य हैं। तथापि, धारा 307 के दृष्टिकोण का, प्रस्तावित धारा के अधीन हटाए जाने की वांछा की गई है। विधि आयोग ने, अपनी 42वीं रिपोर्ट में एक नए अध्याय 5ख की, जिसमें प्रयत्न परिभाषित है, और धारा 120ग और 120घ अंतःस्थापित करके दंड विहित करने का भी प्रस्ताव किया था। परिणामस्वरूप, विधि आयोग ने, अध्याय 5ख पर विचार करते समय नई धारा 307 और 308 के प्रतिस्थापन की भी सिफारिश की है और धारा 120ग और 120घ का भी प्रस्ताव किया। हम यह स्पष्ट कर रहे हैं कि नई धारा 120ग और 120घ का दोनों आवश्यक नहीं है और धारा 307, 308 और 511 को, जैसी कि वे हैं, सिवाय विद्यमान धारा 307 के दूसरे भाग को हटाने की, जो किसी आजीवन सिद्धान्त द्वारा किए गए किसी प्रयत्न के लिए दंड के रूप में मृत्यु विहित करती है, बनाए रखने की भी उन्हीं कारणों से, जो धारा 303 को हटाने के लिए किए गए हैं, हटाया जाना है। (देखिए अध्याय 6)

#### खंड 121

12.50. इस खंड के अधीन विद्यमान धारा 307 को, जो आत्महत्या करने के प्रयत्न के संबंध में है, लोप किए जाने की वांछा की गई है किन्तु उच्चतम न्यायालय के ज्ञान कौर (श्रीमती) बनाम पंजाब राज्य (1996 एस सी सी (क्रिमिनल) 374) में दिए गए दाल के निर्णय को देखते हुए, धारा के अस्तित्व को बनाए रखा गया है। परिणामस्वरूप, विद्यमान धारा 309 को बनाए रखना है और खंड 131 का विधेयक से लोप किया जाना है। (देखिए अध्याय 8)

#### खंड 134

12.51. इस खंड के अधीन विद्यमान धारा 320, जो उपहारि को परिभाषित करती है, को प्रतिस्थापित करने की वांछा की गई है। विधि आयोग ने, अपनी 42वीं रिपोर्ट में यह संप्रेक्षण किया था कि विद्यमान धारा में प्रयुक्त “विच्छेद” शब्द को हटाया जा सकता है क्योंकि वह व्यापक बनाए गए खंड 5 के अंतर्गत आ जाता है। प्रस्तावित परिवर्तन शास्त्रिक मात्र है, अधिक व्याख्यात्मक नहीं, अतः ये परिवर्तन किए जा सकते हैं।

#### खंड 137

12.52. इस खंड के अधीन विद्यमान धारा 328 को नई धारा द्वारा प्रतिस्थापित करने की वांछा की गई है। विषय के संबंध में यथापि, दोनों धाराएं एक-सी हैं सिवाय इसके कि नई धारा में “अस्वास्थक औषधि या अन्य चौज” शब्दों के स्थान पर “अस्वास्थक पदार्थ,” अंतःस्थापित किए जाने हैं, जिनका प्रभाव नहीं है, मात्र योड़ा सा व्यापक है।

#### खंड 144

12.53. इस खंड के अधीन विद्यमान धारा 341 और 344 को प्रतिस्थापित किया जाना है। विधि आयोग ने, अपनी 42वीं रिपोर्ट में यह सिफारिश की थी कि धारा 341 के अधीन कारावास का दंड अनावश्यक है किन्तु जुमना एक हजार सप्त तक हो सकेगा, जहां फिर भी, अपराध 10 या अधिक व्यक्तियों द्वारा संयुक्त रूप से किया जाता है वहां इसे अधिक कठोर रूप से, दोनों में से किसी भाँति के कारावास से, जिसकी अवधि एक वर्ष तक हो सकती या जुमने से या दोनों से दंडनीय होना चाहिए। तदनुसार, आयोग ने, धारा 341 और 342 के भी पुनरीक्षण की सिफारिश की थी। धारा 343 और 344 पर विचार करने के समय विधि आयोग ने, सिफारिश की थी कि उन दोनों धाराओं को एक धारा में शामिल किया जा सकता है और धारा 343 का प्रस्ताव किया जो 6 दिन या

उससे अधिक सदोष परिरोध के संबंध में है, तथापि, विधेयक में हम पाते हैं कि उन्हीं के अनुसार, नई धाराएं शामिल की जा रही हैं। प्रश्न यह है कि यदि अपराध 10 व्यक्तियों द्वारा किया जाता है तो बड़ा जाता है अथवा नहीं और ऐसी कोई सीमा होनी चाहिए या नहीं। हमारा यह अभिमत है कि आन्वयिक दायित्व के आधार पर व्यक्तियों की संख्या दो या अधिक व्यक्तियों तक सीमित हो, जैसा कि हम भारतीय संविधान की धारा 34, 35 और 38 के प्रस्तावित संशोधन में पाते हैं।

#### खंड 146

12.54. इस खंड के अधीन एक नई धारा 354क, जो किसी अवयस्क पर अभद्र हमले के संबंध में है, को अंतःस्थापित करने की वांछा की गई है। प्रश्न यह है कि यदि अपराध 10 व्यक्तियों द्वारा किया जाता है तो बड़ा जाता है अथवा नहीं और उसमें कथित कारणों के अनुसार, इस खंड का लोप किया जाए।

#### खंड 149

12.55. इस खंड के अधीन, विद्यमान धारा 362 को नई धारा द्वारा प्रतिस्थापित करने की वांछा की गई है। विद्यमान धारा 362 अपदरण की परिभाषा के अपराध से संबंधित है। नई धारा के अधीन इसे व्यापक बनाया गया है। नई धारा 362क, जो वायुयान या कोई अन्य यान भाग ले जाने के संबंध में है, जोड़े जाने की वांछा की गई है। हमने अध्याय 10 में इस नई धारा के बारे में विचार किया है। उसमें उल्लिखित कारणों से नई धारा 362क अंतःस्थापित किया जाना आवश्यक नहीं है। तथापि, जहां तक नई धारा 362 का संबंध है, उसमें अपदरण के अर्थ को व्यापक बना दिया है और इसे अंतःस्थापित किया जा सकता है।

#### खंड 151

12.56. इस खंड के अधीन, धारा 364 के पश्चात् एक नई धारा 384क, जो व्यपदरण के अपराधों से संबंधित है, अंतःस्थापित करने की वांछा की गई है। इस प्रकृति के वर्तमान आपराधिक परिदृश्य को ध्यान में रखते हुए, नई धारा प्रशंसात्मक है और इसे 1993 के अधिनियम 42 द्वारा ठीक ही समिलित कर लिया गया है।

#### खंड 152

12.57. इस खंड के अधीन, विद्यमान धारा 366 और 366क को नई धारा द्वारा प्रतिस्थापित करने की वांछा की गई है। धारा 366 का दूसरा भाग और 366क निकटतः परस्पर संबद्ध है। विधि आयोग ने, तदनुसार सिफारिश की थी कि उन्हें उल्लिखित रूप से एक धारा में रखा जा सकता है। तदनुसार, धारा 366 का इसका भाग 366क में शामिल किया गया है। परिवर्तन केवल पारिणामिक है और हम इसे पृष्ठाक्रिया करते हैं।

#### खंड 155

12.58. इस खंड के अधीन विद्यमान धारा 368 को प्रतिस्थापित करने की वांछा की गई है। विधि आयोग ने, अपनी 42वीं रिपोर्ट में यह संप्रेक्षण किया गया कि विद्यमान धारा 368, जो व्यपहृत या अपहृत व्यक्ति को जानते हुए भी कि सदोष लिपाने के संबंध में है, दंड व्यपहरण या अपहरण के मूल अपराध के लिए दंड के अनुसार विनियमित किए जाने के लिए छोड़ देती है। यह बेहतर दोगा कि धारा में विनिर्दिष्ट दंड का उपबंध किया जाए। नई धारा, विधि आयोग द्वारा सुझाए गए रीति के अनुसार है। इसीलिए, प्रतिस्थापन, तदनुसार कर लिया जाए।

#### खंड 159

12.59. इस खंड के अधीन विद्यमान धारा 375 और 376 की नई धारा 375, 376क से 376ग द्वारा प्रतिस्थापित करने की वांछा की गई है। अध्याय 9 में उल्लिखित कारणों से इस खंड का लोप किया जा सकता है। तथापि, हम धारा 375 के खंड 3 में, क्षति शब्द अंतःस्थापित करके एक उपात्तरण की सिफारिश करते हैं। यह परिवर्तन किया जा सकता है।

#### खंड 160

12.60. इस खंड के अधीन, विद्यमान धारा 377 को नई धारा द्वारा प्रतिस्थापित किए जाने की वांछा की गई है। यह विद्यमान धारा प्रकृति विरुद्ध अपराध दंडनीय बनाती है और इसके लिए आजीवन कारावास से या दोनों में से किसी भाँति के कारावास से, जिसकी अवधि 10 वर्ष की हो सकती और जुमने से भी दंडित किए जाने का दंड विहित करती है। विधि आयोग ने, अपनी 42वीं रिपोर्ट में इस प्रश्न पर विचार किया कि आजीवन कारावास या 10 वर्ष तक की अवधि के कारावास का दंड कठोर दंड है या नहीं, एक प्रश्नावली जारी की गई थी और उनमें से एक प्रश्न यह था कि प्रकृति विरुद्ध अपराधों का दंडनीय बनाया जाना चाहिए या नहीं और प्राप्त उत्तर परिवर्तन प्रतीत होते हैं। तथापि, हमारे देश के सामाजिक मूल्यों को ध्यान में रखते ह

## खंड 161

12.61. इस खंड के अधीन, विद्यमान धारा 380 और 382, जो चोरी के अपराध से संबंधित है, को उन्हीं संहेयाओं की धाराओं द्वारा प्रतिस्थापित करने की वांछा की गई है। विद्यमान धारा 380 किसी निर्माण, निवासगृह, तम्बू या जलयान आदि में चोरी के संबंध में यह अधिकथित करती है कि ऐसा अपराध दोनों में से किसी भाँति के कारावास, जिसकी अवधि 7 वर्ष तक की हो सकेगी, दंडित किया जाएगा और चुम्पनि से भी दंडनीय होगा। नई धारा में और स्थानों को जहां ऐसी चोरी की जाती है, जोड़ा गया है, उदाहरणार्थ क्रायुमान आदि। और उपधारा (2) विनिर्दिष्ट रूप से “पुरावेषण या कलाकृति” की चोरी को समिलित करती है और उन चीजों की बाबत चोरी करना अपराध बनाया गया है और वह 10 वर्ष के कारावास से दंडनीय है। विधेयक की धारा में खंड (च) में “दोनों में से किसी भाँति के कारावास से, जिसकी अवधि हो सकेगी, दंडित किया जाएगा” शब्द लगाते रह गए हैं, उन्हें जोड़ा जाना है। एक नई धारा 380क दुर्घटना, अग्नि, बाढ़ आदि से ग्रस्त संपत्ति की चोरी के संबंध है। इस प्रकार ग्रस्त संपत्ति का आसानी से संरक्षण नहीं किया जा सकता और उसकी चोरी करना सापेक्षतः आसान है और इसीलिए यह धारा विनिर्दिष्ट रूप से ऐसी संपत्ति की चोरी के अपराध को परखने के लिए तात्पर्यहृत है। ऐसा कोई विद्यमान उपबंध नहीं है जो ऐसे अपराध को आच्छादित करता हो, परिवर्तन किए जा सकते हैं।

12.62. विद्यमान धारा 381 लिपिक या सेवक द्वारा संपत्ति की चोरी के संबंध में है। इस धारा का विस्तार नई धारा 381 द्वारा बढ़ा दिया गया है। पूर्व धारा में लिपिक या सेवक द्वारा केवल चोरी आती है किन्तु नई धारा यह कहती है कि जो कोई किसी भी द्वैसियत का कर्मचारी होने के नाते जब वह ऐसी चोरी करता है, वह दायी होगा।

धारा 381क एक नई धारा किसी व्यक्ति का मसला डालत में रखकर किसी संपत्ति की चोरी करने के लिए आशयित है। साधारण रूप में यह चोरी से संबंधित धारा के अंतर्गत आ सकेगा किन्तु उसे कठिन बनाकर कठोर दंड बनाने के उद्देश्य प्रतीत हो सकेगा और इसे अंतःस्थापित किया जाए।

## खंड 162

12.63. इस खंड के अधीन एक नई धारा 385क को अंतःस्थापित करने की वांछा की गई है। प्रस्तावित धारा बेर्इमानी के आशय से भयादोहन के अपराध से आशयित है। विद्यमान धारा 383 उद्दापन को परिभाषित करती है और धारा 385 अधिकथित करती है कि किसी संपत्ति आदि के परिवान को विचार में लाए बिना उद्दापन करने के लिए किसी व्यक्ति को क्षति के भय में डालना संहिता के अधीन दंडनीय अपराध है। विधि आयोग ने, अपनी 42वीं रिपोर्ट में इस प्रश्न की जांच की कि क्या उद्दापन की परिभाषा पहली बार विद्यमान रूप में भयादोहन के मामले में आती है, जहां धन किसी व्यक्ति के बारे में कुछ सत्य किन्तु घृणित अभिर्षित करने के लिए धमकी द्वारा अभिप्राप्त किया जाता है और यद्यपि तब निवनीय ऐसा संचालन उद्दापन की परिभाषा को उचित रूप से आर्किष्ट नहीं करता है यहां अस्पष्टता अधिक है क्योंकि यह स्पष्ट नहीं है कि क्या ऐसी धमकी क्षति की धमकी मानी जाएगी। “क्षति” शब्द किसी प्रकार की अपदानि का द्वारा है, जो किसी व्यक्ति के शरीर, मन, ख्याति या संपत्ति को अवैध रूप से कारित हुई हो। “बेर्इमानी” यह परिभाषित करता है कि “जो कोई इस आशय से कोई कार्य करता है कि एक व्यक्ति को सदोष अभिलाभ कारित करे या अन्य व्यक्ति को सदोष हानि कारित करे, वह इस कार्य को बेर्इमानी से करता है, यह कहा जाता है। उक्त नई धारा 385क यह है कि जो कोई भोले गए या पढ़े जाने के लिए आशयित शब्दों से या चिन्हों से या दृश्य निरूपण से किसी व्यक्ति को, बेर्इमानी से कोई ऐसा लक्षण लगाने या प्रकाशित करने की धमकी देगा, जिससे उसके किसी निष्ठ संबंधी की ख्याति की अपदानि होने की संभावना है, वह दंडनीय होगा। नई धारा में दिए गए उद्देश्य यह है कि बेर्इमानी आशय के साथ भयादोहन का ऐसा कार्य उसमें उल्लिखित रीति में धमकी है, जो अपदानि का परिणाम हो सकेगा, दंडनीय बनाया जाना चाहिए। विधि आयोग ने, प्रस्तावित धारा में “किसी निकट संबंधी” शब्दों का प्रयोग नहीं किया है किन्तु दूसरे शब्दों में “किसी अन्य व्यक्ति” शब्द का प्रयोग किया है। नई धारा में हम “किसी अन्य व्यक्ति” के स्थान पर “उस व्यक्ति का कोई निकट संबंधी” शब्द पाते हैं। नई धारा में लाया गया परिवर्तन इसे इन्हाँ व्यापक बनाने की अपेक्षा उसके अंतर्गत किसी अन्य व्यक्ति” को अपदानि आ जाए, अधिक संगत प्रतीत होती है। एक यह शंका उत्पन्न हो सकती है कि क्या इस नई धारा को धारा 385 के प्रश्नात इस कारण से उचित रूप से जोड़ा जा सकता है कि धारा 383 में परिभाषित उद्दापन में किसी संपत्ति का या भय में रखकर किसी व्यक्ति का उद्दापन पर विचार किया गया है। किन्तु नई धारा में “बेर्इमानी पूर्वक” शब्द की सदोष अभिलाभ या सदोष हानि कारित करने का आशय उपर्युक्त करता है, जिससे सहजतः संपत्ति या मूल्यवान प्रतिभूति, आदि का परिवान विविक्षित है। प्रख्याति को संभावित अपदानि के लिए और शब्दों के प्रयोग का अर्थ क्षति कारित करना होगा। वर्तमान आपराधिक परिदृश्य में, भयादोहन बहुत अनियन्त्रित हो गया है इसलिए ऐसे अपराधों को बरतने के लिए नया उपबंध बहुत आवश्यक है।

## खंड 163

12.64. इस खंड के अधीन धारा 388 और 389 में आने वाले “आजीवन कारावास से दंडित किया जाएगा” शब्दों को कम अवधि के कारावास के साथ प्रतिस्थापित करने की वांछा की गई है। धारा 388 और 389 उद्दापन करने के लिए किसी व्यक्ति को अभियोग लगाने की धमकी या भय डालकर द्वारा उद्दापन के विनिर्दिष्ट अपराध से संबंधित है। धारा 388 के अधीन धमकी या

अनुद्यात किया गया अभियोग किसी व्यक्ति को यह अभियोग लगाने के लिए भय में डालकर कि उसने ऐसा अपराध किया है या करने का प्रयत्न किया है, जो मृत्यु लानि से दंडनीय है, मैं से एक है और ऐसे उद्दापन के लिए दंड 10 वर्ष तक का कारावास का है, तथा यदि अभियोग धारा 377 के अधीन किसी अपराध के प्रतिनिर्देश से है तो दंड आजीवन कारावास का है। उसी प्रकार से, धारा 389 के अधीन जहां उद्दापन किसी व्यक्ति को इसमें उल्लिखित अपराधों के अभियोग लगाने के भय डालकर किया है तो वहां वह 10 वर्ष के विस्तारित दंड से दंडनीय होगा। और यदि अभियोग धारा 377 के अधीन इस अपराध के प्रति निर्देश से है तो वह “आजीवन कारावास से दंडित किया जा सकेगा”। इन धाराओं के केवल अवलोकन से यह दर्शाया देता है कि दंड पृथक है और असंगत है और संभवतः यह आनुपातिकता के सिद्धांत का अतिलंबन करता है। इसलिए “आजीवन कारावास से दंडित किया जा सकेगा” शब्दों के स्थान पर “कम अवधि के दंड से दंडित किया जाएगा” शब्द रखा जाना अपेक्षित है।

## खंड 164

12.65. इस खंड के अधीन विद्यमान धारा के स्थान पर नई धारा यह अधिकथित करती है कि जब कोई व्यक्ति डकैती करने में हत्या कर देता है तो अपराध में भाग लेने वाले दो मैं से हर व्यक्ति मृत्यु से, या आजीवन कारावास से, या कठिन कारावास से, जिसकी अवधि 10 वर्ष तक हो सकेगी, दंडित किया जाएगा। मृत्यु दंड का अधिरोपण, प्रस्तावित धारा 302 में उल्लिखित कुछ वार्गों को लागू बनाया गया है। हमने इस पहलू पर अध्याय 3 में पहले ही विचार किया है और यह सुझाव दिया है कि यह बात न्यायालय पर छोड़ दी जानी चाहिए कि किन परिस्थितियों में मृत्युदंड अधिरोपित किया जा सकता है। इस संबंध में, हमने उच्चतम न्यायालय के अनेक निर्णय भी निर्दिष्ट किए हैं, जहां दुर्लभ से दुर्लभतम मामलों की संकलनया पर विविध रूप से विचार किया गया है। हम अंततः, यह सुझाव देते हैं कि धारा 302 जैसी वह है उसी रूप में छोड़ दी जाए। उन्हीं कारणों से धारा 396 की बाबत कोई परिवर्तन आवश्यक नहीं है। अतः, यह न्यायालय के विवेक पर छोड़ जाए कि वह उचित मामलों में मृत्यु दंड दें।

## खंड 165 और 166

12.66. इन खंडों के अधीन धारा 397 में “किसी धातक आयुध का प्रयोग करेगा, या” शब्दों का लोप किए जाने की वांछा की गई है और धारा 398 में “यदि लूट या डकैती” शब्दों के पश्चात् “करते समय” शब्द अंतःस्थापित किए जाने की और “सात वर्ष” शब्दों के स्थान पर “पांच वर्ष” शब्द प्रतिस्थापित करने की वांछा की गई है। धारा 397 में लूट या डकैती करते समय घोर उपहारित कारित करने या मृत्यु लंथावा घोर उपहारित कारित करने का प्रयत्न करने के अतिरिक्त, धातक आयुध के उपयोग की उपलब्धता होती है। दूसीप्रकार, 398, जो लूट या डकैती करने के प्रयत्न के संबंध में है, यह भी अधिकथित करती है कि यदि अपराधी किसी धातक आयुध से सजित होगा, तो कारावास की अवधि सात वर्ष से कम नहीं होगी। यह देखा जा सकता है कि धारा 397 के अधीन किसी धातक आयुध के उपयोग पर जोर दिया गया है जबकि धारा 398 में किसी धातक आयुध से सजित होना ही पर्याप्त है। यह अधिक स्पष्टीकरक है। यह खंड उचित है और हसी धारा में “सात वर्ष” के स्थान पर “पांच वर्ष” शब्द रखकर दंड को कम कठोर बनाना भी अपराध की गुणता का सानुपातिक प्रतीत होता है। तथापि, हम इस बात का कोई कारण नहीं पाते कि धारा 397 में से किसी धातक आयुध का उपयोग करना वाले शब्दों का लोप क्यों किया जाना चाहिए। अन्यथा ऐसे मामलों में, जहां धातक आयुध से सजित होकर डकैती की जाती है और बिना घोर उपहारित कारित किए या घोर उपहारित का प्रयत्न किए बिना भय का सूजन करने के लिए किसी धातक का उपयोग किया जाता है वहां वह मामला इस धारा के अधीन नहीं आ सकेगा। इसलिए, इन शब्दों को बनाए रखना बेहतर है और खंड 166 का लोप किया जा सकता है।

## खंड 167

12.67. इस खंड के अधीन धारा 399 में, “दस वर्ष” शब्दों के स्थान पर “सात वर्ष” शब

### खंड 172 और 173

12.71. इन खंड के अधीन धारा 404 और 408 में कुछ लक्ष्य परिवर्तन प्रस्तावित हैं। ये परिवर्तन किए जा सकते हैं।

### खंड 174

12.72. इस खंड के अधीन, धारा 409 में जाने वाले "फैक्टर" शब्द का लोप करने की वांछा की गई है। हो सकता है कि कठिनय मामलों में फैक्टर शब्द अप्रचलित हो किन्तु इस शब्द को बनाए रखने में कोई अपदानि नहीं है। तदनुसार, खंड 174 का लोप किया जा सकता है।

### खंड 175

12.73. इस खंड के अधीन "चुराई गई संपत्ति" पद के अर्थ को विस्तारित करते हुए, विद्यमान धारा को प्रतिस्थापित करने की वांछा की गई है। विद्यमान धारा 410 चुराई गई संपत्ति का ऐसे संपत्ति के रूप में वर्णन करती है, जिसका कोई भाग चोरी द्वारा या उद्धापन द्वारा, आदि के द्वारा अंतरित किया गया है। यह प्रश्न उठा कि क्या संपत्ति या उसका भाग, जो छल का अपराध करके अंतरित किया गया है, भी चुराई गई संपत्ति के तुल्य होगा। विधि आयोग ने, अपनी 42वीं रिपोर्ट में इस पहली की जांच की और यह सिफारिश की कि छल द्वारा अभिभावन संपत्ति भी शामिल की जानी चाहिए। विधि आयोग ने, इस प्रश्न पर भी विचार किया कि क्या वह संपत्ति, जो किसी ऐसे अपराधी द्वारा चोरी की गई वस्तु की विषम वस्तु है, जिसे धारा 82, 83 और 84 के अधीन साधारण अपवाद का फायदा मिलता है, चुराई गई संपत्ति के रूप में वर्णित की जा सकती है, जबकि उसका कोई भाग अंतरित किया गया हो, इस मुद्दे पर विचार करके विधि आयोग ने, यह सिफारिश की कि यह तर्कसंगत है और ऐसी संपत्ति के किसी भाग का अंतरण भी चुराई गई संपत्ति के अर्थ के अंतर्गत आएगा। भले ही वास्तविक अपराधी लागू अपवादों के फलस्वरूप दंडनीय न हो। इस बात को स्पष्ट करने के लिए एक दृष्टांत भी जोड़े जाने की सिफारिश की गई थी। इन्हीं सहित प्रस्तावित नई धारा 410 विधि आयोग की सिफारिशों पर आधारित है। जो उस अर्थ के ध्यान में रखते हुए, समुचित है, जो तर्क पूरी रैत से चुराई गई संपत्ति को दंड दिया जा सकता है।

### खंड 178

12.74. विद्यमान धारा 411 के अधीन बेईमानीपूर्वक चुराई गई संपत्ति को प्राप्त करना दंडनीय बनाया गया है और धारा 414 के अधीन डकैती करने में बेईमानीपूर्वक प्राप्त चुराई गई संपत्ति को गुरुतर अपराध बनाया गया है। ऐसे सुझाव मिले थे कि सरकार या स्थानीय प्राधिकारी या निगम आदि की चुराई गई संपत्ति की ऐसी बेईमानीपूर्वक प्राप्ति को भी बहुत कठोर दंड से दंडनीय बनाया जाना चाहिए। तदनुसार, इस खंड के अधीन इस सुझाव को शामिल करने के लिए उसमें उल्लिखित शब्दों को दोनों धाराओं में अंतःस्थापित करने की वांछा की गई है, जो प्रयोजन को पूरा करेंगे।

### खंड 177

12.75. इस खंड के अधीन विद्यमान धारा 415 को, कुछ परिवर्तनों सहित एक नई धारा अंतःस्थापित करने की वांछा की गई है। विद्यमान धारा में कारित होने के लिए संमान्य या अपदानि केवल प्रवंच व्यक्ति के प्रति निर्देश से है। किन्तु प्रस्तावित धारा में नुकसान का विस्तार केवल उस व्यक्ति तक नहीं अपितु किसी व्यक्ति तक विस्तारित होने की वांछा की गई है। इसलिए, "किसी व्यक्ति को", शब्द, वस्तुतः "उस व्यक्ति हो" शब्दों को प्रतिस्थापित करने और उसके क्षेत्र का विस्तार करने के लिए है। अन्य परिवर्तन मात्र यह है कि "छाति शब्दों के पश्चात या किसी व्यक्ति नुकसान या अपदानि" शब्दों के पश्चात "या किसी व्यक्ति को परिवर्तन मात्र यह है कि "छाति शब्दों के पश्चात या किसी व्यक्ति नुकसान या अपदानि" शब्दों के पश्चात "या किसी व्यक्ति को परिवर्तन मात्र यह है कि किसी व्यक्ति नुकसान या अपदानि" शब्दों को जोड़े जाने सदैष अभिलाप्त शब्द जोड़े जाने की वांछा की गई है जो खंड (क) में विवक्षित परिवर्तन अर्थात्, "किसी व्यक्ति को" शब्द जोड़े जाने सदैष अभिलाप्त शब्द जोड़े जाने की वांछा की गई है जो खंड (क) में विवक्षित परिवर्तन अर्थात्, "किसी व्यक्ति को" शब्द जोड़े जाने के लिए उपयोग की जाने वाली अन्य वस्तु को नष्ट करके, या हटाकर या कम उपयोगी बनाकर के प्रति निर्देश से है और ऐसी रिप्टि दंडनीय बनाई गई है और दंड सात वर्ष तक का हो सकेगा किन्तु इसमें यह भी उल्लिखित किया गया है कि यदि यह अभिलाप्त का अपराध नहीं माना जाता है तो धारा 437 में यह अलग मामला होगा। विधेयक में विधि आयोग द्वारा यथा उल्लिखित धारा में यथाप्रस्तावित अधिक या कम रिप्टि के अपराध की नई धारा 426 से 432 को उसकी रिपोर्ट के अनुसार, प्रतिस्थापित किया जाना है। हमने धारा 426 से 431 की जांच की है। तथापि, विधि आयोग ने, यह सिफारिश की कि धारा 426 से 440 रिप्टि के लिए दंड विहित करती है और विधि आयोग ने, दंड को तीन मास से बढ़ाकर एक वर्ष करने की सिफारिश की है। विधि आयोग द्वारा यथाप्रस्तावित धारा 427 से 438 ऐसे रिप्टि, जिससे किसी लोक सम्पत्ति या मरीजी का 100 रुपए का नुकसान होता है या किसी घोर वध करने, सार्वजनिक सड़क, वायुयान आदि की क्षति करने द्वारा रिप्टि या पूजा स्थलों को समाप्त करने के अशय से साथ अग्रिम या विस्फोटक द्वारा रिप्टिकारित करने के अपराध से संबंधित है। जहां तक धारा 438 से 440 का संबंध है परिवर्तन केवल धारा 439 के दंड और लोप के बारे में है। विधेयक में विधि आयोग द्वारा यथा उल्लिखित धारा में यथाप्रस्तावित अधिक या कम रिप्टि के अपराध की नई धारा 426 से 432 को उसकी रिपोर्ट के अनुसार, प्रतिस्थापित किया जाना चाहिए। हमने धारा 426 से 431 की जांच की है। तथापि, विधि आयोग ने, दंड को तीन मास से बढ़ाकर सात वर्ष करने की विधिहित तीन वर्ष के दंड को बढ़ाकर पांच वर्ष किया जाए। विधेयक में प्रस्तावित धारा 423 की जांच करने पर डम पाते हैं कि इस धारा में आने वाली रिप्टि का प्रकार वायुमार्ग या बीकन या विमानक्षेत्र के प्रकाश को वायुयान के मार्गदर्शन के लिए उपयोग की जाने वाली अन्य वस्तु को नष्ट करके, या हटाकर या कम उपयोगी बनाकर के प्रति निर्देश से है और ऐसी रिप्टि दंडनीय बनाई गई है और दंड सात वर्ष तक का हो सकेगा किन्तु इसमें यह भी उल्लिखित किया गया है कि यदि यह अभिलाप्त का अपराध नहीं माना जाता है तो धारा 437 में यह अलग मामला होगा। विधेयक 1978 में तैयार किया गया था और संभवतः भगा ले जाने के अपराधों की किसी में अभूतपूर्व वृद्धि और वायुसेना असुरक्षित होने की गत के ध्यान में रखकर यान हरण निवारण अधिनियम, 1982 और सिविल विमान सुरक्षा विधिविरुद्ध कार्यदमन अधिनियम, 1982 परिवर्त किए गए थे। इन दोनों अधिनियमों का 1994 में और संशोधन किया गया था। हमने विधेयक में प्रस्तावित नई धारा 362क के प्रतिनिर्देश से अध्यय 10 में भगा ले जाने के अपराध पर विचार किया है और हमने सुझाव दिया है कि यथा संशोधन यान हरण निवारण अधिनियम के उपबंधों को देखते हुए, यह प्रस्तावित उपबंध रखना आवश्यक नहीं प्रतीत होता।

### खंड 178

विधि आयोग ने, अपनी 29वीं रिपोर्ट में इस मत पर विचार किया कि बेईमान संविदाकारों द्वारा माल का प्रदाय करते समय, ग्रहे पैमाने पर सरकार के साथ छल करने की समस्या को किस प्रकार सुलझाया जाए। विधि आयोग ने, अपनी 42वीं रिपोर्ट में इस पक्ष पर ध्यान दिया और सिफारिश की कि ऐसे अपराधों को दंडनीय बनाने वाला एक उपबंध होना चाहिए। नई धारा 420क ऐसे अपराधों को, समाविष्ट करने के लिए स्पष्टतः पूर्ण है और उपबंधित दंड कठोर नहीं है। व्यापार और वाणिज्य की आधुनिक प्रवृत्ति में जनता को ग्राम में डालने के लिए अनेक मिथ्या विज्ञापन दिए जा रहे हैं। यद्यपि, विधि आयोग ने, उस पर अपनी 42वीं रिपोर्ट में विचार नहीं किया था। पिछे, प्रस्तावित नई धारा 420ख प्रश्नसांस्कृतक प्रतीत होती है। 420ग कंपनी की सम्पत्ति के संबंध में कपटपूर्वक अंतरण को इस धारा द्वारा समाविष्ट किया गया है। यह धारा अधिकथित करती है कि जो कोई किसी व्यक्ति या जनता को बुलावा देने, या क्षति पहुँचाने के आशय से किसी कंपनी की सम्पत्ति को दान, विक्रय आदि के आशय से अंतरित करेगा या कराएगा अथवा ऐसे आशय से कंपनी के किसी साइन बोर्ड या नामप्लेट को परिवर्तित करेगा, हटाएगा या यह उपर्याप्त क्रान्ति करेगा कि कंपनी समाप्त हो गई है, वह दंडित किया जाएगा। यह उसमें यथा उल्लिखित छल साधन द्वारा कपटपूर्वक कार्यों को रोकने के लिए है।

### खंड 179

12.77. इस खंड के अधीन, विद्यमान धारा 426 से 432 तक कोई नई धाराओं द्वारा, जिनके अंतर्गत साधारण रिप्टि के अपराध आते हैं, प्रतिस्थापित करने की वांछा की गई है। विद्यमान धारा 425 साधारण रूप में रिप्टि को परिमापित करती है। धारा 426 से 440 तक रिप्टि के अपराधों के विभिन्न प्रकारों को लागू दंड देने से संबंधित धाराएँ हैं और रिप्टि के विवित अपराधों की बाबत, जैसे लोक सम्पत्ति या अंतरण के अपराध से आशय के अंतरित करती है। विधि आयोग ने, अपनी 42वीं रिपोर्ट में इन धाराओं पर विचार किया और सिफारिश की कि कुछ अपराधों की बाबत दंड पांच वर्ष से बढ़ाकर सात वर्ष किया जाना चाहिए। धारा 437 के संदर्भ में यह भी सिफारिश की गई है कि वायुयान के प्रति निर्देश जोड़ा जाना चाहिए। तथापि, विधि आयोग ने, यह सिफारिश की कि धारा 426 से 440 रिप्टि के लिए दंड विहित करती है और विधि आयोग ने, दंड को तीन मास से बढ़ाकर एक वर्ष करने की विधिहित तीन वर्ष के दंड को बढ़ाकर पांच वर्ष किया जाए। विधेयक में प्रस्तावित धारा 427 से 438 ऐसे रिप्टि, जिससे किसी लोक सम्पत्ति या मरीजी का 100 रुपए का नुकसान होता है या किसी घोर वध करने, सार्वजनिक सड़क, वायुयान आदि की क्षति करने द्वारा रिप्टि या पूजा स्थलों को समाप्त करने के अशय से साथ अग्रिम या विस्फोटक द्वारा रिप

ਖੰਡ 180

12.78. इस खंड के अधीन नहीं धारा 434 से 440 तक, जो गुरुतर या गम्भीर किस्म की रिष्टियों के संबंध में ही है, विद्यमान धाराओं के स्थान पर प्रतिस्थापित की जानी है। हम एहते ही उल्लेख कर चुके हैं कि धारा 338 से 440 तक के प्रति निर्देश से विधि आयोग द्वारा सुझाए गए परिवर्तन मात्र दंड की बाबत है किन्तु विधेयक में इन प्रस्तावित धाराओं में लोक संस्थाओं, लोक सेवाओं और वायुयान आदि को कारित रिष्टि, जो अक्षमता को समाप्त करने की दृष्टि से या सेवाएं प्रदान करने वाली इन लोक संस्थाओं में से किसी के कार्य को रोकने के लिए की जाती है, कठोर रूप से दंडनीय बनाई जाए। प्रस्तावित धारा 434 वायुयान या किसी डाक पर जलयान या धारा 3क या धारा 3ख बोझा वाले जलयान का सापद बनाने के आशय से रिष्टि के संबंध में है। धारा 35 ऐसी किसी सम्पत्ति को एक सौ रुपए या उससे अधिक का नुकसान कारित करने के आशय से, यह सम्बाव्य जानते हुए कि ऐसा नुकसान कारित होगा, अग्रिं या किसी विस्फोटक पदार्थ द्वारा रिष्टि के अपराध के संबंध में है। धारा 436 के अधीन पुनः अग्रिं या किसी विस्फोटक पदार्थ द्वारा रिष्टि का अपराध आ जाता है जिसका परिणाम किसी ऐसे भवन, या वस्तु का विनाश है, जो पवित्र मानी गई है। इस धारा की भाषा कुछ विद्यमान धारा 436 के सदृश्य है। धारा 437 एक नई धारा है और उसमें उल्लिखित अपराध “अभिध्वेस” है। यह धारा बहुत व्यापक है। इस धारा के सर्वक कथन से, जिसमें रिष्टि के विभिन्न प्रकार के कार्य अंतर्विष्ट हैं, यह प्रता लगेगा कि विधान-मंडल का आशय ऐसी लोक संस्थाओं और सेवाओं की क्षमता को कम करने के आशय से हिंसा के विनाशक कार्यों का मुकाबला करना है, जो संगठित अपराध के वर्तमान रूप और कभी-कभी अंतराष्ट्रीय शाखा विस्तार तले होते हैं। इस धारा में उपधारा (2) ठीक ही जोड़ी गई है। उपधारा (3) और (4) भी इसी धारा में उचित रूप से जोड़ी गई है। यद्यपि, तैयारी करना साधारणतः अपने आप में अपराध नहीं है किन्तु अभिध्वेस करने के लिए तैयारी करने की प्रमात्रा और प्रमाणता को देखते हुए, इसे भी धारा 438 के अधीन दंडनीय बनाया गया है किन्तु तीन वर्ष के दंड को बढ़ाकर पांच वर्ष किया जा सकता है। तथापि, अध्याय 10 में दिए गए हमारे सुझावों को देखते हुए, धारा 434 में आने वाले “वायुयान” शब्द का लोप किया जा सकता है। वायुयान की बाबत रिष्टि के अन्य रूपों के संबंध में, सिविल विमानन सुरक्षा विधि विरुद्ध कार्यदमन अधिनियम की धारा 3क का संशोधन किया जाना है। यदि ऐसा नहीं है तो यथाप्रस्तावित धारा बनाई रखी जा सकती है और दंड सिविल विमानन सुरक्षा विधिविरुद्ध कार्यदमन अधिनियम की धारा 3 के अनुसार लाया जाना चाहिए।

ਛਾਂਡ 181

12.79. इस छंड के अधीन विद्यमान धारा 441 में आने वाले “विधिपूर्वक” शब्द का प्रस्तावित धारा में लोप किया गया है। विद्यमान धारा में “आपराधिक अतिचार की परिभाषा के दूसरे भाग में” ऐसी सम्पत्ति में या ऐसी सम्पत्ति पर विधिपूर्वक प्रवेश करके वहां विधिविरुद्ध रूप में इस आशय से बना रहता है” शब्द समाहित है। प्रस्तावित धारा 441 के नए छंड का भी वर्धा निकलता है।

ਖਾਂਡ 182

12.80. इस खंड के अधीन, धारा 343 से 360 तक को, जो विभिन्न प्रकार के गृह अतिचारों से संबंधित है, प्रतिस्थापित करने की बांधा की गई है। प्रस्तावित धारा 443 में एक नया पद “सेंधमारी” परिभाषित किया गया है और इसमें यह कथित है कि कोई व्यक्ति सेंधमारी करता है यदि वह चोरी करने के लिए गृह अतिचार करता है अथवा गृह अतिचार करने पर चोरी करता है। विद्यमान धारा 443 प्रचलन गृह अतिचार का अर्थ प्रस्तुत करता है। नई प्रस्तावित धारा में ऐसे किसी अपराध का उल्लेख नहीं है। विद्यमान धारा 443, 444 और 446 से यह देखा जा सकता है कि रात्रि प्रचलन गृह-अतिचार और रात्रि गृहमेदन के विभिन्न रूपों का चोरी जैसे किसी अपराध को करने के प्रति निर्देश है। विद्येयक के रचनात्मकों का सेंधमारी के अपराध को पुनःप्रस्तावित करने में यह विचार था कि गृह अतिचार और रात्रि प्रचलन गृह-अतिचार आदि के विभिन्न प्रकार के अपराध इसके अंतर्गत आ जाएंगे। विधि आयोग ने उच्च न्यायालयों के कुछ निर्णयों और उत्तर प्रदेश सरकार द्वारा किए गए संशोधनों पर विचार करके धारा 441 में जिन परिवर्तनों का सुझाव दिया था, उन पर हम पहले ही विचार कर चुके हैं। विधि आयोग ने, यह भी सिफारिश की थी कि धारा 443 और 444 जा, जो प्रचलन गृह-अतिचार और रात्रों प्रचलन गृह-अतिचार को परिभाषित करती हैं, संशोधन किया जाना चाहिए और एह अतिचार के बजाए सेंधमारी को धारा 445 में परिभाषित किया जाना चाहिए। विधि आयोग का यह सुझाव तर्क संगत रूप से प्रस्तावित धाराओं में विद्यमान है और इस प्रकार पर यह देखा जा सकता है कि विद्यमान धारा 445 कुछ बड़ी है वह गृह-मेदन छह तरीके से प्रगणित करती है और धारा 446 में यह उल्लेख है कि जो कोई सूर्यास्त के पश्चात या सूर्यास्त के पूर्व गृह-भेदन करता है, वह रात्रि गृह-भेदन करता है, यह कहा जाता है और अन्य धाराओं में दंड विहित है। प्रस्तावित धाराओं पर पुनः विचार करते समय, यह पाने हैं कि विधि आयोग द्वारा यथा सिफारिश किए गए “सेंधमारी” शब्द को परिभाषित किया गया है।

धारा 444 से धारा 447 तक विभिन्न प्रकार के आपराधिक अतिवार के विषय में है। उनमें से कुछ, तीन वर्ष से लेकर साल वर्ष तक का दंड विहित करती है। धारा 448 सेंधारी के लिए दंड विहित करती है जो 10 वर्ष तक का और जुमनि का भी हो सकता है।

धारा 449, यह अधिकारित करती है कि जो कोई संधमारी करते समय किसी व्यक्ति को घोर उपहारित करित करेगा या घोर उपहारित करित करने का प्रयत्न करेगा, वह आजीवन कारावास से या कठिन कारावास से जिसकी अवधि 10 वर्ष तक की हो सकेगी और जमनि से दंडनीय होगा।

धारा 450 अन्य व्यक्तियों के, जो वह गृह सेधमारी करने में संबंध है, संयुक्तः दायित्व के संबंध में है जिनमें से कोई एक व्यक्ति धारा 349 के अधीन अपराध करता है और वे सभी आन्वयिक रूप से जारी बनाए गए हैं।

हमने सर्वकात्पूर्वक इन उपबंधों पर विचार किया है और हम समझते हैं कि विद्यमान धाराओं के स्थान पर ऐसा प्रतिस्थापन प्रधानात्मक होगा।

ਖੋਲ੍ਹਦੇ 183

इस खंड के अधीन अध्याय 17क को अंतःस्थापित धारा 462क के रूप में पुरःस्थापित करने की वांछा की गई है। इस नई धारा का अवलोकन करने पर यह स्पष्ट है कि यह प्राइवेट नियोजन से संबंधित किए गए अपराध के अर्थ में है। प्राइवेट नियोजन में नियोजक और कर्मचारी के बीच संबंध, भारतीय दंड संहिता की धारा 21 में यथापरिभाषित लोक सेवक के संबंध में नियोजन की तुलना में अलग है। लोक सेवक द्वारा भ्रष्टाचार लोक चिन्ता का विषय है और इसे विशिष्ट रूप से भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम के अधीन और भारतीय दंड संहिता के कुछ उपबंधों द्वारा बरता गया है। वैसी ही सिद्धांत प्राइवेट कर्मचारियों को तब तक लागू नहीं बनाए जा सकते, जब तक यदि नई धारा के अधीन उल्लिखित कार्यों को उसके कर्तव्यों, अर्थात् नियोजक निर्वहन के प्रति निर्देश को किसी प्रकार का कदाचार माना जाता है। यदि ऐसे नियोजन की अवधि के दौरान, कर्मचारी कूटरचना, छल, आपराधिक न्यायमांग, दुर्विनियोग जैसे अपराध करता है तो यह निश्चित रूप से दंड संहिता के अधीन दंडनीय अपराध माना जाएगा। किन्तु अन्य प्रकार के कार्य जैसे उसके द्वारा कुछ कार्य करने के लिए वैध परिश्रमिक से मिल्ने कुछ पारितोषण लेना इन अपराधों में से कोई एक अपराध नहीं माना जा सकता है और यदि कर्मचारी द्वारा ऐसे कार्य का लोप के परिणामस्वरूप नियोजक को कोई क्षति या दानि होती है तो वह बर्खास्त या नुकसानी का दावा करने के लिए कारित होगा तथा यह एक प्रकार के उत्तीड़न प्रकृति का दायित्व होगा। सभी पहलुओं पर सावधानीपूर्वक विचार करने पर, इमरा यह अभिमत है कि प्राइवेट नियोजन से संबंधित अपराधों के नई अध्याय की कोई आवश्यकता नहीं है। परिणामस्वरूप, खंड 183 का लोप किया जाना चाहिए।

खंड 184

12.82. विधि आयोग ने, अपनी 42वीं रिपोर्ट में यह सिफारिश की कि (i) धारा 464 के पहले पैरा में “स्थान” शब्द भी जोड़ा जाए, और (ii) उसके दूसरे पैरा में “रद्द करने” विद्यमान शब्दों के अतिरिक्त “जोड़ने और मिटाने” शब्द भी जोड़े जाएं और (iii) धारा 463 और 464 संयुक्त होनी चाहिए और उसके अधीन उपबिधित सिद्धांतों का लोप किया जाए। विधेयक का खंड 184 यथापूर्वोक्त सिफारिश (iii) के सिवाय (i) और (ii) के लिए है। जबकि हम विधेयक के खंड 184 में प्रस्तावित यथापूर्वोक्त परिवर्तनों से सहमत हैं। हम भारतीय दंड संहिता की धारा 464 के विस्तार की और जांच करना प्रस्तावित करते हैं।

धारा 463 “कूटरचना” को परिभाषित करती है जबकि धारा 464 “मिथ्या दस्तावेज रचना” करती है और उसमें वे विभिन्न परिस्थितियों प्रणालित की गई हैं जो मिथ्या दस्तावेज की रचना तुल्य होंगी। धारा 463 या 464 में से किसी के अधीन इस बात की स्पष्ट रूप से व्याख्या नहीं की गई है कि क्या किसी दस्तावेज की प्रति की कूटरचना या किसी मिथ्या दस्तावेज की प्रति तैयार करना, या किसी दस्तावेज की मिथ्या प्रति तैयार करना भी भारतीय दंड संहिता की धारा 464 के अर्थान्तर्गत कूटरचना कही जाएगी। यह उल्लेख करना विषय से परे नहीं होगा कि “फोर्जरी एंड काउंटर फीडिंग ऐक्ट, 1981(यू.के.) की धारा 2 और 4 के अधीन मिथ्या दस्तावेज की प्रति तैयार करना और मिथ्या दस्तावेज की प्रति का उपयोग करना विनिर्दिष्ट रूप से दंडनीय बनाए गए हैं। जहां तक भारत में तर्क स्थिति का संबंध है उक्त विषय पर विरोधाभास विवादान था (देखिए एच.एस. सोमसुन्दरिया बनाम मैसूर राज्य (1968), मैसूर एल जे 294 पृष्ठ 297पर: गोविंद प्रसाद पार्सुराम राज्य, ए आई आर 1962 कलकत्ता 174 पृष्ठ 175 पर)(डा. हरिसिंह गौड़ की पुस्तक पेनल ला आफ इंडिया के पृष्ठ 3939 पर उद्धृत) दसवां संस्करण और 5 बोम्बे एच सी रिपोर्ट सी. सी. 56 (देखिए ला आफ क्राइम्स (ए हैंड ब्रॉक्स) वी. वी. राधवन डसरा संस्करण पृष्ठ 931)

तथापि, उच्चतम् न्यायालय ने, रामशंकरलाल बनाम उत्तर प्रदेश राज्य, 1970 यू.जे.0 (एस.सी.0) 507 में, ईशान चन्द्र दत्त और अन्य बनाम आबू प्राणनाथ चौधरी और अन्य, एक। मार्शल्स रिपोर्टरस 270 में के निम्नलिखित संप्रेक्षणों को अनुमोदित करके स्थिति को अंततः सलझा दिया है:-

“हम किसी प्रति की कूटरचना को स्पष्टतः ठीक पहले उद्धृत धारा के कार्यक्षेत्र के भीतर आया हुआ मानते हैं। किसी प्रति की कूटरचना जो उसकी सही प्रति नहीं थी, उसमें अपराध होगी, और शास्ति अधिरोपित की जा सकेगी और किसी मिथ्या दस्तावेज की रचना का अपराधिक अभाव सही प्रति के प्रयोग को पार करने के कारण कूटरचना के ऐसे कार्य द्वारा स्पष्ट होगा।”

हमारा यह अभिमत है कि यद्यपि, अब स्थिति सुलझ गई है फिर भी भा० द० सं० की धारा 464 में एक स्पष्टीकरण जोड़ना बांधनीय होगा ताकि इसे बिनार्दिष्ट रूप से स्पष्ट किया जा सके कि किसी दस्तावेज की प्रति कौन जानबाज़कर कट रखना करना या

किसी मिथ्या दस्तावेज की मिथ्या प्रति तैयार करना या किसी दस्तावेज की मिथ्या प्रति रचना करना भी भारतीय दंड संहिता की धारा 464 के अर्थान्तर्गत कूटरचना होगी।

हम सिफारिश करते हैं कि उपर्युक्त परिवर्तन का मुकाबला करने के लिए धारा 464 में निम्नवत स्पष्टीकरण 3 जोड़ा जा सकता है:

“स्पष्टीकरण 3—जो कोई यह जानते हुए या यह विश्वास करते हुए कि वह मिथ्या दस्तावेज होगा, इस आशय से कि वह या अन्य व्यक्ति उसका किसी अन्य व्यक्ति को अश्लील दस्तावेज की प्रति के रूप में स्वीकार करने के लिए उत्प्रेरित करेगा, किसी दस्तावेज की जानबूझकर प्रति की कूटरचना या किसी दस्तावेज की जानबूझकर मिथ्या प्रति की रचना या किसी मिथ्या दस्तावेज की प्रति रचना करेगा, जो उसके अपने या किसी अन्य व्यक्ति के पूर्वाग्रह से कोई कार्य करने या न करने के लिए हो, वह मिथ्या दस्तावेज की रचना के तुल्य होगा।”

खंड 187

12.83. विधेयक के खंड 187 के उपखंड (क), (ख) और (ग) के अधीन प्रस्तावित परिवर्तन, पूर्वोक्त 42वीं रिपोर्ट के अध्ययन 18 के पैरा 18.8, 18.10 और 18.11 के अधीन अंतर्विष्ट कारण और सिफारिशों के आधार पर है।

उपखंड (क) के फलस्वरूप, भारतीय दंड संहिता की धारा 464 में “ऐसे दस्तावेज के आरे में.....है या जिसका इस प्रकार होना तत्परित है” शब्दों को प्रतिस्थापित किए जाने का प्रस्ताव है ताकि उसे स्पष्ट किया जा सके कि धारा 460 सं. की धारा 466 की बाबत पूर्ववर्ती पैरा के अधीन कहा गया है और जैसाकि 42वीं रिपोर्ट के पैरा 18.10 के अधीन सिफारिश की गई थी। हम उपखंड (क) के अधीन, प्रस्तावित इस परिवर्तन से भी सहमत हैं कि “किसी पुत्र के दत्तक ग्रहण का अधिकार” शब्दों के स्थान पर “या किसी व्यक्ति के दत्तक ग्रहण का अधिकार” प्रतिस्थापित किए जाने चाहिए क्योंकि “किसी स्त्री” को भी पुत्री के रूप में दत्तक लिया जा सकता है (देखिए हिन्दू दत्तक ग्रहण और भरण पौषण अधिनियम, 1956) इसके अतिरिक्त, किसी स्त्री बालिका का दत्तक ग्रहण भी अन्य धर्मों को शासित करने वाली विधियों, खट्टियों या परम्पराओं के अधीन अनुज्ञेय है।

उपखंड (ख) के अधीन प्रस्तावित “निस्तरण पत्र” शब्दों का प्रतिस्थापन भी स्पष्टता के द्वारा में है जैसी कि 42वीं रिपोर्ट के पैरा 18.11 के अधीन यथाक्रियत भारतीय दंड संहिता की धारा 467 के पुनर्नीक्षित रूप में सिफारिश की गई है।

उपखंड (ग) के फलस्वरूप, भारतीय दंड संहिता की धारा 467 के अधीन “आजीवन कारावास से या” शब्दों का लोप करने की वांछा है। यह आवश्यक है क्योंकि धारा 467 में मूल्यवान प्रतिभूति के लिए उपर्युक्त आजीवन कारावास बहुत कठोर प्रतीत होता है जैसा कि 42वीं रिपोर्ट में संप्रेक्षण किया गया था। हम इस परिवर्तन से भी सहमत हैं।

खंड 188

12.84. दंड संहिता की धारा 470 और 471 में प्रस्तावित परिवर्तन, पूर्वोक्त 42वीं रिपोर्ट के अध्ययन 18 के पैरा 18.13 से 18.15 तक में अंतर्विष्ट कारण और सिफारिशों के आधार पर हैं।

भारतीय दंड संहिता की धारा 470 को प्रतिस्थापित करने का प्रस्ताव है क्योंकि विद्यमान धारा 470 “कूटरहित दस्तावेज” को “वह मिथ्या दस्तावेज”, जो पूर्णतः या भागतः कूटरचना द्वारा रची गई है, के रूप में परिभाषित करती है जैसाकि विधि आयोग ने, अपनी 42वीं रिपोर्ट में उसके (पैरा 18.13) संप्रेक्षण किया है। यह इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए है कि कूटरचना ही भारतीय दंड संहिता की धारा 464 के साथ पठित धारा 463 में “मिथ्या दस्तावेज रचना” के रूप में अपेक्षित आशय संहित परिभाषित है ताकि जब कोई धारा 470 और 463 और 464 को एक साथ पढ़ता है तो उसे दस्तावेज की रचना का विचार दो बार मिलता है। खंड 188 के दूसरे भाग के फलस्वरूप, भारतीय दंड संहिता की धारा 471 को प्रतिस्थापित करने का प्रस्ताव है। प्रस्तावित परिवर्तन विधि आयोग की सिफारिश के अनुसार हैं और ये परिवर्तन किए जा सकते हैं।

खंड 190

12.85. इस खंड के अधीन विद्यमान धारा 474 को, प्रस्तावित नई धारा द्वारा प्रतिस्थापित करने की वांछा की गई है। सुझाया गया परिवर्तन मात्र बहुत है और प्रस्तावित नई धारा में यह अधिकथित है कि जो कोई किसी ऐसे वर्णन के दस्तावेज को धारा 466 और 467 में उल्लिखित है, यह जानते हुए कि वह कूटरचित है और यह आशय रखते हुए कि वह कपटपूर्वक या बेर्हमानी से उपयोग में लाई जाएगी अपने कब्जे में रखेगा, वह कठिन कारावास से, जिसकी अवधि सात वर्ष तक की हो सकेगी, दंडित किया जाएगा।

खंड 194

12.86. विधेयक के खंड 194 के फलस्वरूप, संहिता की धारा 489क के स्पष्टीकरण खंड के अधीन कतिपय संशोधन किए जाने हैं। इसमें (क) स्पष्टीकरण खंड को (स्पष्टीकरण 1 के रूप में संबंधित किया जाएगा और इस प्रकार संबंधित स्पष्टीकरण में

अप्रिप्रेत है शब्दों के पश्चात और इसके अंतर्गत यात्री चेक भी है, शब्द अंत में अंतःस्थापित किए जाएंगे और (ख) निम्नलिखित स्पष्टीकरण 2 के रूप में निम्नलिखित अंतःस्थापित किया जाएगा।

“स्पष्टीकरण 2: शंका के निवारण के लिए एतद द्वारा यह घोषित किया जाता है कि इस धारा में और धारा 489ख, 489ग, 489व और 489ड में “करेसी नोट” पद के अंतर्गत “विदेशी करेसी नोट” भी है।

चूंकि प्रस्तावित परिवर्तन स्पष्टीकरण प्रकृति के हैं। अतः, विधेयक खंड 194 के उपबंध (क) और (ख) के अधीन किए जाने के लिए वांछित परिवर्तन किए जा सकते हैं।

खंड 196

12.87. विधेयक का खंड 196 एक नई धारा 489च अंतःस्थापित करने के लिए है जो धारा 489क से धारा 489ड. तक के अधीन अपराधों को करने की “तैयारी करने” के लिए दंड का उपबंध करती है।

करेसी नोटों की कूट रचना एक गंभीर अपराध है क्योंकि यह देश की अर्थव्यवस्था को प्रगणित करती है। हम प्रस्तावित नई धारा 489च के अंतःस्थापन की बात से सहमत हैं।

खंड 197

12.88. “सेवा संविदाओं के आपराधिक भंग के विषय में” शीर्षक वाले विद्यमान अध्याय 19 में केवल एक ही धारा 491 अंतर्विष्ट है।

विधि आयोग ने, अपनी 42वीं रिपोर्ट में पैरा 19.2 के अधीन भारतीय दंड संहिता के अध्ययन 19 को हटाने के लिए सिफारिश की है जिसमें भारतीय दंड संहिता की धारा 498 समिलित है। इस सिफारिश का मुख्य आधार यह है कि उसकी व्यावहारिक उपयोगिता नहीं है। उपबंध के निकटतः विवक्षा से यह उपर्योग होगा कि यह उपबंध असहाय या असमर्थ व्यक्ति के संविदागत अधिकार के संरक्षण के लिए क्रियान्वित किया जाता है जो किशोरावस्था या चित्र विकृति या रोग या शारीरिक दुर्बलता के कारण असहाय हैं या अपने निजी क्षेत्र की व्यवस्था या अपनी निजी आवश्यकताओं की पूर्ति करने के लिए असमर्थ हैं। दूसरे शब्दों में, यह उपबंध ऐसे व्यक्तियों के अधिकारों का मानवता के आधार पर संरक्षण करने के लिए आशयित है जो व्यक्ति सिविल उपचार पाने की स्थिति में नहीं हो सकते। इसलिए, मानव अधिकारों के वर्तमान प्रतियोग्य में इस उपबंध को, बढ़े हुए दंड के साथ बनाए रखना चाहना हो सकता है। इस सिफारिश करते हैं कि विद्यमान दंड तीन मास से बढ़ाकर एक वर्ष कर दिया जाए और दो सौ रुपए के जुमनि के अधिरोपण की विद्यमान सीमा को केवल “जुमनि” शब्द द्वारा प्रतिस्थापित किया जाए ताकि न्यायालय मामले की परिस्थितियों पर निर्भर करते हुए, जुमनि की एकम नियत कर सके। इस यह भी सिफारिश करते हैं कि इस अपराध को संज्ञय बनाया जाए। यदि अपराध के लिए जाने के संबंध में इतिलाल किसी पुलिस थाने भारसाधक अधिकारी को, अपराध द्वारा कथित व्यक्ति द्वारा या उससे रवत, विवाह या दत्तक/ग्रहण से संबद्ध किसी व्यक्ति द्वारा या ऐसे वर्ग या प्रवर्ग के किसी लोक सेवक द्वारा, जो राज्य सरकार, इस निमित्त अधिसूचित करे, दी जाती है।

यह खंड अध्याय 19 को प्रतिस्थापित करने और उसके अधीन एकांकता के विरुद्ध अपराधों के विषय में नई धारा 490, 491 और 492 अंतःस्थापित करने के लिए भी है।

विधि आयोग ने, अपनी 42वीं रिपोर्ट के अधीन एकांकता के अधिकार के विभिन्न पक्षों की जांच की और “एकांकता संबंधी अपराध” शीर्षक वाले एक नए अध्याय के अंतःस्थापन के लिए सिफारिश की। कतिपय उपांतरणों के साथ विधि आयोग की सिफारिशों को अंगीकार करते हुए, विधेयक का खंड 197 दंड संहिता के विद्यमान खंड 19 को उक्त प्रयोजन के लिए प्रतिस्थापित करने के लिए है जिसमें नई धारा 490, 491 और 492 अंतर्विष्ट हैं। प्रस्तावित धारा 490 के अधीन कृतिम श्रवण या अभिलेख संविधि किसी परिसर के कञ्जाधारी व्यक्ति के ज्ञान और सम्मति के बिना किसी परिसर में किसी वार्तालाप को अभिलिखित करने के लिए प्रयोग में लाना कारावास से जिसकी अवधि 6 मास तक हो सकेगी, दंडनीय बनाया गया है। यदि कोई ऐसे किसी वार्तालाप को यह जानते हुए कि वह इस प्रकार सुना या अभिलिखित किया गया है, प्रकाशित करेगा, वह कारावास के उच्चतम दंड से जिसकी अवधि 1 वर्ष तक की हो सकेगी, दंडनीय होगा। प्रस्तावित धारा 491 अपराधीकृत फोटो चित्रण को कारावास से जिसकी अवधि 6 मास तक हो सकेगी, दंडनीय बनाता है और यदि किसी भी रूप में व्यक्तियों के एकांकता विधेयक हितों की रक्षा के लिए आपराधिक दंड लागू करते हैं।

हांगकांग के लॉ रिफार्म कमीशन ने व्यक्ति की एकांकता क

यह उल्लेख किया जा सकता है कि भारत में आपराधिक न्याय संबंधी राष्ट्रीय संगोष्ठी में, जिसे विधि आयोग द्वारा 22-23 फरवरी, 1997 को नई विल्ली में आयोजित किया गया था, अनेक भाग लेने वालों ने यह कहा कि विधेयक के खंड 197 के अधीन प्रस्तावित उपबंध सीधे-सारे हैं और वे व्यक्तियों की एकत्रिता के अधिकार के संरक्षण के लिए समाज की विद्यमान मांग को पूरा नहीं कर पाते। उक्त संगोष्ठी में यह भी विचार व्यक्त किया गया था कि प्रस्तावित धारा 492 के अधीन किए गए अपवाद वस्तुतः प्रस्तावित धारा 490 और 491 के उपबंधों को निर्धक बना देते हैं।

उपर्युक्त विचार-विमेश को देखते हुए, हमारा यह अभिमत है कि आधुनिक काल के परिप्रेक्ष्य में एकांत्रिता के अधिकार के विरुद्ध आपराधिकों के विभिन्न पहलुओं से व्यापक रूप से निपटने के लिए एक पृथक् विद्यान होना चाहिए। विधि आयोग इस विषय पर अलग से व्यापक अध्ययन करने का प्रस्ताव कर रहा है इसलिए, यह सिफारिश की जाती है कि विधेयक का खंड 197, जो दंड संहिता के विद्यमान अध्याय 19 को प्रतिस्थापित करने के लिए है, हटा दिया जाए।

#### खंड 198

12.89. इस खंड के अधीन विद्यमान धारा 494 को नई धारा द्वारा प्रतिस्थापित किया जाता है। हमने प्रस्तावित संशोधन पर अध्याय 9 में विचार किया है और उसमें उल्लिखित कारणों से प्रस्तावित नई धारा को जैसा कि पहले ही देखा गया है, उच्चतम न्यायालय द्वारा श्रीमती सरला मुदगल बनाम भारत संघ (ए आई आर 1975 एस सी 1531) में अधिकथित सिद्धांत के अनुसार, एक और स्पष्टीकरण 3 जोड़कर प्रतिस्थापित किया जा सकता है।

#### खंड 199

12.90. पुनः इस खंड के अधीन विद्यमान धारा, 497 को नई धारा द्वारा प्रतिस्थापित करने की वांछा की नई है। यह धारा जारकर्म करने से संबंधित है। हमने इस प्रस्तावित संशोधन पर अध्याय 9 में विस्तृत रूप से चर्चा की है और प्रस्तावित धारा में शुद्धियों के रूप में कुछ संशोधन सुझाए हैं ताकि स्त्री पक्ष को भी दंडनीय बनाया जा सके। दंड प्रक्रिया संहिता के उपबंध में पारिश्रमिक परिवर्तन किए जाएं। तदनुसार, प्रस्तावित धारा में “उस पुरुष द्वारा” शब्दों का लोप किया जाना है।

#### खंड 201

12.91. इस खंड के अधीन विद्यमान धारा 502 को प्रस्तावित किया जाना है। विधि आयोग ने, अपनी 42वीं रिपोर्ट में इस पहलू पर विचार किया था और यह संप्रेक्षण किया था कि विद्यमान धारा में कतिपय परिवर्तन आवश्यक हैं। विद्यमान धारा के अधीन मानहानि के लिए दंड सादा कारावास का है जिसे दो वर्ष तक बढ़ाया जा सकता है। विधि आयोग ने, उसे बढ़ाने के लिए सुझावों पर विचार किया किन्तु अपनी 42वीं रिपोर्ट में यह राय दी कि ऐसा करने के लिए कोई व्यावहारिक औचित्य नहीं है। तथापि, उन्होंने सिफारिश की कि अधिरोपित किया जाने वाला कारावास दोनों में से किसी भाँति का होना चाहिए। और तदनुसार, एक परिवर्तन का सुझाव दिया। दिया गया दूसरा सुझाव यह है कि जहां मानहानिकारक कथन किसी समाचारपत्र में प्रकाशित किया गया है और इस प्रकार व्यक्तियों की बहुसंख्या को जात कराया गया है। वहां उपराधी की दोषसिद्धि का तथ्य भी उसी तरह प्रकाशित किया जाना चाहिए और उसकी लागत सिद्धोष व्यक्ति से उसी प्रकार वसूलीय होनी चाहिए मानो वह जुर्माना हो। संशोधन आयोग की सिफारिशों के सुझाव हैं और किए जा सकते हैं। इसी तरह अन्य उपधारा (1) और (2) भी विधि आयोग की सिफारिशों के अनुसार हैं।

#### खंड 203

12.92. विधि आयोग ने, अपनी 42वीं रिपोर्ट के पैरा 7.9 के साथ पठित पैरा 22.6 में यह सिफारिश की है कि भारतीय दंड संहिता की धारा 505 की उपधारा (1) के खंड (क) को अध्याय 7 में कुछ उपांतरणों के साथ, रिपोर्ट में उल्लिखित रीति के अनुसार, एक नई धारा 138क के रूप में शामिल किया जाना चाहिए।

आयोग ने, 42वीं रिपोर्ट के पैरा 8.26 के साथ पठित पैरा 22.6 में यह और सिफारिश की कि धारा 505 का शेष भाग अध्याय 8 में एक नई धारा 158 खंड के रूप में ले जाया जाना चाहिए।

विधेयक के खंड 52 के फलस्वरूप अध्याय 7 को प्रतिस्थापित किया जाना प्रस्तावित है और उसकी प्रस्तावित धारा 138क के अधीन भारतीय दंड संहिता की धारा 505 की विद्यमान उपधारा (1) के उपबंध उपांतरणों संहित ले जाने के लिए प्रस्तावित हैं। इसी प्रकार, विधेयक के खंड 58 के फलस्वरूप विद्यमान धारा 505 की उपधारा (2) और (3) उपांतरणों संहित धारा 153 (ग) के रूप में ले जाए जाने के लिए प्रस्तावित हैं।

विधि आयोग ने, अपनी 42वीं रिपोर्ट के पैरा 7.9 के साथ पठित पैरा 22.6 में यह सिफारिश की थी कि उपधारा (1) के खंड (क), जो सशस्त्र बलों के मध्य विदोह करित करने, कर्तव्य की अवहेलना करने या अनुशासनीनता आदि के आशय से किए गए कथनों के संबंध में है, सशस्त्र बलों संबंधी अपराधों से संबंधित अध्याय में रखा जाना चाहिए। आयोग ने, रिपोर्ट के पैरा 7.9 के अधीन कथित रीति के अनुसार, इसे धारा 138क के रूप में जोड़ने की सिफारिश की थी। प्रस्तावित धारा 138क उक्त सिफारिशों के अनुसार है, जिससे हम सहमत हैं।

तथापि, दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 505 के शेष भाग, अर्थात् धारा 505 (2) और 505 (3) की बाबत आयोग ने, पैरा 8.26 के साथ पठित पैरा 92.6 के अधीन सिफारिश की थी कि इन संबंधों को लोक प्रशांति के विरुद्ध अपराधों के सुजन के रूप में अच्छी प्रक्रिया संहिता की धारा 505 (2) और (3) के उपबंध वस्तुतः लोक प्रशांति से संबंधित हैं। धारा का यह भाग धारा 153क से काफी किया जाना तर्कसंगत होगा।

विधेयक के खंड 58 के अधीन प्रस्तावित धारा 153क के अनुशीलन से पता लगता है कि ये उपबंध 42वीं रिपोर्ट के पैरा 8.26 तक अधीन सिफारिश की गई प्रस्तावित धारा 158ख के अनुसार हैं जिसमें कतिपय उपांतरणों संहित धारा 505 (2) और (3) के व्यापक अधिकार के प्रस्तावित उपबंधों के अंतर्गत आते हैं और उनमें ले जाए गए हैं।

#### खंड 204

12.93. खंड 204 के फलस्वरूप, धारा 507 के पश्चात एक नई धारा 507क अंतःस्थापित किए जाने का प्रस्ताव है। प्रस्तावित धारा 507क जनता को दृष्टिगोचर स्थानों को नुकसान आदि करित करने के लिए दोनों में किसी भाँति के कारावास से, जिसकी अवधि दो वर्ष तक की हो सकेगी, या जुनानी से, या दोनों से, बंदित किए जाने का उपबंध करती है। “जनता को दृष्टिगोचर स्थान” और “आधोपणीय वस्तु” पदों को प्रस्तावित धारा 507क की उपधारा (2) के अधीन व्यापक रूप से स्पष्ट किया गया है।

प्रस्तावित धारा 507क का व्यवस्थित समाज के सुजन के लिए एक प्रशंसनीय उद्देश्य है और हम उसे पूर्णांकित करते हैं।

#### खंड 206

12.94. विधि आयोग ने, अपनी 42वीं रिपोर्ट में सिफारिश की थी कि भारतीय दंड संहिता अंतिम अध्याय का, जिसमें धारा 511 अंतर्विष्ट है, लोप किया जाए और उसके बाजार अध्याय 5क के पश्चात, आयोग द्वारा रिपोर्ट के पैरा 5.54 के अधीन उपर्युक्त रीति के अनुसार, अध्याय 5क के पश्चात, एक नया अध्याय 5ख जिसका शीर्षक “प्रयत्न” हो, जिसमें दो धाराएं 120ग और 120व्ह होंगी, अंतःस्थापित किया जाए। तदनुसार, विधेयक का खंड 206 भारतीय दंड संहिता के अध्याय 23 का लोप करने के लिए है। इस विषय पर सरकारात्मक विचार करने के पश्चात दमारा यह अभिमत है कि धारा 511 ठीक कार्य कर रही है और इसका लोप करने जिसमें धारा 120ग और 120व्ह अंतर्विष्ट है।

अध्याय 13

## निष्कर्ष और सिफारिशें

अब हम सहिता के अपने विस्तृत अध्ययन की समाप्ति तक आ गए हैं। हमने इसमें सुधार लाने के लिए जो सिफारिशें की हैं वे अत्यधिक हैं तथा अस्पष्टताओं को दूर करने तथा अंतर्निहित विचारों को स्पष्ट करने के लिए, उसके सरलीकरण की दृष्टि से तात्त्विक परिवर्तनों और विद्यमान उपर्युक्तों में कुछ परिवर्तन करके आधुनिकीकरण तक परिकल्पित हैं।

13.02. इसमें संदेह नहीं है कि इस रिपोर्ट का प्रमुख कार्य भारतीय दंड संहिता (संशोधन) विधेयक, 1978 का मूल्यांकन करना था। उक्त विधेयक, विधि आयोग की 42वीं रिपोर्ट पर आधारित था और वह राज्य सभा द्वारा पारित किए जाने के बावजूद भी अधिनियम नहीं बन सका था क्योंकि तत्कालीन लोक सभा विघटित हो गई थी। उक्त विधेयक के अतिरिक्त, विधि आयोग ने, अनेक नई समस्याओं और मुद्दों की भी जांच की जिनके कारण, वर्तमान सामयिक विधिक परिदृश्य के प्रकाश में भारतीय दंड संहिता का और व्यापक परीक्षण करने की आवश्यकता उत्पन्न हुई।

13.03 हमने विभिन्न अपराधों के लिए संहिता में विहित दंडों की सीमा और प्रकृति पर विशेष ध्यान दिया है और उन्हें दंड विज्ञान की आधुनिक धारणों के अनुरूप लाने के विरुद्ध उपायरणों का सुझाव दिया है। हमने संहिता के अध्याय के तत्स्थानी, इस रिपोर्ट के प्रत्येक अध्याय में संहिता के उन उपबंधों को उपर्युक्त किया है जो विद्यमान उपबंधों के बदले में या उनके अतिरिक्त किए जाने हैं और उनमें किए जाने वाले लघु और दीर्घ, दोनों प्रकार के संशोधनों को भी इंगित किया है। प्रत्येक अध्याय में की गई मध्य सिफारिशों को सारांश निम्नवत है:-

अध्याय 1

13.04. इस प्रक्रम पर, यह उल्लेख किया जा सकता है कि भारतीय दंड संदिता (संशोधन) विधेयक, 1978 के खंड 197 के अधीन विद्यमान अध्याय 19 के स्थान पर, उसी संख्या वाला एक नया अध्याय (अध्याय 19), “एकांतता संबंधी अपराधों” के संबंध में अंतःस्थापित किए जाने की बांधा की गई है। विद्यमान अध्याय 19 में तीन धाराएं, अर्थात् धारा 490, 491 और 492 उल्लिखित हैं किन्तु उनमें से धारा 490 और 492 निरसित कर दी गई थीं और शेष एकमात्र धारा 491 “असाधारण व्यक्तियों के संविधान अपराधों के संरक्षण के लिए संविदामान” से संबंधित है। प्रस्तावित नए अध्याय 19 में, जिसे विद्यमान अध्याय के स्थान पर प्रतिस्थापित करने के अभिलेखन साधित्रों का व्यक्ति अथवा व्यक्तियों के, उनके ज्ञान या सम्मति के, बिना वारलाइप को सुनने या अभिलिखित करने के लिए उपयोग या अपराधीकृत छाया चित्रण करना, आदि। हमने 42वीं रिपोर्ट की अंतर्वस्तु और संविधान के अनुच्छेद 21 के अधीन यथा प्रदत्त एकांतता के अधिकार की संकल्पना और साथ ही विदेशी विधि आयोगों की विभिन्न रिपोर्टों को सम्यकतः निर्दिष्ट करने के पश्चात अध्याय 12 में इस खंड पर विस्तृत रूप से विचार किया है और अंततः यह सिफारिश की है कि ये अपराध उचित रूप से भारतीय दंड संदिता में सम्मिलित नहीं किए जा सकते और एकांतता संबंधी ऐसे अपराधों से व्यापक रूप से निपटने के लिए एक पृथक् विधान होना चाहिए।

यह भी उल्लिखित है कि विधि आयोग यथा संभवशील, इस विचार पर पृथक रूप से व्यापक अध्ययन करने का प्रस्ताव कर रहा है।

सूच्याय २

दंड और दंड देना—नीति और प्रक्रिया

13.05 सामाजिक विधिक परिदृश्य के, जिसमें दंड के सुधारात्मक सिद्धांत को लागू किया जाना अपेक्षित है, परिप्रेक्ष्य में यह आवश्यक है, ब्रोस्टल स्कूल अधिनियम, 1970, किशोर न्याय अधिनियम, 1986 और अपराधी परिवेक्षा अधिनियम, 1958 के उपर्योगों का उचित रूप से उपांतरण किया गया है।

2. भारतीय देढ़ संहिता में अपराध, उसकी गुरुता पर निर्भर करते हुए, जमानतीय और अजमानतीय वर्गों में विभाजित है। यासुनीय संहिता में लगभग 120 अपराध असंख्य हैं। यह तर्क किया गया है कि लोक व्यवस्था पर प्रभाव डालने वाले कुछ तुच्छ

अपराध भी गंभीर अपराध के रूप में बढ़ सकते हैं यदि उन्हें तत्परता से न सूलझाया जाए और इसलिए यह वांछनीय है कि ऐसे अपराध लोक हस्तक्षेप के लिए दायी बनाए जाएं। यह सिफारिश की जाती है कि धारा 290, 298, 431, 432, 434, 504, 505 और 510 के अधीन दंडनीय अपराध संज्ञय बनाए जाएं। (पैरा 2.06)

3. अधिरोपित किए जाने वाले जुमनि की रकम पर्याप्त रूप से बढ़ाई जानी चाहिए और जहां तक संभव हो इसके स्थान पर अल्पकालीन कारावास किया जाना चाहिए और आपराधिक विधि के उपयोग तथा दुरुपयोग से पीड़ित निर्धन व्यवितरणों को क्षतिपूर्ति के रूप में प्रतिपुरित किया जाना चाहिए तथा बहुत समय से विद्वित जुमनि की रकमें आज के समय में अपनी सुसंगति और प्रभाव खो देनुको है तथा अधिरोपित जुमनि का समाज की आर्थिक संरचना के साथ कोई संबंध नहीं है तथा मनोपराधी होने का आवश्यक तत्व प्रामाण्यतः नहीं रहता है।

संदित्ता की उन विभिन्न धाराओं की, जहाँ जुमनि के दंड के लिए उपबंध है, परीक्षा से यह पता चलता है कि जुमनि की युनतम रकम 100 रुपए से 10000 तक के बीच है। अधिकतर अपराधों की आबत यह 500 रुपए से कम है।

इसलिए, उन सभी धाराओं में, जुमनि तत्त्वानी मात्रा जो, कम से कम बीस गुना बढ़ाया जाना चाहिए और दंड ब्रक्षिया संहिता ऐसा जुर्माना अधिरोपित करने के लिए प्रथम श्रेणी मजिस्ट्रेटों को शक्तियां देने की बाबत एक उपबंध किया जाना चाहिए। (पैग 209)

4. भारतीय दंड संहिता (संशोधन) विधेयक, 1978 में खंड 18 द्वारा प्रस्तावित संशोधन, जिसमें आजीवन कारावास को कठिन, पर्याप्त कठोर श्रम सहित बनाया गया है, आवश्यक है। (पैरा 2.11)

5. भारतीय इंड संदिग्दा (संसोधन) विधेयक, 1978 का खंड 27 अन्यतः सामुदायिक सेवा के खंड को भरतने के लिए नई धारा 4 के अंतःस्थापन का उपबंध करता है। इससे यह अभिप्रेत है कि सिद्धोष को बिना किसी पारिश्रमिक से सेवा करनी होगी। इसके अर्थात् नियन्यन भाग में यह उपबंध है कि कार्य उचित पर्यवेक्षण के अधीन, सरकार द्वारा या किसी स्थानीय प्राधिकारी द्वारा की जाने वाली प्रवस्थाओं के अनुसार किया जाना है।

आयोग ने, यह महसूस किया कि उसको प्रवर्तित करने में अनेक कठिनाईयां हैं जैसाकि पर्यवेक्षक प्राधिकारी को यह देखाना चाहिए कि सिद्धांश व्यक्ति कार्य कर रहा है और विनिर्दिष्ट घंटों की संख्या तक सेवा प्रदान कर रहा है और यदि वह व्यतिक्रम के दृष्टिकोण में पता करने में असफल रहता है तो उसे उसके पश्चात दंडादिष्ट किया जाना है।

इसलिए, हम समझते हैं कि सुधारात्मक उपायों की दृष्टि से सामूदायिक सेवा के दंड के प्रस्ताव की अपेक्षा खुला कारावास गाली बेहतर रूप से उपयुक्त है। (पैग 213)

6. दूसरा सुझाव यह था कि भारतीय दंड संहिता की धारा 53 में “पद धारण करने से निरर्दृता” दंड शामिल किया जाना चाहिए अथवा नहीं। कुछ प्रकार के मामलों में, विशेष रूप से, जिनमें लोक सेवक और नियमों, कंपनियों, रजिस्ट्रीकृत सोसाइटियों, दिए में पद धारण करने वाले व्यक्ति अंतर्गत हैं, दोषसिद्धि में समाप्त होने पर अनिवार्यतः पद धारण करने से निरर्दृता सम्भविष्ट है। किन्तु ऐसा कार्य उनके एतद संबंधी सेवा नियमों और विनियमों के साथ मूल रूप से संबद्ध है। यह सामान्य ज्ञान का विषय है। प्रायः सभी सेवा नियमों में हमें दोषसिद्धि के पश्चात ऐसे व्यक्ति को पद धारण करने से निरर्दित करने वाले कुछ न कुछ उपबंध लिते हैं।

यह सिफारिश की जाती है कि विषय को उन सभी सेवा नियमों और विनियमों के अधीन संबद्ध प्राधिकारी द्वारा विनिश्चय लेने के लिए, छोट देना उचित होगा क्योंकि प्रसंगवश सेवा शर्तों से संबंधित कुछ अन्य प्रश्न भी उठ सकते हैं जिनमें और वे आवश्यक होगी। (सैप 2.14)

7. विधि आयोग ने, दंड प्रक्रिया संहिता संबंधी अपनी 154वीं रिपोर्ट में एक नए उपबंध, अर्थात् धारा 357क के अंतःस्थापन सिफारिश की है जिसमें संबंधित राज्य सरकारों द्वारा पीड़ित व्यक्ति प्रतिकर स्कीम विरचित करने के लिए उपबंध है, जिसके बीच पीड़ित व्यक्तियों को, जहां कहीं यह आवश्यक पाया जाता है जुमनि में से धारा 357 के अधीन न्यायालय द्वारा दिए गए विकार के अलावा उसमें उपदर्शित रीति के अनुसार, प्रतिकर दिया जा सकता है। हम यह भी उपदर्शित करते हैं कि पर्याप्त प्रतिकर दिया जाना ऐसी अनेक परिस्थितियों पर निर्भर करता है जिनमें कुछ जांच अपेक्षित है और कुछ मामलों में प्रतिकर के संदाय का देखा आवश्यक नहीं कि अनिवार्यतः दंड के रूप में ही किया जाए।

इसलिए, हमारा यह अभिमत है कि प्रतिकर के संदाय के लिए आदेश को, दंड के रूप में धारा 53 में सम्मिलित किया जाना चैत नहीं है।

8. दूसरा दंड, जिसे धारा 53 में शामिल किए जाने की वांछा की गई है “लोक परिनिदा”, अर्थात् अपराधी के नाम और अपराध तथा दंड के ब्यौरे का प्रकाशन है, प्रस्तावित धारा 74ग उपधारा (3) के अधीन अधिकारायी दंड के अतिरिक्त लोक परिनिदा

के रूप में दंड के अधिरोपण के लिए उपबंध करती है और यह संहिता के अध्याय 12, 13 धारा 272 से 276, 383 से 389, 403 से 409, 415 से 420 और में उल्लिखित अपराध अध्याय 18 के अधीन अपराधों तक सीमित है जैसे कि भारतीय दंड संहिता (संशोधन) विधेयक, 1978 के अधीन प्रस्तावित नई धारा 420क और 462क के अधीन प्रस्तावित अपराध है। ये सभी अपराध हैं जहां कुछ ऐसे व्यक्ति, जिन्होंने कुछ लोक कर्तव्य न्यस्त किए गए हैं, अपराध करते हैं, ऐसे दंड की समाज विरोधी अपराधों, अंतर्धान अपराधों अन्यथा कथित सफेद पोश अपराधों, विशेष रूप से, दुनियादार लोगों द्वारा किए जाते हैं की बाबत ज्यादा मुस्काते हैं। यह सामान्य ज्ञान की बात है कि जब कि ऐसे अपराध ज्यादा बड़ी संख्या को प्रभावित करते हैं, अपराधियों को सम्यक्त दंडित नहीं किया जाता है। तथापि, कम से कम ऐसे मामलों में, जो दोषसिद्धि में समाप्त होते हैं, लोक परिनिवास का दंड अधिक भयोपरापी रूप में कार्य करने के लिए मिथ्या है। प्रचार के परिणामस्वरूप, बदनामी का भय और कारबाह की हानि जैसे पारिणामिक प्रतिक्रियाओं के कारण ऐसा हो सकता है। ऐसी परिनिवास करना अन्य देशों में से एक है। भारत में इस प्रकार का दंड खाद्य अपनियम नियाराण अधिनियम और आयकर अधिनियम में शामिल है। विधि आयोग ने, अपनी 42वीं रिपोर्ट में ऐसे दंड के समावेशन पर विचार किया और यह सिफारिश की कि ऐसा अतिरिक्त दंड उन व्यक्तियों के मामले में, जिन्हें अध्याय 12 और 13 के अधीन किसी अपराध के लिए जैसे उद्धापन, आपराधिक दुर्विनियोग और दस्तावेजों से संबंधित अपराध दूसरी बार सिद्धोष किया जाता है, उपयोगी होगा।

यह सिफारिश की जाती है कि एक अतिरिक्त दंड के रूप में ऐसी लोक परिनिवास होनी चाहिए और तदनुसार, इसे भारतीय दंड संहिता की धारा 53 से शामिल किया जाए और चयनित मामलों में उसके अधिरोपण की बात न्यायालय के विवेक पर छोड़ दी जानी चाहिए। (पैरा 2.16)

9. अनेक अपराधों की बाबत विद्वित दंड “कारावास से या जुमनि या दोनों से” है विभिन्न कार्यशालाओं में यह कहा गया है कि आधुनिक समाज में परिवर्तनों को, अपराध के ग्रवर्गों और उप अपराधों की पुनरावृत्ति या कतिपय प्रकार के अपराधों की प्रायः आवृत्ति को देखते हुए, यह आवश्यक है कि दंड कारावास से और उसके अतिरिक्त जुमनि से भी होना चाहिए।

भारतीय दंड संहिता के विभिन्न उन उपबंधों की तथा अपराध की आधुनिक प्रवृत्ति की जांच करने पर हमारा यह अभिमत है कि धारा 153, 153क, 160, 166 से 175, 177, 182, 221, 269 से 291, 292, 294 से 298, 336, 465 और 477क के अधीन अपराधों की बाबत दंड कारावास से और साथ ही जुमनि से होना चाहिए। प्रयोगवश हम यह भी मुझाव देते हैं कि इन अपराधों की बाबत कारावास की सीमा उचित रूप से बढ़ा दी जानी चाहिए। (पैरा 2.17)

### अध्याय 3

#### मृत्यु शास्ति

13.06. आयोग ने, अन्य देशों की विधि का तुलनात्मक अध्ययन करने के पश्चात और शीर्ष न्यायालय द्वारा दिए गए अद्यतन विभिन्न नियंत्रणों की जांच करने के पश्चात इस प्रश्न पर विभिन्न कोणों से सतर्कतापूर्वक विचार किया है।

हम विधि आयोग की उसकी 35वीं रिपोर्ट की मृत्यु दंड को बनाए रखने की सिफारिश को दुर्दराते हैं किन्तु यह दंड उपयुक्त न्यायालय द्वारा अधिकथित मार्दार्दी सिद्धांतों के अनुसार दिया जाना है। (पैरा 3.07)

2. धारा 302 को बनाए रखने की पहले ही सिफारिश की गई है क्योंकि यह उसमें इस कारण से मृत्यु के दंड को अधिरोपित करने की बाबत किन्हीं सीमाओं को पढ़ने के बजाय है कि उन्हें किसी ‘सीधे रूप में इस कारण रखा जाना संभव नहीं है कि ऐसी कौन सी परिस्थितियां हैं कि किसी मामले को विरल से विरलतम बना सकती हैं उन्हें विधिक उपबंध द्वारा नियत नहीं किया जा सकता है।

विधि आयोग सिफारिश करता है कि धारा 302 में कोई ऐसा परिवर्तन अपेक्षित नहीं है जैसाकि विधेयक के खंड 125 में प्रस्तावित है। (पैरा 3.10)

3. भारतीय दंड संहिता (संशोधन) विधेयक, 1978 के अधीन धारा 302 के खंड 3 में आजीवन कारावास के साथ-साथ भी जाने के बजाय क्रमवर्ती रूप से भी जाने का उपबंध है। यह भूतकाल की भयोपरापी और प्रतिशोधात्मक सिद्धांतों के अनुरूप पश्यचनन होगा।

इसलिए, हम विधेयक की धारा 302 के प्रस्तावित खंड (3) को अनुमोदित नहीं करते हैं। (पैरा 3.12)

4. भारतीय दंड संहिता की धारा 303 निम्नवत उपबंध करती है:—

“303. आजीवन सिद्धोष द्वारा हत्या के लिए दंड, जो कोई आजीवन कारावास के दंडादेश के अधीन होते, हुए हत्या करेगा वह मृत्यु से दंडित किया जाएगा।”

उच्चतम न्यायालय ने, मिश्नु बनाम धंजाब राज्य (1983) 2 एस० सी० सी० 277, के मामले में यह घोषित किया कि धारा 303 का पूर्वोक्त उपबंध संविधान के अनुच्छेद 14 में अंतर्विष्ट समानता की गारंटी और अनुच्छेद 21 द्वारा प्रदत्त अधिकार का भी अतिक्रमण करते हैं।

हमने विधेयक के विभिन्न उपबंधों पर सतर्कतापूर्वक विचार किया है और यह महसूस करते हैं कि यदि धारा 303 का लोप किया जाता है तो धारा 307 का दूसरा भाग भी, जो यह उपबंध करता है कि जब कि इस धारा में वर्णित अपराध करने वाला कोई व्यक्ति आजीवन कारावास के दंडादेश के अधीन हो, तब यदि उपहति कारित हुई हो, तो वह मृत्यु से दंडित किया जा सकेगा, उन्हीं तुल्यरूपता और सिद्धांतों के आधार पर बनाए नहीं रखा जा सकता, जिनके आधार पर धारा 302 निरंकुश शमनात्मक तथा संविधान के अनुच्छेद 14 और 21 का अतिक्रमण करने वाली अभिनिधारित की गई है। तदनुसार, हम धारा 307 के दूसरे भाग को छाने की सिफारिश करते हैं। (पैरा 3.14)

### अध्याय 4

#### आपराधिक दंडयंत्र

13.07. यद्यपि, भारतीय दंड संहिता (संशोधन) विधेयक, 1978 अत्यधिक दंडयंत्र के अपराध के बारे में मौन है किन्तु विधि आयोग ने, अपनी पूर्ववर्ती 42वीं रिपोर्ट में यह सिफारिश की थी कि तुच्छ अपराधों के लिए आपराधिक दंडयंत्र, इस अध्याय के अधीन समाविष्ट नहीं होना चाहिए इसलिए, इस अध्याय की धारा 120 के पुनरीक्षण की सिफारिश की गई थी।

अब, पुनः जांच करने के पश्चात यह सिफारिश की जाती है कि अध्याय 5 के लिए छेड़ने की आवश्यकता नहीं है क्योंकि यह ठीक कार्य करती है भले ही कुछ आर्थिक अपराधों के लिए दंडयंत्र भी इसके अंतर्गत आता हो। (पैरा 4.08)

2. विधि आयोग की, अपनी 42वीं रिपोर्ट में यह सिफारिश की थी कि धारा 120ख का इस धारा को स्वतः पूर्ण बनाने के लिए पुनरीक्षण किया जाना चाहिए किन्तु इसे भारतीय दंड संहिता (संशोधन) विधेयक, 1978 में शामिल नहीं किया गया था।

हमारा यह अभिमत है कि आपराधिक दंडयंत्र एक पृथक अपराध है और यह प्रधान अपराध से पृथकतः दंडनीय है। उपबंध के रूप में कार्य करता है इसलिए आपराधिक दंडयंत्र से संबंधित चालू उपबंधों को छेड़ने की आवश्यकता नहीं है। (पैरा 4.13)

### अध्याय 5

#### वित्तीय धोटाले

13.08. हाल में ही बैंकों अस्पतालों, गैर वित्तीय संस्थाओं जैसे विभिन्न क्षेत्रों में विभिन्न प्रकार के अंतर्गत संवादों का पता लगा है।

हमारा यह अभिमत है कि इस समस्या में, यदि निम्नलिखित नई धारा, अर्थात् धारा 120ख भारतीय दंड संहिता में सम्मिलित कर ली जाए तो, मुकाबला किया जा सकता है:—

“120ख. लोक संस्था आदि के कपटवंचन का आपराधिक दंडयंत्र—जब दो या अधिक व्यक्ति किसी लोक संस्था या स्थानीय प्राधिकरण को अपने या किसी अन्य व्यक्ति के लिए सदोष अभिलास कारित करने या कारित करने के लिए कपटपूर्वक या बेर्डमानी से अथवा ऐसी लोक संस्था या स्थानीय प्राधिकरण को करने या कारित करने के लिए कपट वंचित करने को सहमत होते हैं तो ऐसी सहमति कपटवंचन के लिए आपराधिक दंडयंत्र कहलाती है और जो कोई ऐसे आपराधिक दंडयंत्र में शीरीख होगा वह आजीवन कारावास से या दोनों में से किसी भाँति के कारावास से, जिसकी अवधि 10 वर्ष तक हो सकेगी दंडनीय होगा और जुमनि का भी दायी होगा:

परन्तु कोई सहमति, कपटवंचन या आपराधिक दंडयंत्र तब तक न होगी, जब तक कि सहमति के अलावा कोई कार्य उसके अनुसरण में उस सहमति के एक या अधिक पक्षकारों द्वारा नहीं कर दिया जाता।

स्पष्टीकरण: इस धारा के प्रयोजनों के लिए, ऐसा कोई बैंक या वित्तीय संगठन या कंपनी या निगमित निकाय जो सरकार के स्वामित्व में है या उसके नियंत्रणाधीन है, “लोक संस्था” समझे जाएंगे। (पैरा 5.06)

## अध्याय 6

प्रयत्न—विधेयक में नए अध्याय 5ख के रूप में नई धारा 120ग और 120घ का अंतःस्थापन

13.09 भारतीय दंड संहिता (संशोधन) विधेयक, 1978 में, खंड 45 के अधीन इस नए अध्याय में उपबंध किया गया है। ऐसा लगता है कि विधेयक के खंड 45 से 51 तक गलती से इस अध्याय, अर्थात् भारतीय दंड संहिता के अध्याय 6 में समाविष्ट किए गए हैं। इसलिए, यह अध्याय केवल धारा 120ग और 120घ तक ही सीमित होना चाहिए, जो “प्रयत्न” के संबंध में है।

विभिन्न कोणों से जांच करने के पश्चात् यह सिफारिश की जाती है कि भारतीय दंड संहिता में प्रस्तावित आराओं को अंतःस्थापित करने की कोई आवश्यकता नहीं है क्योंकि धारा 511 ही कार्य कर रही है और इसके अन्तर्गत उक्त पहलू आ जाते हैं। इस बात को देखते हुए, एक नया अध्याय 5ख, जिसमें धारा 120ग और 120घ है, पुरास्थापित करने की आवश्यकता नहीं है, यदि आवश्यकता हो तो धारा 511 की भांपा में संशोधन किया जा सकता है। (पैरा 6.16)

## अध्याय 7

राज्य के विरुद्ध अपराधों के विधय में धारा 121—130

13.10 धारा 121क के उपबंधों पर विचार करने के पश्चात्, दमारा यह अभिमत है कि किसी भी परिवर्तन की आवश्यकता नहीं है। इसी प्रकार, धारा 121, 122 और 123 में, जैसाकि विधि आयोग ने अपनी 42वीं रिपोर्ट में पहले ही सुझाया है “किसी भांति के कारावास” शब्दों के स्थान पर “कठिन कारावास” शब्द प्रतिस्थापित करने के सिवाय, किसी परिवर्तन की आवश्यकता नहीं है। (पैरा 7.09)

2. विधेयक में, प्रस्तावित धारा 123क विधि आयोग की उसकी अपनी 42वीं रिपोर्ट की सिफारिशों पर आधारित है। तथापि, विधेयक में भारतीय दंड संहिता की नई धारा सम्मिलित करने के अतिरिक्त, उसका स्पष्टीकरण जोड़े जाने की वांछा की गई है। दमारा यह अभिमत है कि उक्त स्पष्टीकरण को रखने से कोई अपहानि नहीं है। (पैरा 7.11)

3. विधि आयोग ने, अपनी 42वीं रिपोर्ट में यह सिफारिश की थी कि धारा 124क का पुनरीक्षण राजद्रोह से संबंधित है। उसे भारतीय दंड संहिता (संशोधन) विधेयक, 1973 के खंड 48 में सम्मिलित किया गया है। मामले की पुनः जांच करने के पश्चात् दमारा यह अभिमत है कि यथा सिफारिश धारा 124क प्रतिस्थापित की जाए। (पैरा 7.18)

4. विधि आयोग की अपनी 42वीं रिपोर्ट में की गई पूर्वतर सिफारिशों के आधार पर, राष्ट्र गौरव अपमान निवारण अधिनियम, 1971 अधिनियमित किया गया था।

इसलिए, भारतीय दंड संहिता (संशोधन) विधेयक, 1978 की प्रस्तावित धारा 124ख की भारतीय दंड संहिता में अंतःस्थापित किए जाने की आवश्यकता नहीं है, इसे विधेयक के खंड 48 से हटा दिया जाए। (पैरा 7.21)

5. हम भारतीय दंड संहिता (संशोधन) विधेयक, 1978 के प्रस्तावित खंड 49 से सहमत हैं कि भारतीय दंड संहिता की धारा 125 निम्नवत् पुनरीक्षित की जाए:—

“125. भारत सरकार से मैत्री रखने वाले किसी विदेशी राज्य के विरुद्ध युद्ध करनो—जो कोई भारत से मैत्री या शांति का संबंध रखने वाली किसी विदेशी राज्य की सरकार के विरुद्ध युद्ध करेगा या ऐसा युद्ध करने का प्रयत्न करेगा या ऐसा युद्ध करने के लिए दुष्प्रेरण करेगा वह किसी भांति के कारावास से, जिसकी अवधि 10 वर्ष तक की हो सकेगी, दंडित किया जाएगा और जुमनि का भी दायी होगा।” (पैरा 7.25)

## अध्याय 8

आत्महत्या—दुष्प्रेरण और प्रयत्न

13.11 विधि आयोग ने, अपनी 42वीं रिपोर्ट में यह सिफारिश की थी कि धारा 309 कठोर और अनुचित है तथा यह निरसित की जानी चाहिए।

तथापि पुनः जांच करने पर, हम सिफारिश करते हैं कि धारा 309, भारतीय दंड संहिता और विधेयक के खंड 131 के अधीन अपराध कायम है, हटा दी जानी चाहिए। (पैरा 8.17)

## अध्याय 9

स्त्री और बालक के विरुद्ध अपराध

13.12 विधि आयोग ने, यह सिफारिश की है कि धारा 375 में तीसरा खंड निम्नवत् संशोधित किया जाए:—

धारा 375: वह पुरुष बलात्संग करता है, यह कहा जाता है—  
पठला

दूसरा

तीसरा—उस स्त्री की सम्मति से, जबकि उसकी सम्मति, उसे या ऐसे किसी व्यक्ति को, जिससे यह हितबद्ध है, मृत्यु या उपहति के भय में डालकर या किसी अन्य क्षति करके अभिप्राप्त की गई है। (पैरा 9.34)

2. स्त्री और बालिका पर लैगिक अतिलंघन में वृद्धि के मुद्दे पर विचार करने के लिए विधि आयोग ने, यह सिफारिश की कि धारा 354 में स्त्री की लज्जा भंग करने के विद्यमान अपराध में लैगिक हमले का अपराध जोड़ा जाए और वे वर्ष के स्थान पर पांच वर्ष का दंड रखा जाए। तदनुसार, धारा 354 निम्नवत् रूप से संशोधित की जाए:—

“354. स्त्री की लज्जा भंग करने के आशय से उस पर हमला या आपराधिक बल का प्रयोग—जो कोई किसी स्त्री की लज्जा भंग करने या उस पर लैगिक हमला करने के आशय से या यह संभाव्य जानते हुए कि तइद्वारा वह उसके लज्जा भंग करेगा, या उस स्त्री पर लैगिक हमला करेगा या आपराधिक बल का प्रयोग करेगा, वह दोनों में से भांति के कारावास से, जिसकी अवधि पांच वर्ष तक की हो सकेगी, दंडित किया जाएगा और जुमनि का भी दायी होगा।” उक्त रीति में, धारा 354 की परिधि का विस्तार, दमारे दृष्टिकोण से स्त्री और बालिका पर बलात्संग को छोड़कर, लैगिक अतिलंघन के विभिन्न रूपों के अंतर्गत आता है। (पैरा 9.35)

3. विधि आयोग का यह और मत है कि धारा 509 की परिधि के भीतर छेड़लाड़ का अपराध आता है और राष्ट्रीय महिला आयोग द्वारा यथासिफारिश नई धारा 376क की कोई आवश्यकता नहीं है। तथापि, विधि आयोग यह मद्दूस करता है कि दंड की मात्रा एक वर्ष से बढ़ाकर तीन वर्ष की जाए और जुमनि में भी वृद्धि की जाए।

तदनुसार, हम सिफारिश करते हैं कि धारा 509 निम्नलिखित रीति से संशोधित की जाए:—

“धारा 509. जो कोई किसी स्त्री की लज्जा का अनादर करने के आशय से कोई शब्द कहेगा, कोई ध्वनि या लेंगा विक्षेप करेगा, या कोई वस्तु प्रदर्शित करेगा, इस आशय से ऐसी स्त्री द्वारा ऐसा शब्द या ध्वनि सुनी जाए या ऐसा लंग विक्षेप या वस्तु देखी जाए अथवा ऐसा स्त्री की एकांतता का अतिक्रमण करेगा, वह किसी भी भांति के कारावास से, जिसकी अवधि 3 वर्ष तक हो सकेगी, दंडित किया जाएगा और जुमनि का भी दायी होगा।” (पैरा 9.35)

4. हम सिफारिश करते हैं कि अन्य स्पष्टीकरण, धारा 464 में स्पष्टीकरण 3 जोड़ा जाए जो निम्नवत् रूप में पढ़ा जाए:—

“स्पष्टीकरण 3—जब कोई व्यक्ति, पूर्ववर्ती विवाह के अस्तित्व में रहने के दौरान पुनःविवाह करने के प्रयोजन के लिए स्वयं को किसी अन्य धर्म में संपर्वर्तित करता है, तो वह हितकर का अपराध करता है।” (पैरा 9.42)

5. जारकर्म के संबंध में, दंड प्रक्रिया संहिता (संशोधन) विधेयक, 1978 विवाहों में लिंग और पश्चात्वर्ती धारा 497 में जारकर्म के अपराध के बीच सम्बन्ध के संकल्पना में लाया गया।

तथापि, विधि आयोग यह सिफारिश करता है कि खंड 199 की वाक्य रचना लिंग के बीच समानता की संकल्पना को परिवर्तित करने के लिए निम्नलिखित पंक्तियों में उपांतरण किया जाए। तदनुसार, खंड 199 निम्नवत् रूप से संशोधित किया जाएगा:—

“497. जारकर्म—जो कोई ऐसे व्यक्ति के साथ, जो कि किसी अन्य पुरुष की पत्नी है, और जिसका, यथास्थिति, किसी अन्य पुरुष की पत्नी या पति होना वह जानता है या विश्वास करने का कारण रखता है, उस पुरुष की सम्मति से मैनामुक्लता के बिना ऐसा मैथुन करेगा, जो बलात्संग, जारकर्म करने के अपराध की कोटि में नहीं आता है वह दोनों में से किसी भांति के कारावास से, जिसकी अवधि 5 वर्ष तक की हो सकेगी, या जुमनि से, या दोनों से, दंडित किया जाएगा।” (पैरा 9.46)

6. यदि धारा 497 ऊपर उपर्युक्त पंक्तियों में संशोधित की गई है, तो दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 198 की उपधारा (2) का उचित रूप से संशोधन करने की भी आवश्यकता होगी। (पैरा 9.49)

7. हम सिफारिश करते हैं कि देश में बाल लैगिक दुरुपयोग के बढ़ते हुए प्रभाव के परिप्रेक्ष्य में, जहाँ प्रकृति विरुद्ध अपराध किसी 18 वर्ष से कम आयु वाले व्यक्ति पर किया जाता है, उसके लिए दो वर्ष से अन्युन अवधि के लिए किसी भांति के कारावास का, जिसकी अवधि 7 वर्ष तक ही हो सकेगी, न्यूनतम आज्ञापक दंड होना चाहिए। तथापि, न्यायालय के निर्णय में अभिलिखित किए जाने वाले पर्याप्त और विवेष कारणों के लिए दंड को कम करने का विवेकाधिकार होगा। परिणामस्वरूप, धारा 377 निम्नवत् संशोधित की जाए:—

“377. प्रकृति विरुद्ध अपराध—जो कोई किसी पुरुष, स्त्री के साथ प्रकृति की व्यवस्था के विरुद्ध स्वेच्छया इंद्रीय यौन करेगा वह किसी भाँति के कारावास से जिसकी अवधि दो वर्ष तक की ही सकेगी या जुमनि से, या दोनों से दंडित किया जाएगा और जहाँ ऐसा अपराध 18 वर्ष की आयु वाले व्यक्ति के साथ किया जाता है, वहाँ वह किसी भाँति के कारावास से, जिसकी अवधि दो वर्ष से कम नहीं होगी किन्तु सात वर्ष तक बढ़ाव जा सकेगी और जुमनि से, दंडित किया जाएगा।

परन्तु यह कि न्यायालय नियम में अभिलिखित किए जाने वाले पर्याप्त और समुचित कारणों के लिए, दो वर्ष से कम अवधि के लिए किसी भाँति के कारावास का दंड अधिरोपित कर सकेगा।

**स्पष्टीकरण**—इस धारा में वर्णित अपराध के लिए आवश्यक इंद्रीय भोग गठित करने के लिए प्रवेशन पर्याप्त है। (पैरा 9.52)

8. विधि आयोग की राय में, विद्यमान धारा 376(2)(च) और धारा 354 और 377 के संशोधन के लिए विधि आयोग द्वारा की गई सिफारिश बाल लैंगिक दुरुपयोग के संबंध में समुचित है।

इसलिए, विधि आयोग, भारतीय दंड संहिता (संशोधन) विधेयक, 1978 के खंड 146 में यथा सुझाई गई नई धारा 354क को सम्मिलित करने की सिफारिश नहीं करता है। (पैरा 9.59)

#### अध्याय 10

##### भगा ले जाने का आनुषंगिक अपहरण

13.13.1. भारतीय दंड संहिता (संशोधन) विधेयक, 1978 का खंड 149 वायुयान को भगा ले जाने की बाबत नई धारा 362क को अंतःस्थापित करने के लिए प्रस्तावित है। भारतीय दंड संहिता (संशोधन) विधेयक, 1978 के प्रस्तावित खंड 35 और 37 भारतीय दंड संहिता की धारा 103 और 105 के साथ-साथ वायुयान को भगा ले जाने से संबंधित संशोधन करने के लिए भी है।

हम सिफारिश करते हैं कि धारा 362क को अंतःस्थापित करने और धारा 103 और 105 को संशोधित करने की कोई आवश्यकता नहीं है। (पैरा 10.15)

2. विधि आयोग यह जानता है कि अंतरराष्ट्रीय विधि में सीधी सिफारिश करना उसकी अधिकारिता के भीतर नहीं है। फिर भी, हम आनुषंगिक रूप से यह सिफारिश करते हैं कि सिविल विमान के अंतरराष्ट्रीय न्यायालय के पास इसको भेजना तत्काल आवश्यक है। यह अंतरराष्ट्रीय सिविल विमान को भेजना अपराध के निवारण के लिए हितकर है। प्रस्तावित न्यायालय यानों को भगा ले जाने का अपराध वायु सेवाओं आदि की रिप्ट जहाँ अधिकारिता दो या उससे अधिक देशों में उद्भूत होगी, से संबंधित मामलों को करेगा। जब कभी संभव हो, अंतरराष्ट्रीय समुदाय सहित इन सिफारिशों को लेने के लिए मारत सरकार से आशा की जाती है। (पैरा 10.25)

3. “यानों को भगा ले जाने” आदि के अपराध के संबंध में धारा 362क के निम्नलिखित खंड 2 को भारतीय दंड संहिता में अंतःस्थापित किया जाए। विधि आयोग यह भी सिफारिश करता है कि भारतीय दंड संहिता (संशोधन) विधेयक, 1978 में यथाप्रस्तावित खंड (1) का लोप किया जाए। खंड (2) निम्नवत् क्रम में पढ़ा जाए:—

“362(2) मारत में किसी यान या मारत में रजिस्ट्रीकृत किसी यान पर, जो कोई विधिविरुद्ध, बलपूर्वक या बल दिखाकर या उसकी धमकी देकर अथवा किसी अन्य प्रकार के अभिनास से ऐसे यान को किसी ऐसे स्थान पर, जो उस गंतव्य स्थान से भिन्न है, ले जाने के प्रयोजन के लिए अथवा किसी अन्य प्रयोजन के लिए अनिवार्यत करने या निर्यत्रण का प्रयोग करने का प्रयत्न करेगा, उसके बारे में यह कहा जाएगा कि उसने भगाकर ले जाने का अपराध किया है और जो कोई भगाकर ले जाएगा वह कठिन कारावास से, जिसकी अवधि 10 वर्ष तक की हो सकेगी, दंडित किया जाएगा। और जुमनि का भी दायी होगा।

##### स्पष्टीकरण—इस धारा में—

(i) “यान” के अन्तर्गत कोई जलयान भी है किन्तु वायुयान इसके अन्तर्गत नहीं है। (पैरा 10.30)

4. धारा 432 को संशोधित करने के लिए भारतीय दंड संहिता (संशोधन) विधेयक, 1978 का खंड 179 हटा दिया जाए। (पैरा 10.30)

5. “हेलीकाप्टर, एयर ग्लाइडर आदि” शब्द यानहरण निवारण अधिनियम, 1982 की धारा 2(क) और सिविल विमान सुरक्षा विधिविरुद्ध कार्य दमन अधिनियम, 1982 में अंतःस्थापित किए जाएं। (पैरा 10.30)

#### अध्याय 11

##### दस्तावेज—इसकी परिभाषा का विस्तार

13.14.1. भारतीय दंड संहिता की धारा 29 में यथापरिभाषित “दस्तावेज” पद को बढ़ाए जाने की आवश्यकता है। इसलिए, हम सिफारिश करते हैं कि भारतीय दंड संहिता की धारा 29 में स्पष्टीकरण 3 निम्नवत् रूप से अंतःस्थापित किया जाए:—

“स्पष्टीकरण 3—“दस्तावेज” पद के अंतर्गत ऐसी कोई डिस्क, टेप, साउंड ट्रैक या अन्य युक्ति भी है, जिस पर या जिसमें कोई विक्रय या प्रतिमा या छवि, यांत्रिक या अन्य साधनों द्वारा अभिलिखित या भंडारित की जाती है।” (पैरा 11.03)

2. यदि धारा 29 में प्रस्तावित संशोधन किया जाता है तब उपर उपर्युक्त पंक्तियों की भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872 की धारा 3 के अधीन “दस्तावेज” पद के परिणामिक संशोधन के लिए भी आवश्यकता होगी। (पैरा 11.08)

#### अध्याय 12

##### भारतीय दंड संहिता (संशोधन) विधेयक, 1978

हमने भारतीय दंड संहिता (संशोधन) विधेयक, 1978 का सतर्कतापूर्वक अनुशीलन किया है, जिसमें 151 संशोधन, 95 प्रतिस्थापन, 32 लोप और 25 अंतःस्थापन हैं। विधेयक में प्रस्तावित परिवर्तन इस देश के मूलभूत दाँड़िक परिनियम की, खामियों को हटाने और अधिकतम आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए उपयोगी बनाने के लिए अद्यतन बनाने हेतु विवक्षित है। हम पाते हैं कि कुछ विवक्षित परिवर्तन विधि आयोग द्वारा अपनी 42वीं रिपोर्ट में की गई सिफारिशों से परे भी हैं। इसलिए, हम विधेयक के सभी खंडों की पुनः जांच करना आवश्यक समझते हैं।

1. खंड 1, 2, 7, 8, 12, 16, 39, 40, 44, 46, 47, 49, 50, 51, 53, 55, 56, 57, 59, 60, 61, 62, 65, 69, 70, 71, 72, 73, 74, 75, 76, 77, 78, 79, 80, 81, 82, 83, 84, 85, 86, 87, 88, 89, 90, 92, 95, 96, 97, 98, 99, 100, 101, 102, 103, 104, 105, 106, 107, 108, 109, 112, 113, 114, 115, 116, 117, 118, 120, 121, 126, 127, 148, 150, 153, 154, 156, 157, 158, 185, 186, 189, 191, 192, 193, 195, 200, 202, 205 और 207 में वांछित संशोधन केवल अपरिणामिक हैं और इन्हें किया जा सकेगा। (पैरा 12.02)

2. खंड 2 से 8—इन खंडों द्वारा, संहिता की धारा 4 से 17 में कुछ संशोधन वांछित हैं। हम भारतीय दंड संहिता की धारा 8, 9 और 11 में किसी परिवर्तन की सिफारिश नहीं करते हैं। परिणामस्वरूप, विधेयक के खंड 2 से 8 को हटाया जाना है। विभिन्न धाराओं में शेष संशोधन संहिता में प्रयुक्त विभिन्न शब्दों और स्पष्टीकरणों की व्याख्या की गई है। (पैरा 12.03)

3. खंड 9—इस खंड के आधार पर धारा 18 से 21 को प्रतिस्थापित करने की वांछा की गई है।

हमारी यह राय है कि जब तक प्रमुख परिवर्तन नहीं किए जाते तब तक नए खंडों को अंतःस्थापित करना और उन्हें किसी सुसंगत दाँड़िक उपबंधों के अध्यधीन करना वांछनीय नहीं है। (पैरा 12.04)

4. खंड 10—इस खंड के आधार पर विद्यमान धारा 25 में परिभाषा को प्रतिस्थापित करने की वांछा की गई है। हम प्रस्तावित प्रतिस्थापन करने के लिए सहमत हैं। (पैरा 12.05)

5. खंड 11—इस खंड द्वारा, भारतीय दंड संहिता की धारा 27 में संशोधन वांछनीय है।

शब्द और दृश्य तकनीकी तथा कम्प्यूटर में परिवर्तनों को देखते हुए, यह सिफारिश की जाती है कि विद्यमान धारा में निम्नलिखित स्पष्टीकरण (3) जोड़ा जाए।

“स्पष्टीकरण (3): “दस्तावेज” पद में डिस्क, टेप, साउंड ट्रैक या अन्य वस्तुएं हैं।” (पैरा 12.06)

6. खंड 12—इस खंड में, विद्यमान धारा 31, 32 और 33, जो “विल” शब्द को परिभाषित करती है, का लोप करना वांछित है।

जांच करने पर, हमारी यह राय है कि भारतीय दंड संहिता की विद्यमान धारा 31, 32 और 33 के प्रतिधारण में कोई उपर्युक्त नहीं है। इसलिए, खंड 12 का लोप किया जाए। (पैरा 12.07)

7. खंड 13—इस खंड के आधार पर, “कई व्यक्तियों” शब्द जहाँ-जहाँ वे आते हैं उनके स्थान पर “दो या अधिक व्यक्तियों” शब्द प्रतिस्थापित करने की वांछा की गई है।

हमारी यह राय है कि धारा 34 की भाषा इस संशोधन द्वारा अधिक सुस्पष्ट होगी। इसी कारण, धारा 35 और धारा 38 में आने वाला "कई व्यक्तियों" पद "दो या अधिक व्यक्तियों" पद द्वारा भी प्रतिस्थापित किया जा सकता है। (पैरा 12.08)

8. खंड 14—इस खंड के अधीन धारा 40 किसी अन्य धारा द्वारा प्रतिस्थापित करने के लिए प्रस्तावित है। हम सिफारिश करते हैं कि धारा 40 निम्नवत रूप में प्रतिस्थापित की जाए—

"धारा 40—अपराध से कोई ऐसा कार्य या लोप अभिग्रेत है जो तत्समय प्रवृत्त किसी विधि द्वारा दंडनीय बना दिया गया है और मृत्यु से दंडनीय अपराध से ऐसा अपराध अभिग्रेत है जिसके लिए विधि द्वारा उपबंधित दंडों में से एक दंड मृत्यु है।" (पैरा 12.09)

9. खंड 15—इस खंड द्वारा धारा 43 को नई धारा द्वारा प्रतिस्थापित करने की वांछा की गई है।

हम सहमत हैं कि इस खंड में धारा 43 के संशोधन की आवश्यकता है। (पैरा 12.10)

10. खंड 16—इस खंड के अधीन विद्यमान धारा 48, 49 और 50 में परिभाषित क्रमशः "जलयान, वर्ष, मास, धारा" शब्दों का कारण से लोप किए जाने की वांछा है क्योंकि वे साधारण खंड अधिनियम में परिभाषित हैं।

हमारी यह राय है कि इन धाराओं का लोप करने की आवश्यकता नहीं है और तदनुसार, विधेयक का खंड 16 हटाया जाना है। (पैरा 12.11)

11. खंड 17—विद्यमान धारा 52 "सदभावपूर्वक" शब्द परिभाषित करती है और धारा 52क "संत्रय" शब्द को परिभाषित करती है। इस खंड के अनुसार, ये दोनों धाराएं नई धाराओं द्वारा प्रतिस्थापित की जानी हैं।

हम धारा 52 और धारा 52क का प्रतिस्थापन करने के लिए सहमत हैं। (पैरा 12.12)

12. खंड 18—इस खंड के अधीन विद्यमान धारा 53 को प्रतिस्थापित करने की वांछा की गई है।

हम लोक परिनिवास के सिवाय दंड के नए रूप को जोड़ने का पृष्ठांकन नहीं करते हैं। (पैरा 12.13)

13. खंड 19—इस खंड के अधीन भारतीय दंड संहिता की धारा 54, धारा 55 और धारा 55क के लोप करने की वांछा करते हैं।

हम सहमत हैं और हमारी यह राय है कि दंड प्रक्रिया संहिता में परिवर्तन को देखते हुए, खंड 19 बहुत समुचित है। (पैरा 12.14)

14. खंड 20—इस खंड के अधीन "20 वर्ष के कारावास" शब्दों को "20 वर्ष का कठिन कारावास" शब्दों द्वारा प्रतिस्थापित करने की वांछा की गई है।

हम प्रस्ताव से सहमत हैं। (पैरा 12.15)

15. खंड 21—इस खंड के आधार पर, धारा 64 और धारा 65 को प्रतिस्थापित करने की वांछा की गई है।

हमारा यह इष्टिकोण है कि प्रस्तावित संशोधन आनुषंगिक है और ये किए जा सकते हैं। (पैरा 12.16)

16. खंड 22—इस खंड द्वारा भारतीय दंड संहिता की धारा 66 का लोप करने की वांछा की गई है।

पुनरीक्षित धारा 64 और धारा 65 को देखते हुए, धारा 66 का लोप किया जाए। (पैरा 12.17)

17. खंड 23—इस खंड के अधीन, धारा 67 और धारा 68 को प्रतिस्थापित करने की वांछा की गई है।

हमारा यह मत है कि विद्यमान धाराओं को प्रतिस्थापित किया जाए। (पैरा 12.18)

18. खंड 24—इस खंड के अधीन विद्यमान धारा 69 को, जिसमें जुमनि के आनुपातिक भाग के दो दिए जाने की दशा में, कारावास का पर्यवसान है, लोप करने की वांछा की गई है।

हमारा यह अभिमत है कि नई पुनरीक्षित धारा 68 को देखते हुए, इसे लोप करने की आवश्यकता है। (पैरा 12.19)

19. खंड 25—इस खंड के अधीन जुमनि के उद्द्रग्हण के लिए समय की सीमा और कई अपराधों से मिलकर बने अपराध की दशा में, दंड की अवधि का उपबंध करने वाली विद्यमान धारा 70, धारा 71 और धारा 72 को प्रतिस्थापित किए जाने की वांछा की गई है।

हमारा यह अभिमत है कि संशोधित धाराएं व्यापक हैं और संशोधन किए जा सकते हैं। (पैरा 12.20)

20. खंड 26—इस खंड के अधीन, दंड के रूप में एकांत परिरोध का उपबंध करने वाली धाराएं 73 और 74 को लोप करने की वांछा की गई है।

हमारा यह अभिमत है कि इन दो धाराओं का लोप करने के लिए यह आवश्यक है। (पैरा 12.21)

21. खंड 27—इस खंड के अधीन धारा 74क, 74ख, 74ग और 74घ को सम्मिलित किए जाने की वांछा की गई है।

हमारा यह अभिमत है कि प्रस्तावित धारा 74क और धारा 74ख को सम्मिलित किए जाने की आवश्यकता है। हम नई धारा 74घ को भी सम्मिलित करने की सिफारिश नहीं करते हैं। परिणामस्वरूप, परिनिवास के रूप में अतिरिक्त दंड का उपबंध करने वाली धारा 74ग को धारा 74क के रूप में संबंधित किया जा सकता है और जोड़ी जा सकती है। (पैरा 12.22)

22. खंड 31—इस खंड के अधीन, धारा 94 को प्रतिस्थापित करने की वांछा की गई है। नई धारा 94क और धारा 94ख को भी अंतःस्थापित करने की वांछा की गई है।

हमारा यह अभिमत है कि उपदर्शित वर्गीकरणों के साथ धारा 94 प्रतिस्थापित की जाए। हम यह भी सिफारिश करते हैं कि खंड 31 से प्रस्तावित नई धारा 94क और 94ख को हटा दिया जाए। यदि आवश्यक हो, ऐसी स्थिति का सामना करने के सामयके लिए अन्य अधिनियमितियों में, जिसमें कंपनी अधिनियम भी है, ऐसे उपबंध जोड़े जाएं। (पैरा 12.23)

23. खंड 32 से 37—इन खंडों के अधीन, व्यक्तियों और संपत्ति की प्राइवेट प्रतिरक्षा के अधिकार से संबंधित कुछ विद्यमान धाराएं या तो संशोधित की जानी हैं या प्रतिस्थापित की जानी हैं। तथापि, विधेयक से धारा 96 से 98 की बाबत कोई परिवर्तन उचित नहीं है।

(ii) हम सिफारिश करते हैं कि विद्यमान धारा का तीसरा पैरा प्रस्तावित धारा में सम्मिलित किया जाए और खंडों को पुनःक्रमांकित किया जाए। (पैरा 12.24)

(iii) हमारा यह अभिमत है कि धारा 100 में प्रस्तावित परिवर्तन समुचित है।

(iv) खंड 34 विद्यमान धारा 101 में संशोधन करने के लिए है। यह परिवर्तन समुचित प्रतीत होता है।

(v) विधेयक की प्रस्तावित धारा 103 में सरकार या किसी निगम के प्रयोजन के लिए उपयोग किए जाने के लिए आशयित किसी संपत्ति गृह की रिप्टि के अपराध से संबंधित नया खंड (घ) है। प्रस्तावित धारा में दो और नए खंड (ड) और (च) को जोड़ी जाने की वांछा की गई है।

इस संदर्भ में, यह सिफारिश की जाती है कि यदि नई धारा 362क जोड़ी जानी है तो खंड (ड) की कोई आवश्यकता नहीं है। खंड (च) प्रतिधारित किया जा सकता है कि किन्तु (ड) के रूप में पुनःसंबंधित किया जाए।

(vi) खंड 36 के अधीन, धारा 104 में लघु संशोधन करने का प्रस्ताव किया जाता है। हमारा यह अभिमत है कि परिवर्तन किए जाएं। (पैरा 12.24)

24. खंड 37—इस खंड के अधीन विद्यमान धारा 105 को उसी संख्या वाली नई धारा द्वारा प्रतिस्थापित करने की वांछा की गई है।

हमारा यह अभिमत है कि प्रस्तावित नए खंड (ग) में "बायुयान को भगा ले जाने" शब्दों का लोप किया जाए। (पैरा 12.25)

25. खंड 38 से 44—(i) दंड प्रक्रिया संहिता (संशोधन) विधेयक, 1978 के खंड में कुछ परिवर्तन सम्मिलित किए गए हैं। खंड 38 में यथाउलिलिखित धारा 108 विधि आयोग की अपनी 42वीं रिपोर्ट द्वारा की गई सिफारिशों की पुष्टि करता है और इसलिए, दंड किसी और परिवर्तन की सिफारिश नहीं करते हैं। (पैरा 12.26)

(ii) खंड 39 के अधीन लघु प्रकृति के परिवर्तन हैं और अधिविष्ट हैं।

(iii) खंड 40—44 में सुझाए गए परिवर्तन अधिविष्ट हैं। (पैरा 12.26)

26. खंड 45—इस खंड के अधीन, नया अध्याय 5ख नई धारा 120ग को अंतःस्थापित करने के लिए है और 120घ प्रयत्न तथा प्रयत्न के अपराध के लिए दंड को परिभाषित करने की वांछा की गई है।

हमने सावधानीपूर्वक इस खंड की जांच करते हैं और सिफारिश की है कि धारा 511 बनाए रखी जाए और इस खंड को हटाया जाए। (पैरा 12.27)

27. खंड 47—इस खंड के अधीन, नई धारा 123क को अंतःस्थापित करने की वांछा की गई है।

हमारा यह अभिमत है कि प्रस्तावित धारा अंतःस्थापित की जाए।

(पैरा 12.28)

28. खंड 48—इस खंड के अधीन विद्यमान धारा 124क, जो राजदोष से संबंधित है, को उसी संख्या वाली नई धारा द्वारा प्रतिस्थापित करने की वांछा की गई है। हम इससे सहमत हैं।

हमारा यह अभिमत है कि प्रस्तावित धारा 124ख को अंतःस्थापित करने की आवश्यकता नहीं है। (पैरा 12.29)

29. खंड 53—इस धारा के अधीन विद्यमान अध्याय 8 को उसी संख्या वाले नए अध्याय द्वारा प्रतिस्थापित करने की वांछा की गई है।

हमारा यह अभिमत है कि विद्यमान अध्याय को प्रतिस्थापित करने में कोई अपहानि नहीं है।

(पैरा 12.30)

30. खंड 54—इस खंड द्वारा एक नई धारा 147क को जोड़े जाने की वांछा की गई है।

हम प्रस्तावित अंतःस्थापन से सहमत हैं।

(पैरा 12.31)

31. खंड 56—इस खंड के अधीन एक नई धारा 153ग को जोड़े जाने की वांछा की गई है।

हम सहमत हैं कि धारा 153ग जोड़ी जाए।

32. खंड 63 और 64—विधेयक का खंड 63 और 64 तथा भारतीय दंड संहिता की धारा 161, 162 और 163 में संशोधन करते हैं।

चूंकि, ये धाराएं घट्टाचार निवारण अधिनियम, 1988 और उसके अंतर्विनियम द्वारा पहले ही निरसित हो गई हैं, हसलिए, खंड 63 और 64 का लोप किया जाना है।

33. खंड 66—इस खंड के अधीन एक नई धारा 166क को अंतःस्थापित करने की वांछा की गई है।

हमारा यह अभिमत है कि प्रस्तावित धारा 166क अंतःस्थापित की जाए।

(पैरा 12.34)

34. खंड 68—इस खंड के अधीन, अध्याय 9 में एक नई धारा 167क को अंतःस्थापित किए जाने की वांछा की गई है।

हम सहमत हैं कि प्रस्तावित धारा अंतःस्थापित की जाए।

(पैरा 12.35)

35. खंड 91—इस खंड के अधीन, अध्याय 11 में दो नई धाराएं 198क और 198ख को अंतःस्थापित करने की वांछा की गई है।

हम सोचते हैं कि नई धारा 198क और 198ख को जोड़ना आवश्यक है। परिणामस्वरूप, खंड 91 का लोप किया जाए।

(पैरा 12.36)

36. खंड 93—इस खंड द्वारा एक नई धारा 207क को जोड़े जाने की वांछा की गई है।

हमारा यह अभिमत है कि संहिता में नई धारा 207क अंतःस्थापित की जाए।

(पैरा 12.37)

37. खंड 94—इस खंड द्वारा धारा 211 को उसी संख्या वाली नई धारा द्वारा प्रतिस्थापित किए जाने की वांछा की गई है।

प्रस्तावित परिवर्तन समुचित है।

(पैरा 12.38)

38. खंड 100—इस खंड द्वारा, विद्यमान धारा 229 को दो नई धाराओं, अर्थात् धारा 229 और 229ख द्वारा प्रतिस्थापित करने की वांछा की गई है।

हमारा यह अभिमत है कि संहिता में दोनों धाराओं की बहुत आवश्यकता है।

(पैरा 12.39)

39. खंड 110—इस खंड द्वारा, संहिता में नई धारा 254क को प्रतिस्थापित करने की वांछा की गई है।

हमारा यह अभिमत है कि संहिता में नई धारा अंतःस्थापित की जाए।

(पैरा 12.40)

40. खंड 111—इस खंड के अधीन, संहिता की धारा 263क में नई धारा 263क, 263ख और 263ग को प्रतिस्थापित करने की वांछा की गई है।

हम प्रस्ताव से सहमत हैं।

(पैरा 12.41)

41. खंड 112—इस खंड द्वारा धारा 264—267 में “एक वर्ष” शब्दों के स्थान पर “दो वर्ष” शब्दों के प्रतिस्थापन को अनुच्छान करने की वांछा की गई है।

हम प्रस्ताव से सहमत हैं।

(पैरा 12.42)

42. खंड 119—इस खंड के अधीन एक नई धारा 219क को अंतःस्थापित करने की वांछा की गई है।

सङ्केत यातायात की संख्या में बढ़ि को ध्यान में रखकर और यानों के उपयोग पर अधिभेद करना कि क्या वे सङ्केत के योग्य हैं या नहीं, ऐसे उपबंधों की बहुत आवश्यकता है।

(पैरा 12.43)

43. खंड 122—इस खंड के अधीन भारतीय दंड संहिता की धारा 292 में नई उपधारा अंतःस्थापित करने की वांछा की गई है।

हमारा यह अभिमत है कि प्रस्तावित संशोधन में कुछ जोड़ना समुचित होगा। तथापि, हमारा यह अभिमत है कि नई धारा 292क के बराबर किए जाने के लिए “दो वर्ष” के स्थान पर धारा 292 में “तीन वर्ष” का दंड किया जाए। (पैरा 12.44)

44. खंड 123—इस खंड के अधीन धारा 292 के पश्चात अत्यधिक अशिष्ट या गंदी सामग्री या भयादोहन के लिए आयातित सामग्री के मुद्रण, आदि के अपराध से संबंधित एक नई धारा 292क को अंतःस्थापित करने की वांछा की गई है।

हमारा यह अभिमत है कि धारा 292क अंतःस्थापित की जाए। (पैरा 12.45)

45. खंड 124—विद्यमान धारा 294क लाटरी कार्यालय रखने के अपराध से संबंधित है। इस खंड द्वारा धारा को एक नई धारा द्वारा प्रतिस्थापित करने की वांछा की गई है। लाटरी टिकटों के विक्रय, वितरण आदि के लिए नई धारा 294ख को जोड़े जाने की भी वांछा की गई है।

(पैरा 12.46)

46. खंड 125—इस खंड द्वारा, धारा 302 को उसी संख्या वाली नई धारा द्वारा प्रतिस्थापित किए जाने की वांछा की गई है।

हमारा यह अभिमत है कि इस खंड को छाटाया जाए क्योंकि धारा 302 में किसी संशोधन की आवश्यकता नहीं है। (पैरा 12.47)

47. खंड 128—इस खंड के अधीन, नई धारा 304ख को अंतःस्थापित करने की वांछा की गई है।

प्रारंभ में हम बताना चाहेरों कि 1986 में, संशोधित अधिनियम, 1986 के 43 द्वारा, द्वेष मृत्यु से संबंधित विद्यमान धारा 304ख अंतःस्थापित की गई थी।

इसलिए, हम सिफारिश करते हैं कि इसे धारा 304क में, उपधारा (2) के रूप में अंतःस्थापित किया जाए। (पैरा 12.48)

48. खंड 130—इस खंड के अधीन, धारा 307 और 308 को प्रतिस्थापित किए जाने की वांछा की गई है।

हमारा यह अभिमत है कि विद्यमान धारा 307 के द्विसे भाग के सिवाय विद्यमान धारा 307 और 308 को छेदने की कोई आवश्यकता नहीं है। (पैरा 12.49)

49. खंड 131—इस खंड के अधीन विद्यमान धारा 309, जो आत्महत्या करने के प्रयत्न को दंडनीय बनाती है, का लोप करने की वांछा की गई है।

हमारा यह अभिमत है कि विद्यमान धारा 309 बनाए रखी जाए और खंड का लोप किया जाए। (पैरा 12.50)

50. खंड 134—इस खंड के अधीन, घोर उपहति को परिमाधित करने वाली विद्यमान धारा 309 को प्रतिस्थापित किए जाने की वांछा की गई है।

हमारा यह अभिमत है कि प्रस्तावित परिवर्तन केवल उपर्याप्त है किन्तु बहुत कम व्याख्यातमक है इसलिए, इसे किया जा सकता है। (पैरा 12.51)

51. खंड 137—इस खंड के अधीन विद्यमान धारा 328 को नई धारा द्वारा प्रतिस्थापित करने की वांछा की गई है। संदर्भ से, दोनों धाराएं वैसी ही सिवाय नई धारा में “अस्वास्थ्यकर औषधि या अन्य वस्तु” शब्दों के स्थान पर “अस्वास्थ्यकर पदार्थ” शब्द अंतःस्थापित किए गए हैं जो इससे ही प्रभावी हैं किन्तु कम व्यापक हैं। (पैरा 12.52)

52. खंड 144—इस खंड के अधीन, विद्यमान धारा 341 से 344 को प्रतिस्थापित करने की वांछा की गई है।

हमारा यह अभिमत है कि आन्वयिक दायित्व के आधार पर, व्यक्तियों की संख्या दो या अधिक व्यक्तियों तक सीमित हो सकती है जैसाकि हम भारतीय दंड संहिता की धारा 34, 35 और 38 के प्रस्तावित संशोधन में पाते हैं। इसलिए, प्रस्तावित खंड तदनुसार संशोधित किया जाए। (पैरा 12.53)

53. खंड 146—इस खंड के अधीन, किसी अवयस्क पर अशिष्ट हमले के अपराध से संबंधित नई धारा 354क को अंतःस्थापित किए जाने की वांछा की गई है।

हमारा यह अभिमत है कि इस खंड का लोप किया जाए। (पैरा 12.54)

54. खंड 149—इस खंड के अधीन विद्यमान धारा 362 को नई धारा द

57. खंड 155—इस खंड के अधीन विद्यमान धारा 368 को प्रतिस्थापित करने की वांछा की गई है। हम प्रतिस्थापन का पृष्ठांकन करते हैं। (पैरा 12.58)
58. खंड 159—इस खंड के अधीन, विद्यमान धारा 375 और 376 को नई धारा 375, 376क से 376ग द्वारा प्रतिस्थापित करने की वांछा की गई है। हमारा यह अभिमत है कि इस खंड का लोप किया जाए तथापि, हम धारा 375 के खंड में, “क्षति” शब्द अंतःस्थापित करके उपर्याप्त की सिफारिश करते हैं। हम अध्याय 9 में सुझाई गई पंक्तियों के प्रतिस्थापन का पृष्ठांकन करते हैं। (पैरा 12.60)
- 59.
60. खंड 161—(i) इस खंड के अधीन, विद्यमान धारा 380 और 381 के प्रतिस्थापन की वांछा की गई है। एक नई धारा 380क को भी अंतःस्थापित किया जाना प्रस्तावित है। (पैरा 12.61)
- (ii) वैसी ही सहिता में एक नई धारा 381क अंतःस्थापित करने की आवश्यकता है। (पैरा 12.62)
61. खंड 162—इस खंड के अधीन नई धारा 385क को अंतःस्थापित करने की वांछा की गई है। प्रस्तावित धारा ब्रैह्मानी के आशय से भयादेहन के अपराध को लाने के लिए आशयित है। हमारा यह अभिमत है कि ऐसे अपराध से संबंधित नई धारा बहुत आवश्यक है और अंतःस्थापन किया जाए। (पैरा 12.63)
62. खंड 163—इस खंड के अधीन, धारा 388 और 389 में आने वाले “आजीवन कारावास से दंडित किया जाएगा” शब्दों को कम अवधि के कारावास के साथ प्रतिस्थापित करने की वांछा की गई है। (पैरा 12.64)
63. खंड 164—इस खंड के अधीन, धारा 396 को प्रतिस्थापित करने की वांछा की गई है। हमारा यह अभिमत है कि इस धारा में कोई परिवर्तन आवश्यक नहीं है। (पैरा 12.65)
64. खंड 165 और 166—इस खंड के अधीन, धारा 397 में, “किसी घातक आयुध का उपयोग करेगा या” शब्दों को लोप करने की वांछा की गई है और धारा 398 में “करते समय” शब्दों को अंतःस्थापित करने की वांछा की गई है और “सात वर्ष” के स्थान पर “पांच वर्ष” शब्दों को अंतःस्थापित करने की वांछा की गई है। हमारा यह अभिमत है कि विद्यमान शब्दों को बनाए रखना बेदर है और उक्त खंडों का लोप किया जाए। (पैरा 12.66)
65. खंड 167—इस खंड के अधीन धारा 399 में “दस वर्ष” शब्दों के स्थान पर “सात वर्ष” शब्दों को प्रतिस्थापित करने की वांछा की गई है। हमारा यह अभिमत है कि इस धारा में अपराध से तैयारी करने, दंड कम प्रतीत होने के लिए अनुपातिक बनाने के प्रति निर्देश से है। हमारा यह अभिमत है कि इस धारा में अपराध से तैयारी करने, दंड कम प्रतीत होने के लिए अनुपातिक बनाने के प्रति निर्देश से है। (पैरा 12.67)
66. खंड 168—इस खंड के अधीन, एक नई धारा 399क को अंतःस्थापित करने की वांछा की गई है। हम प्रस्ताव से सहमत हैं और अपेक्षित परिवर्तन किए जा सकते हैं। (पैरा 12.68)
67. खंड 169 और 170—इन खंडों के आधार पर धारा 400—402 में कुछ शब्दों को प्रतिस्थापित करने की वांछा की गई है। प्रस्तावित परिवर्तन केवल परिणामिक है और हमारा यह अभिमत है कि इन्हें किया जाए। (पैरा 12.69)
68. खंड 171—धारा 403 में नए स्पष्टीकरण 1 को जोड़े जाने की वांछा की गई है। हमारा यह अभिमत है कि प्रस्तावित परिवर्तन किया जाए। (पैरा 12.70)
69. खंड 172—173—इस खंडों के अधीन धारा 404 और 408 में कुछ लघु परिवर्तन प्रस्तावित हैं। हमारा यह अभिमत है कि प्रस्तावित परिवर्तन किए जाए। (पैरा 12.71)
70. खंड 174—इस खंड के अधीन धारा 409 में आने वाले “फेक्टर” शब्द को लोप करने की वांछा की गई है। हमारा यह अभिमत है कि इस शब्द को बनाए रखने में कोई अपहानि नहीं है। तदनुसार, इस खंड का लोप किया जाए। (पैरा 12.72)
71. खंड 175—इस खंड के अधीन, विद्यमान धारा 410 को प्रतिस्थापित करने की वांछा की गई है। हमारा यह अभिमत है कि प्रस्तावित नई धारा समुचित है और इसे प्रयोग में लाया जाए। (पैरा 12.73)
72. खंड 176—इस खंड द्वारा, विद्यमान धारा 411 और 414 को संशोधित करने की वांछा की गई है। हम दोनों धाराओं में संशोधन करने के लिए सहमत हैं। (पैरा 12.74)
73. खंड 177—इस खंड के अधीन, विद्यमान धारा 415 को प्रतिस्थापित करने की वांछा की गई है। हमारा यह अभिमत है कि प्रतिस्थापन किया जाए किन्तु हम यह भी उल्लिखित करते हैं कि धारा में विद्यमान दृष्टांतों को बनाए रखना उचित होगा। (पैरा 12.75)

74. खंड 173—इस खंड के अधीन धारा 420 प्रतिस्थापित करने की वांछा की गई है। नई धारा, अर्थात् धारा 420क, 420ख और 420ग को भी अंतःस्थापित करने की वांछा की गई है। प्रस्तावित परिवर्तन किए जाए। (पैरा 12.76)
75. खंड 179—इस खंड के अधीन, विद्यमान धारा 426 से 432 को रिष्ट के अपराध वाली नई धारा द्वारा प्रतिस्थापित करने की वांछा की गई है। (i) हमने नई धारा 426 से 431 की जांच की है और यह सिफारिश करते हैं कि प्रत्येक इन धाराओं के अधीन विहित “तीन वर्ष” के दंड को “पांच वर्ष” तक बढ़ाया जाए। (ii) धारा 432 के बारे में यह उल्लिखित किया जा सकता है कि अध्याय 10 में यथाउल्लिखित भारतीय दंड संहिता (संशोधन) विधेयक, 1978 के पश्चात 1962 में विशेष विधान लाए गए थे जो 1994 में संशोधित किए गए थे। हम नई धारा 362क को बदाने की सिफारिश करते हैं। इन्हीं कारणों से, हम यह सिफारिश करते हैं कि सिविल विमान सुरक्षा विधिविरुद्ध कार्यदमन अधिनियम, 1982 की धारा 3क संशोधित की जाए। यदि इस अधिनियम की धारा 3क का उस रीति में संशोधन नहीं किया जाना है तो प्रस्तावित धारा 432 खंड में बनाए रखी जाए, किन्तु उक्त अधिनियम की धारा 3क के अनुसार, धारा 432 के अधीन दंड का उपबंध किया जाए। (पैरा 12.77)
76. खंड 180—इस खंड के अधीन, नई धारा 434 से 440 को प्रतिस्थापित करने की वांछा की गई है। (i) हम सिफारिश करते हैं कि अध्याय 10 में किए गए हमारे सुझावों के परिप्रेक्षण में, प्रस्तावित धारा 343 में आने वाले “वायुयान” शब्द का लोप किया जाए। (ii) वायुयान के बारे में रिष्ट के अन्य प्रकारों की आवश्यकता सुरक्षा विधिविरुद्ध कार्यदमन अधिनियम की धारा 3क को संशोधित किया जाना है। यदि नहीं, तो यथाप्रस्तावित धारा बनाए रखी जाए और सिविल विमान सुरक्षा विधिविरुद्ध कार्यदमन अधिनियम की धारा 3क के अनुसार, दंड लाया जाए। (iii) प्रस्तावित धारा 438 में, तीन वर्ष के दंड को बढ़ाकर पांच वर्ष किया जाए। (पैरा 12.78)
77. खंड 181—इस खंड के अधीन धारा 441 को प्रतिस्थापित करने की वांछा की गई है। तथापि, यह उल्लिखित किया जा सकता है कि प्रस्तावित संशोधन कोई सारभूत परिवर्तन नहीं करते हैं। (पैरा 12.79)
78. खंड 182—इस खंड के अधीन धारा 430—460 को प्रतिस्थापित करने की वांछा की गई है। हमने इस उपबंध पर विचार-विमर्श किया है और यह सोचते हैं कि विद्यमान धारा के स्थान पर ऐसा प्रतिस्थापन हितकर होगा। (पैरा 12.80)
79. खंड 183—इस खंड के अधीन अंतःस्थापित धारा 462क के रूप में अध्याय 17क को पुरःस्थापित करने की वांछा की गई है। हमारा यह अभिमत है कि प्राइवेट नियोजन की आवश्यकता अपराधों से संबंधित नया अध्याय आवश्यक नहीं। अतः परिणामस्वरूप, इस खंड का लोप किया जाए। (पैरा 12.81)
80. खंड 184—इस खंड द्वारा भारतीय दंड संहिता की धारा 464 में संशोधन को अंतःस्थापित करने की वांछा की गई है। हम सिफारिश करते हैं कि भारतीय दंड संहिता की धारा 464 के स्पष्टीकरण में निम्नलिखित पंक्तियां भी जोड़ी जाएं—“स्पष्टीकरण 3—जो कोई यह जानते हुए यह विश्वास करते हुए कि यह एक मिथ्या दस्तावेज होगा, इस आशय से कि वह या अन्य व्यक्ति उसका किसी अन्य व्यक्ति को अश्लील दस्तावेज की प्रति के रूप में स्वीकार करने के लिए उत्प्रेरित करेगा, किसी दस्तावेज की जानबूझकर प्रति की कृत रचना या किसी दस्तावेज की जानबूझकर मिथ्या प्रति की रचना या किसी मिथ्या दस्तावेज की प्रति की रचना करेगा, जो उसके अपने या किसी अन्य व्यक्ति के पूर्वाग्रह से कोई कार्य करने या न करने के लिए हो, वह मिथ्या दस्तावेज की रचना के तुल्य होगा।” (पैरा 12.82)
81. खंड 187—इस खंड के अधीन धारा 497 को संशोधित करने की वांछा की गई है। हम इस परिवर्तन से सहमत हैं। (पैरा 12.83)
82. खंड 188—इस खंड द्वारा विद्यमान धारा 470 और 471 के लिए नई धाराओं की प्रतिस्थापन वांछनीय है। हम सिफारिश करते हैं कि परिवर्तन किए जाएं। (पैरा 12.84)
83. खंड 190—इस खंड के अधीन विद्यमान धारा 474 को प्रतिस्थापित करने की वांछा की गई है। सुझाए गए परिवर्तन केवल उपांत हैं और ये पृष्ठांकित हैं। (पैरा 12.85)

84. खंड 194—इस खंड के आधार पर संहिता की धारा 489क के स्पष्टीकरण भाग के अधीन कतिपय संशोधन करने की वांछा की गई है।

चूंकि, प्रस्तावित परिवर्तन स्पष्ट प्रकृति के वै इसलिए इन्हें किया जाए। (पैरा 12.86)

85. खंड 196—इस खंड द्वारा नई धारा 489ख को अंतःस्थापित करने की वांछा की गई है।

हम प्रस्तावित धारा के प्रतिस्थापन से सहमत हैं। (पैरा 12.87)

86. खंड 197—इस खंड के अधीन एकांतरा के विरुद्ध अपराध संबंधी विद्यमान अध्याय 19 को प्रतिस्थापित करने की वांछा की गई है।

(i) चूंकि, इस विषय पर पृथक विद्यान की आवश्यकता है इसलिए प्रस्तावित प्रतिस्थापन नहीं किया जाए।

(ii) हम यह और सिफारिश करते हैं कि भारतीय दंड संहिता की धारा 491 बनाए रखी जाए और इसके खंड में “एक वर्ष” से “तीन वर्ष” तक वृद्धि की जाए और 200 रुपए के अधिरोपित जुमनी की विद्यमान सीमा को “केवल जुमनी” शब्दों द्वारा प्रतिस्थापित किया जाए और अपराध को संज्ञय बनाया जाए। (पैरा 12.88)

87. खंड 198—इस खंड के अधीन विद्यमान धारा 494 को प्रतिस्थापित करने की वांछा की गई है।

हम सोचते हैं कि पहले ही यथा उल्लिखित प्रस्तावित नई धारा प्रतिस्थापित की जाए। उच्चतम न्यायालय द्वारा अधिकारित सिद्धांत के अनुसार, स्पष्टीकरण 3 जोड़ा जाना चाहिए। (पैरा 12.89)

88. खंड 199—इस खंड के अधीन विद्यमान धारा 497 को प्रतिस्थापित करने को वांछा की गई है।

हमने पहले ही अध्याय 9 में कुछ परिवर्तन सुझाए हैं। प्रस्तावित धारा में “किसी सुझाव द्वारा” शब्दों का लोप किया गया है। (पैरा 12.90)

89. खंड 201—इस खंड के अधीन विद्यमान धारा 500 को प्रतिस्थापित करने की वांछा की गई है।

हम परिवर्तनों की करने की सिफारिश करते हैं। (पैरा 12.91)

90. खंड 203—इस खंड द्वारा, धारा 505 का लोप वांछनीय है।

विधेयक के खंड 58 के अधीन प्रस्तावित धारा 153ग का परिशीलन यह दर्शित करता है कि ये उपबंध 42वीं रिपोर्ट के पैरा 8.26 के अधीन सिफारिश की गई प्रस्तावित धारा 158ख की परम्परा पर हैं, जो कतिपय उपांतरणों संहित धारा 505(1) c'g (3) के उपबंधों में सम्मिलित हैं।

इस प्रकार विद्यमान धारा 505 के अधीन उपबंधों का लोप किया जाए चूंकि ये उसके अंतर्गत आते हैं और उपर उद्घृत प्रस्तावित उपबंधों का अंतर्विनियम करते हैं। (पैरा 12.92)

91. खंड 204—इस खंड के आधार पर नई धारा 507क को अंतःस्थापित किया जाना प्रस्थापित है।

हम प्रस्ताव का पृष्ठांकन करते हैं। (पैरा 12.93)

92. खंड 206—इस खंड द्वारा, यह वांछनीय है कि भारतीय दंड संहिता के अध्याय 23, जिसमें केवल धारा 511, का लोप किया जाएगा।

हमारा यह अनिमत है कि धारा 511 अच्छी तरह कार्य कर रहा है और इसे लोप करने की कोई आवश्यकता नहीं है।

हम तदनुसार सिफारिश करते हैं।

(न्यायमूर्ति के० जयचन्द्र रेडी)

अध्यक्ष

(न्यायमूर्ति आर० एस० गुप्ता)

सदस्य

(जी कृष्णमूर्ति)

सदस्य

(आर० एस० मीना)

सदस्य-सचिव

(श्रीमती एलिस जैकब)

सदस्य

## खंड 2

## उपांत्य

## उपांच्छ 1

### भारतीय दंड संहिता, 1860 से संबंधित प्रश्नावली

#### अध्याय 1 — साधारण स्पष्टीकरण

1. धारा 8, 9 और 11 के अधीन “लिंग”, “वचन” और “व्यक्ति” शब्दों की परिभाषा का लोप किया जाना:

क्या आप विधि आयोग द्वारा भारतीय दंड संहिता संबंधी उसकी 42वीं रिपोर्ट में की गई सिफारिशों और भारतीय दंड संहिता (संशोधन) विधेयक, 1978 के खंड 5 से सहमत हैं कि धारा 8, 9 और 11 का, जो “लिंग”, “वचन” और “व्यक्ति” पदों को परिभाषित करती है, साधारण खंड अधिनियम, 1897 में सदृश परिभाषाओं को देखते हुए, लोप किया जाए ?

2. धारा 13 के अधीन “निर्वाचन” की नई परिभाषा का शामिल किया जाना:

क्या आप सहमत हैं कि “निर्वाचन” शब्द इस प्रकार परिभाषित किया जाए, जिससे किसी विधान-मंडल, स्थानीय प्राधिकरण या अन्य लोक अधिकरण के सदस्यों का चयन करने के प्रयोजन के लिए किसी विधि के अधीन किसी भी साधन द्वारा किया गया “निर्वाचन” अभिप्रेत हो, जैसा कि भारतीय दंड संहिता (संशोधन) विधेयक, 1978 के खंड 6 में उपबंधित है ?

3. धारा 14 के अधीन “सरकार का सेवक” की परिभाषा का लोप किया जाना:

क्या आप सहमत हैं कि धारा 14 के अधीन आने वाले “सरकार का सेवक” शब्द की परिभाषा का, इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए, लोप किया जाए कि ऐसा पद भारतीय दंड संहिता, 1860 की किसी अन्य धारा में नहीं आता है ?

4. धारा 17 के अधीन “सरकार” की परिभाषा का लोप किया जाना:

क्या आप सहमत हैं कि धारा 171 में यथा परिभाषित “सरकार” शब्द की परिभाषा का, साधारण खंड अधिनियम की धारा 3(23) में “सरकार” शब्द की परिभाषा को देखते हुए, लोप किया जाए ?

5. धारा 18 के अधीन “भारत” की परिभाषा का संशोधन—

क्या आप इस सुझाव से सहमत हैं कि भारतीय दंड संहिता की धारा 18 में यथापरिभाषित “भारत” शब्द की परिभाषा का, यह स्पष्ट करने के लिए कि संहिता का विस्तार वैसे ही भारत के राज्यक्षेत्रीय जल पर है जैसे कि इसका विस्तार राज्यक्षेत्रीय मूलता तथा भारत के अंतरिक जल पर है, जैसाकि भारतीय दंड संहिता (संशोधन) विधेयक, 1978 के खंड 9 में उपबंधित है, निम्नवत संशोधन किया जाए :

“भारत” शब्द, इस संहिता में जहां कहाँ वह आता है, से वे राज्यक्षेत्र अभिप्रेत हैं, जिस पर इस संहिता का विस्तार है।

6. धारा 19 के अधीन “न्यायाधीश” शब्द की परिभाषा का संशोधन:

क्या आप सहमत हैं कि धारा 19 के अधीन “न्यायाधीश” शब्द का, “किन्हों विधिक कार्यवाहियों” तथा “अंतिम निर्णय” शब्दों के निर्वचन में कठिनाई को ध्यान में रखते हुए, संशोधन किया जाए, यदि हाँ, तो वे सभी कौन-से व्यक्ति/प्राधिकारी हैं, जिन्हें उक्त परिभाषा में शामिल किया जाना है ?

7. धारा 20 के अधीन “न्यायालय” पद की परिभाषा का संशोधन:

क्या आप सहमत हैं कि भारतीय दंड संहिता की धारा 20 में यथापरिभाषित “न्यायालय” शब्द की परिभाषा का इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए, संशोधन किया जाए कि “न्यायालय” शब्द को व्यापक रूप से परिभाषित किया गया है और धारा 20 में उस की पुनरावृत्ति के लिए कोई आवश्यकता नहीं है। यह महसूस किया जाता है कि परिभाषा में मात्र यह उपदेशित करना पर्याप्त है कि यह केवल तभी है जब न्यायाधीश या न्यायाधीश निकाय न्यायिकतः कार्य कर रहा है तब उसे न्यायालय के प्रयोजन के लिए न्यायालय के रूप में माना जाता है। इस प्रकार, कोई कार्यपालक मणिस्टेट, जब वह दंड प्रक्रिया संहिता के अधीन न्यायिकतः कार्य कर रहा है, तब न्यायालय होगा, किन्तु जब वह संहिता या किसी अन्य विधि के अधीन कार्यपालक या प्रशासनिक कृत्य कर रहा है, तब नहीं ?

क्या आप सुझाव देते हैं कि न्यायालय शब्द का भी निम्नवत संशोधन किया जाए जैसाकि भारत के विधि आयोग द्वारा भारतीय दंड संहिता संबंधी उसकी 42वीं रिपोर्ट में सिफारिश की गई है और जैसाकि भारतीय दंड संहिता (संशोधन) विधेयक, 1978 के खंड 9 में उपबंधित है ?

8. धारा 21 के अधीन “लोक सेवक” शब्द की परिभाषा का संशोधनः

व्या आप सहमत हैं कि विशेष रूप से 1958 और 1964 के संशोधनकारी अधिनियमों द्वारा खंड 12 को नया रूप देने के पश्चात पर्याप्त अतिव्याप्ति और इस तथ्य को भी ध्यान में रखते हुए कि कुछ खंडों में आमूल पुनरीक्षण अपेक्षित है, धारा 21 का निम्नलिखित रीति से संशोधन किया जाएः

“लोक सेवक” से निम्नलिखित अभिप्रेत है,—

(i) कोई व्यक्ति, जो सरकार की सेवा या वेतन में है या किसी लोक कर्तव्य के पालन के लिए सरकार से फीस या कमीशन के रूप में परिश्रमिक पाता है;

(ii) कोई व्यक्ति, जो स्थानीय प्राधिकारी की सेवा या वेतन में है;

(iii) कोई व्यक्ति, जो सरकार के स्वामित्व या नियंत्रण वाले निगम की सेवा या वेतन में है;

(iv) कोई न्यायाधीश, जिसके अन्तर्गत ऐसा कोई भी व्यक्ति आता है, जो किन्हीं न्यायनिर्णयक कूलों का, चाहे स्वयं या व्यक्तियों के किसी निकाय के सदस्य के रूप में निर्वहन करने के लिए विधि द्वारा सक्षक्त किया गया है;

(v) कोई व्यक्ति, जो विशेष रूप से न्यायालय द्वारा न्याय के प्रशासन के संबंध में किसी कर्तव्य का पालन करने के लिए प्राधिकृत किया गया है, जिसके अन्तर्गत ऐसे न्यायालय द्वारा नियुक्त किया गया समापक, रिसीवर या कमिशनर भी है;

(vi) कोई मध्यस्थ या अन्य व्यक्ति, जिसे न्यायालय द्वारा या किसी सक्षम प्राधिकारी द्वारा विनिश्चय या रिपोर्ट के लिए कोई हेतुक या विषय निर्दिष्ट किया गया है;

(vii) कोई व्यक्ति, जो किसी विधि के अधीन या उसके द्वारा मान्यताप्राप्त या अनुमोदित किसी परीक्षा के संबंध में किसी लोक निकाय द्वारा परीक्षक या अधीक्षक के रूप में नियोजित किया गया या लगाया गया है;

स्पष्टीकरण— “लोक निकाय” पद के अन्तर्गत निम्नलिखित सम्मिलित हैं—

(क) किसी केन्द्रीय, राज्य या प्रांतीय अधिनियम द्वारा या उसके अधीन अथवा सरकार द्वारा गठित कोई विश्वविद्यालय, शिक्षा बोर्ड या अन्य निकाय या संस्था;

(ख) स्थानीय प्राधिकारी;

(viii) कोई व्यक्ति, जो कोई ऐसा पद धारण करता है, जिसके आधार से वह निर्वाचन नामावली तैयार करने, प्रकाशित करने, बनाए रखने या पुनरीक्षित करने के लिए या निर्वाचन या निर्वाचन के किसी भाग को संचालित करने के लिए सक्षक्त है; या

(ix) कोई व्यक्ति, जो ऐसा पद धारण करता है, जिसके आधार पर वह विधि द्वारा किसी लोक कर्तव्य के पालन के लिए प्राधिकृत या अपेक्षित है।

स्पष्टीकरण 1—उपर्युक्त किन्हीं खंडों के अन्तर्गत आने वाला व्यक्ति लोक सेवक हैं चाहे वे सरकार द्वारा नियुक्त किए गए हों या नहीं।

स्पष्टीकरण 2—उपर्युक्त किन्हीं खंडों के अन्तर्गत आने वाला व्यक्ति, जो ऐसे किसी पद या स्थिति के आधार पर वास्तव में उसे धारण कर रहे हों, लोक सेवक है, चाहे उस पद या स्थिति को धारण करने के अधिकार में किसी ही विधिक दृष्टि हो, जैसाकि भारतीय दंड संहिता (संशोधन) विधेयक, 1978 में उपबंधित है।

9. धारा 21क के अधीन राज्य और नई परिभाषा का अंतःस्थापनः

व्या आप सहमत हैं कि “राज्य” शब्द को इस प्रकार परिभाषित किया जाए कि उससे “भारत का राज्य है और उसके अंतर्गत संघ राज्यक्षेत्र भी है” अभिप्रेत हो, जैसाकि भारतीय दंड संहिता (संशोधन) विधेयक, 1978 के खंड 9 में उपबंधित है।

10. धारा 25क के अधीन “कपटपूर्वक” शब्द की परिभाषा का संशोधनः

व्या आप सहमत हैं कि “कपटपूर्वक” शब्द की परिभाषा बद्दुत ही असमाधानप्रद है, यदि उसे बिलकुल ही किसी व्यक्ति द्वारा एक पूर्ण परिभाषा किया जाए जो कम से कम डा० विमला बनाम दिल्ली प्रशासन (1963 पूरक 2), एस० सी० आर० 585, और डा० एस० दत्त बनाम उच्चतम न्यायालय द्वारा यथा इंगित आवश्यक तत्वों का कथन करेगा और शंकास्पद मामलों में मार्गदर्शी सिद्धान्त प्रस्तुत करेगा। यह समझा जाता है कि ऐसी किसी परिभाषा में, यह स्पष्ट

रूप से, प्रवंचना के द्वारा स्वयं को कोई असम्यक फायदा या लाभ उपाप्ति के प्रवंचक के आशय के वर्णन करना पर्याप्त नहीं होगा। माननीय न्यायालय ने कपट गठित करने के लिए, व्यापक अर्थ में, किसी को प्रवंचनापूर्वक क्षतिकारित करने का आशय होना चाहिए या किसी भी हालत में, प्रवंचित व्यक्ति को, उसे उसके अलाभ के लिए कार्य को करने के लिए उपयोगित करने का आशय होना चाहिए। इसको ध्यान में रखते हुए, व्या आप सहमत हैं कि भारतीय दंड संहिता (संशोधन) विधेयक, 1978 के खंड 10 में यथा उपबंधित धारा 25 का निम्नलिखित रीति में संशोधन किया जाएः—

“कोई व्यक्ति किसी बात को कपटपूर्वक करता है, यदि कहा जाता है, यदि वह उस बात को किसी अन्य के साथ प्रवंचना करने के आशय से करता है, और ऐसी प्रवंचना द्वारा, या तो किसी व्यक्ति के शरीर, मन, ख्याति या संपत्ति को क्षतिकारित या तुकसानी करता या किसी व्यक्ति को उसके अपने अलाभ के लिए कार्य करने के लिए उपयोगित करता है।”

11. धारा 29 के अधीन दस्तावेज की परिभाषा का संशोधनः

व्या आप भारत के विधि आयोग द्वारा भारतीय दंड संहिता संबंधी उसकी 42वीं रिपोर्ट में दिए गए इस सुझाव से सहमत हैं कि प्रताप सिंह कैरो (1964) 4 एस० सी० आर० 733, ए० आई० आर० 1964 एस० सी० 72, 86 पैरा 15 के मामले में उच्चतम न्यायालय के अभिनिधारण को ध्यान में रखते हुए कि टेप पर रिकार्ड की गई बातचीत एक अच्छा साक्ष्य है, और स्पष्टतया, यदि कोई व्यक्ति किसी टेप रिकार्ड की कूट रचना करता है, तो उसे उसी प्रकार दंडनीय किया जाना चाहिए जिस प्रकार मिथ्या दस्तावेज तैयार करने वाले व्यक्ति को, किया जाता है, धारा 29 के दृष्टांत के रूप में एक अन्तःस्थापन किया जाना चाहिए ?

12. धारा 31, 32 और 33 के अधीन “विल”, “अवैध लोप”, “कार्य/लोप”, शब्दों की परिभाषाओं का लोप किया जाना:

व्या आप भारतीय दंड संहिता संबंधी अपनी 42वीं रिपोर्ट में की गई सिफारिशों और भारतीय दंड संहिता (संशोधन) विधेयक, 1978 के खंड 12 से सहमत हैं कि धारा 31 का, जो “विल” शब्द को परिभाषित करती है, धारा 32 का, जो मात्र यह बताती है कि “कार्य” के अन्तर्गत अवैध लोप समाविष्ट है और धारा 33 का, जो “कार्य/लोप” शब्दों को परिभाषित करती है, साधारण खंड अधिनियम, 1897 में सदृश परिभाषाओं को ध्यान में रखते हुए, हटा दिया जाए ?

13. (i) धारा 34 और 149 का संशोधनः सामान्य आशय और सामान्य उद्देश्यः

व्या धारा 34 और 149 का अन्तरोगत्वा, किसी अपराध के एकल अभियुक्त को भी आन्वयिक रूप से दायी बनाने के लिए, जबकि हालांकि ऐसा अभियुक्त दूसरे अभियुक्तों के साथ आगोपित किया गया था, किन्तु जिन्हें दोषमुक्त कर दिया जाता है, संशोधन किया जाए, यदि न्यायालय यह पाता है कि ऐसा एकल अभियुक्त, एक या एक से अधिक अभियुक्तों के साथ संयुक्ततः अपराध करता है। इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए कि जहां धारा 34 और 149 को लागू करके अभियुक्तों का आन्वयिकतः विचारण किया जाता है और जहां उनमें से कुछ को उसी या अन्य आधार पर दोषमुक्त कर दिया जाता है, शेष अपराधियों, जिनकी भागीदारी संयुक्त रूप से स्थापित हो जाती है, को भी साधारण अधिकार आधार पर दोषमुक्त किया जा रहा है, तो ऐसे अभियुक्तों की अपेक्षित संज्ञा दी या पांच से कम होती है ?

(ii) धारा 34, 35 और 38 का संशोधनः सामान्य आशय को अप्रसर करने में कई व्यक्तियों द्वारा किए कार्यों से संबंधित उपबंधः

व्या आप सहमत हैं कि बी० एन० श्री कान्तेया बनाम मैसूर राज्य, ए० आई० आर० 1958 एस० सी० 672 के मामले में शीर्षस्थ न्यायालय के निर्णय तथा भारतीय दंड संहिता से संबंधित भारत के विधि आयोग द्वारा अपनी 42वीं रिपोर्ट में की गई सिफारिशों और भारतीय दंड संहिता (संशोधन) विधेयक, 1978 के खंड 13 को ध्यान में रखते हुए, धारा 34, 35 और 38 में “कई व्यक्ति” शब्दों के स्थान पर, जड़ा-जड़ा वे आते हों, “दो या अधिक व्यक्ति” शब्द रखे जाएः।

14. धारा 40 में “अपराध” की परिभाषा के स्थान पर नई धारा का प्रतिस्थापनः

व्या आप सहमत हैं कि साधारण खंड अधिनियम, 1897 में दी गई परिभाषा को ध्यान में रखते हुए, धारा 40 में यथापरिभाषित “अपराध” शब्द की परिभाषा का लोप किया जाए और यह और कि धारा “मृत्यु से दण्डनीय अपराध” शब्द की परिभाषा धारा प्रतिस्थापित की जाए, अर्थातः—

“40. “मृत्यु से दण्डनीय अपराध” से ऐसा अपराध अभिप्रेत है जिसके लिए विधि द्वारा उपबंधित दंडों में से मृत्यु एक दंड है, जैसा भारतीय विधि आयोग ने, भारतीय दंड संहिता संबंधी अपनी 42वीं रिपोर्ट में सिफारिश की है, तथा जो भारतीय दंड संहिता (संशोधन) विधेयक, 1978 में है।

15. धारा 43 में, अवैध करने के लिए “वैध रूप से आबद्द” शब्दों की परिभाषा के लिए नई धारा का प्रतिस्थानः

क्या आप भारतीय विधि आयोग की भारतीय दंड संहिता संबंधी अपनी 42वीं रिपोर्ट में की गई सिफारिशों से और भारतीय दंड संहिता (संशोधन) विधेयक, 1978 के खंड 16 से और दंड संहिता की धारा 40 में “अपराध” की परिभाषा के प्रतिस्थापन को भी ध्यान में रखते हुए, सहमत हैं कि भारतीय दंड संहिता की धारा 43 के स्थान पर निम्नलिखित धारा प्रतिस्थापित की जाएः

“43(1) कोई बात अवैध है यदि यह कोई अपराध है या विधि द्वारा प्रतिषिद्ध है, या जो सिविल कार्यवाही के लिए आधार प्रस्तुत करती है।

(2) कोई व्यक्ति किसी बात को करने के लिए वैध रूप से आबद्द है जब वह उस बात को करने के लिए विधि द्वारा आबद्द हो या जब उस बात को करने का लोप करता है, अवैध हो”?

16. धारा 48, 49 और 50 के अधीन, “जलयान”, “वर्ष”/“मास” और “धारा” शब्द की परिभाषा का लोपः

क्या आप सहमत हैं कि साधारण खंड अधिनियम, 1897 की क्रमशः धारा 3, खंड (63), (66), (35) और 4 में उन्हीं शब्दों की परिभाषा को देखते हुए, धारा 48, 49 और 50 के अधीन यथापरिभाषित “जलयान”, “वर्ष”/“मास” और “धारा” शब्दों का क्रमशः लोप किया जाएः?

17. धारा 52 और 52क के अधीन, “सद्भावपूर्वक” और “संश्रय” शब्दों की परिभाषा का प्रतिस्थापनः

क्या आप विधि आयोग की भारतीय दंड संहिता संबंधी अपनी 42वीं रिपोर्ट में की गई सिफारिशों से और भारतीय दंड संहिता (संशोधन) विधेयक, 1978 के खंड 17 से सहमत हैं कि दंड संहिता की धारा 52 और 52क के स्थान पर निम्नलिखित धाराएं रखी जाएः, अर्थात्:—

“52. कोई बात “सद्भावपूर्वक” की गई या विश्वास की गई कही जाती है, जब यह ईमानदारी और सम्यक सतर्कता और ध्यान से की गई हो या विश्वास की गई हो।

52क. संश्रय से अभिप्रत है किसी व्यक्ति को आश्रय देना, और इसके अन्तर्गत किसी व्यक्ति को मोजन, पेय, धन, वस्त्र, आयुध, गोलागारूद या प्रवहण के साधन देना या किसी व्यक्ति की पकड़ जाने से बचने में किसी भी रीति से सहायता करना भी है।

18. धारा 53 का संशोधनः दंडः

क्या आप सहमत हैं कि जैसा अनेक मामलों में उच्चतम न्यायालय द्वारा जोर दिया गया है कि दोषसिद्ध को दंड अभिनिर्णीत करते समय, न्यायालय को, जहां भी संभव हो, भयोपरायी दंड अधिनिर्णीत करने की बजाए सुधारात्मक अभिगम अपनाना चाहिए? इसलिए यह महसूस किया जाता है कि दंड संहिता में कारावास के अतिरिक्त या उसके विकल्प के रूप में दंड के निम्नलिखित के नए रूपों को शामिल किया जाएः—

- (क) सामुदायिक सेवा;
- (ख) पद धारण करने से निरहृता;
- (ग) प्रतिकर के संदाय के लिए आदेश;
- (घ) लोक परिनिवास;

यदि आप पूर्वोक्त विचार से सहमत हैं; तो

(क) आपकी राय में, वे कौन से सुसंगत कारक होने चाहिए जिन पर भी विचार किया जाना अपेक्षित होगा;

(ख) अपराध के ऐसे कौन से प्रकार हैं जिनके लिए इन दंडों को लागू बनाया जाना चाहिए।

(ग) क्या, सामुदायिक सेवा का दंड अधिनिर्णीत करते समय, सुसंगत कारकों, जैसे सिद्धदोष की आयु, कार्य की पद्धति, कार्य की अवधि, सिद्धदोष को संदेय परिश्रमिक, यदि कोई हो, पर भी विचार किया जाए।

(घ) क्या प्रतिकर की रकम की कोई परिसीमा होनी चाहिए; और

(ड.) क्या पीड़ित को, इसकी बसूली के लिए सिविल कार्यवाहीयों का आश्रय लेने के लिए उसे आध्य करने की बजाय उसी न्यायालय द्वारा, प्रतिपूरित किया जाना चाहिए?

19. धारा 54, 55 और 55क का लोपः मृत्यु के दंडादेश और आजीवन कारावास के दंडादेश का लघुकरण, समुचित सरकार की परिभाषाः

क्या आप विधि आयोग की दंड प्रक्रिया संहिता, 1898 संबंधी 41वीं रिपोर्ट और भारतीय दंड संहिता संबंधी उसकी 42वीं रिपोर्ट में की गई सिफारिशों और भारतीय दंड संहिता (संशोधन) विधेयक, 1978 के खंड 19 से सहमत हैं कि क्रमशः धारा 54, 55 और 55क को, जो “मृत्यु के दंडादेश का लघुकरण”, “आजीवन कारावास का दंडादेश” और “समुचित सरकार” की परिभाषा से संबंधित हैं, दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 432 से धारा 435 के संदर्भ उपबंधों को ध्यान में रखते हुए, डटा दिया जाए?

20. धारा 57 का संशोधनः दंडावधियों की भिन्नताः

क्या आप विधि आयोग द्वारा भारतीय दंड संहिता संबंधी उसकी 42वीं रिपोर्ट में की गई सिफारिशों और भारतीय दंड संहिता (संशोधन) विधेयक, 1978 के खंड 20 से सहमत हैं कि दंड संहिता की धारा 57 में, कारावास से, जिसकी अवधि 20 वर्ष तक की हो सकेगी” शब्दों के स्थान पर “कठिन कारावास से जिसकी अवधि 20 वर्ष तक की हो सकेगी” शब्द रखे जाएः।

21. धारा 64 और 65 के स्थान पर नई धारा का प्रतिस्थापनः जुर्माना न देने पर कारावास का दंडादेश और कारावास की अवधिः

क्या आप भारतीय विधि आयोग द्वारा भारतीय दंड संहिता संबंधी उसकी 42वीं रिपोर्ट में की गई सिफारिशों और भारतीय दंड संहिता (संशोधन) विधेयक, 1978 के खंड 21 से सहमत हैं कि दंड संहिता की धारा 64 और 65 के स्थान पर निम्नलिखित धाराएं रखी जाएः—

“64. हर मामले में, जिसमें अपराधी जुर्माने से दंडादिष्ट हुआ है, वह न्यायालय, दंडादेश द्वारा निदेश देने के लिए सक्षम होगा कि जुर्माना देने में व्यतिक्रम होने की दशा में, अपराधी अमुक अवधि के लिए कारावास भोगेगा।”

“65. कारावास से या जुर्माने से या कारावास और जुर्माना देने से दंडनीय अपराध के हर मामले से—

(क) जुर्माना दिए जाने में व्यतिक्रम होने की दशा में दोनों में, से किसी भी भाँति के कारावास से, हो सकेगा जिससे अपराधी को उस अपराध के लिए दंडादिष्ट किया गया होता, दंडनीय होगा;

(ख) ऐसे कारावास की अवधि कारावास की उस अधिकतम अवधि के लिए एक चौथाई से अधिक नहीं होगी, जो अपराध के लिए उपबंधित है;

(ग) ऐसा कारावास, उस कारावास के, यदि कोई हो, अतिरिक्त होगा जिससे अपराधी को उस अपराध के लिए दंडादिष्ट किया जा सकता था या जिससे वह दंडादेश के लघुकरण पर दंडनीय हो सकेगा।

22. धारा 66 का लोपः जुर्माना न देने पर किस भाँति का कारावास दिया जाएः

क्या आप भारतीय दंड संहिता (संशोधन) विधेयक, 1978 के खंड 22 की सिफारिश को ध्यान में रखते हुए कि दंड संहिता की धारा 66 का लोप किया जाए, से सहमत हैं। यद्यपि, विधि आयोग ने, भारतीय दंड संहिता संबंधी अपनी 42वीं रिपोर्ट में इसका लोप करने के लिए सिफारिश नहीं की है किन्तु केवल उक्त धारा 66 को संशोधित करने के लिए की है?

23. धारा 67 और 68 के स्थान पर नई धाराओं का प्रतिस्थापनः जुर्माना देने पर कारावास का पर्यवसान होना और जुर्माना न देने पर कारावास जबकि अपराध केवल जुर्माने से दंडनीय हो:

क्या आप सहमत हैं कि (क) दोनों धाराओं में “उडाहीत” शब्द का अर्थ स्पष्ट नहीं है? इसलिए, इस शब्द के स्थान पर “वसूल” शब्द प्रतिस्थापित किया जाएँ; (ख) जैसी कि विधि आयोग द्वारा उसकी भारतीय दंड संहिता संबंधी 42वीं रिपोर्ट में सिफारिश की गई है और जो भारतीय दंड संहिता (संशोधन) विधेयक, 1978 के खंड 23 पर है कि संहिता की धारा 67 के अधीन ही गई जुर्माने की रकम में बढ़ि की जाए; (ग) जुर्माना देने पर कारावास के पर्यवसान के बारे में उपबंधों को धारा 68 के अधीन और स्पष्ट बनाया जाना अपेक्षित है, और दंड संहिता की धारा 69 के उपबंधों को भी धारा 68 के अन्तर्गत लाया जाए?

24. धारा 69 का लोपः जुर्माने के आनुपातिक भाग के दो दिए जाने की दशा में कारावास का पर्यवसान:

क्या आप सहमत हैं कि दंड संहिता की धारा 68 में संशोधन तथा भारतीय दंड संहिता संबंधी विधि आयोग द्वारा अपनी 42वीं रिपोर्ट में की गई सिफारिशों और भारतीय दंड संहिता (संशोधन) विधेयक, 1978 के खंड 24 को ध्यान में रखते हुए, दंड संहिता की धारा 69 का लोप किया जाए?

25. धारा 70, 71 और 72 का प्रतिस्थापनः जुर्माने का छह वर्ष के भीतर या कारावास के दौरान में उद्घारणीय होना, सम्पत्ति के दायित्व से मृत्यु उन्मुक्त नहीं करती, कई अपराधों से मिलकर बने अपराध के लिए दंड की अवधि और कई अपराधों में से एक दोषी व्यक्ति के लिए दंड, आदि:

क्या आप सहमत हैं कि धारा 70 से 72 जो “जुमनि का छह वर्ष के भीतर या कारावास के दौरान उद्ग्रहणीय होना, संपत्ति को दायित्व से मृत्यु उन्मुक्त नहीं करती, कई अपराधों से मिलकर बने अपराध के लिए खंड की अवधि और कई अपराधों में से एक के दोषी व्यक्ति के लिए दंड, के उपबंधों से संबंधित है, में कौन सी शकास्पद है, बताने वाला निर्णय” के बारे में विभिन्न उच्च न्यायालयों और उच्चतम न्यायालय के विनिश्चयों/मरतों को ध्यान में रखते हुए कि इन धाराओं की शब्दावली असदिग्द नहीं है और जैसी विधि आयोग ने, अपनी 42वीं रिपोर्ट में सिफारिश की है, उपबंधों को सावा और स्पष्ट बनाने के लिए, और जो भारतीय दंड संहिता (संशोधन) विधेयक, 1978 के खंड 25 में है, को संशोधित करने की आवश्यकता है।

#### 26. धारा 73 और 74 का प्रतिस्थापन: एकांत परिरोध और इसकी सीमा:

क्या आप सहमत हैं कि एकांत परिरोध का दंड आधुनिक विचारधारा के अनुरूप नहीं है, इसलिए, इसे दंड संहिता से हटा देना चाहिए?

#### 27. धारा 75 का संशोधन: पूर्व दोषसिद्धि के पश्चात् अध्याय 12 या अध्याय 17 के अधीन कतिपय अपराधों के लिए वर्धित दंड:

क्या आप ठीक समझते हैं कि धारा 75 को संहिता के अधीन उन सभी अपराधों, जो तीन वर्ष की अवधि या उससे अधिक तक के कारावास से दंडनीय हैं, को समावेशित करने के लिए विस्तारित किया जाना चाहिए?

#### 28. धारा 94 का संशोधन: वड कार्य जिसको करने के लिए कोई व्यक्ति धमकियों द्वारा विवश किया गया है:

क्या आप समझते हैं कि माता-पिता, पति-पत्नी, पुत्र या पुत्री जैसे निकट नातेदारों की उपहारि सम्मिलित करने के लिए धारा 94 का पुनः प्रारूपण आवश्यक है और ऐसी उपहारि से धमकाए गए व्यक्ति को उसी प्रकार एक छूट के रूप में विवाद्यता का अभिवाक करने की अनुमति दी जाए जैसे कि मृत्यु की धमकी प्राप्त व्यक्ति के लिए है?

#### 29. कंपनियों का आन्वयिक दायित्व: धारा 94क और 94ख का अन्तःस्थापन:

क्या आप सोचते हैं कि कंपनी और निवेशक जोड़ या कंपनी के कार्यकलाप के संचालन के लिए उत्तरदायी व्यक्तियों को, उसके किसी कर्मचारी द्वारा कंपनी के कार्यकलाप को अग्रसर करने में किए गए अपराधों के लिए, नई धारा 94क और 94ख जोड़कर, आन्वयिक रूप से दायी बनाया जाना चाहिए जैसा कि विधेयक में उपबंधित है?

#### 30. धारा 99 का संशोधन/उपांतरण/हटाया जाना: वे कार्य जिनके विरुद्ध प्राइवेट प्रतिरक्षा आदि का कोई अधिकार नहीं है:

क्या आप सोचते हैं कि धारा 99क का तीसरा पैरा, जो उन मामलों में, जिनमें संरक्षा के लिए लोक प्रधिकारियों की सहायता प्राप्त करने के लिए समय है, प्राइवेट प्रतिरक्षा के अधिकार पर रोक लगाता है, हटाया या उपांतरित किया जाना चाहिए और यदि ऐसा है, तो किस प्रकार?

#### 31. धारा 100 का संशोधन: शरीर की प्राइवेट प्रतिरक्षा के अधिकार का विस्तार मृत्यु कारित करने पर कब होता है:

क्या दंड संहिता की धारा 100 के अधीन 5वें पैरा को उन मामलों तक सीमित करता आवश्यक है जहां अपहरण, संहिता के अधीन दंडनीय है, जैसाकि विधेयक में उपबंधित है अथवा वर्तमान 5वें पैरा को उसी रूप में बनाए रखा जाना है?

#### 32. धारा 101 का संशोधन:

क्या अन्त में “या हमलावर की अस्वेच्छया मृत्यु कारित करने तक का होता है” शब्द जोड़कर धारा 101 का संशोधन किया जाना चाहिए ताकि उतावलेपन और उपेक्षापूर्वक का कार्य जैसे वे मामले जिनमें मृत्युकारित की जाती है, किन्तु स्वेच्छया नहीं, सम्मिलित किए जा सकें?

#### 33. धारा 103 का संशोधन: कब संपत्ति की प्राइवेट प्रतिरक्षा के अधिकार का विस्तार मृत्यु कारित करने तक होता है:

क्या “गृह अतिचार” शब्दों के स्थान पर “आपराधिक अतिचार” शब्दों को प्रतिस्थापित करना अनिवार्य है जिससे कि धारा 103 के चैथे खंड के अधीन वायुयान को भाग ले जाने या अमिष्वास को सम्मिलित किया जा सके और क्या दूसरा खंड 1, अर्थात् “रात्रि घृ-मेदन” का लोप किया जा सकता है?

#### 34. धारा 105 का संशोधन: संपत्ति की प्राइवेट प्रतिरक्षा के अधिकार का प्रारंभ और बना रहना:

धारा 99 और 103 के प्रस्तावित संशोधन को ध्यान में रखते हुए, क्या आप धारा 105 में किसी परिवर्तन का सुझाव देते हैं?

#### 35. धारा 108 और 108क का संशोधन: दुष्प्रेरण और भारत से बाहर के अपराधों का भारत में दुष्प्रेरण:

भारतीय दंड संहिता (संशोधन) विधेयक, 1978 में यह प्रस्तावित है कि धारा 108 और 108क के स्थान पर निम्नलिखित धारा एं रखी जाएः—

“108(1). कोई व्यक्ति अपराध का दुष्प्रेरण करेगा, जो किसी बात को करने का दुष्प्रेरण करेगा, जो वह अपराध है या जो अपराध होता, यदि वह कार्य, उस अपराध को करने के लिए विधि द्वारा समर्थ व्यक्ति द्वारा उसी आशय या ज्ञान से, जो दुष्प्रेरण का है, किया जाता है (विधेयक का खंड 38 देखिए)।”

आपके विचार क्या हैं?

#### 36. धारा 115 और 116क का संशोधन: दुष्प्रेरण के लिए दंड:

क्या आप समझते हैं कि अपराधों के असफल दुष्प्रेरण के लिए धारा 115 और 116 के अधीन दंड अधिक कठिन होना चाहिए?

#### 36. 15वर्ष की कम आयु के बालक द्वारा किए गए दुष्प्रेरण के लिए धारा 117क का अन्तःस्थापन:

क्या 15 वर्ष की कम आयु के बालक द्वारा अपराध किए जाने के दुष्प्रेरण को सम्मिलित करने के लिए एक नई धारा 117क अंतःस्थापित की जानी चाहिए?

#### 38. धारा 119 का संशोधन: किसी ऐसे अपराध के किए जाने की परिकल्पना का लोक सेवक द्वारा छिपाया जाना, जिसका निवारण करना, आदि उसका कर्तव्य है, दंड:

क्या आप समझते हैं कि जहां मृत्यु से दंडनीय अपराध किया जा रहा है उन मामलों में और मृत्यु से दंडनीय अपराध नहीं किया जाता है, उन मामलों में भी, और उन मामलों में भी, वहां जहां लोक सेवक द्वारा इसे निवारित नहीं किया गया था उसके द्वारा सुकर बनाया गया था, कठोर दंड का उपबंध करके, धारा 119 का तीसरा, चौथा, पांचवां पैरा प्रतिस्थापित किया जाना आवश्यक है?

#### 39. धारा 5ख का अन्तःस्थापन: प्रयत्न और दंड:

क्या आप सहमत हैं कि “प्रयत्न” शब्द को परिभाषित किया जाए और इसके लिए, अभ्यानंद बनाम बिहार राज्य (1962) 2 एस० सी० आर० 241 के मामले में, उच्चतम न्यायालय के अभिनिर्धारण तथा विधि आयोग द्वारा भारतीय दंड संबंधी 42वीं रिपोर्ट में की गई सिफारिश और भारतीय दंड संहिता (संशोधन) विधेयक, 1978 के खंड 45 को ध्यान में रखते हुए, दंड विद्वित किया जाना चाहिए और दंड संहिता के अध्याय 5क के पश्चात् निम्नलिखित अध्याय 5ख समाविष्ट किया जाए?

#### अध्याय 5ख

##### प्रयत्न

#### 40. 120ग.

कोई व्यक्ति किसी अपराध को करने का प्रयत्न करता है, जब—

(क) वह, इसके किए जाने के लिए अपेक्षित आशय या ज्ञान रखते हुए, इसे करने की दिशा में कोई कार्य करता है;

(ख) इस प्रकार किया गया कार्य अपराध के किए जाने से निकट रूप से संस्कृत और समीक्ष्य में है; और

(ग) वह कार्य, जो उन तथ्यों के कारण, जिनका उसे पता नहीं है या उन परिस्थितियों के कारण जो उसके नियंत्रण से परे है, अपने उद्देश्य में असफल रहता है।

#### 40. 120घ.

जो कोई आजीवन कारावास या विनिर्दिष्ट अवधि के लिए कारावास से दंडनीय किसी अपराध को करने के लिए प्रयत्न करने का दोषी है, जहां ऐसे प्रयत्न के दंड के लिए कोई अभिव्यक्त उपबंध नहीं किया गया है, तो वह उस अपराध के लिए उपबंधित दोनों में से किसी भाँति के कारावास से, ऐसी अवधि के लिए, जो यथास्थिति, आजीवन कारावास से आधे तक की या उस अपराध के लिए उपबंधित दीर्घतम अवधि के आधे तक की हो सकेगी या ऐसे जुमनि से, जो उस अपराध के लिए उपबंधित है, या दोनों से, दोनों।

42. धारा 122 और 123 का संशोधन: भारत सरकार के विरुद्ध युद्ध करने के आशय से आयुध आदि संग्रह करने और युद्ध करने की परिकल्पना को सुकर बनाने के आशय से छिपाना:

क्या आप विधि आयोग द्वारा, भारतीय दंड संहिता संबंधी उसकी 42वीं रिपोर्ट में की गई सिफारिश और भारतीय दंड संहिता (संशोधन) विधेयक, 1978 के खंड 46 से सहमत हैं कि राज्य की सुरक्षा पर प्रभाव डालने वाले अपराध की गंभीर प्रकृति को देखते हुए, भारतीय दंड संहिता की धारा 122 और 123 के अधीन “दोनों में से किसी भाँति के कारावास से” शब्दों के स्थान पर “कठिन कारावास से” शब्द प्रतिस्थापित किए जाएं?

43. नई धारा 123क का अंतःस्थापन:

क्या आप विधि आयोग द्वारा भारतीय दंड संहिता संबंधी उसकी 42वीं रिपोर्ट में की गई सिफारिश और भारतीय दंड संहिता (संशोधन) विधेयक, 1978 के खंड 47 से सहमत हैं कि दंड संहिता की धारा 123 के पश्चात निम्नलिखित धारा अंतःस्थापित की जाए? अर्थात्:—

“123क. जो कोई भारत से युद्धरत किसी शत्रु की, या किसी देश के, जिसके विरुद्ध भारत के सशस्त्र बल संघर्षत है, सशस्त्र बलों की किसी भी रीति से सहायता करेगा, वह, चाहे उस देश और भारत के बीच युद्ध की स्थिति विद्यमान हो या न हो, कठिन कारावास से जिसकी अवधि 10 वर्ष तक की हो सकेगी, दंडित किया जाएगा, और जुमनि से भी दंडनीय होगा।

44. धारा 124 के स्थान पर नई धारा का प्रतिस्थापन: राजद्रोहः:

क्या आप सहमत हैं कि उच्चतम न्यायालय के केदार नाथ सिंह बनाम विहार राज्य एस०सी०आर० (1962) अनु० पृष्ठ 808 के मामले में अभिनिर्धारण को देखते हुए, निम्नलिखित धारा प्रतिस्थापित की जाए, अर्थात्:—

“124क. जो कोई बोले गए या लिखे गए शब्दों द्वारा या संकेतों द्वारा या दृश्यरूपेण द्वारा या अन्यथा भारत की या किसी राज्य की अखंडता या सुरक्षा को संकटापन्न करने या लोक अव्यवस्था पैदा करने के आशय से अथवा यह जानते हुए कि उसके द्वारा ऐसा होना संभाव्य है, संविधान के प्रति या विधि द्वारा यथास्थापित भारत की सरकार अथवा संसद् या किसी राज्य की सरकार अथवा विधान-मंडल या न्याय प्रशासन के प्रति अप्रीति प्रवीप्त करेगा या प्रवीप्त करने का प्रयत्न करेगा,

वह आजीवन कारावास से या ऐसे कठिन कारावास से, जिसकी अवधि 3 वर्ष तक की हो सकेगी, दंडित किया जाएगा और जुमनि से भी दंडनीय होगा।

120ख. जो कोई जानबूझकर भारत के संविधान का या उसके किसी भाग का, राष्ट्रीय ध्वज, राष्ट्रीय संग्रहीय या राष्ट्रगान का, उसे जलाकर, अपवित्र करके या अन्यथा अपमान करेगा, वह दोनों में से किसी भाँति के कारावास से, जिसकी अवधि 3 वर्ष तक की हो सकेगी या जुमनि से या दोनों से, दंडनीय होगा” जैसी कि विधि आयोग द्वारा भारतीय दंड संहिता संबंधी उसकी 42वीं रिपोर्ट में सिफारिश की गई है और जो भारतीय दंड संहिता (संशोधन) विधेयक, 1978 के खंड 48 में है।

45. धारा 125 और 126 का संशोधन: युद्ध करना आदि और भारत सरकार के साथ शांति का संबंध रखने वाली शवित के राज्यक्षेत्र में लूटपाट करना:

क्या आप विधि आयोग द्वारा भारतीय दंड संहिता संबंधी उसकी 42वीं रिपोर्ट में की गई सिफारिश और भारतीय दंड संहिता (संशोधन) विधेयक, 1978 के खंड 49 और 50 से सहमत हैं कि दंड संहिता की धारा 125 और 126 के अधीन “भारत सरकार से मैत्री संबंध रखने वाली किसी एशियाई शक्ति” शब्द असंगत होने के कारण उनके स्थान पर “भारत के साथ शांति संबंध रखने वाला कोई विदेशी राज्य” शब्द प्रतिस्थापित किए जाएं?

46. धारा 128, 129 और 130 का संशोधन: लोक सेवकों, आदि द्वारा किए गए अपराधः

क्या आप सहमत हैं कि चूकि गत शताब्दी के आरंभ में बनाए गए तीन प्रेसिडेंसियों के “राज्य कैदी विनियम” 1952 में निरसित किया जा चुके और विधि आयोग द्वारा भारतीय दंड संहिता संबंधी उसकी 42वीं रिपोर्ट में की गई सिफारिश और भारतीय दंड संहिता (संशोधन) विधेयक, 1978 की धारा 49 और 50 को ध्यान में रखते हुए, धारा 123, 129 और 130 के अधीन “राज्य कैदी” शब्द, यहां कहीं पे आते हैं, का लोप किया जाए?

47. धारा 161 का संशोधन: लोक सेवकः

क्या आप सहमत हैं कि “लोक विक” शब्द, भारतीय दंड संहिता की धारा 161 की परिधि के अन्तर्गत विनिर्दिष्ट रूप से परिभाषित किया जाना चाहिए?

क्या “लोक सेवक” शब्द को सरकार के स्वामित्व में या उसके द्वारा नियंत्रित स्थानीय प्राधिकरणों या निगमों को लागू किया जाए?

48. नई धारा 153ग का अन्तःस्थापन: लोक प्रशांति के विरुद्ध अपराध कारित करने के लिए आशयित कथनः

क्या भारतीय दंड संहिता में, धर्म, वंश, भाषा, जाति या समूदाय के आधार पर विभिन्न समूहों के बीच शत्रुता, धूमा या दुर्विवाद बढ़ाने वाले क्रियाकलाप में हाल में हुई यूद्ध को रोकने के लिए, जिससे कठोर रीति में निपटने की अपेक्षा है, एक नई धारा 153ग अंतःस्थापित किया जाए और क्या ऐसा कदम पूर्वोक्त आधारों पर हिसा को रोकने में सहायता होगा?

49. धारा 171छ का संशोधन: निर्वाचन आदि:

निर्वाचनों में ध्रष्ट आचरण का किया जाना/लोप किया जाना लोक प्रतिनिधित्व अधिनियम के अधीन दंडनीय है, क्या आप यह सुझाव देते हैं कि विशेष रूप से भारतीय दंड संहिता की धारा 171छ के प्रतिनिर्देश से भारतीय दंड संहिता के उपबंधों के अधीन इन्हीं अपराधों को साथ-साथ दंडनीय बनाया जाए?

50. नई धारा 166क का अंतःस्थापनः

पुलिस अधिकारियों में, अपराध के साक्षियों को, दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 160 के अतिक्रमण में उन स्थानों पर सीधे उपसंगत होने का निर्देश देने की सामान्य प्रवृत्ति प्रतीत होती है। भारत के विधि आयोग ने, “अभिरक्षा में स्त्री” संबंधी अपनी 135वीं रिपोर्ट में, दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 150 का अतिक्रमण दंडनीय बनाने के लिए तथा प्रस्तावित अपराध के संज्ञेय, जमानतीय और मजिस्ट्रेट द्वारा विचारणीय बनाने के लिए एक नई धारा 166क के अंतःस्थापन की सिफारिश की थी। क्या दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 160 के उपबंधों के अतिक्रमण की प्रवृत्ति को रोकने के लिए भारतीय दंड संहिता में ऐसा उपबंध अन्तःस्थापित किया जाना चाहिए?

51. नई धारा 167क का अंतःस्थापनः जहां प्रदाय किया गया माल या किया गया कार्य संविदा के संबंध में विद्रेषपूर्वक संदाय प्राधिकृत करने वाला लोक सेवकः

क्या ऐसे लोक सेवक को दंडित करने के लिए भारतीय दंड संहिता में एक नई धारा 167क अंतःस्थापित की जानी चाहिए जो किसी संविदा के अधीन प्रदाय किए गए माल या किए गए कार्य के लिए सरकार या किसी अन्य लोक प्राधिकारी की ओर से संदाय प्राधिकृत करता है जब कि वह जानता है कि माल या कार्य संविदा के अनुसार नहीं हैं इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए कि लोक सेवक जहां प्रदाय किया गया माल या की गई कोई संविदा के अनुसार न हो, संविदा के संबंध में विद्रेषपूर्वक संदाय प्राधिकृत करता है?

52. नई धारा 167ख का अंतःस्थापनः

पुलिस अधिकारियों के विरुद्ध, पुलिस थाने पर प्रथम इतिला रिपोर्ट अभिलिखित न करने की शिकायतें हैं, भले ही प्रथम दृष्टया संज्ञेय अपराधे किए जाने का साक्ष्य बहुधा दिया गया हो। विद्यमान विधि के अधीन इतिला अभिलिखित करने से इकार करने पर पुलिस अधिकारियों के विरुद्ध दांडिक कार्यवाही करने के लिए कोई प्रबंध नहीं है जैसा दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 154(1) द्वारा विवक्षित है। विधि आयोग ने, “बलात्संग और सहबद अपराध” संबंधी अपनी 44वीं रिपोर्ट में भी यह संग्रहण किया था कि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 154 की उपधारा (3) के अधीन उपलाभ्य उपचार प्रभावी और पर्याप्त नहीं हैं। अतः, आयोग ने, भारतीय दंड संहिता की एक नई धारा 167ख के अधिनियमन की सिफारिश की थी जिससे किसी पुलिस थाने के भारसाधक अधिकारी द्वारा प्रथम इतिला रिपोर्ट अभिलिखित करने में असफल होने पर उसे कारावास से, जिसकी अवधि एक वर्ष तक की हो सकेगी या जुमनि से, या दोनों से, दंडनीय बनाया जा सके। संज्ञेय अपराधों को किए जाने से संबंधित इतिला रजिस्टर करने से इकार करने की दुष्प्रथा को दतोत्साहित या निवारित करने के लिए, पूर्वोक्त रीति के अनुसार, एक नई धारा 167ख के अंतःस्थापन पर, पूर्वोक्त उपाय के अतिरिक्त विचार-विमर्श किए जाने की आवश्यकता है कि पूर्वोक्त दुष्प्रथा को रोकने के लिए अन्य कौन से उपयुक्त उपाय किए जा सकते हैं?

53. धारा 228 का लोपः

चूकि हमारे देश में इयूटी प्रणाली उत्साहित कर दी गई है अतः, क्या आप भारतीय दंड संहिता की धारा 222 को हटाने के लिए सुझाव देते हैं?

54. धारा 246 और 254 का लोपः सिवका आदि:

प्राचीन काल में सिवकों में प्रयुक्त धातु बहुत मूल्यवान होती थी। इसलिए, लोग सिवकों की संरचना और आकार परिवर्तित करने का प्रयास करते रहते थे। आजकल सिवकों में प्रयोग की जा रही धातु उतनी अधिक मूल्यवान नहीं है, इसलिए क्या आप भारतीय दंड संहिता की धारा 246 और 254 को हटाने के लिए सुझाव देते हैं?

55. नई धारा 198क का अंतःस्थापन: मिथ्या चिकित्सीय प्रमाणपत्र जारी करना या हस्ताक्षरित करना:

क्या भारतीय दंड संहिता में यह उपबंध किया जाना चाहिए कि कोई चिकित्सा व्यवसायी जो जानबूझकर मिथ्या चिकित्सीय प्रमाणपत्र या आरोग्य प्रमाणपत्र जारी करता है और कोई व्यक्ति, जो भ्रष्ट रूप से उसका सही प्रमाणपत्र के रूप में उपयोग करता है, मिथ्या चिकित्सीय प्रमाणपत्र को जारी करने और उसका उपयोग करने की बढ़ती हुई दुष्प्रथा को रोकने के लिए दंडनीय बनाया चाहिए? (उदाहरणार्थ एम०ड० से आहर दिखाई पड़ने वाले टाक्टर नए आवेदकों को प्रमाणपत्र देने के लिए प्राधिकृत करते हैं) यदि ऐसा है तो क्या न्यायिक कार्यवाहियों में प्रयुक्त प्रमाणपत्र के लिए और अन्य प्रयोजनों के लिए मिन्न-मिन्न दंड होना चाहिए?

56. धारा 270 का संशोधन: परिद्वेषपूर्ण कार्य जिससे जीवन के लिए संकटपूर्ण रोक का फैलना संभाव्य हो:

क्या आप भारतीय दंड संबंधी विधि आयोग की 42वीं रिपोर्ट की सिफारिश और भारतीय दंड संहिता (संशोधन) विधेयक, 1978 से सहमत है कि दंड संहिता की धारा 270 में (क) "परिद्वेष से" शब्दों के स्थान पर "जानबूझकर" शब्द रखा जाए, और (ख) "दो वर्ष" शब्दों के स्थान पर "तीन वर्ष" शब्द रखे जाएं?

57. धारा 272 से 278 तक का संशोधन: अपमिश्रण के अपराध:

क्या आप सहमत हैं कि खाद्य वेय और औषधि के अपमिश्रण के समाज विरोधी और वित्तीय अपराधों से निपटने के लिए दंड संहिता की धारा 272 से 276 तक में उपबंधित दंड, विधि आयोग द्वारा उसकी 42वीं रिपोर्ट में की गई सिफारिश और भारतीय दंड संहिता (संशोधन) विधेयक, 1978 के खंड 115 और खाद्य अपमिश्रण (निवारण) अधिनियम, 1954 की धारा 16 और 1975 के उत्तर प्रदेश अधिनियम संख्यांक 47 तथा 1973 के पश्चिमी बंगाल अधिनियम संख्यांक 42 के उपबंधों को देखते हुए, बढ़ाया जाना चाहिए और यदि ऐसा है तो दंड की मात्रा क्या होनी चाहिए?

58. धारा 272 का संशोधन:

क्या आप भारतीय दंड संबंधी विधि आयोग की 42वीं रिपोर्ट की सिफारिश और भारतीय दंड संहिता (संशोधन) विधेयक, 1978 के खंड 116 से सहमत हैं कि दंड संहिता की धारा 277 में (क) "या जलाशय" शब्दों के स्थान पर "कुएं, जलाशय या जल प्रदाय के किसी अन्य स्रोत" शब्द रखे जाएं और (ख) "तीन मास तक की हो सकेगी या जुमनि से जो पांच सौ रुपए तक हो सकेगा" शब्दों के स्थान पर "एक वर्ष" तक की हो सकेगी या "जुमनि से" शब्द रखे जाएं?

59. नई धारा 229क का अंतःस्थापन:

क्या आप भारतीय दंड संबंधी विधि आयोग की 42वीं रिपोर्ट की सिफारिश और भारतीय दंड संहिता (संशोधन) विधेयक, 1978 के खंड 119 से सहमत हैं कि "लोक मार्ग पर असुरक्षित या अति लदे हुए यान को चलाना" के लिए निम्नवत एक नई धारा 179क अंतःस्थापित की जाएः—

"279क. जो कोई किसी यान को जब वह यान ऐसी दशा में है या इतना लदा हुआ है कि उससे जीवन संकटापन हो सकता है, किसी लोक मार्ग पर जानते हुए या उपेक्षापूर्वक चलाएगा या चलाने देगा, वह दोनों में से किसी भाँति के कारावास से, जिसकी अवधि छह मास तक की हो सकेगी, या जुमनि से, या दोनों से, दंडित किया जाएगा।

स्पष्टीकरण—इस धारा में—

- (क) "यान" के अन्तर्गत कोई जलाशय भी है; और
- (ख) "लोक मार्ग" के अन्तर्गत कोई जलमार्ग भी है।"

60. धारा 292 का संशोधन:

क्या आप सहमत हैं कि दंड संहिता की धारा 292 में, जो अश्लील पुस्तकों, आदि के विक्रय आदि के संबंध में है, विशेष साक्ष्य की ग्राहयता के लिए निम्नलिखित शब्दों में जैसी कि विधि आयोग द्वारा भारतीय दंड संहिता संबंधी उसकी 42वीं रिपोर्ट में और भारतीय दंड संहिता (संशोधन) विधेयक, 1978 के खंड 122 में सिफारिश की गई है, एक नई धारा जोड़ी जाए, अर्थात्—

"(3) जहां धारा के अधीन किसी अभियोजन में यह प्रश्न है कि किसी पुस्तक, पुस्तिका, निबंध, लेख, रेखांचित्र, रंगांचित्र, रूपण या आकृति का प्रकाशन, विज्ञान, साहित्य, कला या विद्या या साधारण रुचि के अन्य विषयों के हित में है वहां उसके वैज्ञानिक, साहित्यिक, कलात्मक, शैक्षिक या अन्य प्रणाली के बारे में विशेषज्ञ की राय साक्ष्य के रूप में प्रदण की जा सकेगी।"

61. नई धारा 292क का अंतःस्थापन: धोर अशिष्ट या भद्वी सामग्री या भयादोहन के लिए आशयित सामग्री का सुदूरण आदि:

मिहिया में अश्लील या धोर अशिष्ट सामग्री के प्रकाशन द्वारा भयादोहन की विभीषिका को रोकने के लिए क्या यह आवश्यक है कि किसी चित्र या किसी मुद्रित अथवा लिखित दस्तावेज के, जो धोर अशिष्ट या अश्लील या भयादोहन आदि के लिए आशयित मुद्रण, प्रदर्शन, वितरण, परिचालन को समाविष्ट करने के लिए अथवा विक्रय या हस्तातरण या मुद्रण या परिचालन आदि के कारबार को करने या विज्ञापित करने या ऐसा कोई कार्य करने का प्रयत्न को भी दंडनीय बनाने के लिए एक नई धारा 292क का अंतःस्थापन आवश्यक है।

62. नई धारा 294क और 294ख का अंतःस्थापन: लाटरियों के संबंध में अपराध:

क्या नई धारा 294क और 294 का विस्तार किया जाना चाहिए ताकि भारत में या अन्यत्र संपरिवर्तित या संप्रवर्तन के लिए प्रस्थापित सभी लाटरियों और मुद्रण, विक्रय, वितरण, विज्ञापन आदि के कार्यों को इसके अन्तर्गत लाया जा सके?

63. धारा 299 और 300 में संशोधन: आपराधिक मानव वध और हत्या:

क्या आप धारा 299 और 300 में आपराधिक मानव वध और हत्या की परिभाषा को स्पष्ट करने के लिए किसी परिवर्तन से सहमत हैं?

64. धारा 302ख का संशोधन:

क्या आप धारा 302ख को अधिक स्पष्टीकारक बनाया जाना चाहिए और जिन मामलों में उल्लिखित मूल्य दंड अधिनिर्णीत किया जाना चाहिए या क्या इसे "विरल से विरलतम मामलों" की संकल्पना पर न्यायालय के विवेक पर छोड़ देना उपयुक्त होगा?

65. नई धारा 304ख का अंतःस्थापन:

योग्यत्र समय के भीतर, किसी पुलिस थाने को इसिला दिए बिना यान को चलाने या भगा ले जाने के लिए नई धारा 304ख को अंतःस्थापित किया जाना चाहिए।

66. धारा 307 और 308 का अंतःस्थापन: हत्या करने का प्रयत्न और आपराधिक मानव वध करने का प्रयत्न:

क्या आप धारा 307 और 308 में किसी परिवर्तन से सहमत हैं? यदि उपर्युक्त कारित की जाती है तो उसके लिए कठोर दंड होना चाहिए?

67. धारा 309 का लोप: आत्महत्या करने का प्रयत्न:

क्या आप सहमत हैं कि धारा 309 का लोप किया जाए?

68. धारा 320 का संशोधन: धोर उपहर्ता:

क्या आप धारा 320 में किसी परिवर्तन से सहमत हैं? क्या पैरा 8 में, 20 दिन की अवधि को कम करके 15 दिन तक किया जा सकता है?

69. नई धारा 345क का अंतःस्थापन: अप्राप्तवय पर अभद्र दमला:

क्या क्या आप पंजाब राज्य बनाम भेजर सिंह ए० आर्ड० आर० 1967, में उच्चतम न्यायालय पृष्ठ 63, 65, 67 के मामले में उच्चतम न्यायालय के इस नियंत्रण से सहमत हैं कि बालक पर अशिष्ट दमला अपराध होगा। इसलिए, उपर मामले और भारतीय दंड संहिता पर विधि आयोग की अपनी 42वीं रिपोर्ट की सिफारिश और भारतीय दंड संहिता (संशोधन) विधेयक, 1978 के परिप्रेक्ष्य में, एक नई धारा 354क "अप्राप्तवय पर अभद्र दमला" को निम्न शब्दों में अंतःस्थापित किया जाएः—

"354क. जो कोई सोलह वर्ष से कम आयु के किसी अप्राप्तवय पर अभद्र, कामुक या अश्लील रीति में हमला करेगा, या आपराधिक बल का प्रयोग करेगा, वह दोनों में से किसी भाँति के कारावास से, जिसकी अवधि तीन वर्ष तक की हो सकेगी, या जुमनि से, या दोनों से, दंडित किया जाएगा।"

70. धारा 366 का संशोधन: आपराधिक बल का प्रयोग:

क्या आप भारतीय दंड संहिता पर विधि आयोग की 42वीं रिपोर्ट की सिफारिश और भारतीय दंड संहिता (संशोधन) विधेयक, 1978 के खंड 147 से सहमत हैं कि दंड संहिता की धारा 356 में “आन एनी प्रोपर्टी” शब्दों के स्थान पर “आफ एनी प्रोपर्टी” शब्दों की प्रतिस्थापित किया जाए ?

71. धारा 361 का संशोधन: विधिपूर्ण संरक्षकता में व्यपहरण:

क्या आप भारतीय दंड संहिता पर विधि आयोग की 42वीं रिपोर्ट की सिफारिश और भारतीय दंड संहिता (संशोधन) विधेयक, 1978 के खंड 148 में इससे सहमत हैं कि दंड संहिता की धारा 361 में—(क) स्पष्टीकरण के स्थान पर निम्नलिखित स्पष्टीकरण प्रतिस्थापित किया जाए, अर्थातः—

“स्पष्टीकरण—इस धारा में “विधिपूर्ण संरक्षक” पद के अन्तर्गत ऐसा व्यक्ति आता है जिसकी विधिपूर्ण अभिरक्षा में कोई अप्राप्तव्य या विकृतित्व व्यक्त है;

(ख) अपवाद में “विधिविरुद्ध” शब्दों के स्थान पर “अवैध” शब्द रखा जाए।

72. धारा 362 का संशोधन: अपहरण:

क्या आप इस बात से सहमत हैं कि धारा 362 के अधीन दी गई ‘अपहरण’ शब्द की परिभाषा स्पष्ट और हरनी व्यापक नहीं है कि उक्त अपराध की परिभाषा उसमें आ सके और कुछ समय से आतंकवाद से ग्रस्त हमारे देश के कुछ भागों में ‘वायुयान और यान भाग ले जाने’ के मामले बढ़ने जा रहे हैं और उन्हें दंड संहिता के अधीन दंडनीय बनाया जाना चाहिए। हमारी राय में दोनों अपराधों के लिए एक समान दंड होना चाहिए अथवा अपराध की गुरुता के अनुसार, इसमें परिवर्तन होना चाहिए और फलक पर या उड़ान में किसी वायुयान को भाग ले जाने की दशा में, भयोपरापी दंड होना चाहिए ? कृपया दियपाणी करें।

73. नई धारा 364क का अंतःस्थापन: फिरौती के लिए अपहरण या व्यपहरण:

क्या आप सहमत हैं कि फिरौती के लिए व्यपहरण या अपहरण के लिए दंड की मात्रा, भारतीय दंड संहिता की धारा 364 के अधीन दिए गए अपराधों की मात्रा से अधिक होनी चाहिए। यदि हाँ, तो विधि आयोग द्वारा भारतीय दंड संहिता संबंधी उसकी 42वीं रिपोर्ट में की गई सिफारिश और भारतीय दंड संहिता (संशोधन) विधेयक, 1978 के खंड 151 के अनुसार, एक नई धारा निम्नलिखित रूप में अंतःस्थापित की जानी चाहिए :—

“364क. जो कोई किसी व्यक्ति का इसलिए व्यपहरण या अपहरण करता है कि उसे व्यक्ति को फिरौती देने पर छोड़ दिया जाएगा, तो वह कठिन कारावास से, जिसकी अवधि 14 वर्ष तक की हो सकेगी, दंडित किया जाएगा और जुमनि से भी दंडनीय होगा।”

74. धारा 262—अपहरण के स्थान पर नई धारा का प्रतिस्थापन:

(क) क्या आप इस बात से सहमत हैं कि किसी स्थान से, उस व्यक्ति की सम्मति या उस व्यक्ति की ओर से सम्मति देने के लिए वैध रूप से प्राधिकृत किसी व्यक्ति के सम्मति के बिना ले जाने को शामिल करने के लिए, जैसाकि मारतीय दंड संहिता (संशोधन) विधेयक, 1978 के खंड 149 में उपबंधित है, अपहरण की परिभाषा का विस्तार किया जाए।

(ख) क्या आप सहमत हैं कि व्यक्ति बंदी अपहरण को, ऐसे अपहरण के देते पर विचार किए बिना, भारतीय दंड संहिता के अधीन दंडनीय बनाया जाना चाहिए।

75. नई धारा 364क का अंतःस्थापन: फिरौती के लिए अपहरण:

भारतीय दंड संहिता में फिरौती के लिए अपहरण अपराध के रूप में सम्मिलित नहीं है। राष्ट्रीय अपराध अभिलेख ब्यूरो ने, यदि रिपोर्ट दी है कि फिरौती के लिए अपहरण संहित अपहरण के मामलों में 1983 और 1993 के बीच 43.3 प्रतिशत की वृद्धि हुई है। इसको देखते हुए, क्या आप सहमत हैं कि फिरौती के लिए अपहरण को अपराध के रूप में समाविष्ट किया जाना चाहिए, जैसाकि मारतीय दंड संहिता (संशोधन) विधेयक, 1978 के खंड 151 (धारा 364क) में उपबंधित है।

76. धारा 308 के स्थान पर नई धारा का प्रतिस्थापन: व्यपहरत या अपहरत व्यक्ति, को सदोष दियाजाना:

क्या आप सहमत हैं कि उपर्युक्त अपराध के लिए एक विनिर्दिष्ट दंड ‘कठिन कारावास से, जिसकी अवधि 7 वर्ष की हो सकेगी और जुमनि से’ का दंड उपबंधित किया जाना चाहिए, जैसाकि मारतीय दंड संहिता (संशोधन) विधेयक, 1978 के खंड 155 में उपबंधित है।

77. धारा 369 का संशोधन: किसी बालक का उसके शरीर पर से चोरी करने के लिए व्यपहरण या अपहरण:

क्या आप सहमत हैं कि उपर्युक्त अपराध के लिए न्यूनतम दंड विहित किया जाना चाहिए। यदि ऐसा है, तो उसकी मात्रा

क्या होनी चाहिए ? भारतीय दंड संहिता (संशोधन) विधेयक, 1978 के खंड 156 में “किन्तु जो दो वर्ष से कम नहीं होगी” का न्यूनतम दंड विहित किया गया है।

78. धारा 373 का संशोधन: बेश्यावृत्ति या अयुवत संभोग या किसी विधिविरुद्ध या दुराचारिक प्रयोजन के लिए किसी अप्राप्तव्य को खारीदना, भाड़ पर लेना या उसका कब्जा अभिप्राप्त करना :

क्या आप विभिन्न उच्च न्यायालयों के बीच विरोधी अभिमतों को देखते हुए, धारा 373 में स्पष्टीकरण 3 के अंतःस्थापन के लिए सहमत हैं, जैसाकि विधि आयोग द्वारा इसकी 42वीं रिपोर्ट में सुझाया गया है और जैसा भारतीय दंड संहिता (संशोधन) विधेयक, 1978 के खंड 158 के अधीन निम्नवत उल्लिखित है।

“स्पष्टीकरण 3 :—इस धारा के प्रयोजनों के लिए यह आवश्यक नहीं होगा कि अप्राप्तव्य का कब्जा किसी तीसरे व्यक्ति से प्राप्त किया जाए।

79. धारा 375 का संशोधन: बलात्संग:

क्या आप सहमत हैं कि “छठवें” पैरा में “16 वर्ष” शब्दों के स्थान पर “18 वर्ष” शब्द रखे जाए और अपवाद में “15 वर्ष” शब्दों के स्थान पर “17 वर्ष” शब्द रखे जाने चाहिए। इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए कि जब बालिकाओं के लिए न्यूनतम आयु बाल विवाह अवश्य अधिनियम, 1929 में संशोधन करके 18 वर्ष कर दी गई थी, विद्यमान विधि के अधीन मैथुन के लिए सम्मति की आयु 16 वर्ष, और पत्नी की दशा में, 15 वर्ष ही बनी रही है।

80. धारा 376 के स्थान पर नई धाराओं का प्रतिस्थापन: बलात्संग के लिए दंड :

(क) क्या आप सहमत हैं कि धारा 376 की उपधारा (1) में बलात्संग के लिए दंड 2 वर्ष से बढ़ा कर 5 वर्ष कर दिया जाए और धारा 376 की उपधारा (2) में 10 वर्ष की न्यूनतम अवधि से बढ़ाकर “कठिन आजीवन कारावास से” का दंड विहित किया जाए;

(ख) क्या आप सहमत हैं कि धारा 376 की उपधारा (2) में “वह कठोर कारावास से” शब्दों से प्रारंभ होने वाले और “भी दंडनीय होगा” शब्दों से समाप्त होने वाले भाग के स्थान पर निम्नलिखित प्रतिस्थापित किया जाए :

“वह कठिन आजीवन कारावास से दंडित किया जाएगा और जुमनि से भी दंडनीय होगा”;

(ग) क्या आप सहमत हैं कि धारा 376 के परन्तुक के स्थान पर निम्नलिखित परन्तुक प्रतिस्थापित किया जाए, अर्थातः—

“परन्तु, खंड (क) से खंड (छ) तक के अन्तर्गत आने वाले मामलों में, न्यायालय, ऐसे पर्याप्त और विशेष कारणों से, जो निर्णय में उल्लिखित किए जाएंगे, दोनों में से किसी भाँति के कारावास का, जिसकी अवधि दो वर्ष से कम नहीं होगी, दंडित किया जाएगा और जुमनि से भी दंडनीय होगा;

(घ) क्या आप सहमत हैं कि बालकों के साथ बलात्संग की घटनाओं में वृद्धि के कारण, भारतीय दंड संहिता की धारा 376 में बालकों के बलात्संग से संबंधित एक नई उपधारा अंतःस्थापित की जाए, जो निम्नवत होगी :—

“(3) जो कोई किसी स्त्री के साथ जिसकी आयु 12 वर्ष से कम है, बलात्संग करेगा, जिसकी अवधि 10 वर्ष से कम नहीं होगी, दंडित किया जाएगा और जुमनि से भी दंडनीय होगा;

परन्तु, न्यायालय ऐसे पर्याप्त और विशेष कारणों से, जो निर्णय में उल्लिखित किए जाएंगे, कारावास का, जिसकी अवधि दस वर्ष से कम की हो सकेगी, दंडादेश दे सकेगा।”

81. बालकों से संबंधित अपराध विधेयक धारा 376क से 326ख तक के पश्चात नई धारा 376ड का अंतःस्थापन :

(क) क्या आप सहमत हैं कि धारा 376ड को समाविष्ट किया जाए, जो निम्नवत है :—

“धारा 376ड जो कोई धारा 376क से 376ख तक (जिसमें दोनों धाराएं सम्मिलित हैं) के अधीन अपराध करेगा वह यदि स्त्री 18 वर्ष से कम आयु की है, तो दोनों में से किसी भाँति के कारावास से, जिसकी अवधि दस वर्ष तक की हो सकेगी, दंडित किया जाएगा, और जुमनि से भी दंडनीय होगा।”

छेड़छाड़ के अपराध और उसके लिए दंड के संबंध में एक नई धारा समाविष्ट करने का प्रस्ताव है :

(घ) क्या आप सहमत हैं कि निम्नलिखित धाराएं समाविष्ट की जाएं ?

376ख—छेड़छाड़ का अपराध :

जो कोई किसी स्त्री को रुप्त करने के आशय से कोई शब्द बोलेगा या कोई ध्वनि करेगा या संकेत करेगा या कोई वस्तु उपर्युक्त करेगा या किसी सार्वजनिक स्थान में इस आशय से कोई अन्य कार्य करेगा कि ऐसा शब्द या ध्व

जाएगी या ऐसा संकेत या वस्तु देखी जाएगी या ऐसा कार्य ऐसी स्त्री द्वारा देखा या महसूस किया जाएगा, वह छेड़छाड़ का अपराध करेगा।

82. नई धारा 376का अंतःस्थापन: छेड़छाड़ के लिए दंडः

जो कोई छेड़छाड़ का अपराध करेगा, वह दोनों में से, किसी भाँति के कारावास से, जिसकी अवधि पांच वर्ष तक की हो सकेगी, दंडित किया जाएगा और जुमनि से भी दंडनीय होगा।

83. धारा 376 खा का संशोधन: कार्य स्थल पर स्त्री का लैगिक उत्पीड़न

(क) क्या आप सहमत हैं कि भारतीय दंड संहिता में “कार्य स्थल पर स्त्री का लैगिक उत्पीड़न” के संबंध में नई धारा, अर्थात् 376क निम्नलिखित रीति में समाविष्ट की जाएः

“जो कोई कार्य के स्थल पर किसी स्त्री को लैगिक रूप से उत्पीड़ित करेगा, वह दोनों में से किसी भाँति के कारावास से, जिसकी अवधि 3 वर्ष तक की हो सकेगी, दंडित किया जाएगा या जुमनि से भी दंडनीय होगा।

(ख) एक स्पष्टीकरण जोड़े जाने के संबंध में, इस धारा के प्रयोजनार्थ “लैगिक उत्पीड़न” का क्या अर्थ होगा ?

84. धारा 377: प्रकृति विरुद्ध अपराध;

(क) क्या आप सहमत हैं कि विधि आयोग द्वारा जैसा उसकी 42वीं रिपोर्ट में सुझाया गया है धारा 377 के स्थान पर संशोधन विधेयक का निम्नलिखित खंड 160 प्रतिस्थापित किया जाएः

377. जो कोई किसी पुरुष या स्त्री के साथ प्रकृति की व्यवस्था के विरुद्ध स्वैच्छिक भोग करेगा वह दोनों में से किसी भाँति के कारावास से, जिसकी अवधि दो वर्ष तक की हो सकेगी, या जुमनि से, या दोनों से, दंडित किया जाएगा और जहाँ ऐसा अपराध अठारह वर्ष से अधिक आयु के व्यक्ति द्वारा ऐसे किसी व्यक्तित्व, जिसकी आयु इससे कम हो, के साथ किया जाता है, कारावास की अवधि सात वर्ष तक की हो सकेगी।

स्पष्टीकरण—बलात्संग के अपराध के लिए आवश्यक इन्द्रिय भोग गठित करने के लिए प्रवेश पर्याप्त है।

(ख) क्या आप सहमत हैं कि जहाँ अप्राप्यव्यय पर अपराध किसी वयस्क द्वारा किया जाता है, वहाँ न्यूनतम कारावास का दंड दस वर्ष तक की अवधि से कम विहित न किया जाएः

(ग) क्या मारतीय दंड संहिता में वयस्क की सम्मति से समलैगिक एक अपराध के रूप में बना रखना चाहिए ?

85. धारा 380 का संशोधन: निवास गृह आदि में चोरीः

“क्या धारा 380 में, उपासना के सार्वजनिक स्थान में लोक संपत्ति की चोरी सम्मिलित करने के लिए परिवर्तन आवश्यक है ?

86. नई धारा 380का अंतःस्थापनः

क्या ऐसे व्यक्ति, जो आग, दुर्घटना, भूकंप आदि जैसी आपदा से पीड़ित था, के कब्जे से चोरी करने के अपराध के लिए नई धारा 380क अंतःस्थापित की जा सकती है और क्या ऐसी किसी चोरी को गुरुतर चोरी के रूप में समझा जाना चाहिए ?

87. धारा 381 का संशोधनः लिपिक या सेवक द्वारा स्वामी के कब्जे की संपत्ति की चोरीः

जैसाकि आप वर्तमान धारा में पाते हैं, क्या आप धारा 381 का, सभी कर्मचारियों द्वाय न कि आवश्यक रूप से लिपिकों और सेवकों द्वारा की गई चोरियों को इसके अन्तर्गत लाने के लिए संशोधन करना चाहिए।

88. नई धारा 381का अन्तःस्थापनः

उन मामलों को समिलित करने के लिए क्या धारा 381क अंतःस्थापित की जा सकती है जहाँ पर अभियुक्त किसी व्यक्ति को, ऐसे व्यक्ति के कब्जे में किसी संपत्ति की चोरी करने के लिए किसी पेय या औषधि के द्वारा मरता या अचेतन की अवस्था में डालता है।

89. नई धारा 385का अंतःस्थापन ? मयादोहन द्वारा बेर्हमानी से धमकी देकर उद्धापनः

क्या ऐसे मामले को समिलित करने के लिए धारा 385क अंतःस्थापित की जा सकती है जहाँ अभियुक्त उद्धापन करने के लिए मयादोहन द्वारा बेर्हमानी से धमकी देता है ?

90. धारा 396 का संशोधनः छत्या संहिता डकैतीः

क्या धारा 396 में ऐसे व्यक्तियों में से, जो संयुक्त होकर डकैती कर रहे हों, प्रत्येक व्यक्ति को दायी बनाने के लिए संशोधन करना आवश्यक है और यदि उनमें से कोई एक हत्या करता है, ऐसे व्यक्तियों में हर व्यक्ति को दायी बनाया जाना चाहिए और उसे

मृत्यु से या आजीवन कारावास या कठिन कारावास जिसकी अवधि प्रस्तावित नई धारा 302 के खंडों में विनिर्दिष्ट परिस्थितियों में दस वर्ष तक की हो सकेगी, दंडित किया जाना चाहिए ? या क्या धारा 396 अपने वर्तमान रूप में स्थिति का सामना करने के लिए पर्याप्त है ?

91. नई धारा 399का अंतःस्थापनः डकैती करने के लिए तैयारी करनाः

क्या लूट करने के लिए तैयारी को भी दंडनीय बनाने के लिए एक नई धारा 399क अंतःस्थापित की जा सकती है ?

92. धारा 410 का संशोधनः चुराई गई संपत्तिः

क्या धारा 410 संशोधित या प्रतिस्थापित की जाए ताकि कुल या दुर्विनियोग द्वारा प्राप्त की गई संपत्ति को भी इसके अंतर्गत लाया जा सके और क्या “चुराई हुई संपत्ति” शब्दों की परिधि एक स्पष्टीकरण के रूप में स्पष्ट की जानी चाहिए ?

93. धारा 411 और 414 का संशोधनः

इस सरकार या स्थानीय प्राधिकारी या निगम की चुराई गई संपत्ति की बाबत अपराध को एक गुरुतर अपराध बनाने के लिए धारा 411 और 414 में एक अतिरिक्त कुल की परिमाण को और स्पष्ट करने के लिए क्या “किसी व्यक्ति को —— बपदानि” शब्दों के स्थान पर “अपदानि उस व्यक्ति को ——” शब्द प्रतिस्थापित किया जाना चाहिए जैसा कि विधेयक के खंड 177 में सुझाया गया है।

94. नई धारा 420का अंतःस्थापनः

विधि आयोग ने, “भारतीय दंड संहिता में कठिपय सामाजिक और आर्थिक अपराधों को शामिल करने के प्रस्ताव संबंधी अपनी 29वीं रिपोर्ट में इस बात पर विचार किया कि बेर्हमान ठेकेदारों द्वारा बड़े पैमाने पर सरकार, निगम, स्थानीय प्राधिकरण के साथ छल करने की समस्या से किस प्रकार निपटा जाए, इस विभीषिका का मुकाबला करने के लिए एक नई धारा 420को अंतःस्थापित करने की सिफारिश की जाती है। क्या इस संबंध में कोई और परिवर्तन आवश्यक है ?

95. गई धारा 420ख का अंतःस्थापनः कर्मचारी द्वारा नियोजक के या उस व्यक्ति के, जिसने उसे नियुक्त किया, कार्यकलापों या कारबार के संबंध में रिश्वत लेना।

पूर्वोक्त कार्य को रोकने के लिए क्या ऐसे कार्य के लिए दंड का उपबंध करने वाला दंड संहिता में एक पृथक उपबंध होना चाहिए। इंगिलिश परिनियम के आदर्श पर विधि आयोग ने, प्राविवेट व्यक्तियों द्वारा भी, उनके नियोजक के कार्यकलाप या कारबार के संबंध में रिश्वत लेने के मामलों को समाविष्ट करने के लिए सिफारिश की थी। इस संबंध में, आपके सुझाव बहुत सहायक होंगे।

96. धारा 426 से 432 तक के स्थान पर नई धाराओं का अंतःस्थापनः रिष्टिः

क्या आप विधि आयोग की भारतीय दंड संहिता संबंधी उसकी 42वीं रिपोर्ट में की गई सिफारिश और भारतीय दंड संहिता (संशोधन) विधेयक, 1978 के खंड 179 से सहमत हैं कि “रिष्टि” के अपराध के उपबंधों को अधिक स्पष्ट और व्यापक बनाने तथा दंड की मात्रा को बढ़ाने के लिए, दंड संहिता की धारा 434 से 438 के स्थान पर नई धाराएं अंतःस्थापित की जाएः यदि हाँ, तो विभिन्न धाराओं के अधीन की मात्रा क्या होनी चाहिए और संशोधित किए जाने वाले सभी उपबंध क्या हैं ?

97. धारा 434 से 437 तक के स्थान पर नई धारा का प्रतिस्थापनः रिष्टिः

क्या आप विधि आयोग की भारतीय दंड संहिता संबंधी उसकी 42वीं रिपोर्ट में की गई सिफारिश और भारतीय दंड संहिता (संशोधन) विधेयक, 1978 के खंड 180 से सहमत हैं कि रिष्टि के अपराध के उपबंधों को और स्पष्ट तथा व्यापक बनाने के लिए और दंड की मात्रा बढ़ाने के लिए दंड संहिता की धारा 434 से 438 तक के स्थान पर नई धाराएं रखी जाएँ। यदि हाँ, तो विभिन्न धाराओं के अधीन दंड की मात्रा क्या होनी चाहिए और वे सभी उपबंध किए हैं जिनका संशोधन किया जाएँ ?

98. धारा 441 के स्थान पर नई धारा का प्रतिस्थापनः आपराधिक अविचारः

क्या आप सहमत हैं कि विधि आयोग द्वारा, भारतीय दंड संहिता संबंधी उसकी 42वीं रिपोर्ट में की गई सिफारिश और भारतीय दंड संहिता (संशोधन) विधेयक, 1978 के खंड 181 को देखते हुए, भारतीय दंड संहिता की धारा 441 के अधीन आने वाले “अतिचार” शब्द की परिमाण द्वारा प्रतिस्थापित किया जाए, अर्थात् :-

“445. जो कोई :-

(क) ऐसी संपत्ति में या ऐसी संपत्ति पर जो किसी दूसरे के कब्जे में है, इस आशय से प्रवेश करता है कि वह कोई अपराध करे या किसी व्यक्ति को जिसके कब्जे में ऐसी संपत्ति है, अभियन्त, अपमानित या क्षुब्ध करे, अधावा

(ख) ऐसे आशक्य के बिना, ऐसी संपत्ति में अथवा ऐसी संपत्ति पर प्रवेश करके वहां विधिविरुद्ध रूप में इस आशय से बना रहता है,

वह, “आपराधिक अतिचार” करता है, यह कहा जाता है।

99. धारा 443 से 450 के स्थान पर नई धाराओं का प्रतिस्थापन :

क्या आप सहमत हैं कि दंड संहिता की धारा 443 से 450 तक के स्थान पर निम्नलिखित धाराएं प्रतिस्थापित की जाएं, जिससे कि दंड की मात्रा बढ़ाई जा सके और कुछ अपराधों की परिमाण और स्पष्ट की जा सके। जैसाकि विधि आयोग द्वारा भारतीय दंड संहिता संबंधी उसकी 42वीं रिपोर्ट और भारतीय दंड संहिता (संशोधन) विधेयक, 1978 के खंड 185 द्वारा भी सुझाया गया है।

“443. कोई व्यक्ति सेधमारी करता है, यदि—

(क) वह चोरी करने के लिए गृह-अतिचार करता है, अथवा

(ख) गृह-अतिचार करने पर वह चोरी करता है।

444. जो कोई—

(क) सात वर्ष या उससे अधिक के कारावास से दंडनीय कोई अपराध करने के लिए गृह-अतिचार करेगा; या

(ख) गृह-अतिचार करके पूर्वोक्त प्रकार का कोई अपराध करेगा वह कठिन कारावास से जिसकी अवधि दस वर्ष तक की हो सकेगी दंडित किया जाएगा और जुमनि का भी दायी होगा।

445. जो कोई आपराधिक अतिचार करेगा वह दोनों में से किसी भाँति के कारावास से जिसकी अवधि छह मास तक की हो सकेगी, या जुमनि से, या दोनों से, दंडित किया जाएगा।

446. जो कोई आपराधिक अतिचार करेगा, वह दोनों से से, किसी भाँति के कारावास से, जिसकी अवधि तीन वर्ष तक की हो सकेगी, या जुमनि से, या दोनों से, दंडित किया जाएगा।

447. जो कोई—

(क) किसी व्यक्ति को उपहारि करने की, या किसी व्यक्ति पर हमला करने की, या किसी व्यक्ति का सदोष अवरोध करने की तैयारी करके; अथवा

(ख) किसी व्यक्ति को उपहारि के, या हमले के, या सदोष अवरोध के भय में ढालने की तैयारी करके; गृह-अतिचार करेगा, वह दोनों में से किसी भाँति के कारावास से, जिसकी अवधि सात वर्ष तक की हो सकेगी, दंडित किया जाएगा, और जुमनि से भी दंडनीय होगा।

448. जो कोई सेधमारी करेगा, वह कठिन कारावास से, जिसकी अवधि दस वर्ष तक की हो सकेगी, दंडित किया जाएगा और जुमनि से भी दंडनीय होगा।

449. जो कोई सेधमारी या धारा 444 के अधीन अपराध करते समय—

(क) किसी व्यक्ति की घोर उपहारि करित करेगा, अथवा

(ख) किसी व्यक्ति की मृत्यु या उसको घोर उपहारि करित करने का प्रयत्न करेगा,

वह आजीवन कारावास से या कठिन कारावास से जिसकी अवधि दस वर्ष तक की हो सकेगी, दंडित किया जाएगा और जुमनि से भी दंडनीय होगा।

450. यदि सेधमारी या धारा 444 के अधीन अपराध करते समय, ऐसे अपराध का दोषी कोई व्यक्ति स्वैच्छया किसी व्यक्ति की मृत्यु या घोर उपहारि करेगा, या मृत्यु या घोर उपहारि करित करने का प्रयत्न करेगा, तो ऐसे अपराध में संयुक्त हर व्यक्ति आजीवन कारावास से, या ऐसे कठिन कारावास से, जिसकी अवधि दस वर्ष तक की हो सकेगी, दंडित किया जाएगा और जुमनि से भी दंडनीय होगा।

100. धारा 464 का संशोधन: मिथ्या दस्तावेज की रचना :

क्या आप विधि आयोग की भारतीय दंड संहिता संबंधी उसकी 42वीं रिपोर्ट और भारतीय दंड संहिता (संशोधन) विधेयक, 1978 के खंड 184 से सहमत हैं कि भारतीय दंड संहिता की धारा 464 में, (क) पहले पैरा में, “ऐसे समय” शब्दों के पश्चात “या स्थान पर जब ऐसा समय या स्थान तात्परि है” शब्द अंतःस्थापित किए जाएंगे, (ख) दूसरे पैरा में, “रद्द करने” शब्दों के पश्चात “जोड़ने, मिटाने” शब्द अंतःस्थापित किए जाएंगे।

101. धारा 405 का संशोधन: कूट रचना के लिए दंड:

क्या आप सहमत हैं कि “कूट रचना” के अपराध के दंड की गंभीरता को ध्यान में रखते हुए, दंड संहिता की धारा 465 के अधीन उपबंधित कारावास की अधिकतम अवधि “दो वर्ष” के स्थान पर “तीन वर्ष” प्रतिस्थापित की जाए, जैसाकि विधि आयोग द्वारा भारतीय दंड संहिता संबंधी उसकी 42वीं रिपोर्ट और भारतीय दंड संहिता (संशोधन) विधेयक, 1978 के खंड 185 द्वारा भी सुझाया गया है।

102. धारा 466 का संशोधन: न्यायालय के अभिलेख की या लोक रजिस्टर आदि की कूट रचना :

क्या आप विधि आयोग की भारतीय दंड संहिता संबंधी उसकी 42वीं रिपोर्ट में की गई सिफारिश और भारतीय दंड संहिता (संशोधन) विधेयक, 1978 के खंड 186 से सहमत हैं कि दंड संहिता की धारा के अधीन (क) “जो कोई ऐसी दस्तावेज की” शब्दों के (संशोधन) विधेयक, 1978 के खंड 186 से सहमत हैं कि दंड संहिता की धारा के अधीन (क) “जो कोई ऐसी दस्तावेज की” शब्दों पर समाप्त होने वाले भाग के स्थान पर “जो कोई ऐसी दस्तावेज के बारे में कूट रचना करेगा जो किसी न्यायालय का या न्यायालय में संपर्कित है, या जन्म बनियस्मा, विवाह या अंतर्योग्य का रजिस्टर

रचना करेगा जो किसी न्यायालय का या न्यायालय में संपर्कित है, या जन्म बनियस्मा, विवाह या अंतर्योग्य का रजिस्टर

क्या आप विधि आयोग की भारतीय दंड संहिता संबंधी उसकी 42वीं रिपोर्ट में की गई सिफारिश और 1978 के विधेयक में सुझाए गए संशोधन से सहमत हैं कि दंड संहिता की धारा 467 में (क) “जो कोई किसी ऐसी दस्तावेज” से प्रारंभ होकर “कूट रचना करेगा” शब्दों पर समाप्त होने वाले भाग के स्थान पर “जो कोई ऐसी दस्तावेज के बारे में, कूट रचना करेगा, जो कोई मूल्यवान प्रतिभूति या विल या किसी व्यक्ति के दस्तक ग्रहण का प्राधिकार है या जिसका इस प्रकार होना तात्पर्यित है अथवा जो किसी मूल्यवान प्रतिभूति की रचना या अंतरण का, उस पर के मूलधन, व्याज या लाभांश को प्राप्त करने का, या किसी धन, जंगम संपत्ति या मूल्यवान प्रतिभूति को प्राप्त करने या परिदृष्ट करने का, अधिकार है या जिसका इस प्रकार होना तात्पर्यित है, अथवा किसी दस्तावेज की, जो धन दिए जाने की अभिस्वीकृति करने वाला निस्तारण पत्र या रसीद है, या किसी जंगम संपत्ति या मूल्यवान प्रतिभूति के परिवान के लिए निस्तारण पत्र या रसीद है” शब्द रखे जाएंगे; (ख) “या कोई दस्तावेज जिसका निस्तारण पत्र होना तात्पर्यित है” शब्द प्रतिस्थापित किए जाएंगे; (ग) “आजीवन कारावास से, या” शब्द का लोप किया जाएगा।

103. धारा 467 का संशोधन: मूल्यवान प्रतिभूति या विल, आदि की कूट रचना :

क्या आप विधि आयोग की भारतीय दंड संहिता संबंधी उसकी 42वीं रिपोर्ट में की गई सिफारिश और 1978 के विधेयक में सुझाए गए संशोधन से सहमत हैं कि दंड संहिता की धारा 467 में (क) “जो कोई किसी ऐसी दस्तावेज” से प्रारंभ होकर “कूट रचना करेगा” शब्दों पर समाप्त होने वाले भाग के स्थान पर “जो कोई ऐसी दस्तावेज के बारे में, कूट रचना करेगा, जो कोई मूल्यवान प्रतिभूति या विल या किसी व्यक्ति के दस्तक ग्रहण का प्राधिकार है या जिसका इस प्रकार होना तात्पर्यित है अथवा जो किसी मूल्यवान प्रतिभूति की रचना या अंतरण का, उस पर के मूलधन, व्याज या लाभांश को प्राप्त करने का, या किसी धन, जंगम संपत्ति या मूल्यवान प्रतिभूति को प्राप्त करने या परिदृष्ट करने का, अधिकार है या जिसका इस प्रकार होना तात्पर्यित है, अथवा किसी दस्तावेज की, जो धन दिए जाने की अभिस्वीकृति करने वाला निस्तारण पत्र या रसीद है, या किसी जंगम संपत्ति या मूल्यवान प्रतिभूति के परिवान के लिए निस्तारण पत्र या रसीद है” शब्द रखे जाएंगे; (ख) “या कोई दस्तावेज जिसका निस्तारण पत्र होना तात्पर्यित है” शब्द प्रतिस्थापित किए जाएंगे; (ग) “आजीवन कारावास से, या” शब्द का लोप किया जाएगा।

104. धारा 470 और 471 का प्रतिस्थापन: कूट रचित दस्तावेज और कूट रचित दस्तावेज को असली के रूप में आयोग में लाना :

क्या आप सहमत हैं कि भारतीय दंड संहिता की धारा 470 और 471 के स्थान पर निम्नलिखित धाराएं प्रतिस्थापित की जाएं जैसाकि भारतीय दंड संहिता (संशोधन) विधेयक, 1978 के खंड 187 में प्रस्तावित हैं:

“470. कोई दस्तावेज जिसके या जिसके किसी भाग के बारे में कूट रचना की जाती है, कूट रचित दस्तावेज कहलाती है।

471. जो कोई किसी ऐसी दस्तावेज को, जिसके बारे में वह यह जानता है या उसे यदि विश्वास करने का कारण है कि वह कूट रचित दस्तावेज है, कपटपूर्वक या बेर्डमानी से असली के रूप में उपयोग में लाएगा, वह—

(क) यदि दस्तावेज धारा 467 में उल्लिखित वर्णन का है तो कठिन कारावास से, जिसकी अवधि दस वर्ष तक की हो सकेगी दंडित किया जाएगा और जुमनि से भी दंडनीय होगा; और

(ख) किसी अन्य दशा में, किसी भाँति के कारावास से, जिसकी अवधि तीन वर्ष तक की हो सकेगी या जुमनि से या दोनों से दंडित किया जाएगा।

105. धारा 473 का संशोधन :

क्या आप विधि आयोग की भारतीय दंड संहिता संबंधी उसकी 42वीं रिपोर्ट में की गई सिफारिश और भारतीय दंड संहिता (संशोधन) विधेयक, 1978 के खंड 189 से सहमत हैं कि भारतीय दंड संहिता की धारा

“474. जो कोई धारा 466 या 467 में उल्लिखित वर्णन की किसी दस्तावेज को, उसे कूट रचित जानते हुए और यह आशय रखते हुए कि वह कपटपूर्वक या बेर्हमानी से असली रूप में उपयोग में लाई जाएगी, अपने कब्जे में रखेगा, वह कठिन कारावास से जिसकी अवधि सात वर्ष तक की हो सकेगी, दंडित किया जाएगा और जुमनि से भी दण्डनीय होगा।”

#### 107. धारा 476 का संशोधन :

क्या आप विधि आयोग द्वारा भारतीय दंड संहिता संबंधी उसकी 42वीं रिपोर्ट में की गई सिफारिश और भारतीय दंड संहिता (संशोधन) विधेयक, 1978 के खंड 191 से सहमत हैं कि दंड संहिता की धारा 476 में “सात वर्ष” शब्दों के स्थान पर “दस वर्ष” शब्द रखे जाएंगे।

#### 108. धारा 477 का संशोधन :

क्या आप विधि आयोग द्वारा भारतीय दंड संहिता संबंधी उसकी 42वीं रिपोर्ट में की गई सिफारिश और भारतीय दंड संहिता (संशोधन) विधेयक, 1978 के खंड 197 से सहमत हैं कि दंड संहिता की धारा 476 में (क) क्या पुत्र या पुत्र के दत्तक ग्रहण करने का प्राधिकार पत्र किसी व्यक्ति पर या किसी व्यक्ति के दत्तक ग्रहण का प्राधिकार शब्द और (ख) “आजीवन कारावास से या” शब्दों का लोप किया जाए; (ग) “सात वर्ष” शब्दों के स्थान पर “दस वर्ष”, शब्द रखे जाएं।

#### 109. धारा 477क का संशोधन :

क्या आप भारतीय दंड संहिता संबंधी उसकी 42वीं रिपोर्ट में की गई सिफारिश और भारतीय दंड संहिता (संशोधन) विधेयक, 1978 के खंड 193 में दिए गए सुझाव से सहमत हैं कि दंड संहिता की धारा 477क में लिपिक, आफिसर या सेवक होते हुए कि दंड संहिता की धारा 476 में लिपिक, आफिसर या सेवक के नाते नियोजित होते हुए या कार्य करते हुए “शब्दों के स्थान पर किसी भी दैसियत में नियोजित होते हुए और उस दैसियत में कार्य करते हुए” शब्द रखे जाएं।

#### 110. धारा 489क का संशोधन :

क्या आप भारतीय दंड संहिता संबंधी उसकी 42वीं रिपोर्ट में की गई सिफारिश और भारतीय दंड संहिता संबंधी उसकी 42वीं रिपोर्ट में दिए गए सुझाव और भारतीय दंड संहिता (संशोधन) विधेयक, 1978 के खंड 194 से सहमत हैं कि दंड संहिता की धारा 477क में (क) स्पष्टीकरण को स्पष्टीकरण-1 के रूप में संख्याक्रित स्पष्टीकरण में “और इसके अन्तर्गत यात्री चैक भी है” शब्द अंतःस्थापित किए जाएंगे; (ख) निम्नलिखित को स्पष्टीकरण-2 के रूप में अंतःस्थापित करने के लिए एतद्वारा यह घोषित किया जाता है: इस धारा में और धारा 489ख; धारा 489ग; धारा 489घ और 489इ में “करेंसी नोट”; पद के अन्तर्गत विवेशी करेंसी नोट भी है?

#### 111. नई धारा 489क का अंतःस्थापन :

क्या आप इस सुझाव से सहमत हैं कि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 489क से लेकर 489इ, तक के अधीन दण्डनीय कोई अपराध करने के लिए तैयारी करने के अपराध को समाविष्ट करने के लिए एक नया उपबंध, निम्नलिखित रीति से अंतःस्थापित किया जाए, जैसाकि भारतीय दंड संहिता (संशोधन) विधेयक, 1978 के खंड 196 में उपबंधित है—

“489च. जो कोई धारा 489क से लेकर 489इ, तक के अधीन दण्डनीय कोई अपराध करने के लिए कोई तैयारी करेगा वह कारावास से जिसकी अवधि उस अपराध के लिए उपबंधित कारावास के आधे के बराबर हो सकेगी, या जुमनि से, अथवा दोनों से, दंडित किया जाएगा।”

#### 472. अध्याय 19 के स्थान पर नए अध्याय का प्रतिस्थापन: एकान्तता संबंधी अपराध :

क्या आप सहमत हैं कि उच्चतम न्यायालय द्वारा यथा अभियन्ति एकान्तता के लिए लोगों की खोज संबंधी दृष्टिकोण को ध्यान में रखते हुए, अध्याय 19 के स्थान पर “सेवा संविदाओं के आपराधिक भंग के विषय में” एक नया अध्याय प्रतिस्थापित किया जाए क्योंकि अब वह व्यावहारिक उपयोग का नहीं रह गया है जैसाकि विधि आयोग द्वारा उसकी 42वीं रिपोर्ट में सिफारिश की गई है और जो भारतीय दंड संहिता (संशोधन) विधेयक, 1978 के खंड 197 में निम्नलिखित रूप में समाविष्ट है:—

#### “अध्याय 19

#### एकान्तता संबंधी अपराध

490(1). जो कोई, यह जानते हुए कि कोई कृत्रिम श्रवण या अभिलेख साधित्र किसी परिसर के कब्जाधारी व्यक्ति के जान और सम्मति के बिना उसके समीप लगा दिया गया है, ऐसे साधित्र की सहायता से किसी वार्तालाप को सुनेगा या किसी वार्तालाप को अभिलिखित करने के लिए ऐसे साधित्रों का प्रयोग करेगा, वह दोनों में से किसी भांति के कारावास से, जिसकी अवधि छह मास तक की हो सकेगी, या जुमनि से, या दोनों से, दण्डनीय होगा।

(2) जो कोई किसी वार्तालाप को यह उसके अभिलेख को यह जानते हुए कि वह किसी परिसर के कब्जाधारी व्यक्ति के जान या सम्मति के बिना उस परिसर में या उसके समीप लगा गए कृत्रिम श्रवण या अभिलेख साधित्र की सहायता से सुना गया या अभिलिखित किया गया था, प्रकाशित करेगा, वह दोनों में से किसी भांति के कारावास से, जिसकी अवधि एक वर्ष की हो सकेगी, या जुमनि से, या दोनों से, दण्डनीय होगा।

491. (1) जो कोई किसी व्यक्ति को क्षुब्ध करने के आशय से या यह संभाव्य जानते हुए कि वह किसी व्यक्ति को क्षुब्ध करेगा, उस व्यक्ति का सार्वजनिक स्थान से अन्यत्र उसकी सम्मति के बिना कोई फोटोचित्र लेगा तो वह साता कारावास से, जिसकी अवधि छह मास तक की हो सकेगी, या जुमनि से, या दोनों से, दण्डनीय होगा।

(2) जो कोई, किसी व्यक्ति को क्षुब्ध करने के आशय से या यह संभाव्य जानते हुए कि वह किसी व्यक्ति को क्षुब्ध करेगा, उपधारा (1) के उल्लंघन में लिए गए उस व्यक्ति के किसी फोटोचित्र को प्रकाशित करेगा वह साता कारावास से, जिसकी अवधि एक वर्ष तक की हो सकेगी या जुमनि से, या दोनों से, दण्डनीय होगा।

(3) जो कोई किसी स्थान, भवन या चौज का फोटोचित्र यह जानते हुए लेगा कि ऐसे फोटोचित्र लेना ऐसी लिखित सूचना द्वारा प्रतिषिद्ध है जो ऐसे स्थान, भवन या चौज पर लगाई गई है, वह, उस दशा के सिवाय जबकि ऐसे फोटोचित्र का लिया जाना ऐसे स्थान, भवन या चौज के स्थानियों या अधिमोगी द्वारा विनिर्दिष्ट रूप से प्राधिकृत या अनुज्ञात है, साते कारावास से जो छह मास तक का हो सकेगा, या जुमनि से, अथवा दोनों से, दण्डनीय होगा।

(4) जो कोई उपधारा (3) का उल्लंघन करके लिए गए किसी फोटोचित्र का जानबूझकर प्रकाशन करेगा वह साते कारावास से जिसकी अवधि छह मास तक की हो सकेगी, या जुमनि से अथवा दोनों से, दण्डनीय होगा।

#### 492. धारा 490 या 491 की कोई भी बात—

(क) किसी ऐसे लोक सेवक को लागू न होगी जो राज्य की सुरक्षा से अपराधों के निवारण, उनका पता लगाने या उनके अन्वेषण से, न्याय प्रशासन से, या लोक व्यवस्था बनाए रखने से संबंधित अपने कर्तव्यों के अनुक्रम में सहमावपूर्वक कार्य कर रहा हो; या

(ख) उन व्यक्तियों को लागू न होगी, जो ऐसे लोक सेवक के निवेशों के अधीन कार्य कर रहे हो; या

(ग) किसी व्यक्ति द्वारा किसी ऐसे कृत्रिम सुनने या अभिलेखन करने के साधित्र के किसी ऐसे प्रयोजन के लिए उपयोग को लागू नहीं होगी जो किसी विधि के अधीन प्राधिकृत या अनुज्ञात हो।

#### 113. धारा 494 के स्थान पर नई धारा का प्रतिस्थान: द्विविवाह:

(क) क्या आप सहमत हैं कि भौराव बनाम महाराष्ट्र राज्य (ए आई आर 1965-एस सी 1964) के मामले में, उच्चतम न्यायालय के विनिश्चय के परिणामस्वरूप, दंड संहिता में धारा 494 में स्पष्टीकरण-1 निम्नलिखित रीति में जोड़ा जाए:—

स्पष्टीकरण 1—इस धारा के प्रयोजनों के लिए किसी व्यक्ति के बारे में यह समझा जाएगा कि उसने पुनः विवाह किया है, भले ही ऐसा पश्चात्वर्ती विवाह करने, अनुष्ठित करने या निष्पादित करने में कोई भी विधिक त्रुटि हो।

(ख) क्या आप सहमत हैं कि विधि आयोग की सिफारिशों के परिणामस्वरूप धारा 494 में स्पष्टीकरण-2 जोड़ा जाए, जिसके द्वारा यह स्पष्ट किया गया है कि जहां सुसंगत विवाह-विच्छेद विधि विवरण की दिक्की के पश्चात एक विनिर्दिष्ट अवधि के मीतर किसी पक्षकार को पुनः विवाह करने से प्रतिषिद्ध करती है, ऐसा पुनर्विवाह निम्नलिखित रीति में द्विविवाह की कोटि में आता है:—

स्पष्टीकरण 2—जहां किसी सक्षम न्यायालय की दिक्की द्वारा विवाह का विघटन हो गया है किन्तु पक्षकार उस अधिनियमिति के उपबंध के आधार पर, जिसके अधीन उसका विवाह विघटित हुआ है, विनिर्दिष्ट अवधि के द्वारा पुनः विवाह करने से प्रतिषिद्ध है वहां इस धारा के प्रयोजनों के लिए यह समझा जाएगा कि विघटन के होते हुए भी, उस अवधि में अस्तित्वान है। ए आई आर 1995 एस सी 1531 में रिपोर्ट किए गए सरला मुद्राल के मामले में उच्चतम न्यायालय द्वारा अधिकथित किए गए सिद्धान्त को समाविष्ट करते हुए, धारा 494 में स्पष्टीकरण 3 जोड़ा जाना प्रस्तावित है। स्पष्टीकरण-3 को निम्नलिखित रूप में पढ़ा जाए:—

“स्पष्टीकरण 3—जब कोई व्यक्ति पूर्वतर विवाह के विवाहान रहने के द्वारा पुनः विवाह करने के प्रयोजन के लिए किसी अन्य धर्म में स्वयं को संपरिवर्तित करता है या करती है, तो वह अपराध करता है।”

#### 114. धारा 497 के स्थान पर नई धारा का प्रतिस्थापन: जारकम:

क्या आप सहमत ह

धारा 497 : जो कोई ऐसे व्यक्ति के साथ जो, यथास्थिति, किसी अन्य व्यक्ति की पत्ती या पति है और जिसका किसी अन्य व्यक्ति की पत्ती या पति होना यह जानता है या जिसे यह विश्वास करने का कारण है, उस व्यक्ति की सम्मति, या मौनानुकूलता के बिना ऐसा मैथुन करेगा, जो बलात्संग के अपराध की कोटि में नहीं आता, वह जारकर्म करता है, और दोनों में से किसी भाँति के कारावास से, जिसकी अवधि पांच वर्ष तक की हो सकेगी, या जुमनि से, या दोनों से देढ़नीय होगा" क्या आप संशोधन से सहमत हैं?

115. धारा 501 और 592 का संशोधन: मानवानि के विषय में:

क्या आप विधि आयोग द्वारा भारतीय दंड संहिता संबंधी उसकी 42वीं रिपोर्ट में दिए गए सुझाव और भारतीय दंड संहिता (संशोधन) विधेयक, 1978 के खंड 202 से सहमत हैं कि दंड संहिता की धारा 501 और 502 में "सादा कारावास" शब्दों के स्थान पर "दोनों में से किसी भाँति के कारावास" शब्द रखे जाएं।

116. निरसन और व्यावृत्ति: भारतीय दंड संहिता (संशोधन) अधिनियम, 1978 और दंड विधि (संशोधन) अधिनियम, 1978

क्या आप भारतीय दंड संहिता (संशोधन) विधेयक, 1978 के खंड 207 में जैसा उपबंधित है उससे सहमत हैं, अर्थात् :—

(1) भारतीय दंड संहिता (संशोधन) अधिनियम, 1978 के प्रारंभ से दण्ड विधि संशोधन अधिनियम, 1978 निरसित हो जाएगा।

(2) साधारण खण्ड अधिनियम, 1897 की धारा 6 के उपबंध उपधारा (1) में निर्दिष्ट अधिनियमिति के निरसन के पश्चात् किसी अन्वेषण, विधिक कार्यवाही या उपचार के संबंध में जो संस्थित किया जाए, चालू रखा जाए या प्रवर्तित किया जाए, यथाशक्य लागू होगे।

117. नई धारा 507 का अंतःस्थापन: जनता के दृष्टिगोचर स्थानों को नुकसान, आदि कारित करना:

क्या आप सहमत हैं कि नई धारा, अर्थात्, धारा 507 को, जो जनता के दृष्टिगोचर स्थानों को नुकसान आदि करने के प्रति निर्देशित है, निम्नलिखित शब्दों में समाविष्ट किया जाए :—

507क. (1) जो कोई—

(क) जनता के दृष्टिगोचर स्थान पर कोई आक्रोणीय वस्तु लगाएगा, या लिखेगा या प्रदर्शित करेगा, या

(ख) जनता के दृष्टिगोचर स्थान को नुकसान पहुंचाएगा, नष्ट करेगा या विरुद्धित करेगा, वह दोनों में से किसी भाँति के कारावास से जिसकी अवधि दो वर्ष तक की हो सकेगी या जुमनि से या दोनों से दंडित किया जाएगा।

(2) इस धारा में—

(क) "जनता के दृष्टिगोचर स्थान" के अन्तर्गत कोई प्रावेट स्थान या मवन, स्मारक, मूर्ति, स्तम्भ, दीवार, बाड़, वृक्ष या अन्य वस्तु या प्रयुक्ति जो किसी सार्वजनिक स्थान में उपस्थित या वहाँ से जाते हुए व्यक्ति को दिखाइ पड़ती है;

(ख) "आक्रोणीय वस्तु" से कोई पुतला या कोई पर्ची, सूचना, दस्तावेज, पत्र या अन्य वस्तु अभिप्रेत है जिसमें कोई शब्द, चिह्न या दृश्यलेपण है,—

(i) जिससे हत्या करने के लिए, या अभिघास करने के लिए या हिंसात्मक अपराध करने के लिए किसी व्यक्ति के उद्दीप्त होने की सम्भाव्यता है; या

(ii) जिससे संघ के सशस्त्र बलों में से किसी के सदस्य के या पुलिस बल के किसी सदस्य के उपने कर्तव्य या निष्ठा से विलुब्ध होने की सम्भाव्यता है, या ऐसे किसी बल में सेवा करने के लिए व्यक्तियों की मर्ती या ऐसे किसी बल के अनुशासन पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ने की सम्भाव्यता है; या

(iii) जिससे जनता के किसी वर्ग के उसके किसी अन्य वर्ग के विरुद्ध उद्दीप्त होने की सम्भाव्यता है; या

(iv) जो भारत के नागरिकों के किसी वर्ग की धार्मिक भावनाओं को उस वर्ग के धर्म या धार्मिक विश्वासों का अपमान करके या धर्म निन्दा करके या उपहास करके अर्हित करने के लिए विमर्शत आशयित है; या

(v) जो धोर अशिष्ट, या भद्वा या अश्लील है या भयादेहन के लिए आशयित है।"

क्या आप इस धारा के समावेशन से सहमत हैं?

118. धारा 510 का संशोधन: मत व्यवित द्वारा लोक स्थान में अवचार:

क्या आप सहमत हैं कि ऐसे अपराध (अवचार) जो साधारणतः विचारणीय नहीं है के लिए धारा 510 में "सादा कारावास से, जिसकी अवधि चौबीस घंटे तक की हो सकेगी, या जुमनि से, जो दस रुपए तक का हो सकेगा, या दोनों से" शब्दों के स्थान पर "न्यायालय के उठने तक के लिए कारावास से या जुमनि से, जो एक सौ रुपए तक का हो सकेगा" शब्द रखे जाए, जैसा भारतीय दंड संहिता (संशोधन) विधेयक, 1978 के खंड 205 में उपबंधित है?

119. अध्याय 23 का लोप: अपराधों को करने के प्रयत्नों के विषय में:

क्या आप सहमत हैं कि दंड संहिता के "अपराधों को करने के प्रयत्नों के विषय में" अध्याय 23 (धारा 511) का, इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए लोप किया जाए, भारतीय दंड संहिता (संशोधन) विधेयक, 1978 के खंड 45 में इस बारे में जैसी सिफारिश की गई है कि नया अध्याय 5ख "प्रयत्न" को सम्मिलित करने के लिए सिफारिश की गई है।

## उपांध 2

तारीख 26-12-95 के अंदर शासकीय पत्र सं 6(3)195-एल० सी० (एल० एस०) द्वारा  
भारतीय दंड संहिता से संबंधित कार्यपत्र

डा० एस० सी० श्रीवास्तव  
संयुक्त सचिव और  
विधि अधिकारी

ल० शा० सं 6(3)195-एल० सी० (एल० एस०)  
भारत सरकार  
विधि, न्याय और कंपनी कार्य मंत्रालय,  
विधि कार्य विभाग,  
भारत का विधि आयोग, शास्त्री भवन,  
नई दिल्ली-110 001  
टेली० : 3385931  
तारीख : 26-12-95

महोदय,

भारत सरकार ने, भारतीय दंड संहिता, 1860 का व्यापक पुनरीक्षण आरंभ करने और समुचित सिफारिश प्रस्तुत करने के लिए भारत के विधि आयोग को निर्देश किया है।

भारतीय दंड संहिता, जो भारत की आधारभूत दंड विधि है, 135 वर्ष से भी अधिक पुरानी है। तथापि, संहिता, समय-समय पर विकसित अपराधों के विभिन्न रूपों को समाविष्ट करने के लिए बार-बार संशोधित की गई थी।

भारत के विधि आयोग ने, "भारतीय दंड संहिता" संबंधी अपनी 42वीं रिपोर्ट, जून, 1971 में प्रस्तुत की थी जिसमें भारतीय दंड संहिता का संशोधन करने के लिए व्यापक सिफारिशों की गई थी। इन सिफारिशों को कार्यान्वित करने के लिए, भारत सरकार ने एक व्यापक विधेयक, अर्थात् भारतीय दंड संहिता (संशोधन) विधेयक, 1978 पुरास्थापित किया, जिसे राज्य समा ने, नवम्बर, 1978 में पारित कर दिया था। तथापि, लोक सभा में इसे पारित नहीं किया जा सका क्योंकि वह 1979 में विधित हो गई थी।

राष्ट्रीय महिला आयोग ने भी इस विषय पर कतिपय सिफारिशों की हैं। उपरोक्त को ध्यान में रखते हुए, विधि आयोग ने, भारतीय दंड संहिता का व्यापक पुनरीक्षण करने के लिए अध्ययन करना आरंभ किया ताकि कमियों को दूर और समाज की वर्तमान आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए विधि को अद्यतन किया जा सके।

कुछ मुख्य विषय जिनकी ओर ध्यान आकर्षित किया गया है, निम्नलिखित हैं:—

#### 1. सामान्य आशय और सामान्य उद्देश्य—द्वारा 34 और 149:

ऐसे मामले में जब धारा 34 या 149 को लागू करके अभियुक्तों का आन्वयिकतः विचारण किया जाता है और उनमें से कुछ किसी आधार पर या अन्य आधार पर दोषमुक्त कर दिए जाते हैं, शेष जिनकी भागीदारी-यद्यपि संयुक्ततः स्थापित हो जाती है, को भी इस साधारण आधार पर दोषमुक्त कर दिया जाता है कि ऐसे अभियुक्तों की अपेक्षित संख्या दो या पांच से कम है।

इसलिए इस बात की ओर जांच करने की आवश्यकता है कि क्या धारा 34 और 149 को इस प्रकार संशोधित किया जाए कि एकल अभियुक्त को भी किसी अपराध का अन्तर्तः आन्वयिक रूप से दायी बनाया जाए जब भले ही ऐसे अभियुक्त को अन्य अभियुक्तों के साथ आरोपित किया गया था किन्तु उन्हें दोषमुक्त कर दिया गया था, यदि न्यायालय को यह पता चलता है कि ऐसे एकल अभियुक्त ने, एक या अधिक अभियुक्तों के साथ संयुक्ततः अपराध किया था।

#### 2. दंड के नए रूप:

उच्चतम न्यायालय ने अनेक मामलों में इस बात पर जोर दिया है कि न्यायालय को, किसी दोषसिद्ध को दंड देते समय जहाँ कहीं समय छोड़ भवारपारी दंड देने की बजाए सुधारात्मक अभिगम अपनाना चाहिए। पूर्वोक्त न्यायिक विनिश्चयों के अनुरूप यह महसूस किया गया है, लंड के निम्नलिखित नए रूप, कारावास के अतिरिक्त या इसके विकल्प के रूप में भारतीय दंड संहिता में शामिल किए जाए:—

(क) सामुदायिक सेवा,

- (ख) पद धारण करने के लिए निर्दृष्टा,
- (ग) प्रतिकर के संदाय का आदेश, और
- (घ) लोक परिनिदा।

यदि पूर्वोक्त अभिगम अपनाया जाता है, तो अन्य सुसंगत उपादानों पर भी विचार करना अपेक्षित होगा जैसे कि अपराधों के वे रूप, जिनके लिए ये दंड लागू किए जाने चाहिए। इससे कुछ अलग, सामुदायिक सेवा का दंड देते समय कुछ सुसंगत उपादानों पर भी, जैसे दोषसिद्ध की आयु, अर्थात् उसे 18 वर्ष से अधिक आयु का होना चाहिए, कार्य की प्रकृति, कार्य की अवधि, दोषसिद्ध को संदेय परिस्थिति, यदि कोई है, पर भी विचार किया जाए।

जहाँ तक पीड़ित व्यक्ति को प्रतिकर का संबंध है, प्रथमदृष्ट्या यह महसूस किया गया है कि न्यायालय को सुसंगत उपादानों पर विचार करना चाहिए, जैसे कि अपराध की प्रकृति, उसके लिए देतु, अपराधी की ओर उस व्यक्ति की, जिसके पश्च में ऐसा आवेश किया जाता है, आर्थिक प्रस्थिति। न्यायालय इस निमित्त अन्य सुसंगत उपादानों पर भी विचार कर सकेगा। अपराध के पीड़ित व्यक्ति या उसके अधिकारों को, ऐसे अपराध से उद्भूत किसी हानि या नुकसान के लिए धनीय प्रतिकर देते समय उसकी गहन परीक्षा आवश्यक है कि क्या प्रतिकर की रकम पर, उस अपराध की प्रकृति के अधीन, जिसके लिए वह सिद्धान्त ठहराया गया है, अधिरोपणीय जुमने की रकम की तुलना में कोई सीमा होनी चाहिए। कार्यवादियों की जटिलता से बचने के लिए क्या पीड़ित व्यक्ति को प्रतिकर की बसूली के लिए सिविल कार्यान्वयी का आश्रय लेने के लिए बाध्य करने के बजाए उसी न्यायालय द्वारा समुचित रूप से प्रतिपुरित किया जाना चाहिए ?

पद धारण करने से निर्दृष्टा के दंड के अधीन यह प्रासांगिक समझा जाता है कि जहाँ कोई व्यक्ति, जो किसी कंपनी के निवेशक या प्रबंधक के रूप में या लोक सेवक के रूप में पद धारण कर रहा है, कंपनी के कार्यों या लोक सेवक के रूप में उसके पद के संबंध में किए गए किसी अपराध का सिद्धान्त ठहराया गया है, तो न्यायालय को, उस पर विधि द्वारा प्राधिकृत कोई अन्य दंड अधिरोपण करने के अतिरिक्त, इस प्रकार दोषसिद्ध व्यक्ति को, वहाँ या वैसा ही पद धारण करने से या उस कंपनी या संगठन में, जहाँ वह ऐसा पद धारण कर रहा था या किसी अन्य कंपनी या संगठन में, पांच से अनधिक अवधि के लिए निर्दृष्ट घोषित करने के लिए, सशक्त किया जाना चाहिए। न्यायालय ऐसे आदेश का, ऐसे समाचारपत्र में, ऐसी अन्य रीति में, जो वह ठीक समझे, प्रकाशन के लिए भी निर्देश दे सकेगा।

#### 3. धमकी द्वारा बाध्यता:

अपराधी वार्ता के डानों द्वारा अपराध में वृद्धि के कारण, निर्देश नारिकों के जीवन और संपत्ति की सुरक्षा को एक निरन्तर आशंका बन गई है। परिणामस्वरूप अनेक अभियुक्त, अपराध के साक्षियों की ऐसे व्यक्तियों को इस प्रकार की धमकी के कारण कि वे चुप रहे, साक्ष्य की अनुपलभ्यता के कारण निरापद छूट जाते हैं। ऐसे साक्षियों को विवाद्यता के अधीन मिथ्या रूप से बोलने के लिए भी बाध्य किया जाता है। विवाद्यता की प्रतिरक्षा अभी बाध्य किए गए व्यक्ति की तत्काल मृत्यु तक सीमित है किन्तु अब इस बात की जांच आवश्यक है कि क्या ऐसी प्रतिरक्षा या विवाद्यता का बाध्य किए गए व्यक्ति या उसके निकट नातेदारों को तत्काल मृत्यु या घोर शारीरिक उपहारित की धमकी तक विस्तार किया जाना चाहिए। इस दृष्टि से, इस पर विचार करने की आवश्यकता है कि क्या धारा 94क, का मारा-पिता, पति-पत्नी, पुत्र या पुत्री जैसे निकट नातेदारों को उपहारित करने के लिए पुनः प्रारूपण किया जाना चाहिए और ऐसी उपहारित की धमकी मिले व्यक्ति को विवाद्यता का अभिवाक उसी रीति से सफाई हेतु करने की अनुज्ञा दी जानी चाहिए जैसे कि मृत्यु की धमकी प्राप्त व्यक्ति के लिए है। इसी प्रकार, उन मामलों में, जहाँ लोक प्राधिकारियों के संरक्षण का आश्रय लेने का समय है, प्राइवेट प्रतिरक्षा के अधिकार पर वर्तमान निर्बंधन का भी लोप करने के लिए विचार करना चाहिए।

#### 4. कंपनियों का आन्वयिक दायित्व:

यह महसूस किया गया है कि कंपनी और बोर्ड के निवेशक या कंपनी के कार्य को संचालित करने के लिए जिम्मेदार व्यक्ति को, इसके कर्मचारी द्वारा कंपनी कार्यों को अग्रसर करने में किए गए अपराधों के लिए आन्वयिक रूप से दायी बनाया जाना चाहिए। क्या आप यह समझते हैं कि यह शिकायत किए अपराध की प्रकृति से सहबद नहीं था और ऐसे अपराध के लिए दायी नहीं था, साबित करने का उत्तरदायित्व निवेशक पर रखा जाना चाहिए। ऐसे उपबंध नई धारा 94क, 94ख में अंतःस्थापित किए जाएं?

#### 5. लोक प्रशान्ति के विरुद्ध अपराध कारित करने के आशय वाले कथन:

हाल ही में, धर्म, मूलवंश, भाषा, जाति या समुदाय के आधारों पर विभिन्न समूहों के बीच शत्रुता, घृणा या वैमनश्य के संप्रवर्तन करने वाले क्रियाकलायों में वृद्धि हुई है, जिस पर कठोर तरीके से कार्यान्वयी की जानी अपेक्षित है। ऐसी प्रवृत्ति समाज में आंतक या लोगों के लिए संत्रास भी कारित कर सकती है। इसे नियंत्रित करने के लिए, भारतीय दंड संहिता में अंतःधारा 153ग की जांच करवाना अपेक्षित है। क्या ऐसा उपाय उपरोक्त आधारों पर हिसा को नियंत्रित करने में सहाय होगा।

6. जहां प्रदाय किया गया माल या किया गया संकर्म संविदा के अनुसार न हो, वहां संविदा के संबंध में विद्वेषपूर्वक संदाय प्राधिकृत करने वाला लोक सेवक:

वाल ही के वर्षों में, यह देखा गया है कि लोक सेवक, जो संविदाओं, जहां प्रदाय किया गया माल या किया गया कार्य संविदा के अनुसार नहीं है, संविदा के संबंध में विद्वेषपूर्वक संदाय प्राधिकृत करते हैं, इससे लोक राजस्व को भारी हानि कारित हुई है। इस प्रकार किसी लोक सेवक को, जो किसी संविदा के अधीन प्रदाय किए गए माल या किए गए कार्य के लिए जब यह जानता है कि माल या कार्य संविदा के अनुसार नहीं है, सरकार या किसी लोक प्राधिकारी की ओर से संदाय प्राधिकृत करता है। दंडित करने के लिए नई धारा 167क को अंतःस्थापित करने के लिए परिवर्तन पर विचार किया जा सकता है।

7. मिथ्या चिकित्सीय प्रमाणपत्र का जारी किया जाना और डस्टाक्षरित किया जाना:

मिथ्या चिकित्सीय प्रमाणपत्र को जारी किए जाने और उसके उपयोग करने की विकसित हो रहे दुष्प्रथा को रोकने के लिए है, जैसे ए० बी० से बाहर चिकित्सक नए आवेदक को प्रमाणपत्र जारी करने के लिए प्राधिकृत करता है। इस पर भी विचार किया जाना है कि क्या भारतीय दंड संहिता में यह उपबंध किया जाए कि ऐसा कोई व्यक्ति, जो जानबूझकर कोई मिथ्या चिकित्सीय प्रमाणपत्र या आरोग्य प्रमाणपत्र जारी करेगा और ऐसा कोई व्यक्ति, जो ग्राष्ट रूप से इसका उपयोग सच्ची प्रति के रूप में करेगा, उसे दंडनीय होना चाहिए। यदि ऐसा है, तो क्या न्यायिक कार्यवाहियों में और अन्य प्रयोजनों के लिए उपयोग किए गए किसी प्रमाणपत्र से भिन्न दंड होना चाहिए।

8. लोकपथ पर असुरक्षित या अतिभारित यानों का चलाना:

लोकपथ पर असुरक्षित या अतिभारित वाहनों को चलाने से दुर्घटनाओं में भारी वृद्धि हो रही है। समाज के लिए ऐसी आशंका को रोकने के लिए, यह समझा जाता है कि ऐसा कार्य दंडनीय बनाया जाना चाहिए। क्या ऐसा उपबंध संहिता में अंतःस्थापित किया जाना चाहिए या इसे यातायात प्राधिकारियों के क्षेत्राधिकार के अन्तर्गत छोड़ देना चाहिए?

9. घोर अशिष्ट या भद्री सामग्री या भयादोहन के लिए आशयित सामग्री का मुद्रण, आदि:

मीडिया में भद्री या घोर अशिष्ट सामग्री के प्रकाशन द्वारा भयादोहन के संत्रास को रोकने के लिए यह आवश्यक है कि ऐसे किसी चिन्ह या किसी मुद्रित या लिखित दस्तावेज का, जो घोर अशिष्ट या भद्रा है या मुद्रण में भयादोहन के लिए आशयित है, मुद्रण, प्रदर्शन, वितरण या प्रकाशन को शामिल करने के लिए एक नई धारा 292क को अंतःस्थापित करना आवश्यक है।

या

प्रवहण या मुद्रण या परिचालन, आदि कारबार करना या विज्ञापनों या किसी कार्य करने का प्रयत्न करने के द्वारे या उत्तरवर्ती अपराधों के लिए कोई दंड विहित किया जाना चाहिए।

10. आपराधिक मानववध और हत्या:

क्या आप आपराधिक मानववध या हत्या की सुस्पष्ट परिभाषा जानने का धारा 299 और 300 के किसी परिवर्तन के लिए मुद्दाव देते हैं?

क्या धारा 302ख, यह उल्लेख करते हुए अधिक विनिर्दिष्ट बनाई जानी चाहिए कि किन मामलों में मृत्यु दंडादेश अधिनिर्णीत किए जाने चाहिए या क्या यह बेहतर है कि “विरल से विरलतम मामलों” की धारणा पर अवधारण करना, न्यायालय के विवेक पर छोड़ दिया जाए।

11. टक्कर मारकर भाग ले जाने के मामलों में उत्तावलेपन से और उपेक्षापूर्वक यान चलाकर मृत्यु या क्षति कारित करना:

यह देखा गया है कि बहुत बार ऐसा अभियुक्त, जो उत्तावलेपन से और उपेक्षापूर्वक यान चलाकर मृत्यु या क्षति कारित करता है, युक्तियुक्त समय के भीतर थाने में इत्तिला किए बिना भाग जाता है। इस प्रवृत्ति को रोकने के लिए क्या आपके लिए युक्तियुक्त समय के भीतर थाने में इत्तिला दिए बिना भागना, इस संहिता के अधीन दंडनीय अपराध बनाने के लिए धारा 304क में कोई परिवर्तन करने का सुझाव देंगे।

12. सदोष अवरोध और सदोष परिरोध के लिए दंड:

शीघ्र धन, संपत्ति प्राप्त करने की वासना के कारण या अन्य द्वेषों के लिए, बदमाशों के मैंग पीड़ितों या उसके नातेदारों को अवरोधित करने या परिरोधित करने का आन्त्रय ले रहे हैं। धारा 341 से 344 तक के अधीन ऐसे अपराधों को और गुलतर प्रकृति का बनाने की नितांत आवश्यकता है, यदि ऐसा अपराध एक से अधिक व्यक्तियों द्वारा किया जाता है। इस पर विचार विनिमय की आवश्यकता है।

13. वायुयानों या अन्य यानों को भगा ले जाना:

पिछले कुछ वर्षों में आतंकवाद से प्रस्त द्वारा देश के कई भागों में वायुयान और यानों के भगा ले जाने के मामलों की संख्या अत्यधिक रही है। इसको ध्यान में रखते हुए, यह समझा जाता है कि किसी वायुयान या यान को भगा ले जाना भारतीय दंड संहिता के अधीन दंडनीय बनाया जाना चाहिए। क्या आप यह समझते हैं कि इन दोनों अपराधों के लिए एक समान दंड होना चाहिए या यह अपराध की गंभीरता के अनुसार दंडनीय बनाया जाना चाहिए, फलक पर या उड़ान के समय किसी वायुयान को भगा ले जाने की दशा में, दंड भयोपरापी होना चाहिए।

14. भवन, यान या मन्दिर में चोरी, दुर्घटना, आग, आदि से ग्रस्त संपत्ति की चोरी, कर्मचारियों द्वारा चोरी, किसी व्यक्ति को मत्तता या बेहोशी की हालत में रखाकर चोरी:

क्या उपासना के किसी सार्वजनिक स्थल, आदि में लोक संपत्ति की चोरी को समाविष्ट करने के लिए धारा 380 में कोई परिवर्तन आवश्यक है?

क्या किसी ऐसे व्यक्ति के कब्जे से, जो आग, दुर्घटना, भूकंप आदि जैसी प्राकृतिक आपदाओं से पीड़ित था, चोरी को शामिल करने के लिए एक नई धारा 380क अंतःस्थापित की जा सकती है और क्या ऐसी चोरी को एक वर्धित चोरी के रूप में मानना चाहिए।

क्या धारा 381क का सभी कर्मचारियों द्वारा की गई चोरियों को, न कि अनिवार्यतः लिपिकों और सेवकों द्वारा की गई चोरियों को, जैसा आप वर्तमान धारा में पाते हैं, समाविष्ट करने के लिए संशोधन किया जाना चाहिए।

क्या उन मामलों को समाविष्ट करने के लिए धारा 381क अंतःस्थापित की जा सकती है, जहां अपराधी किसी व्यक्ति को, ऐसे व्यक्ति के कब्जे से किसी संपत्ति की चोरी करने के लिए, किसी पेय या औषधि के माध्यम से मत्तता या बेहोशी की हालत में रखता है।

15. भयादोहन:

भयादोहन के मामले, किसी व्यक्ति की छ्याति या उस व्यक्ति के निकट नातेदार की छ्याति को नुकसान पहुंचाने के आशय से किसी लांछा को प्रकाशित करने की बेईमानीपूर्वक धन की धमकी देने की भावना से एक नया आयाम ले रहे हैं। इस बात को देखते हुए, यह विचार किया जाना है कि क्या ऐसे मामलों को समाविष्ट करने के लिए, जहां अपराधी भयादोहन द्वारा बेईमानीपूर्वक उड़ापन करने की धमकी देता है, भारतीय दंड संहिता में एक नई धारा 385क अंतःस्थापित की जा सकती है।

16. छल:

विधि आयोग ने, अपनी 29वीं रिपोर्ट में इस बात पर विचार किया था कि बेईमान संविदाकारों द्वारा बड़े पैमाने पर सरकार, निगम स्थानीय प्राधिकारी से छल करने की समस्या का किस तरह मुकाबला किया जा सकता है। इस व्याधि का सामना करने के लिए, एक नई धारा 420क अंतःस्थापित करने की सिफारिश की जाती है। क्या आप इस परिप्रेक्ष में, कोई और परिवर्तन आवश्यक समझते हैं?

17. कर्मचारी द्वारा नियोजक के या उस व्यक्ति के, जिसने उसे नियुक्त किया है, कार्यकलापों या कारबार के संबंध में रिश्वत लेना:

पूर्वोक्त कार्यों को रोकने के लिए क्या दंड संहिता में ऐसे कार्य के लिए दंड का उपबंध करने वाला एक पृथक उपबंध होना चाहिए। इंगिलिश स्टेट्यूट के आदर्श पर विधि आयोग ने, नियोजक के कार्यकलाप या कारबार के संबंध में प्राइवेट व्यक्तियों द्वारा रिश्वत लेने के मामलों को भी समाविष्ट करने के लिए एक नई धारा 420ख की सिफारिश की थी। इस संबंध में, आपके सुझाव बहुत ही सहायक होंगे।

18. एकान्तता संबंधी अपराध:

निजी एकान्तता का अधिकार, उच्चतम न्यायालय द्वारा भारत के संविधान के अनुच्छेद 21 के अधीन आने वाला अधिकार माना गया है और इस प्रकार यह एक मूल अधिकार है। उक्त वैधानिक स्थिति की परिधि विस्तृत विस्तार वाली है। इस प्रकार, क्या निजी एकान्तता के अतिक्रमण से संबंधित एक नया अध्याय भारतीय दंड संहिता में सम्मिलित किया जाना चाहिए, यदि ऐसा है तो, उन कार्यों की प्रकृति, जिन्हें संहिता के अधीन दंडनीय होना चाहिए। इस प्रकार, इस बात पर विचार किया जाना है कि क्या आरंभ किए जाने के रूप में निजी वार्तालाप सुनने के लिए कृतिम अवधारणा या अभिलेखन साधित्रों का उपयोग, या किसी व्यक्ति की, उसकी समस्ति या उसकी इच्छा के विरुद्ध अप्राधिकृत फोटो लेना और ऐसे ढंग से एकत्रित की गई जानकारी का प्रकाशन प्रतिपिद किया जाना दाँड़िक बनाया जाना चाहिए।

## 19. नई धारा 166क का अंतःस्थापन :

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 160 के अतिक्रमण में, पुलिस अधिकारियों की ओर से ऐसी सामान्य प्रवृत्ति देखी गई है कि वे अपराध के साक्षियों को अपराध के स्थान पर उपस्थित होने के लिए निवेश देते हैं। भारत के विधि आयोग ने “अमिरक्षा में महिलाएं” संबंधी अपनी 135वीं रिपोर्ट में दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 160 के अतिक्रमण को दंडित करने के संबंध में भारतीय दंड संहिता, 1860 में एक नई धारा 166क को अंतःस्थापित करने और प्रस्तावित अपराध को संजेय, जमानतीय किसी मजिस्ट्रेट द्वारा विचारणीय, संजेय और जमानतीय बनाने की सिफारिश की है। क्या ऐसा उपर्युक्त दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 160 के उपबंध को अतिक्रमण करने की प्रवृत्ति को रोकने के लिए भारतीय दंड संहिता में अंतःस्थापित किया जाना चाहिए?

## 20. नई धारा 167क का अंतःस्थापन :

पुलिस अधिकारी के विशुद्ध थाने में प्रथम इतिला रिपोर्ट अभिलिखित न करने की शिकायतें, भले ही, संजेय किए जाने का प्रथम दृष्ट्या साक्ष्य क्यों न हो, प्रायः की गई है। विद्यमान विधि के अधीन, ऐसे पुलिस अधिकारियों के विशुद्ध, दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 154(1) द्वारा यथा अनुद्यात इतिला अभिलिखित करने से उनके इन्कार के लिए, दांडिक कार्रवाई करने का कोई उपबंध नहीं है। विधि आयोग ने, “बलात्संग और संबद्ध अपराध” संबंधी अपनी 84वीं रिपोर्ट और “अमिरक्षा संबंधी अपराध” संबंधी अपनी 152वीं रिपोर्ट में भी यह संप्रेक्षित किया कि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 154 की उपधारा (3) के अधीन उपलब्ध उपचार प्रभावी या पर्याप्त नहीं है। इस प्रकार, विधि आयोग ने, थाना के प्रमारी अधिकारी द्वारा प्रथम इतिला रिपोर्ट अभिलिखित न किए जाने को, ऐसी अवधि के कारबास से, जो एक वर्ष तक का हो सकेगा, जुमना संहित या रहित या बोनों से, दंडनीय बनाने हुए भारतीय दंड संहिता में नई धारा 167क के अधिनियम के लिए सिफारिश की है। संजेय अपराधों को किए जाने से संबंधित इतिला दर्ज करने से इंकार करने के अवचार को हतोत्साहित करने या निवारित करने के लिए, पूर्वोक्त मानदंडों पर नई धारा 167क के अंतःस्थापन के पूर्वोक्त अध्युपायों के अतिरिक्त, पूर्वोक्त अनाचार को रोकने के लिए कौन से अन्य उपयुक्त अध्युपायों पर विचार किया जा सकता है, इस पर विचार-विमर्श किए जाने की आवश्यकता है।

आपसे अनुरोध है कि अपने अमूल्य समय का कुछ अंश इस पत्र में ऊपर उठाए गए मुद्दों पर अपना सुविचारित अभिमत अपनी सुविधानुसार यथाशीघ्र देने की कृपा करें।

सहयोग की आकांक्षा संहित,

सादर,

भवदीय,

हस्ता,

(एस० सी० श्रीवास्तव)

## उपांधं 3

## भारतीय दंड संहिता, 1860 के संबंध में प्रश्नावली पर प्राप्त हुए उत्तर

भारत के विधि आयोग ने, विभिन्न क्षेत्रों से विचार प्राप्त करने के लिए भारतीय दंड संहिता, 1860 के संबंध में एक व्यापक प्रश्नावली (उपांधं 1) परिचालित की है।

यह प्रश्नावली, उच्च न्यायालयों के रजिस्ट्रारों, राज्य सरकार और संघ राज्यक्षेत्रों के गृह सचिव, उच्चतम न्यायालयों विविज संगम और उच्च न्यायालय विधिज्ञ संगमों के अध्यक्षों, राष्ट्रीय अल्पसंख्यक आयोग, राष्ट्रीय मानव अधिकार आयोग, राष्ट्रीय अधिवक्ताओं, शिक्षाविदों और कुछ सामाजिक संगठनों, संस्थानों, आदि को भेजी गई थी।

हीन राज्य सरकारों, उच्च न्यायालयों के सात न्यायाधीशों और एक अपर रजिस्ट्रार, एक अधिवक्ता, एक पुलिस अधिकारी, एक राज्य विधि आयोग और एक संगठन (निरन्तर) से उत्तर प्राप्त हुए थे।

## प्रश्न सं० 1

वे सभी सात न्यायाधीश, जिन्होंने प्रश्नावली का उत्तर दिया है, भारत के विधि आयोग के सुझावों से सहमत है। तथापि, मध्य प्रदेश उच्च न्यायालय के अपर रजिस्ट्रार ने, नकारात्मक उत्तर दिया है। एक अधिवक्ता भी सुझाव से सहमत है। प्रश्न सं० 1 से 17 तक पुलिस अधिकारी ने कोई टीका-टिप्पणी नहीं की है। हिमाचल प्रदेश राज्य विधि आयोग प्रस्ताव से सहमत है। एक महिला संगठन निरन्तर ने इस मुद्दे का उत्तर नहीं दिया है।

## प्रश्न सं० 2

उच्च न्यायालयों के सात न्यायाधीश और एक अपर रजिस्ट्रार ने सकारात्मक उत्तर दिया है। हिमाचल प्रदेश के विधि आयोग ने भी प्रस्ताव का समर्थन किया है।

## प्रश्न सं० 3

अधिकतर न्यायाधीश, जिन्होंने हमारी प्रश्नावली का उत्तर दिया है, प्रस्ताव से सहमत है। हिमाचल प्रदेश राज्य का विधि आयोग और एक अधिवक्ता भी यथाप्रस्तावित भारतीय दंड संहिता की धारा 14 ‘सरकार का सेवक’ की परिभाषा का लोप करने के लिए सहमत दी गई है।

## प्रश्न सं० 4

अपर रजिस्ट्रार और ‘निरन्तर’ को छोड़कर, सभी न्यायाधीश, हिमाचल प्रदेश के राज्य विधि आयोग और एक अधिवक्ता ने, धारा 17 के अधीन ‘सरकार’ की परिभाषा का लोप करने का पक्ष किया है।

## प्रश्न सं० 5

अधिकतर व्यक्ति, जिन्होंने हमारी प्रश्नावली का उत्तर दिया है, भारतीय दंड संहिता की धारा 18 के अधीन ‘भारत’ शब्द की परिभाषा के संशोधन से सहमत हैं।

## प्रश्न सं० 6

एक न्यायाधीश के सिवाय, न्यायाधीशों में से कोई भी न्यायाधीश धारा 19 के अधीन ‘न्यायाधीश’ शब्द की परिभाषा के संशोधन के बारे में सहमत नहीं हुआ है। एक न्यायाधीश का यह अभिमत है कि ‘न्यायाधीश’ शब्द को, सिविल प्रक्रिया संहिता या दंड प्रक्रिया संहिता के उपबंधों के अधीन किसी सिविल न्यायालय या दंड न्यायालय की अध्यक्षता करने वाले न्यायाधीश या न्यायिक अधिकारी के रूप में परिभाषित किया जा सकता है। हिमाचल प्रदेश राज्य विधि आयोग ने, सुझाव दिया कि सिविल मामलों की बाबत न्यायिक शक्तियों का प्रयोग करने वाली ग्राम पंचायत के सदस्यों को, जिसमें इसके अध्यक्ष भी हैं, को सम्मिलित किया जाए।

## प्रश्न सं० 7

अधिकतर व्यक्ति, जिन्होंने हमारी प्रश्नावली का उत्तर दिया है, सुझाव से सहमत हो गए हैं।

## प्रश्न सं० 8

अधिकतर व्यक्तियों ने, सकारात्मक उत्तर दिया। तथापि, पांच न्यायाधीशों ने, यह और सुझाव दिया है कि संसद सदस्यों और विधान-मंडल के सदस्यों को भी लोक सेवक की परिभाषा के भीतर लाया जाना चाहिए।

## प्रश्न सं० 9

धारा 21क के अधीन 'राज्य' शब्द की नई परिभाषा के अंतःस्थापन के प्रस्ताव का समर्थन अधिकतर उन व्यक्तियों द्वारा किया गया है, जिन्होंने हमारी प्रश्नावली का उत्तर दिया।

## प्रश्न सं० 10

धारा 25 के अधीन 'कपटपूर्वक' शब्द की परिभाषा का संशोधन करने के संबंध में सुझाव का समर्थन अधिकतर न्यायाधीशों और हिमाचल प्रदेश के विधि आयोग ने भी किया है।

## प्रश्न सं० 11

सभी न्यायाधीश तथा अपर रजिस्ट्रार, एक अधिवक्ता, हिमाचल प्रदेश का विधि आयोग, जिन्होंने हमारी प्रश्नावली का उत्तर दिया, सुझाव से सहमत हो गए हैं।

## प्रश्न सं० 12

धारा 31, 32 और 33 के अधीन 'विल', 'अवैध', 'लोप' 'कार्य लोप' शब्दों की परिभाषाओं के लोप के लिए, हिमाचल प्रदेश के विधि आयोग सहित सभी न्यायाधीश और एक अधिवक्ता ने, सकारात्मक उत्तर दिया है।

## प्रश्न सं० 13

दो न्यायाधीशों और एक अपर रजिस्ट्रार ने, सकारात्मक उत्तर दिया, किन्तु पांच न्यायाधीशों का विचार है कि संशोधन की कोई आवश्यकता नहीं है।

सुस्थापित विधि यह है कि एक व्यक्ति को भी सिद्धोष ठहराया जा सकता है, यदि न्यायालय इस निष्कर्ष पर पहुंचता है कि उसके अतिरिक्त, अन्य व्यक्तियों ने भी संयुक्ततः अपराध किया है। जहाँ तक धारा 34, 36 और 38 के संशोधन का सम्बन्ध है, विद्यमान शब्द बने रखने चाहिए। शेष व्यक्ति इस मुद्दे पर मौन हैं।

## प्रश्न सं० 14

अधिकतर न्यायाधीशों का जिन्होंने, इस प्रश्न का उत्तर दिया, विचार है कि "अपराध" शब्द की परिभाषा वैसी ही रहनी चाहिए जैसी वह है और मूल्य से दंडनीय अपराध की परिभाषा धारा 40क के रूप में अंतःस्थापन की जानी चाहिए। हिमाचल प्रदेश का विधि आयोग प्रस्ताव से सहमत है।

## प्रश्न सं० 15

आठ में से छह न्यायाधीशों का यह विचार है कि परिभाषा व्यापक है और धारा 43 का संशोधन या प्रतिस्थापन करने की कोई आवश्यकता नहीं है। हिमाचल प्रदेश का विधि आयोग और एक अधिवक्ता प्रस्ताव से सहमत हैं।

## प्रश्न सं० 16

अधिकतर व्यक्ति, जिन्होंने प्रश्नावली का उत्तर दिया है, धारा 48, 49 और 50 के अधीन 'जलयान', 'वर्ष मास' और 'धारा' की परिभाषा के लोप का समर्थन नहीं करते हैं। हिमाचल प्रदेश का विधि आयोग, इस प्रश्न के अधीन, जैसा प्रस्तावित है, उससे सहमत है।

## प्रश्न सं० 17

अधिकतर व्यक्ति, जिन्होंने प्रश्नावली का उत्तर दिया, प्रस्ताव से असहमत है। हिमाचल प्रदेश के विधि आयोग ने, प्रस्तावित धारा 52 के अधीन 'प्रवहण के साधन' शब्दों के पश्चात 'संचार के साधन' शब्द समिलित करने का सुझाव दिया है।

## प्रश्न सं० 18

अधिकतर व्यक्ति, जिन्होंने हमारी प्रश्नावली का उत्तर दिया, कुछ अपवादों और सुझावों सहित सिफारिशों से सहमत हुए हैं।

पांच न्यायाधीशों का विचार है कि प्रस्तावित दंड का नया रूप आर्थिक और सामाजिक अपराधों को लागू नहीं होना चाहिए। सामुदायिक सेवा का दंड, केवल गंभीर मामलों को लागू किया जाना चाहिए, तथा पीड़ित को विचारण न्यायालय द्वारा ही क्षतिपूरित किया जाना चाहिए और क्षतिपूरित की अधिकतम रकम नियत की जानी चाहिए। उनमें से कुछ यह महसूस करते हैं कि 'सामुदायिक सेवा' भारतीय स्थिति के लिए सुरक्षित और उपयोग्य नहीं हो सकती और दूसरा, अपराधों के पीड़ित को, क्षतिपूरित की रकम को, न्यायालय के विवेक पर छोड़ दिया जाना चाहिए।

अधिवक्ता ने "सामुदायिक सेवा" के दंड का पक्ष नहीं लिया है।

पुलिस अधिकारी ने प्रत्येक दाँड़िक धारा के लिए न्यूनतम और अधिकतम दंड विद्वित करने का सुझाव दिया है।

हिमाचल प्रदेश के राज्य विधि आयोग ने भी हत्या, बलात्सांग और नैतिक अधमता वाले अपराध जैसे जघन्य अपराधों के सिवाय सभी प्रकार के अपराधों के लिए दंड के नए रूपों को पुरस्थापित करने के विचार का समर्थन किया है।

## प्रश्न सं० 19 से 29

अधिकतर व्यक्ति, राज्य विधि आयोग सहित जिन्होंने हमारी प्रश्नावली का उत्तर दिया है, उपर उल्लिखित प्रश्नों के अधीन प्रस्तावों से सहमत हैं।

## प्रश्न सं० 30 और 31

अधिकतर न्यायाधीशों ने नकारात्मक उत्तर दिया। अन्य व्यक्तियों ने या तो कोई टीका-टिप्पणी नहीं की या प्रश्न के बारे में मौन रहे। हिमाचल प्रदेश का विधि आयोग प्रश्न सं० 30 में, जैसा सुझाव दिया गया है, उससे सहमत है, किन्तु वह संहिता की धारा 100 के अधीन किसी परिवर्तन के पक्ष में नहीं है।

## प्रश्न सं० 32 और 35

अधिकतर व्यक्तियों ने सकारात्मक उत्तर दिया है।

## प्रश्न सं० 36

धारा 115 और 116 के अधीन दंड की वृद्धि के सुझाव से एक न्यायाधीश के सिवाय, सभी न्यायाधीश असहमत हैं। हिमाचल प्रदेश के विधि आयोग और एक अधिवक्ता ने, सकारात्मक उत्तर दिया।

## प्रश्न सं० 37

अधिकतर न्यायाधीशों ने, धारा 117क के अंतःस्थापन का पक्ष लिया किन्तु उन्होंने यह और सुझाव दिया कि 15 वर्ष से कम आयु किन्तु 7 वर्ष से अन्यून आयु के किसी बालक द्वारा "किए गए दुष्ट्रेण" को इसके अन्तर्गत लाया जाए। हिमाचल प्रदेश का विधि आयोग इस प्रश्न के अधीन प्रस्ताव पर असहमत है।

## प्रश्न सं० 38 से 49

अधिकतर न्यायाधीश, जिनमें अपर रजिस्ट्रार, एक अधिवक्ता, राज्य विधि आयोग भी हैं, जिन्होंने प्रश्नावली का उत्तर दिया, सिफारिशों से सहमत हैं किन्तु राज्य विधि आयोग, भारतीय दंड संहिता की धारा 511 में यथा अन्तर्विष्ट विद्यमान उपबंधों को देखते हुए, नया अध्याय 5ख (प्रश्न 39 के अधीन) के अंतःस्थापन के पक्ष में नहीं है।

## प्रश्न सं० 50

छह न्यायाधीशों का यह मत है कि धारा 166क के द्वारा नए उपबंधों को अंतःस्थापित करने की कोई आवश्यकता नहीं है। राज्य विधि आयोग सहित शेष व्यक्ति प्रस्ताव से सहमत हुए। पुलिस अधिकारी यह समझते हैं कि भारतीय दंड संहिता की धारा 166 के अधीन अपराध को सजेय बनाया जा सकता है और कोई पृथक दाँड़िक धारा 116क आवश्यक नहीं है।

## प्रश्न सं० 51 से 53

अधिकतर व्यक्ति, जिन्होंने प्रश्नावली का उत्तर दिया, सकारात्मक उत्तर दिया है। राज्य विधि आयोग भी धारा 226 (प्रश्न सं० 53 के अधीन) के लोप के सिवाय अन्य सुझावों से असहमत हैं।

## प्रश्न सं० 54

राज्य विधि आयोग सहित अधिकतर न्यायाधीश और एक अधिवक्ता धारा 246 और 254 के लोप के पक्ष में नहीं हैं।

## प्रश्न सं० 55 से 62

इन प्रश्नों के उत्तर सकारात्मक हैं। राज्य विधि आयोग ने, मोटर यान अधिनियम की धारा 113, 114 और 115 के अधीन वर्ष 1994 में हुए संशोधनों पर प्रकाश डाला है और इसलिए, धारा 279क का अंतःस्थापन आवश्यक नहीं है।

## प्रश्न सं० 63

एक न्यायाधीश के सिवाय, जो इस मुद्दे पर मौन रहा है, अन्य सभी न्यायाधीश 'आपराधिक मानव वध' और 'हत्या' की परिभाषाओं में कोई परिवर्तन नहीं चाहते हैं। राज्य विधि आयोग के अनुसार, विद्यमान परिभाषाओं में कोई परिवर्तन अपेक्षित नहीं है।

## प्रश्न सं. 64

राज्य विधि आयोग सहित अधिकतर व्यक्तियों का, जिन्होंने प्रश्नावली का उत्तर दिया, यह विचार है कि इसे न्यायालय के विवेक पर छोड़ देना चाहिए और धारा 302ख में किसी परिवर्तन की आवश्यकता नहीं है।

## प्रश्न सं. 65

न्यायाधीश और राज्य विधि आयोग द्वारा इस प्रश्न का सकारात्मक उत्तर दिया गया है लेकिन राज्य विधि आयोग की राय यही कि ऐसे अपराध को अधीनातीय तथा संशेय बनाया जाना चाहिए।

## प्रश्न सं. 66

भारतीय दंड संहिता की धारा 307 और 308 के संशोधन का पक्ष अधिकतर न्यायाधीशों और राज्य विधि आयोग ने नहीं लिया है। एक पुलिस अधिकारी का मर है कि दोनों धाराओं को एक साथ संयोजित कर देना चाहिए और अधिकतम दंड, आजीवन कारावास तक का किया जाना चाहिए।

## प्रश्न सं. 67

पांच न्यायाधीश धारा 309 का लोप करने के लिए सहमत हुए हैं, लेकिन दो न्यायाधीशों और अपर रजिस्ट्रार ने, इसका पक्ष नहीं लिया।

एक अधिवक्ता का भी यह विचार है कि भारतीय दंड संहिता की धारा 309 को हटाया जाना आवश्यक है।

दिमाचल प्रदेश राज्य के विधि आयोग ने, जान कंवर बनाम पंजाब राज्य, ए०आर्ड०आर०, 1996 एस०सी० 947 का मामला कोट किया और इस धारा में कोई परिवर्तन न करने का सुझाव दिया।

## प्रश्न सं. 68

अधिकतर व्यक्ति, जिन्होंने हमारी प्रश्नावली का उत्तर दिया है, सुझावों से सहमत हो गए हैं।

धारा 362 अपहरण के संशोधन के मामले में, अधिकतर व्यक्ति यह सोचते हैं कि वायुयान और यान को भगा ले जाने के अपराध बढ़ रहे हैं। अतः, संहिता के अधीन भयोपकारी दंड का उपबंध करने वाला एक पृथक् उपबंध बनाया जाना चाहिए। फिरौती के लिए व्यपहरण या अपहरण के मामले में, कम से कम 7 वर्ष की अवधि के न्यूनतम दंड का उपबंध होना चाहिए।

एक महिला संगठन (निरन्तर) ने, धारा 355क के अधीन निम्नलिखित सुझाव दिया है:—

अवयस्क की आयु में,

- (क) 16 वर्ष से 18 वर्ष का परिवर्तन करना;
- (ख) कारावास की अवधि 3 वर्ष से 5 वर्ष करना;
- (ग) 'जुर्माना' को आजापक बनाना;
- (घ) अपराध का संशेय और अशमनीय होना चाहिए।

## प्रश्न सं. 69

हमारी प्रश्नावली द्वारा सुझाई गई धारा 375 (बलात्संग) का संशोधन अधिकतर व्यक्तियों ने, स्वीकार कर लिया है किन्तु राज्य विधि आयोग ने, इस धारा के अधीन कोई परिवर्तन करने का पक्ष नहीं लिया है।

महिला संगठन ने, इस धारा के अपवाद और स्पष्टीकरण को हटाए जाने का सुझाव दिया और सुझाव दिया कि स्पष्टीकरण को निम्नवर्त पुनः प्रारूपित किए जाने की आवश्यकता है।

**स्पष्टीकरण:** बलात्संग के अपराध के लिए आवश्यक मैथुन गठित करने के लिए निम्नलिखित पर्याप्त है:—

- (क) किसी स्त्री की योनि, गुदा या सुंद के भीतर किसी पुरुष द्वारा अपने लिंग को प्रविष्ट करना (किसी भी सीमा तक);
- (ख) किसी स्त्री की योनि, या गुदा के भीतर किसी पुरुष द्वारा किसी वस्तु या शरीर का कोई अंग (लिंग को छोड़कर) प्रविष्ट करना (किसी भी सीमा तक)

"समान लिंग के किसी व्यक्ति के साथ बलपूर्वक मैथुन करना" के लिए नई धारा 375क के अंतःस्थापन का भी सुझाव दिया है।

## प्रश्न सं. 70

अधिकतर उत्तर सकारात्मक पाए गए हैं। तथापि, महिला संगठन ने, प्रस्ताव दिया कि धारा 376 (3) के अधीन आजीवन कठिन कारावास का उपबंध किया जा सकता है और "स्त्री" शब्द के स्थान पर "बालक" शब्द रखने का प्रस्ताव किया। परन्तु को भी हटाए जाने की आवश्यकता है।

## प्रश्न सं. 81 और 82

अधिकतर न्यायाधीश, राज्य विधि आयोग और अन्य व्यक्ति, जिन्होंने हमारी प्रश्नावली का उत्तर दिया है, सुझावों से सहमत हो गए हैं। तथापि, महिला संगठन ने, सुझाव दिया कि प्रस्तावित धारा 376च विद्यमान धारा 509 के समान है। इसलिए, इसका उसी प्रकार प्रारूपण किया जा सकता है और "छेड़खाड़" शब्द को हटाया जाना चाहिए।

## प्रश्न सं. 83

आठ न्यायाधीशों में से छह न्यायाधीश सुझावों से असहमत हुए और उनका यह विचार है कि प्रस्तावित उपबंध का दुरुपयोग किया जाएगा। शेष दो न्यायाधीशों में से एक न्यायाधीश का विचार है कि उपबंध को अधिक स्पष्ट रूप से व्यक्त किया जाना चाहिए। राज्य विधि आयोग ने, विचार का समर्थन किया है। तथापि, महिला संगठन सुझाव से सहमत हुए किन्तु चार दृष्टान्तों और चार स्पष्टीकरणों वाले धारा 376ज के एक प्रारूप का और सुझाव दिया।

## प्रश्न सं. 84

अधिकतर व्यक्ति, जिनमें राज्य विधि आयोग भी है, ने इस मुद्रे के अधीन प्रस्ताव का समर्थन किया और कहा कि धारा 377 (ग) के अधीन अपराध बना रहना चाहिए। पुलिस अधिकारी का विचार है कि "स्वेच्छा" शब्द का लोप किया जाए और स्त्री के गर्भाशय के भीतर हाथ या छड़ी या अन्य वस्तु का प्रविष्ट करना भी इस धारा के अन्तर्गत लाया जा सकता है। तथापि, महिला संगठन का सुझाव है कि "प्रकृति विरुद्ध" शब्द हटाया जाना चाहिए और धारा 377 के अधीन पशुगमन के अपराध का उपबंध किया जाए।

## प्रश्न सं. 85 से 89

अधिकतर व्यक्तियों ने, इन प्रश्नों का सकारात्मक उत्तर दिया है।

## प्रश्न सं. 90

छह न्यायाधीश और राज्य विधि आयोग का विचार है कि संहिता की धारा 396 स्पष्ट है और इसके वर्तमान रूप में ही बने रहने देना चाहिए।

## प्रश्न सं. 91 से 97

राज्य विधि आयोग सहित अधिकतर व्यक्ति, जिन्होंने हमारी प्रश्नावली का उत्तर दिया है, सुझावों से सहमत हैं।

## प्रश्न सं. 98

पांच न्यायाधीश और अपर रजिस्ट्रार धारा 441 आपराधिक अतिचार के स्थान पर नई धारा के प्रतिस्थापन का समर्थन नहीं करते हैं। दो न्यायाधीशों ने अपने विचार नहीं व्यक्त किए हैं। तथापि, दिमाचल प्रदेश का विधि आयोग इस विचार का पूर्णतः समर्थन करता है।

## प्रश्न सं. 99 से 117

राज्य विधि आयोग सहित अधिकतर व्यक्ति, जिन्होंने प्रश्नावली का उत्तर दिया, सुझावों से सहमत हो गए हैं। तथापि, एक न्यायाधीश ने, नई धारा 492 के अधीन अपवाद को अधिक प्रयोज्य बनाने का सुझाव दिया है।

## प्रश्न सं. 118

केवल पांच न्यायाधीश सिफारिशों से असहमत हैं, शेष व्यक्तियों और राज्य विधि आयोग ने भी सकारात्मक उत्तर दिया है।

## प्रश्न सं. 119

छह न्यायाधीश और एक अपर रजिस्ट्रार सिफारिशों से सहमत है और एक न्यायाधीश ने, अपनी राय व्यक्त नहीं की है। राज्य विधि आयोग, संहिता के अध्याय 23 के लोप के पक्ष में नहीं है।

## अन्य उत्तर

प्रश्न सं. 1, 7, 12 से 14 और 17—नेशनल ला स्कूल आफ इंडिया यूनिवर्सिटी, बंगलौर ("दि स्कूल") ने, परिमाणाओं के प्रस्तावित लोपों/संशोधनों का पक्ष नहीं लिया है।

प्रश्न सं. 2 से 6, 8 से 11 और 16—स्कूल कतिपय संशोधनों के अधीन सुझावों से सहमत हो गया है।

स्कूल ने, प्रश्न सं. 28 का उत्तर नकारात्मक दिया है। प्रश्न सं. 29 के संबंध में, स्कूल ने राय दी कि निगम के दायित्व से संबंधित एक पृथक् अध्याय द्वारा चाहिए।

प्रश्न सं. 30 से 34—स्कूल ने धारा 84, 85, 94 और 103 में कठिपय संशोधनों का सुझाव दिया है।

प्रश्न सं. 39 से 41—स्कूल ने, “प्रयत्न” के बारे में नए अध्याय 5ब के अंतःस्थापन का समर्थन किया।

स्कूल ने प्रश्न सं. 32 से 45 के उत्तर सकारात्मक दिए हैं। प्रश्न सं. 57 से 60 का उत्तर देते समय, स्कूल ने प्रतिनिधिक वायित्व के बारे में धारा 272, 273, 274, 275, 276, 292 और 293 में संशोधन का सुझाव दिया है।

प्रश्न सं. 63 से 65—स्कूल ने धारा 299 और 300 में किसी संशोधन का पक्ष नहीं लिया है, किन्तु धारा 304ब में एक परन्तुक के अंतःस्थापन का सुझाव दिया है।

प्रश्न सं. 79 से 83—इन प्रश्नों का उत्तर देते समय, स्कूल ने आपराधिक यौन संबंध, लैगिक हमला और गुलतर लैगिक हमले के बारे में नए उपबंधों के अंतःस्थापन के लिए सुझाव दिया है।

प्रश्न सं. 114—इस प्रश्न का उत्तर देते समय, स्कूल ने “जारकर्म” से संबंधित उपबंधों के संशोधन के संबंध में एक सुझाव दिया है।

उन व्यक्तियों की सूची जिनके उत्तर प्राप्त हुए हैं:

क. उच्च न्यायालय के न्यायाधीश/रजिस्ट्रार

1. हिमाचल प्रदेश उच्च न्यायालय के मुद्द्य न्यायमूर्ति।
2. न्यायमूर्ति आर० जी० वैद्यनाम, मुम्बई उच्च न्यायालय।
3. श्री आर० एस० क्रिपाठी, अपर रजिस्ट्रार, मध्य प्रदेश उच्च न्यायालय, जबलपुर।
4. न्यायमूर्ति नगेन्द्र राय।
5. न्यायमूर्ति एस० एन० ज्ञा, पटना उच्च न्यायालय।
6. न्यायमूर्ति नरेन्द्र कुमार सिन्धा, पटना उच्च न्यायालय।
7. न्यायमूर्ति आर० कौ० सरीन, पटना उच्च न्यायालय।
8. न्यायमूर्ति जी० एस० चौबे, पटना उच्च न्यायालय।

ख. अधिवक्ता

1. श्री ए० ए० एन० शास्त्री, अधिवक्ता, हैदराबाद।

ग. पुलिस अधिकारी

1. श्री पी० एस० वी० प्रसाद, संयुक्त निदेशक, भारतीय पुलिस अकादमी, हैदराबाद।

घ. राज्य विधि आयोग

1. हिमाचल प्रदेश राज्य विधि आयोग।

ड. संगठन/संस्था

1. श्रीमती अनुज गुप्ता, “निरन्तर” महिला शिक्षा केन्द्र, नई दिल्ली।
2. डा० एन० एस० गोपालकृष्णन, सह-आचार्य, नेशनल ला स्कूल आफ इंडिया यूनिवर्सिटी, बंगलोर।
3. श्री जयन्ती पटनायक, अध्यक्ष, राष्ट्रीय महिला आयोग, नई दिल्ली।
4. भारतीय कंपनी सचिव, संस्थान।
5. फेमिनिस्ट लीगल रिसर्च केन्द्र, नई दिल्ली।

उपांचंद 4

भारतीय दंड संहिता, 1860 के संबंध में कार्यपत्र के उत्तर

भारत के विधि आयोग ने, विभिन्न क्षेत्रों से विचार प्राप्त करने के लिए दंड संहिता में अंतर्वर्णित मुद्दों का उल्लेख करते हुए, तारीख 26-12-95 को एक पत्र (उपांचंद 2) परिचालित किया था।

यह पत्र उच्च न्यायालयों के रजिस्ट्रारों, राज्य सरकारों और संघ राज्यक्षेत्रों के गृह सचिव, उच्चतम न्यायालय विधिज संगम और उच्च न्यायालय विधिज संगम के अध्यक्षों, राष्ट्रीय मानव अधिकार आयोग, राष्ट्रीय अल्पसंख्यक आयोग, राष्ट्रीय अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति आयोग, राष्ट्रीय महिला आयोग, राज्य विधि आयोगों, पुलिस अधिकारियों, अधिवक्ताओं, शिक्षाविदों और कुछ सामाजिक संगठनों, संस्थानों आदि को भेजा गया था।

तीन राज्य सरकारों, उच्च न्यायालयों के सात न्यायाधीशों और एक अपर रजिस्ट्रार, दो अधिवक्ताओं, कुछ पुलिस अधिकारियों, एक राज्य विधि आयोग, एक शिक्षाविद और दो संगठनों (निरन्तर और भारतीय वाणिज्य और उद्योग चैम्बर्स परिसंघों) से उत्तर प्राप्त हुए थे।

मुद्दा सं. 1

पांच न्यायाधीशों का मत है कि भारतीय दंड संहिता की धारा 34 और 149 में संशोधन की कोई आवश्यकता नहीं है। एकल व्यक्ति को भी सिद्धांश ठहराया जा सकता है कि उसके अतिरिक्त, दूसरों ने भी मिलकर अपराध किया है। दो न्यायाधीशों ने सकारात्मक उत्तर दिया है। मध्य प्रदेश उच्च न्यायालय और जबलपुर के अपर रजिस्ट्रार ने भी सकारात्मक उत्तर दिया है।

गुजरात सरकार धारा 34 और 149 के संशोधन के बारे में सहमत हो गई है। किन्तु, बिहार सरकार, भारत के विधि आयोग के प्रस्ताव से सहमत नहीं है। असम सरकार ने, संहिता की केवल धारा 294क के संशोधन के बारे में अपनी राय भेजी है।

दोनों अधिवक्ता इस मुद्दे पर मौन हैं। एक पुलिस अधिकारी का मत है कि दोनों उपबंध एक धारा में एक साथ रखे जा सकते हैं और मिलकर अपराध करने वाले दंड के किसी एकल व्यक्ति के लिए उपबंध किया जाए। चार पुलिस अधिकारी इस मुद्दे का समर्थन नहीं करते हैं।

हिमाचल प्रदेश राज्य विधि आयोग ने, इन धाराओं के अधीन किसी भी परिवर्तन का पक्ष नहीं किया है।

शिक्षाविद इस मुद्दे पर मौन हैं।

दोनों संगठन इस मुद्दे पर मौन हैं। महिला संगठन (निरन्तर) ने, इन मुद्दों का उत्तर दिया है जो कुछ सामान्य प्रश्नों को छोड़कर महिलाओं से संबंधित हैं।

मुद्दा सं. 2

सात न्यायाधीश प्रस्ताव में कुछ सुझावों के साथ सहमत हैं और पांच न्यायाधीशों का यह मत है कि प्रस्तावित दंड के नए रूप आर्थिक और सामाजिक अपराधों को लागू नहीं होने चाहिए। सामुदायिक सेवा का दंड केवल समन मामलों को लागू किया जाना चाहिए। पीड़ित व्यक्ति का विचारण न्यायालय द्वारा ही प्रतिपूरित किया जाना चाहिए और प्रतिकर की अधिकतम रकम नियत की जानी चाहिए। दूसरे, न्यायाधीश महसूस करते हैं, “सामुदायिक सेवा” भारतीय परिस्थितियों के लिए सुसंगत है और लागू नहीं हो सकेगी और अपराधों के पीड़ित को प्रतिकर की रकम उस न्यायालय के विवेक पर छोड़ देनी चाहिए जो उसी वाद हेतु से उत्पन्न किसी भी सिविल वाद में प्रतिकर या नुकसानी नियत करने के दौरान, इन पर विचार करेगा और पीड़ित और अभियुक्त दोनों को, एक अवसर देगा।

गुजरात सरकार, उच्चतम न्यायालय द्वारा सुझाए गए दंड के रूप से सहमत है। एक राज्य सरकार इस मुद्दे पर मौन है।

चार पुलिस अधिकारियों का यह मत है कि जहां तक “सामुदायिक सेवा” और “लोक परिनिवास” का संबंध है, व्यवहार में उसका प्रयोग कर पाना अत्यन्त कठिन होगा, तथापि, वे विधि आयोग के शेष प्रस्तावों से सहमत हैं/हो गए हैं।

एक पुलिस अधिकारी का मत है कि "सामुदायिक सेवा" को परिभाषित किए जाने की आवश्यकता है। प्रतिकर न तो पुरस्कार है और न ही दंड। इसको दंड के रूप में बनाए जाने की बजाए, अपराध की प्रकृति पर निर्भर करते हुए, जुमनि की रकम अधिकतम (50,000 रुपए) और न्यूनतम (1000 रुपए) विहित की जा सकती है। इस प्रकार वसूल की गई जुमनि की रकम और जमानत पत्र के सम्पर्क के लिए प्रतिशूलियों से वसूल की गई रकम ऐसी निधि में जाएगी जहाँ से प्रतिकर का संदाय किया जा सकेगा।

एक अधिवक्ता का मत है कि "सामुदायिक सेवा" का दंड प्रभावी नहीं हो सकेगा। धारा 72(2) न्यायोचित प्रतीत नहीं होती है। दूसरे अधिवक्ता ने, इस मुद्दे का उत्तर नहीं दिया है।

दिमाचल प्रदेश राज्य विधि आयोग/भारत के विधि आयोग के प्रस्ताव से सहमत है।

शिक्षाविद ने इस मुद्दे का समर्थन किया है।

"निरन्तर" "और भारतीय वाणिज्य और उद्योग चैम्बर्स" परिसंघ ने उस मुद्दे पर कोई विचार व्यक्त नहीं किया है।

#### मुद्दा सं० 3

अपर रजिस्ट्रार सहित आठ न्यायाधीशों ने, जैसा इस मुद्दे के अधीन सुझाया गया है, धारा 94 को पुनः प्रारूपित करने के प्रस्ताव का समर्थन किया है।

दो राज्य सरकारों ने सकारात्मक उत्तर दिया है। एक अधिवक्ता इस मुद्दे पर मौन है।

चार पुलिस अधिकारी, धारा 94 के प्रस्तावित संशोधन से सहमत हैं। एक पुलिस अधिकारी ने अपना लेख भेजा है। "नया दौर, नए अपराध और पुरानी विधियाँ।"

दूसरे पुलिस अधिकारी ने "धमकियों द्वारा अनिवार्यता" पर कोई टीका-टिप्पणियाँ नहीं की है।

राज्य विधि आयोग ने, इस मुद्दे का पूर्णतः समर्थन किया है और "माई", "बहन" "पितामह-पितामही", "दामाद" या "बहुजों" को सम्मिलित करने का भी सुझाव दिया है।

"निरन्तर" और फिक्री उस मुद्दे पर मौन है।

#### मुद्दा सं० 4

आठ-न्यायाधीश, जिनमें अपर रजिस्ट्रार भी है, नई धारा 94क और 94ख अंतःस्थापित करके कंपनियों के आन्वयिक दायित्व पर सिफारिश से सहमत हैं।

एक राज्य सरकार प्रस्ताव से सहमत है, तथापि, एक दूसरी राज्य सरकार प्रस्ताव से सहमत नहीं है।

एक अधिवक्ता ने, सकारात्मक उत्तर दिया है। एक दूसरे अधिवक्ता ने, दिन्दुस्तान स्टील लिंग बनाम डिसी राज्य, 25-एस टी सी-211 का मामला और अन्य ब्यौरों के साथ कारखाना अधिनियम की धारा 100 को कोट किया है और वह प्रस्ताव का समर्थन नहीं करते हैं।

पांच पुलिस अधिकारी प्रस्तावित संशोधन का समर्थन नहीं करते हैं और उनमें से एक ने सुझाव दिया है कि इसे कंपनी अधिनियम जैसे किसी विशेष परिनियम में किया जा सकता है, न कि भारतीय दंड संहिता में।

राज्य विधि आयोग सुझाव से सहमत है।

भारतीय वाणिज्य और उद्योग चैम्बर्स परिसंघ का यह विचार है कि उक्त प्रस्ताव अनावृत है क्योंकि आर्थिक विद्यान पहले ही कंपनी द्वारा किए गए अपराधों की निवेशकों के प्रतिनिधिक दायित्व के संबंध में उपबंध करता है। इसके अतिरिक्त, किसी अन्य विषय के बारे में इसमें कोई बात नहीं की गई है।

#### मुद्दा सं० 5

सभी न्यायाधीश और रजिस्ट्रार, जिन्होंने हमारी प्रश्नावली का उत्तर दिया है, प्रस्ताव से सहमत है।

दो राज्य सरकारों ने, सकारात्मक उत्तर दिया है।

एक अधिवक्ता सहमत है किन्तु दूसरे अधिवक्ता ने मुद्दे पर कुछ नहीं कहा है।

चार पुलिस अधिकारियों का मत है कि वर्तमान उपबंध पर्याप्त है, किन्तु धारा 153, 153ख में विहित दंड में वृद्धि की जानी अपेक्षित है। एक पुलिस अधिकारी ने सुझाव दिया है कि हिस्सा के कार्य को करने के लिए व्याख्यान देने या दुष्प्रेरण को कारावास और जुमनि, दोनों के रूप में कठोर शास्ति वाला अपराध बनाया जाना चाहिए।

राज्य विधि आयोग प्रस्ताव से सहमत है।

"निरन्तर" ने कोई उत्तर नहीं दिया है।

#### मुद्दा सं० 6

सभी न्यायाधीशों और रजिस्ट्रार ने नई धारा 167क के अंतःस्थापन के लिए प्रस्ताव का समर्थन किया है।

एक राज्य सरकार सहमत है किन्तु दूसरी राज्य सरकार प्रस्ताव का समर्थन नहीं करती है।

एक अधिवक्ता ने, सकारात्मक उत्तर दिया है जबकि दूसरे, अधिवक्ता ने इस मुद्दे पर कुछ नहीं कहा है। चार पुलिस अधिकारियों का यह मत है कि प्रस्तावित विषय पहले ही भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1988 के उपबंधों के अन्तर्गत समावेशित है और धारा 167क की कोई आवश्यकता नहीं है। एक पुलिस अधिकारी महसूस करता है कि प्रस्तावित संशोधन भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1988 में अंतःस्थापित किया जाना चाहिए न कि भारतीय दंड संहिता में।

राज्य विधि आयोग सुझाव से सहमत है।

शिक्षाविद ने मुद्दे पर कुछ नहीं कहा है।

"निरन्तर" ने इस मुद्दे का उत्तर नहीं दिया है।

#### मुद्दा सं० 7

सभी न्यायाधीश और रजिस्ट्रार, जिन्होंने हमारे पत्र का उत्तर दिया, सकारात्मक उत्तर ही दिया है।

दो राज्य सरकारों ने प्रस्ताव का समर्थन किया और उनमें एक सरकार ने यह और सुझाव दिया है कि ऐसे प्रमाणपत्रों का भ्रष्ट रूप से उपयोग करने के लिए भी एक उपबंध बनाया जाए।

एक अधिवक्ता भी सिफारिशों से सहमत है।

पांच पुलिस अधिकारियों ने प्रस्ताव का समर्थन किया। तथापि, उनका मत है कि इस मुद्दे में भारतीय आयुर्विज्ञान परिषद को भी अंतर्विलित होना चाहिए।

राज्य विधि आयोग ने मुद्दे का समर्थन किया है।

शिक्षाविद और अन्य संगठन इस मुद्दे पर मौन हैं।

#### मुद्दा सं० 8

एक न्यायाधीश के सिवाय, सभी न्यायाधीशों और रजिस्ट्रारों ने, जिन्होंने पत्र का उत्तर दिया, सकारात्मक उत्तर ही दिया है।

एक राज्य सरकार ने, भारत के विधि आयोग के प्रस्ताव का समर्थन किया और दूसरी राज्य सरकार ने, नकारात्मक उत्तर दिया है।

केवल एक अधिवक्ता इस प्रस्ताव से सहमत है।

चार पुलिस अधिकारियों का यह मत है कि प्रस्तावित संशोधन मोटर यान अधिनियम के अन्तर्गत समावेशित है और इस प्रयोजन के लिए भारतीय दंड संहिता का संशोधन करने की कोई आवश्यकता नहीं है। पुलिस अधिकारी महसूस करता है कि यदि नया उपबंध बनाया जाना ही अपेक्षित है, तो इसे भारतीय दंड संहिता में बनाने की बजाए मोटर यान अधिनियम में बनाना चाहिए।

राज्य विधि आयोग के अनुसार, मोटर यान अधिनियम की धारा 113, 114, 115 का संशोधन वर्ष 1994 में किया गया था, इसलिए, इस मुद्दे में भी और परिवर्तन करने की आवश्यकता नहीं है। तथापि, भारतीय दंड संहिता की धारा 279, 304क और 337 के अधीन उपबंधित दंड में वृद्धि की जा सकती है।

#### मुद्दा सं० 9

सभी न्यायाधीश और अपर रजिस्ट्रार, जिन्होंने इस मुद्दे का उत्तर दिया है, प्रस्ताव से सहमत है।

एक राज्य सरकार ने, नकारात्मक और दूसरी राज्य सरकार ने सकारात्मक उत्तर दिया है।

दोनों अधिवक्ताओं ने मुद्दे का समर्थन किया है।

चार पुलिस अधिकारियों का मत है कि यह अपराध भारतीय दंड संहिता की धारा 44 के साथ पठित उसकी धारा 383 के उपबंधों के अन्तर्गत आता है।

इस धारा के अधीन उपबंधित दंड में वृद्धि किए जाने की आवश्यकता है।

एक पुलिस अधिकारी ने सकारात्मक उत्तर दिया है।

अन्य व्यक्तियों, जिन्होंने पत्र का उत्तर दिया है, इस मुद्दे पर मौन है।

#### मुद्दा सं. 10

न्यायाधीश और अपर रजिस्ट्रार, जिन्होंने पत्र का उत्तर दिया, उनमें से अधिकतर ने “आपराधिक मानव वध” और “हत्या” की परिभाषाओं में परिवर्तन के लिए नकारात्मक उत्तर दिया है। मृत्यु दंडादेश के बारे में, वे महसूस करते हैं कि इसे न्यायालय के विवेक पर छोड़ देना चाहिए। दोनों राज्य सरकारें भी विद्यमान उपबंधों से सहमत हैं।

एक अधिवक्ता, जिसने उस मुद्दे का उत्तर दिया, प्रस्ताव का समर्थन नहीं किया है।

चार पुलिस अधिकारियों ने नकारात्मक उत्तर दिया है और एक अधिकारी ने उस मुद्दे के बारे में कोई टीका-टिप्पणी नहीं की है।

राज्य विधि आयोग के अनुसार वर्तमान मुद्दे में कोई परिवर्तन करना अपेक्षित नहीं है।

#### मुद्दा सं. 11

अधिकतर न्यायाधीश, जिन्होंने पत्र का उत्तर दिया, इस प्रश्न का उत्तर सकारात्मक ही दिया है।

दोनों राज्य सरकारें इस प्रस्ताव से सहमत हैं।

एक अधिवक्ता ने भी इस मुद्दे का समर्थन किया है।

अधिकतर पुलिस अधिकारियों ने प्रस्ताव का स्वागत किया और उनमें से एक ने यह और सुझाव दिया कि कारावास के दंड को हटा दिया जाए किन्तु यह दंड जुमनि के रूप में न्यूनतम 10000 रु. और अधिकतम 50,000 रु. के बीच परिवर्तनशील सीमा विहित करके आरंभ किया जाए।

राज्य विधि आयोग, जैसा प्रस्तावित है, उससे सहमत है। यह और सुझाव दिया है कि अपराध को अजमानतीय तथा संज्ञेय बनाया जाए।

#### मुद्दा सं. 12

अधिकतर व्यक्ति, जिन्होंने हमारे पत्र (उपांध 2) का उत्तर दिया, अपराधों की संगीन प्रकृति के लिए दंड में वृद्धि करने के लिए सहमत हो गए हैं।

#### मुद्दा सं. 13

अधिकतर न्यायाधीश, जिन्होंने उत्तर दिया है, भारत के विधि आयोग के प्रस्ताव से सहमत है।

दोनों राज्य सरकारें ने सकारात्मक उत्तर दिया है।

एक अधिवक्ता प्रस्ताव का समर्थन करता है।

एक को छोड़कर सभी पुलिस अधिकारियों ने सकारात्मक उत्तर दिया है और दंड के उच्चतर मान के लिए अभिवाक किया है।

राज्य विधि आयोग ने, इस मुद्दे का समर्थन किया है और अपराध को अजमानतीय तथा संज्ञेय बनाने का अभिवाक किया है और दंड भयोपकारी बनाया जाना चाहिए, जो किसी भी मामले में 10 वर्ष से कम नहीं होना चाहिए।

शिक्षाविद् और अन्य संगठनों ने उत्तर नहीं दिया है।

#### मुद्दा सं. 14

सभी न्यायाधीश, जिन्होंने कार्यपत्र का उत्तर दिया, सुझाव से सहमत हो गए हैं।

एक राज्य सरकार पूर्ण रूप से सहमत है किन्तु गुजरात सरकार का मत है कि भारतीय दंड संहिता की धारा 380 में कोई परिवर्तन आवश्यक नहीं है और नई धारा 380क अंतर्स्थापित की जानी अपेक्षित नहीं है। इसके अतिरिक्त, वह इस मुद्दे के अधीन धारा 381 और 381क के सुझावों के लिए सहमत है।

एक अधिवक्ता भी प्रस्ताव से सहमत है।

चार पुलिस अधिकारियों ने सकारात्मक उत्तर दिया है लेकिन एक पुलिस अधिकारी का मत है कि भारतीय दंड संहिता की धारा 380 का, लोक संपत्ति की ओर के अपराध को इसमें सम्मिलित करने के लिए, संशोधन करने की आवश्यकता नहीं है। धारा

380क की तरह एक नई धारा अधिनियमित करने की बजाए, धारा 404 को संज्ञेय और अजमानतीय अपराध बनाया जाए। धारा 381 में एक स्पष्टीकरण जोड़ा जाए जिससे कि यह स्पष्ट हो सके कि सेवक के अन्तर्गत कर्मचारी भी है। धारा 381क के समावेशन का सुझाव नहीं दिया गया है क्योंकि मरता और अचेतनता को सिद्ध करना है।

राज्य विधि आयोग प्रस्ताव से सहमत है।

#### मुद्दा सं. 15

सभी न्यायाधीश और अपर रजिस्ट्रार जिन्होंने मुद्दे का उत्तर दिया है, सकारात्मक उत्तर ही दिया है।

एक राज्य सरकार प्रस्ताव से सहमत है किन्तु दूसरी राज्य सरकार ने नकारात्मक उत्तर दिया है।

एक अधिवक्ता सुझाव से सहमत है।

अधिकतर पुलिस अधिकारी, जिन्होंने दंड संहिता के मुख्य मुद्दों का उत्तर ही दिया है। उनका मत है कि मयादोहन के लिए किसी व्यक्ति को दंडित करने के लिए भारतीय दंड संहिता की धारा 44 के साथ पठित धारा 387 पर्याप्त है।

राज्य विधि आयोग ने, प्रस्ताव का समर्थन किया है। यह भी सुझाया गया है कि शैक्षिक संस्थानों में रैंगिंग को भारतीय दंड संहिता के अधीन अजमानतीय अपराध बनाया जाना चाहिए।

#### मुद्दा सं. 16

वर्तमान मुद्दे का सभी न्यायाधीशों और अपर रजिस्ट्रार द्वारा, जिन्होंने मुद्दों का उत्तर दिया है, समर्थन किया गया है।

एक राज्य सरकार ने सकारात्मक उत्तर दिया और दूसरी राज्य सरकार ने नकारात्मक उत्तर दिया है।

एक अधिवक्ता ने सकारात्मक उत्तर दिया है।

चार पुलिस अधिकारियों ने नकारात्मक उत्तर दिया है किन्तु दो पुलिस अधिकारी इस मुद्दे पर मौन हैं।

राज्य विधि आयोग प्रस्ताव से सहमत है।

#### मुद्दा सं. 17

सभी न्यायाधीशों और अपर रजिस्ट्रार, जिन्होंने पत्र का उत्तर दिया, सकारात्मक उत्तर ही दिया है।

दोनों राज्य सरकारों ने सकारात्मक उत्तर दिया है।

अधिकतर पुलिस अधिकारी, जिन्होंने पत्र का उत्तर दिया है, प्रस्ताव से सहमत है।

एक अधिवक्ता ने भी मुद्दे का समर्थन किया है।

राज्य विधि आयोग ने, सकारात्मक उत्तर दिया है और सुझाव दिया है कि अपराध को संज्ञेय और अजमानतीय बनाया जाए।

शेष व्यक्ति मौन है।

#### मुद्दा सं. 18

अधिकतर न्यायाधीश और अपर रजिस्ट्रार, जिन्होंने मुद्दों का उत्तर दिया है, सकारात्मक उत्तर ही दिया है।

एक राज्य सरकार प्रस्ताव से सहमत हो गई है किन्तु दूसरी राज्य सरकार ने, नकारात्मक उत्तर दिया है।

एक अधिवक्ता ने भी प्रस्ताव का समर्थन किया है।

अधिकतर पुलिस अधिकारी प्रस्ताव से सहमत नहीं है। वे महसूस करते हैं कि इससे निगरानी उपस्करों का वैध उपयोग करने में अन्वेषक अभिकरण गंभीर रूप से प्रभावित होंगे।

राज्य विधि आयोग ने, इस विषय के अधीन विचार का पूरी तरह समर्थन किया है।

#### मुद्दा सं. 19

नई धारा 166क को अंतर्स्थापित करने के विषय में, वे सभी न्यायाधीश, जिन्होंने पत्र का उत्तर दिया है, भारत के विधि आयोग के प्रस्ताव से सहमत हो गए हैं।

ऐसी किसी भी राज्य सरकार ने, जिसने हमारे पत्र का उत्तर दिया है, सकारात्मक उत्तर नहीं दिया है।

एक अधिवक्ता ने उक्त नई धारा के पक्ष में अपने विचार व्यक्त किया है।

अधिकतर पुलिस अधिकारियों का यह मत है कि भारत में पुलिस मानव शक्ति की नगण्य संख्या और अपर्याप्त संसाधनों के साथ काम कर रही है इसलिए इस प्रकार का प्रस्ताव उचित नहीं प्रतीत होता है। एक पुलिस अधिकारी ने यह सुझाव दिया है कि राज्य

सरकारों, दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 160 के उपबंधों का अतिक्रमण करने वाले पुलिस अधिकारियों के विरुद्ध अनुशासनिक कार्रवाई करने के लिए राज्य पुलिस विनियमों के उपबंधों में संशोधन कर सकती है।

अन्य व्यक्ति, जिन्होंने हमारे कार्य पत्र का उत्तर दिया है, या तो इस मुद्रे पर कोई उत्तर नहीं दिया या मौन रहे हैं।

दो राज्य सरकारों के सिवाय अधिकतर उन व्यक्तियों ने, जिन्होंने इस मुद्रे का उत्तर दिया है, नई धारा 167के अंतःस्थापन के बारे में सकारात्मक उत्तर दिया है।

राज्य सरकारों/उच्च न्यायालयों के न्यायाधीशों/रजिस्ट्रारों/न्यायिक अधिकारियों, विधिज्ञ परिषद/विधिज्ञ संगमों/अधिवक्ताओं/लोक अभियोजकों/पुलिस अधिकारियों, राज्य विधि आयोगों, शिक्षाविदों और सामाजिक संगठनों आदि, जिनके उत्तर आपस हुए हैं, की सूची

## क. राज्य संस्कार

1. श्री पी० जे० दोलकिया, विधि सचिव, गुजरात राज्य।
  2. श्री मदन प्रसाद श्रीवास्तव, संयुक्त सचिव, बिहार सरकार।
  3. श्री एस० सी० दास, भारतीय प्रशासनिक सेवा, सचिव, असम सरकार।

ख. न्यायाधीश/रजिस्टर/न्यायिक अधिकारी

1. मुख्य न्यायमूर्ति, हिमाचल प्रदेश उच्च न्यायालय।
  2. न्यायमूर्ति, आर० जी० वैद्यनाथ, मुम्बई उच्च न्यायालय।
  3. श्री आर० एस० त्रिपाठी, अपर रजिस्टर, मध्य प्रदेश उच्च न्यायालय, जबलपुर।
  4. न्यायमूर्ति, नगेन्द्र नाथ, पटना उच्च न्यायालय।
  5. न्यायमूर्ति एस० एन० झा, पटना उच्च न्यायालय।
  6. न्यायमूर्ति नरेश कुमार सिन्हा, पटना उच्च न्यायालय।
  7. न्यायमूर्ति पी० के० सरीन, पटना उच्च न्यायालय।
  8. न्यायमूर्ति जी० एस० चौबे, पटना उच्च न्यायालय।

#### ग. विधिवाच परिषद/विधि संगम/अधिवेशन

1. श्री ए० ए० एन० शास्त्री, अधिवक्ता, हैदराबाद।
  2. श्री ए० के० श्री० निवासमर्ति अधिवक्ता उच्चतम न्यायालय हैदराबाद।

ପାତାଲିମ ଅନ୍ତିକଷ୍ଟି

1. श्री आंजनेय रेडी, भा० पु० से०, महानिदेशक (सर्तकता और इंजीनियरी), हैदराबाद।
  2. श्री०पी०एस० बी० प्रसाद, संयुक्त निदेशक, मारतीय पुलिस अकादमी, हैदराबाद।
  3. महानिरीक्षक, अपराध अन्वेषण विभाग, पटना, बिहार।
  4. उप महानिरीक्षक, आर्थिक अपराध, पटना, बिहार।
  5. उप महानिरीक्षक, बी० एम० पी०, पटना।
  6. उप महानिरीक्षक, डकैती-विरोध, पटना।

### राज्य विधि आयोग

## १. हिमाचल प्रदेश राज्य विधि आयोग।

३ शिक्षाविह

1. डॉ. सी. ही. सौजा एवं सत्यांवकर कालेज आर्ट्स विभागी शोला।

३ सामाजिक संगठन

1. श्रीमती अनुजा गुप्ता, 'निरन्तर' महिला और शिक्षा केन्द्र, नई दिल्ली।
  2. डॉ. अमित मित्रा, भारतीय वाणिज्य और उद्योग चेस्टर्स परिसंघ, नई दिल्ली।

उपाबन्ध 5

भारत के विधि आयोग के सहयोग से हिमाचल प्रदेश राज्य विधि आयोग द्वारा भारतीय दंड संहिता (संशोधन) विधेयक, 1978 और भारतीय साक्ष्य अधिनियम के संबंध में 26 अप्रैल, 1997 को शिमला में आयोजित कार्यशाला की कार्यवाही

भारत के विधि आयोग और दिमाचल प्रदेश विधि आयोग के तत्वाधान में भारतीय दंड संदिता (संशोधन) विधेयक, 1978 के संबंध में 26 अप्रैल, 1997 को शिमला में एक कार्यशाला आयोजित की गई।

इस कार्यशाला का उद्घाटन भारत के विधि आयोग के माननीय अध्यक्ष न्यायमूर्ति के ० जयचन्द्र रेहडी ने किया था। इसकी अध्यक्षता न्यायमूर्ति आर० एस० ठाकुर ने की और सदस्य सचिव, श्री जीवन नंद जीवन, भारतीय प्रशासनिक सेवा, ने धन्यवाद प्रस्ताव पेश किया था। इस कार्यशाला में न्यायपालिक, विश्वविद्यालय के विधि संकाय का प्रतिनिधित्व करने वाले लगभग 50 भाग लेने वाले व्यक्ति उपस्थित थे।

उपने उद्घाटन भाषण में, माननीय न्यायमूर्ति के। जयचन्द्र रेडी, अध्यक्ष, भारत का विधि आयोग ने, कहा कि मारतीय दंड सहित, 1860 के विभिन्न उपबंधों का संशोधन करने की कोई आवश्यकता नहीं है। उन्होंने दांडिक मामलों के श्रृंखला विचारण और त्वरित न्याय की व्यवस्था के लिए एक स्वतंत्र अभियोजन विभाग सहित एक स्वतंत्र अन्वेषक अभिकरण की स्थापना करने का सुझाव दिया। उन्होंने यह भी कहा कि लोगों का, विलंब के कारण, अन्वेषण अभिकरणों में विश्वास उठाता जा रहा है। उन्होंने कहा कि अन्वेषण के दौरान संबंध अधिकारियों को अन्य नेमी कर्तव्यों का पालन करने के लिए कहा जा रहा है जिनसे विलंब कारित होता है। उन्होंने सुझाव दिया कि अन्वेषण अभिकरणों के योगदान को नष्ट नहीं करना चाहिए क्योंकि वे न्यायालय और अन्य विभागों के बीच संबंध बनाते हैं। उन्होंने दांडिक मामलों के त्वरित निपटान के लिए अन्वेषक और अभियोजन अभिकरणों के बीच निकट समन्वय के बाबत की। न्यायमूर्ति रेडी ने और कहा कि प्रतिरक्षा का यह कर्तव्य है कि वह न्यायालय को भ्रमित न करे और निष्पक्ष रहे तथा यह सुनिश्चित करे कि दोषी व्यक्ति बच कर नहीं निकल पाता है और निर्दोष को तो दण्डित नहीं किया जाता है।

अन्त में, उन्होंने भाग लेने वालों का ध्यान करियर महत्वपूर्ण प्रस्तावित उपबंधों की ओर आकर्षित किया, जैसा कि भारतीय दंड संहिता (संशोधन) विधेयक 1978 में अन्तर्विष्ट है जब इन्हें अनन्योक्तिया के लिए सामने रख रहे थे।

न्यायमूर्ति आर० एस० ठाकुर, सदस्य, हिमाचल प्रदेश राज्य विधि आयोग ने, अपने अध्यक्षीय भाषण में, अध्यक्ष, भारत की विधि आयोग और न्यायमूर्ति आर० एस० गुप्ता, सदस्य, राष्ट्रीय विधि आयोग का स्वागत किया। उन्होंने वर्तमान समय की आवश्यकताएँ संबंध में भारतीय दृढ़ संदित्ता का संशोधन करने की आवश्यकता पर जोर दिया। उन्होंने स्वतंत्रता के पश्चात बढ़ती हुई अपराध के संबंध और हाइड्रिक विधि के संबंध में सविस्तार से बताया।

उद्योगात्मक अधिवेशन के पश्चात्, प्रथम अधिवेशन 11-30 बजे पूर्वाहन में भारतीय दंड संदित्ता (संशोधन) विधेयक, 1978 पर आरंभ हुआ। न्यायमूर्ति रेडी, अध्यक्ष, भारत का विधि आयोग ने, प्रथम अधिवेशन की अध्यक्षता की। उन्होंने बताया कि दापिंदव न्याय परिवान की प्रणाली में चार अभिकरण संलिप्त हैं के हैं, अन्वेषक अभिकरण, अभियोजन, प्रतिरक्षा और न्यायालय। उन्होंने त्वरित और त्रुजु विचारण के लिए, उनमें से प्रत्येक को समनुदेशित किए गए निष्पक्ष कार्यकरण पर जोर दिया। उन्होंने पुलिस का विषवास में लेने की आवश्यकता पर बल दिया। उनके अनुसार, अन्वेषक अभिकरण और अभियोजन के बीच समन्वय समय की मांग है। उन्होंने भारतीय दंड संदित्ता (संशोधन) विधेयक, 1978 के विभिन्न उपबंधों का उल्लेख किया, जिन पर वार्डिक न्याय प्रणाली वर्तमान समय की अपेक्षाओं को पूरा करने के लिए, कार्यशाला के अनुक्रम के दौरान विनिर्दिष्ट विचार-विमर्श की आवश्यकता है। तथापि, वर्षा के दौरान, उन्होंने हत्या के अपराध को पूरा करने के प्रयोजन के लिए जानकारी और 'आशय' के बीच अन्तर के बारे बताया। अन्ततः न्यायमूर्ति रेडी ने विकटोमेलीजी के विषय को चर्चा के लिए सामने रखा।

अपनी प्रतिक्रिया में, डा० आई० पी० मेसी, सदस्य, हिमाचल प्रदेश राज्य मानव अधिकार आयोग ने, भारतीय दंड संहिता (संशोधन) विधेयक, 1973 पर भारत के विधि आयोग द्वारा किए गए कार्य की प्रशंसा की। उन्होंने धारा 309, 376, 377, धा० 124(क) और 124(छ) पर मुद्द्यतः बल दिया, जिन्हें, उनके अनुसार अद्यतन करना अपेक्षित है। श्री एन० एस० मंडयाल, पीठास अधिकारी, श्रम न्यायालय ने, भारतीय दंड संहिता की धारा 18 के अधीन यथा परिभाषित 'भारत' शब्द की परिभाषा में परिवर्तन चाहा। उनका विचार था कि जम्मू-कश्मीर संहिता संपूर्ण भारत को इस परिभाषा के अन्तर्गत लाने के लिए इसे विस्तृत किया जाना चाहिए। उन्होंने प्रस्ताव किया कि भारतीय दंड संहिता की धारा 228 के संबोध में दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 345 के अधीन उपबंध किया जाना चाहिए। इसके अतिरिक्त, उन्होंने निवाचित प्रतिनिधियों जैसे विधान सभा सदस्यों, संसद् सदस्यों और प्राम पंचायत

प्रधानों आदि को विनिर्दिष्ट रूप से लोक सेवक की परिभाषा में लाने के लिए भारतीय दंड संहिता की धारा 21 का संशोधन करने की आवश्यकता पर बल दिया।

श्री के० सी० नैनी, अपर सचिव, (विधि), हिमाचल प्रदेश सरकार ने सुझाव दिया कि हमारा देश एक कल्याणकारी राज्य होने के कारण, मोटर यान मामलों की अनुरूपता पर पीड़ित या उसके कुटुम्ब को पर्याप्त रूप से प्रतिकारित करने के लिए भारतीय दंड संहिता में उपबंध किया जाना चाहिए। उन्होंने यह और सुझाव दिया कि न्यायालय के भीतर और बाहर दाँड़िक मामलों के साक्षियों के लिए सुरक्षा का उपबंध इस समय छूटा हुआ है, किया जाना चाहिए।

राज्य के सर्वोच्च श्रेणी के पुलिस अधिकारियों ने, जिनमें पुलिस महानिदेशक और पुलिस महानिरीक्षक भी हैं, विचार-विमर्श में सक्रिय रूप से भाग लिया। श्री आर० के० श्रीवास्तव, महानिदेशक (सी० आई० डी०) ने सुझाव दिया कि भारतीय दंड संहिता की धारा 79 का इसकी धारा 76 के अधीन उपबंध के कारण छोड़ देना चाहिए। श्री श्रीवास्तव ने सुझाव दिया कि प्रस्तावित धारा 94 में "निकट नातेवार" शब्द को भी उस प्रभाव में 'मित्र' को मिला लेना चाहिए। उन्होंने भारतीय दंड संहिता की धारा 302 और 304 के अधीन दिए जाने वाले दंड की मात्रा के संबंध में भी कहा। श्री ए० के० पुरी, पुलिस महानिरीक्षक (कानून और व्यवस्था) ने, यह कहते हुए अपनी चिंता व्यक्त की कि संहिता के अधीन सैनिक सेवा को परिभाषित नहीं किया गया है। उन्होंने यह भी आगे महसूस किया कि धारा 124(ख) को पुनः प्रारूपित करने की कोई आवश्यकता नहीं है। उनकी राय में, इसका दुरुपयोग किया जा सकता है। श्री एस० आर० मर्दी, पुलिस अधीक्षक, शिमला का यह विचार या कि भारतीय दंड संहिता की धारा 427, 182, 186, 189, 199(क), और 174 से 187 को संज्ञेय और अजमानीय बना देना चाहिए।

प्रोफेसर सी० एल० आनन्द, अध्यक्ष, विधि विभाग, हिमाचल प्रदेश विश्वविद्यालय, शिमला ने सुझाव दिया कि भारतीय दंड संहिता की धारा 99 को दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 46 के अध्यधीन बनाना चाहिए। उन्होंने भारतीय दंड संहिता की धारा 84, 299 और 300 के बारे में विस्तार से कहा।

माननीय अध्यक्ष, भारत का विधि आयोग ने, सुविख्यात भाग लेने वाले व्यक्तियों द्वारा उठाए गए मुद्दों पर कार्रवाई की ओर चर्चा के लिए उठाए गए सभी विधिक उपबंधों का सही परिदृश्य प्रस्तुत किया।

निम्नलिखित व्यक्ति उपस्थित थे:-

1. न्यायमूर्ति के० जयचन्द्र रेडी, अध्यक्ष, भारत का विधि आयोग।
2. न्यायमूर्ति आर० एल० गुप्ता, सदस्य, हिमाचल प्रदेश राज्य विधि आयोग।
3. न्यायमूर्ति आर० एस० ठाकुर, सदस्य, हिमाचल प्रदेश राज्य विधि आयोग।
4. श्री जीवानंद जीवन, सदस्य, सचिव, हिमाचल प्रदेश का विधि आयोग।
5. श्री एम० डी० शर्मा, संयुक्त सचिव (प्रारूपण), हिमाचल प्रदेश राज्य विधि आयोग।
6. श्री एस० एस० ठाकुर, सचिव (विधि), हिमाचल प्रदेश सरकार।
7. श्री एस० एन० वर्मा, सचिव (गृह), हिमाचल प्रदेश सरकार।
8. श्री के० सी० नैनी, अपर सचिव (विधि), हिमाचल प्रदेश सरकार।
9. श्री सुभाष अहलुवालिया, निदेशक, लोक सम्पर्क विभाग, हिमाचल प्रदेश।
10. श्री सी० एस० शर्मा, संयुक्त निदेशक (अभियोजन), हिमाचल प्रदेश।
11. श्री रामेश्वर शर्मा, अध्यक्ष, जिला उपभोक्ता विवाद निवारण फोरम, शिमला।
12. श्री बी० एस० ठाकुर, पुलिस महानिदेशक, हिमाचल प्रदेश।
13. श्री ए० के० पुरी, पुलिस महानिरीक्षक (कानून और व्यवस्था), हिमाचल प्रदेश।
14. श्री आई० एच० एस० संधु, अपर महानिदेशक (कारागार), हिमाचल प्रदेश।
15. श्री आर० के० श्रीवास्तव, अपर महानिदेशक (अपराध अन्वेषण विभाग), हिमाचल प्रदेश।
16. श्री सी० आर० बी० ललित, रजिस्ट्रार, हिमाचल प्रदेश विश्वविद्यालय।
17. श्री बी० एस० चौहान, जिला और सेशन न्यायाधीश, शिमला।
18. श्री एम० एस० मंड्याल, पीठारीन अधिकारी, श्रम न्यायालय, शिमला।
19. श्री टी० एन० वैद्य, सचिव, राज्य विधिक बोर्ड, शिमला।
20. श्री के० सी० चौहान, सदस्य, हिमाचल प्रदेश पर्यावरण आयोग, हिमाचल प्रदेश।

21. श्री एस० आर० शर्मा, अधीक्षक, लोकायुक्त, पुलिस शिमला।
22. श्री एस० आर० मर्दी, पुलिस अधीक्षक, शिमला।
23. श्री त्रिलोक चौहान, महा सचिव, हिमाचल प्रदेश उच्च न्यायालय विधिज्ञ संगम।
24. श्री विनीत गौतम, अध्यक्ष, जिला विधिज्ञ संगम।
25. श्री सुरेन्द्र स्टेटा, महा सचिव, जिला विधिज्ञ संगम।
26. श्री मलिकियत सिंह नन्दल, अधिवक्ता।
27. श्री के० डी० सूद, अधिवक्ता।
28. डा० आई० पी० मैसी, सदस्य, मानव अधिकार आयोग, हिमाचल प्रदेश।
29. प्रो० सी० एल० आनंद, विधि संकायाध्यक्ष, हिमाचल प्रदेश विश्वविद्यालय।
30. डा० पी० एल० मेहता, विधि के सह-आचार्य, हिमाचल प्रदेश विश्वविद्यालय।
31. डा० सुरेश कपूर, विधि के सह-आचार्य, हिमाचल प्रदेश विश्वविद्यालय।
32. डा० ओ० पी० चौहान, सह-आचार्य, विधि, हिमाचल प्रदेश विश्वविद्यालय।
33. डा० डी० एन० गुप्ता, सह-आचार्य, विधि, हिमाचल प्रदेश विश्वविद्यालय।
34. डा० एच० आर० झिंगला, विधि के सह-आचार्य, हिमाचल प्रदेश विश्वविद्यालय।
35. डा० के० सी० ठाकुर, विधि के सह-आचार्य, हिमाचल प्रदेश विश्वविद्यालय।
36. डा० एस० एन० शर्मा, विधि के सह-आचार्य, हिमाचल प्रदेश विश्वविद्यालय।
37. श्री दिनेश शर्मा, विधि अधिकारी, हिमाचल प्रदेश राज्य विधि आयोग।
38. श्री दलीप सिंह कंवर, अनुभाग अधिकारी, हिमाचल प्रदेश राज्य विधि आयोग।
39. डा० सुरेन्द्र सिंह जैसवाल, विधि अधिकारी, राज्य विधि आयोग।
40. श्री अशोक कुमार मोहन्द्र, रीडर, हिमाचल प्रदेश राज्य।
41. श्री परस राम, उपनिरीक्षक (लोक आयुक्त), हिमाचल प्रदेश।
42. श्री बी० एस० शर्मा, अधिवक्ता।
43. श्री अवतार सिंह, अधिवक्ता।
44. श्री शशि कुमार शिरुश, अधिवक्ता।
45. श्री संजय शर्मा, अधिवक्ता।
46. श्री भगवान चन्द, अधिवक्ता।
47. श्री निनोद सूद, अधिवक्ता।
48. श्री प्रबोद ठाकुर, अधिवक्ता।
49. श्री गुलजार सिंह राठी, अधिवक्ता।
50. श्री चन्द्र मोहन शर्मा।

## उपांध 6

### भारत के विधि आयोग और गोवा सरकार के तत्वाधान में 18 जनवरी, 1997 को गोवा में हुई दांडिक विधि पर कार्यशाला की कार्यवाहियां

भारत के विधि आयोग और गोवा सरकार के तत्वाधान में दांडिक विधि पर कार्यशाला, पणजी, गोवा में आयोजित हुई थी। कार्यशाला की अध्यक्षा भारतीय विधि आयोग के अध्यक्ष, न्यायमूर्ति श्री के० जयचन्द्र रेडी ने की थी। कार्यशाला, समाज के मिश्रित वर्ग, अधिवक्ताओं, पुलिस अधिकारियों, विधि अधिकारियों और लोक अभियोजकों के विचारों का गहन अध्ययन और उनके मत अभिनिष्ठित करने और भारतीय दंड संहिता में संशोधन तथा सुधार के संबंध में सुझाव देने के लिए आयोजित की गई थी।

गोवा के एक मंत्री ने कहा कि जैसे-जैसे समाज प्रगति करता है, बदलती हुई आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए वैसे वैसे विधि में परिवर्तनों की आपेक्षा होती है। विधि स्थिर नहीं हो सकती, और कहा कि इसे परिवर्तन के अनुकूल होने की आवश्यकता होती है।

न्यायालयों के समक्ष लंबित मामलों की मारी संख्या को निर्दिष्ट करते हुए, श्री फनाडिस ने कहा कि राज्य सरकारें और केन्द्रीय सरकार दोनों, न्यायालयों में सुधार लाने के लिए प्रयत्नशील हैं।

श्री फनाडिस ने गोवा में पुर्तगाली विधियों तथा स्वतंत्रता के पश्चात अधिनियमित की गई विधियों का भी पुनर्विलोकन कराने की आवश्यकता व्यक्त की।

न्यायमूर्ति के० जयचन्द्र रेडी ने दांडिक मामलों का अन्वेषण करने और इस समय पुलिस द्वारा किए जा रहे कार्य के लिए एक पृथक पद्धति विकसित करने की आवश्यकता पर जोर दिया। उन्होंने कहा कि कानून और व्यवस्था बनाए रखने के अतिरिक्त पुलिस बहुत से कर्तव्यों से बोक्षिल है।

न्यायमूर्ति रेडी ने कहा कि विधि आयोग ने त्वरित न्याय के लिए बहुत से उपाय और अध्युपाय सुझाए हैं। उन्होंने तर्क दिया कि साक्षियों की उचित रूप से देखभाल करनी चाहिए क्योंकि प्रायः उन्हें दूर स्थानों से आना पड़ता है और इससे उनके दैनिक उपार्जन की हानि होने का खतरा बन जाता है। उन्होंने मांग की कि राज्य को दांडिक मामलों के पीड़ितों की उचित देखभाल करनी चाहिए।

न्यायमूर्ति रेडी ने, पूर्णतः यह महसूस किया कि एन० डी० पी० एस० अधिनियम का विशेषज्ञों द्वारा पुनर्विलोकन किया जाना चाहिए। गोवा उच्च न्यायालय न्यायीठ के न्यायमूर्ति चन्द्रशेखर ने पुलिस की छवि को बदलने की आवश्यकता पर जोर दिया।

उन्होंने कहा कि पुलिस कानून और व्यवस्था बनाए रखने के अतिरिक्त और अनेक दायित्वों का निर्वाह कर रही है।

न्यायमूर्ति रेडी ने कहा कि विधि आयोग ने त्वरित न्याय के लिए अनेक कदम और उपायों का सुझाव दिया है। उन्होंने कहा कि साक्षियों की तत्परतापूर्वक देखरेख की जाए क्योंकि प्रायः वे सुदूर स्थानों से आते हैं और दैनिक उपार्जन की हानि की जोखिम उठाते हैं। उन्होंने राज्य सरकार को आपराधिक मामलों में पीड़ित व्यक्तियों की सम्यक देखभाल करने के लिए कहा।

न्यायमूर्ति रेडी ने, गंभीरतापूर्वक महसूस किया कि स्वापक औषधि और मन-प्रभावी पदार्थ अधिनियम का विशेषज्ञों द्वारा पुनर्विलोकन किया जाना चाहिए। गोवा उच्च न्यायालय पीठ के न्यायमूर्ति चन्द्रशेखर द्वारा ने पुलिस की दृष्टि में परिवर्तन की आवश्यकता पर जोर दिया। उन्होंने कहा कि पुलिस को अपने आपको लोगों के मित्र के रूप में समझना चाहिए और पुलिस की ओर से अन्तर्विलोकन की आवश्यकता की मांग करती है।

इसके पश्चात, कार्यशाला में, अधिकतर भाग लेने वालों ने अपराधी की लोक परिनिवारण पर और कुछ सीमा तक उसके द्वारा प्रतिकार का संदर्भ करने के लिए अप्रसन्नता व्यक्त की। किन्तु सामुदायिक सेवा और पद को धारण करने से निरर्दृष्टि जैसे दंडों पर आम सहमति की।

कार्यशाला में सभी ने यह महसूस किया कि संगठित अपराधों से कठोरता पूर्वक निपटाना चाहिए जबकि उन्होंने अभियुक्त को मिथ्या विकित्सीय प्रमाणपत्र जारी करने की प्रकृति की भी आलोचना की, जिनके कारण मामलों का आस्थान और अपराधी को दंड देने में विलंब होता है।

कार्यशाला में कुछ भागीदारों ने यह कहा कि बालकों से संबंधित लैगिक अपराध, भारतीय दंड संहिता (संशोधन) विधेयक, 1978 में समाविष्ट नहीं है।

न्यायमूर्ति रेडी का यह मत था कि अभियोजन अधिकारियों के लिए एक पृथक काडर का सुजन दिया जा सकता है क्योंकि बहुधा प्रत्येक सरकार, जो सत्ता में आती है, अपने निजी नामनिर्देशितियों की अभियोजन अधिकारियों के रूप में नियुक्त करती है। उन्होंने कहा कि इसे अभियोजन कार्य में बाधा पड़ती है।

उन्होंने यह भी कहा कि नए अभिकरण को अभियोजन अभिकरण निदेशालय का नाम दिया जा सकता है।

पुलिस बल को निर्दिष्ट करते हुए, उन्होंने कहा कि वे अत्यधिक दबाव के अन्तर्गत कार्य करते हैं और इसके कारण यदाकदा वे अपराधों का सफालतापूर्वक अन्वेषण करने में आवश्यक समय नहीं लगा पाते। उन्होंने कहा कि देश के पुलिस बलों के प्रति लोगों का, अपना दृष्टिकोण बदलने की आवश्यकता थी।

न्यायालयों ने, साक्षियों के साक्ष्य पर प्रकाश डालते हुए, न्यायमूर्ति रेडी ने कहा कि उनका संरक्षण किया जाना होगा। क्या न्यायमूर्ति रेडी के अनुसार, किसी मामले में मंजूर किए गए बार-बार के आस्थान ऐसे साक्षियों को असुविधा करित करता है, जो सुदूर स्थानों से न्यायालय के मुकदमे में उपसंजात होने के लिए यात्रा करते हैं। उन्होंने टिप्पणी की कि राज्य प्राधिकारियों को, साक्षियों द्वारा किए कार्य को संज्ञान में लेना चाहिए।

उन्होंने कहा कि यदि इस दिशा में कोई ध्यान नहीं दिया जाता है, तो वे साक्षी, जो किसी मामले की कार्यवाही में इतने महत्वपूर्ण हैं, सरकारी अभिकरणों में अपना विश्वास खो देंगे।

पक्षकारों से बात करते हुए, न्यायमूर्ति टी० के० चन्द्रशेखर द्वारा ने, स्वतंत्र अन्वेषण और अभियोजन अभिकरणों के स्थापना के विचार का समर्थन किया। उन्होंने कहा कि जहां संशोधन महत्वपूर्ण थे वहां इन संशोधनों का निर्देश करना अतिमहत्वपूर्ण था। उन्होंने राय दी कि भारतीय दंड संहिता में कोई संशोधन लाने के पूर्व व्यापक विचार-विमर्श अपेक्षित था। साक्षियों के सभी खायियों को प्रकाशित संशोधनों में छिपी होंगी दूर करना आवश्यक था। अन्य के अतिरिक्त, जिला और सेशन न्यायाधीश न्यायमूर्ति रणजीत पूरम पट्टी, आर० एन० खांदपाकर, विधि मंत्री डामनिक फनाडिस, विधि सचिव सुब्रत भी कार्यशाला में उपस्थित थे। मुख्य विषय, जिन्हें इसके स्थान पर या भारतीय दंड संहिता में दंड के नए रूपों के अतिरिक्त अंतःस्थापन या संगठित अपराधों, कंपनियों का आन्वयिक दायित्व, मिथ्या चिकित्सीय प्रमाणपत्रों को जारी करना या हस्ताक्षरित करना या लोक पथ पर भार से लदे हुए यानों का असुरक्षापूर्वक चलाना, भयादेन, जिसमें भयादेन के लिए आशयित अश्लील विषय भी समिलित हैं, वायुयान, बस, ट्रैक्सी, कार या किसी अन्य यान का अपहरण, टक्कर और कुचलने के मामलों, उतावलेपन से और उपेक्षापूर्ण गाड़ी चलाने के कारण मृत्यु कारित करना, एकांतता के विरुद्ध अपराध, प्रथम इत्तिला रिपोर्ट अभिलिखित करने से इंकार करने के लिए शास्त्रिक कार्रवाई, लैगिक अपराध, जिनमें बलात्संग की परिभाषा में परिवर्तन भी है, स्पैग जिनमें ट्रैक के जालसाझी मामले तथा अपहरण के लिए धनमुक्त भी है, के मामले में कारावास के रूप से कथित थे।

अधिकांश वक्ताओं ने, सुझाव दिया कि दंड को कठोर बनाया जाना चाहिए और आवश्यक रूप से इसमें डतावलेपन से और उपेक्षापूर्ण गाड़ी चलाने से कारित मृत्यु और भारी बोझ से लदी यानों के मामलों में कारावास का दंड समिलित करना चाहिए क्योंकि विशेषतया देश में दुर्घटनाओं के कारण मृत्यु की संख्या में बढ़ि हुई थी। उन्होंने राय दी कि मोटर यान अधिनियम तथा बलात्संग के संबंध में वर्तमान उपबंध, अभियुक्त पर कोई भयोपरापी ग्रामव नहीं ढालते।

पुलिस अधिकारियों द्वारा प्रथम इत्तिला रिपोर्ट को दर्ज करने से इन्कार करने के संबंध में भी शास्त्रिक उपबंध सुझाए गए थे।

निम्नलिखित व्यक्ति उपस्थित थे:—

1. न्यायमूर्ति के० जयचन्द्र रेडी, अध्यक्ष, भारत का विधि आयोग।
2. डा० एस० सी० श्रीवास्तव, संयुक्त सचिव और विधि अधिकारी, भारत का विधि आयोग।
3. श्री ए० पी० सुन्दरराजन, अपर जिला न्यायाधीश, मरावो।
4. श्री ए० टी० सरकार, अपर जिला न्यायाधीश और उप न्यायिक मजिस्ट्रेट, एन० डी० पी० एस०, पूना।
5. श्री ए० पी० फारटोनी, सचिव गोवा।
6. श्री एस० एस० फरिमा, लोक अभियोजक 4, मरावो।
7. श्रीमती सीमा धूमसकर, लोक न्यायालय, पणजी।

8. श्री ए० के० पिटो।
9. श्री गोपाल एस० जाधव, पुलिस अधिकारी।
10. श्री एस० पी० पवन।
11. श्री जेलर सी० डी० सोना, महाराष्ट्र, गोवा उच्च न्यायालय विधिक संगम।
12. श्री नरेन्द्र एस० सवायकर, संविदाता, गोवा उच्च न्यायालय, विधिक संगम।
13. सारथी विधि पणजी, उत्पाद-शुल्क अधीक्षक।
14. प्रो० फारनी, रा० स० कालेज आफ ला।
15. प्रो० ईश्वर के० प्रसाद, रा० स० कालेज आफ ला।
16. एडवो० सुरेश नरलर, उत्तरी गोवा जिला अधिवक्ता संगम।
17. ए० डी० वी० देवानंद शेतकर, उत्तरी गोवा जिल्हा अधिवक्ता संगम।
18. प्रो० जे० सी० प्रभुदेसाई, जी० आर० खरे कालिज आफ ला, मारगोवा।
19. प्रो० के० वा० कुनकोलीकर, जी० आर० खरे कालिज आफ ला, मारगोवा।
20. श्री आर० डी० शुक्ला, उप पुलिस अधिकारी।
21. श्री राजेन्द्र राउत देसाई, पी० एस० आई०।
22. श्री पांडुरंग एस० कलंगुटकर, पी० एस० आई०।
23. श्री डी० एस० सावंत, पी० एस० आई०।
24. श्री जी० वी० घूमे, लोक अभियोजक।
25. श्री बंदुदास गोकर, ए० पी० पी०।
26. श्रीमती एडना रोड्गास, लोक अभियोजक।
27. श्री प्रमोद एस० रेडे, लोक अभियोजक।
28. श्री वी० एन० एस० भलकरनेकर, लोक अभियोजक।
29. श्रीमती आशा उरलेकर, ए० पी० पी०, मारगोवा।
30. श्री जे० सी० कोस्ता, सहायक लोक अभियोजक।
31. श्री शेलर एस० परब, ए० पी० पी०, पणजी।
32. श्रीमती तिओडोलिन्दा एस० सरदिन्दा।
33. श्री सुभाष पी० देसाई, ए० पी० पी० विपंम।
34. श्री देवीदास केकर, सहायक लोक अभियोजक।
35. श्री शैलेष कलंगुटकर, ए० पी० पी०, पणजी।
36. श्री लदिंखलाल एम० फर्नार्डिस, ए० पी० पी०, वास्को।
37. श्री ए० के० नायर, अधीक्षक, केन्द्रीय उत्पाद शुल्क।
38. श्री टी० वी० शिवदास, अधीक्षक, केन्द्रीय उत्पाद शुल्क।
39. श्रीमती एलमा कोलाको, अधीक्षक, केन्द्रीय उत्पाद शुल्क (विधि)।

## उपांध 7

विशाखापत्तनम (आन्ध्र प्रदेश) में 25 और 26 अक्टूबर, 1996 को हुई भारत के विधि आयोग और भारतीय विधिज्ञ परिषद् न्यास के सहयोग से आन्ध्र प्रदेश विधिज्ञ संगम द्वारा संचालित “दंड विधि” संबंधी कार्यशाला की कार्यवाहियां।

सामान्य उद्घाटन और दीक्षांत सत्रों के अतिरिक्त, पांच कार्यक्रम भी आयोजित किए गए, अर्थात्:—

- (क) कार्यसत्र 1—भारतीय दंड संहिता में प्रस्तावित संशोधन।
- (ख) कार्यसत्र 2—दंडादेश और दंडादेश देने की नीतियां तथा प्रक्रियाएं।
- (ग) कार्यसत्र 3—गिरफ्तारी, रिमांड (प्रतिप्रेषण) और अभिरक्षा।
- (घ) कार्यसत्र 4—दंडिक मामलों में सबूत के भार के प्रश्न की प्रवृत्तियों में परिवर्तन।
- (ङ) कार्यसत्र 5—आपराधिक मनस्थिति और आधुनिक दंड विधान।

2. जैसा ऊपर उल्लिखित से स्पष्ट है कि कार्यसत्र-3 और कार्यसत्र-4 भारतीय दंड संहिता से संबंधित नहीं हैं।

## कार्यसत्र 1:

भारतीय दंड संहिता में प्रस्तावित संशोधन फैकल्टी के सदस्य जिन्होंने सत्र का मार्गदर्शन किया:—

- (1) न्यायमूर्ति के० जयचन्द्र रेडी
- (2) श्री के० जी० कन्नाबीरन
- (3) श्री बी० जंगम रेडी।

श्री के० जयचन्द्र रेडी ने भाग लेने वालों से संक्षेप में बातचीत करते हुए, भारतीय दंड संहिता का परित किया जाना और समय जिससे यह गुजर चुकी है और 136 वर्ष की लंबी अवधि के दौरान इसमें किए गए कुछ संशोधनों का वर्णन किया। श्री जंगम रेडी ने अपने भाषण में ऐतिहासिक घटनाओं की ओर ध्यान दिलाया।

उन्होंने अपने भाषण में, धारा 124क, जो “राजदोष” से संबंधित है, के संशोधन के बारे में कहा। उन्होंने बताया कि आपात के दौरान इस धारा के अधीन देश के सभी महान नेताओं को जेत में बंद कर दिया गया और अधिकतर नेताओं को गिरफ्तार भी किया गया था। इसमें जो विद्यमान है, उसके अतिरिक्त, इसका संशोधन करने की मांग की जाती है। उन शब्दों को, जो न्याय के प्रशासन के संबंध में लाप्रीत प्रदीप्त करते हैं, भी समिलित किया गया है। उन्होंने एक प्रश्न उठाया कि “कल्पना करो कि प्रशासन अनैतिक है—क्या इसकी आलोचना करना गलत है”। उन्होंने इस पर विचार करना चाहा।

भारतीय दंड संहिता की धारा 299 और 300 के संबंध में चर्चा करते हुए, उन्होंने कहा कि उन्हें न छेड़ा जाना ही अच्छा है। आपराधिक मनस्थिति अपराध के परिप्रेक्ष्य को बदलते हैं। उन्होंने कहा कि प्रत्येक व्यक्ति उत्तरदायित्व से बचने की कोशिश कर रहा है। उन्होंने कहा कि यह लो लाभ कमाना, लूटना और छड़म नामों से धन कमाना तथा अपना पता चलाने से अपवंचन करना है। उन्होंने सुझाव दिया कि चोरी से प्राप्त ऐसी संपत्ति समप्रहृत की जाएगी। उनका कहना है कि चोरी से प्राप्त धन को समप्रहृत करने के लिए कोई विधि नहीं है और उन्होंने कहा कि इसमें और बैद्धमानी में कोई अन्तर नहीं है। उन्होंने चिंता व्यक्त की कि हमारे विधायक शिक्षित निरक्षर हैं। उन्होंने राय दी कि धारा 124क के लिए सुझाव दिया गया संशोधन भाषण, प्रेस की स्वतंत्रता और स्वतंत्रता के लिए एक दंडादेश है।

उन्होंने विनिर्दिष्टरया यह भी बताया कि भारतीय दंड संहिता में कोई विनिर्दिष्ट उपबंध नहीं है जो उतावलेपन और उपेक्षापूर्ण कार्य के द्वारा पशुओं का वध करने से संबंधित है। भारतीय दंड संहिता की धारा 429 कूरता के बारे में अनुश्यात करती है और यह एक वारंट मामला है। इस प्रकार पशु का जीवन उतना ही महत्वपूर्ण है जितना एक मनुष्य का।

## उन्होंने विनिर्दिष्ट रूप से सुझाव दिया:—

- (1) संशोधनों का व्यापक परिचालन।
- (2) “स्केमो” पर रोक लगाने के लिए किसी संशोधन का प्रस्ताव नहीं किया गया है कि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 438 ऐसे अपराधों को लागू नहीं की जानी चाहिए।

(3) उन्होंने कहा कि कलिपय अपराध करने के प्रयत्नों को अपराध बनाने की वांछा की गई है लेकिन भारतीय दंड संहिता की धारा 511 अधिक व्यापक और ठीक है।

(4) नई धारा 120ग उचित रूप से प्रारूपित की हुई प्रतीत नहीं होती है। विहित न्यूनतम दंडादेश न्यायाधीश के विवेकाधिकार पर अनावश्यक प्रतिबंध लगाता है। दंडादेश न दिए जाने के लिए कोई पक्का नियम नहीं है।

(5) प्रस्तावित संशोधन 'लैगिक हमला' पर चर्चा करते हुए, उन्होंने कहा कि धारा 375, 376 और 376क प्रस्तावित संशोधनों की अपेक्षा अधिक स्पष्ट हैं।

(6) दंडनीय बलात्संग के लिए तैयारी करने को भी दंडित करने की धारा 376क बीमत्स होगी। इससे मिथ्या विवक्षा को बढ़ावा मिलता है इसलिए, इसे हटा देना चाहिए।

श्री कन्नाबीरन ने कहा कि मानवीय अधिकारों के विरुद्ध अपराधों पर अमी तक विचार नहीं किया गया है। उन्होंने दुख व्यक्त किया कि कोई व्यक्ति जो 50/- रुपए या 100/- रुपए लेता है, उसे उस व्यक्ति के समान समझा जाता है, जो करोड़ों रुपए तक स्वीकार करता है। उन्होंने राय दी कि यह आवश्यक है कि राजनीतिक व्यक्तियों द्वारा किए गए अपराधों को परिभाषित किया जाए। उन्होंने कहा कि अति विरल मामलों को भी परिभाषित नहीं किया जाएगा। वह, राज्य द्वारा प्रतिदंडात्मक सिद्धान्त को अपने हाथों में लेने के पक्ष में नहीं है।

श्री सी० पदमनाभन रेडी ने कहा कि जब धारा 302, 304 भाग-1 और 304 भाग-2 के संबंध में चर्चा करते समय बहुत अधिक ध्रम था—अधिरूपिता में निर्णय ऐसे हैं जो स्वतंत्र नहीं हैं। इसमें किसी स्पष्टीकरण के बारे में कोई आवश्यकता है। उन्होंने कहा कि यदि मृत्यु कारित करने का आशय है तो यह धारा 302 के अन्तर्गत आता है और यदि इसे कारित करने के लिए केवल जान ही है तो यह 304 भाग-2 के अन्तर्गत आएगी। उन्होंने कहा कि "दहेज" को स्पष्टरूप वर्णित करने के लिए धारा 304ख में एक पृथक परिभाषा जोड़ी जानी है।

श्रीमती लक्ष्मी रामबाबू ने, महिलाओं के विरुद्ध अपराधों को निर्दिष्ट किया।

विशाखापत्नम के मेट्रोपोलिटन सेशन न्यायाधीश, श्री एन० सत्यानन्दम ने स्केमों, आर्थिक आतंकवाद, उपभोक्ता आतंकवाद, मानवीय अधिकारों के विरुद्ध अपराध, राजनैतिज्ञों द्वारा किए गए अपराधों को निर्दिष्ट किया। उन्होंने विशिष्टतया क्वालिटी को दंडनीय बनाने के लिए अभिवाक किया। पी० वैकंटसुब्रेत्ष ला कालिज, हैदराबाद के प्राचार्य प्रो० के गुप्तेश्वर ने राय दी कि ब्रह्मल को सुधारात्मक और निरपराधीकरण की ओर निर्देशित किया जाना चाहिए। उन्होंने कहा कि भारतीय दंड संहिता में और अधिक जोड़ने की अपेक्षा इसके कार्य को हल्का करना अच्छा होगा। उन्होंने कहा कि वे दृष्टांत, जो धारा को परिवर्तित करते हैं, आवश्यक नहीं हैं। उन्होंने प्रकृति के विरुद्ध अपराधों और मिथ्या विवादों के विषय में कोई उपबंध बनाए जाने के बारे में कहा।

विशाखापत्नम के एक अधिवक्ता, श्री कांडला, श्रीनिवास राव ने कहा कि "दुर्वित्योग" शब्द परिभाषित नहीं किया गया है। यदि इसे परिभाषित कर दिया जाए तो ज्यादा अच्छा होगा। दूसरे, उन्होंने कहा कि चूंकि भारतीय दंड संहिता की धारा 498क में 'नातेदार' शब्द परिभाषित नहीं किया गया है। ऐसे व्यक्ति, पति के होने के एकल कारण के लिए तंग किए जाते हैं। यद्यपि, वे सुसंगत समय पर विवाहित स्त्री के निवास स्थान के निकट नहीं होते हैं। अतः, धारा 498क में एक स्पष्टीकरण जोड़कर परिभाषित किया जाना आवश्यक है जो सुसंगत समय बिन्दु पर युगल के साथ रह रहे नातेदारों तक सीमित हो। उन्होंने कहा कि धारा 498क का प्रयोग करने की अपेक्षा अधिक दुरुपयोग और गलती से उपयोग किया जाता है। उन्होंने पत्नी को दंडनीय बनाने के लिए धारा 498क को जोड़े जाने के लिए भी अभिवाक किया, यदि पत्नी अपने पति के प्रति क्रूर है।

श्री अन्ध्र प्रदेश की विधिज्ञ संगम के सदस्य श्री काति राय मोहन ने राय दी कि अस्थायी प्रयोजनों/परिस्थितियों के लिए परिनियम नहीं बनाए जाना चाहिए। उन्होंने धारा 498क को हटाने के लिए अभिवाक किया व्यक्तिके पुलिस द्वारा इसे हैडल के रूप में प्रयोग किया जाता है और यह सामाजिक दांचों को खराब करती है। इसे हटा दिया जाना चाहिए।

विशाखापत्नम की अधिवक्ता, कुमारी कुलजीत कौर ने सुझाव दिया कि भारतीय दंड संहिता की धारा 302 के अधीन अपराध को शमनीय बनाया जाना चाहिए। भारतीय दंड संहिता की धारा 354, छेद्याद को भी शामिल करने के लिए, दो भागों में विभाजित की जानी चाहिए।

विशाखापत्नम के अधिवक्ता श्री टी० वेंकटरत्नम ने, यह संप्रेक्षित किया कि भारतीय दंड संहिता की धारा 498क का अधिक दुरुपयोग किया जाता है। उन्होंने टीका-टिप्पणी की कि भारतीय दंड संहिता की धारा 498क के अधीन अपराध के बारे में आरोप पत्र स्वयं के द्वारा फाइल नहीं किया जा सकता।

ए० य० ला० कालेज, विशाखापत्नम के प्रो० आर० वेंकटराव ने, ए० आई० आर० 1984 एस० सी० 1029 के निर्णय को निर्दिष्ट करते हुए यह संप्रेक्षित किया की मृत्यु दंड और विरल से विरलतम मामलों के बारे में कोई समझौता हुआ प्रतीत होता है। यह निर्णय दृष्टांत रूप है और संपूर्ण नहीं है। न्यूनतम आज्ञापक दंडादेश उपबंध मानवीय जीवन के प्रतिकूल है।

विशाखापत्नम के अधिवक्ता श्री पी० ए० किशोर ने, धारा 498क को निर्दिष्ट किया और मांग की कि क्रूर पत्नियों पर कार्यवाही करने के लिए एक धारा अवश्य होनी चाहिए।

विशाखापत्नम के एक अधिवक्ता श्री के० वी० रामसूर्ति ने यह संप्रेक्षित किया कि भारतीय दंड संहिता की धारा 420 संपत्ति के विषय में अपराधों तक सीमित है, "प्रबंधन" को परिभाषित नहीं किया गया है, उसी प्रकार, "दिवाला" और "भयादोहन" भी परिभाषित नहीं किए गए हैं। उन्होंने आन्वयिक वायित्व के बारे में निर्दिष्ट किया।

#### कार्यस्त्र-2

न्यायसूर्ति भास्कर राव ने, अपने सुन्धान भाषण देते हुए कहा कि उनके आपराधिक न्याय के प्रशासन में दंडादेश और दंड पर लेख पहले परिचालित किए जा चुके हैं। अपने लेख में उन्होंने दंड देने की धरणा, नीति और विकास पर विस्तार से विचार किया है। उन्होंने विस्तृत कोटेश्वर देकर मनु से लेकर न्यायालय के नियमों तक का अनुसरण किया है।

आन्ध्र प्रदेश उच्च न्यायालय के ज्येष्ठ अधिवक्ता श्री सी० पदमनाभ रेडी ने कहा कि उन्होंने लेख में अपने विचारों को लक्ष्य लगाया है किन्तु कहा कि ये सात वर्ष पहले लिखे गए थे और तब से काफी परिवर्तन हो चुका है। उन्होंने दुःख व्यक्त किया कि विचारण न्यायालय बहुत समय लगाते हैं किन्तु वरिष्ठ न्यायालयों में इसमें सुशिक्षण से कुछ ही श्लण लगते हैं और मामलों के निपटान के लिए समय बिन्दु पर ठीक विचार करने और ध्यान देने की आवश्यकता है। उन्होंने अपना लेख "दंडादेश और दंड देने की नीतियां और प्रक्रियाएं" को निर्दिष्ट किया है। उन्होंने यह टीका-टिप्पणी की कि सभी पूर्विक अधिनियमों में केवल न्यूनतम दंडादेश नियत आवश्यकता है। उन्होंने अपना लेख "दंडादेश और दंड देने की नीतियां और प्रक्रियाएं" को निर्दिष्ट किया है।

श्री कन्तिराम मोहन राव ने कहा कि न्याय का अनुकंपा के साथ तालमेल होना चाहिए। सामुदायिक सेवा जैसे दंड के विकल्प सुझाए गए रूपों को निर्दिष्ट करते हुए, उन्होंने कहा कि यह व्यावहारिक नहीं है।

श्री के० एल० एन० सामा, अधिवक्ता आंशकित थे कि क्या दंड संहिता की धारा 427 को वस्तुतः उस समय प्रभावी मनाया जाना या, विशिष्टतया जब पूर्व दंडादेश के पश्चात् दंडादेश की शेष अवधि कठोर थी। उन्होंने परकार्य लिखित अधिनियम की धारा 138, 139 को निर्दिष्ट किया और छह मास की अवधि का साधारण कारबास अनिवार्य दंड बनाने की मांग की।

श्री वी० सोमेश्वर राव, श्री सी० एस० राव ने, अपने विचार व्यवत्त किए।

प्रो० गुप्तेश्वर ने दस्तकेप करते हुए कहा कि वे संयुक्त राज्य अमेरिका के बारे में कुछ जानकारी में हिस्सा लेना चाहते थे। 12-10-84 को, फेडरल द्वारा दंडादेश करना एक अधिनियम बना दिया गया है। उच्चतम न्यायालय ने इसे स्वीकार किया है, और विसम्मति प्रकट करने वाला एक न्यायाधीश है।

भारत के विधि आयोग के संयुक्त सचिव, श्री श्रीवास्तव ने जानकारी में कुछ भाग लेते हुए कहा कि जुनाई के व्यतिक्रम के उपबंध की ओर ध्यान दिया गया है। उन्होंने दंड की वृद्धि के बारे में धारा 65 और धारा 75 को भी निर्दिष्ट किया।

न्यायसूर्ति के० जे० रेडी द्वारा भारतीय दंड संहिता की धारा 303 और धारा 307 के बारे में कुछ संक्षिप्त संप्रेक्षणों के साथ समाप्त किया गया।

#### कार्यस्त्र-5

श्री सी० पी० पदमनाभ रेडी ने (1) श्री एन० बी० रंगानाथन, अधिवक्ता, विशाखापत्नम, (2) प्रो० आर० वेंकटराव, और (3) फेकली सदस्य के रूप में प्रो० के० गुप्तेश्वर के साथ सत्र की अध्यक्षता की।

आन्ध्र प्रदेश उच्च न्यायालय के ज्येष्ठ अधिवक्ता, श्री सी० पी० पदमनाभ ने विषय के बारे में स्पष्ट टीका-टिप्पणी के साथ चर्चा आरंभ की। उनका विचार था कि आपराधिक मनःस्थिति दाढ़िक अपराध का एक आवश्यक तत्व होना चाहिए।

दू

प्रो० के० गुप्तेश्वर ने, सावधानी की ओर संकेत करते हुए कहा कि आपराधिक मनस्थिति के पूर्ण अपवर्जन में औचित्य हो सकता है। किसी विशिष्ट विधान के लिए आशय और ज्ञान की विद्यमानता आवश्यक होती है। विधि जो आम जनता की जानकारी में लाने वाले प्रकाशन अवश्य उपलब्ध करवाए जाने चाहिए। नियमों को उपलब्ध न कराए जाने पर “सम्यक् प्रतियां और औचित्य” का अतिक्रमण किया जाता है।

प्रो० आर० वेकटराव ने श्री श्रीवास्तव द्वारा दी गई जानकारी “पीडित को क्षतिपूर्ति” की धारणा की प्रशंसा की। उन्होंने तमिलनाडु में “पीडित सहायता विधि” का गठन करने वाली अधिनियमिति को निर्दिष्ट किया।

न्यायमूर्ति बाई० भास्कर राव ने, आर० आर० एस० प्रिंस, आर० आर० एस० जान, आदि को इंगिलिश मामलों से आपराधिक मनस्थिति का अनुसरण किया। विधि महाविद्यालय में दांडिक विधि की व्याख्याओं की ओर ध्यान दिलाया। उन्होंने विशिष्ट रूप से खामियों का दूर करने के लिए सुझाव देने की अपील की।

निम्नलिखित व्यक्ति कार्यशाला में उपस्थित थे:-

1. श्रीमती के दांसी रानी, दैदराबाद
2. श्री के० कृष्ण मूर्ति, दैदराबाद
3. श्री आर० बी० कृष्ण राव, दैदराबाद
4. श्री सदाशिव प्रताप, दैदराबाद
5. श्री एस० श्रीनिवास रेडी, दैदराबाद
6. श्री के० सत्यनारायण रेडी, दैदराबाद
7. श्री एस० मुरलीकृष्ण, विशाखापत्तनम
8. श्री एस० श्रीनिवास मूर्ति, विशाखापत्तनम
9. श्रीमती सी० ही० सर्वेश्वर राव, विशाखापत्तनम
10. श्रीमती सी० महालक्ष्मी, विशाखापत्तनम
11. श्री पी० रवि प्रकाश शर्मा, विशाखापत्तनम
12. कुमारी एल० वेंकटालक्ष्मी, विशाखापत्तनम
13. श्री यू० एस० आर० राज०, विशाखापत्तनम
14. श्री जी० बी० पी० बी० मूर्ति, विशाखापत्तनम
15. श्री पी० ए० के० किशोर, विशाखापत्तनम
16. कुमारी कुलजीत कौर, विशाखापत्तनम
17. श्री पी० राजेन्द्र प्रसाद, तेनाली
18. श्री जी० माधव राव, निजामाबाद
19. श्री के० अंजनेयुलु, करीमनगर
20. कुमारी के० जयश्री, प्रोद्वतुर
21. श्री सुरेश कुमार, नंदीकोटकुर
22. श्री जे० जानकी राम रेडी, कुर्नुल
23. श्री ए० रामासुब्बा रेडी, कुर्नुल
24. श्री पी० श्रीनिवासुलु, विजयवाड़ा
25. श्री इ० विक्रम रेडी, करीमनगर
26. श्री आर० विजय नंदन रेडी, दैदराबाद
27. श्री पी० बृथतलर, विशाखापत्तनम
28. श्री के० महेश्वर रेडी, विशाखापत्तनम
29. श्री के० एल० एन० शर्मा, छाम्माम
30. श्री के० बी० राममूर्ति, विशाखापत्तनम
31. श्री के० लक्ष्मी राम बाबू, विशाखापत्तनम
32. सुश्री बाली बाई, विशाखापत्तनम
33. श्री टी० शिवराम रेडी, विजयवाड़ा

34. श्री ही० पी० रामकृष्ण, विजयवाड़ा
35. श्री पी० बी० शर्मा, विशाखापत्तनम
36. श्री एस० जगन्नाथम, विशाखापत्तनम
37. श्री एम० वेंकट राज०, विशाखापत्तनम
38. श्री एम० वेंकटरमन्ना, विशाखापत्तनम
39. कुमारी बी० जांसी, विशाखापत्तनम
40. श्री बी० उमादेवी, विशाखापत्तनम
41. कुमारी एस० रामानी, विशाखापत्तनम
42. श्रीमती बी० एन० आर० एस० माघवी, विशाखापत्तनम
43. श्रीमती बी० बी० शेषम्मा, विशाखापत्तनम
44. श्री पी० वेंकटेश्वर राव, विशाखापत्तनम
45. श्री बी० सोमेश्वर राव, विशाखापत्तनम
46. श्री पेलिसेटटी श्रीनिवास राव, विशाखापत्तनम
47. श्री ए० मारत कुमार, विशाखापत्तनम
48. श्री श्री मंडला श्रीनिवास राव, विशाखापत्तनम
49. श्री पी० राम बाबू, विशाखापत्तनम
50. श्री बी० सर्वना, विशाखापत्तनम
51. श्रीमती बी० कुसुम श्री, विशाखापत्तनम
52. श्रीमती के० एस० कृष्ण मोहन, विशाखापत्तनम
53. श्री बी० सत्यनारायण शास्त्री, विशाखापत्तनम
54. श्री एस० बालकृष्ण, विशाखापत्तनम
55. श्री एस० एस० एन० राज०, विशाखापत्तनम
56. श्री पी० बी० बी० सत्यनारायण मूर्ति, विशाखापत्तनम
57. श्री सी० एन० बी० डी० शास्त्री, विशाखापत्तनम
58. श्री के० मुलिकार्जुन राव, विशाखापत्तनम
59. सुश्री एम० बी० लक्ष्मी, विशाखापत्तनम
60. श्री एन० बी० बद्रीनाथ, विशाखापत्तनम
61. श्री एम० एस० हुसैन, विशाखापत्तनम
62. श्री पी० उदय भास्कर राव, विशाखापत्तनम
63. श्री ओ० कैलाश नाथ रेडी, दैदराबाद
64. श्री एन० बी० राधव रेडी, दैदराबाद
65. श्री के० सुरेश रेडी, दैदराबाद
66. श्री टी० वेंकटरत्नम, विशाखापत्तनम
67. श्री बी० अशोक कुमार, विशाखापत्तनम
68. श्री के० अप्पराव, विशाखापत्तनम
69. श्रीमती टी० पद्मावती, विशाखापत्तनम
70. श्री एन० बी० रंगनाथम, विशाखापत्तनम
71. श्रीमती ए० मवानी, विशाखापत्तनम
72. श्री एम० एस० माघव, विशाखापत्तनम
73. श्री के० बी० एस० जी० शर्मा, विशाखापत्तनम
74. श्रीमती जी० एस० राजलक्ष्मी, विशाखापत्तनम
75. श्री डी० रामुलु, विशाखापत्तनम
76. श्री एन० बी० चक्रवर्ती, विशाखापत्तनम
77. श्री पी० सुरेश, विशाखापत्तनम
78. कुमारी ए० शैलजा, विशाखापत्तनम
79. श्रीमती डी० बी० लक्ष्मी, विशाखापत्तनम
80. श्रीमती जी० अनुपम चक्रवर्ती, दैदराबाद
81. श्री जी० कृष्णमूर्ति, नई दिल्ली।

## उपांधं 8

### 22-23 फरवरी, 1997 को विज्ञान भवन, नई दिल्ली में आयोजित “भारत में दार्ढीय संगोष्ठी की कार्यवाहियां

“भारत में दार्ढीय न्याय” [भारतीय दंड संहिता (संशोधन) विधेयक, 1978 के प्रति विशेष निर्देश से] पर राष्ट्रीय संगोष्ठी 22 और 23 फरवरी, 1977 को विज्ञान भवन, नई दिल्ली में आयोजित की गई थी। चार सत्र, अधीत कार्य सत्र 1, कार्य सत्र 2, कार्य सत्र 3 और कार्य सत्र 4 भारतीय दंड संहिता (संशोधन) विधेयक, 1978 के प्रति विशेष निर्देश से भारतीय दंड संहिता के लिए नियत थे। 5वां और 6वां सत्र क्रमशः (i) साक्ष्य अधिनियम और (ii) स्वापक औषधि और मनःप्रभावी पदार्थ अधिनियम में धारा 42-53 के अधीन स्वापक पदार्थों की तलाशी और अभिप्राण का ढंग, के लिए नियत थे।

भारत के उच्चतम न्यायालय के माननीय न्यायाधीश, न्यायमूर्ति जे० एस० वर्मा द्वारा संगोष्ठी का उद्घाटन किया गया। इसकी अध्यक्षता माननीय विधि और न्याय मंत्रालय के राज्य मंत्री श्री रमाकांत डॉ० खलप ने की थी।

अपने अध्यक्षीय भाषण में विधि मंत्री ने दुःख प्रकट किया कि न्यायिक सुधार सरकार की कार्य सूची पर अवश्य थे और इस संबंध में इसने बड़े उच्चे वचन किए किन्तु उस आश्वासन को पूरा करना बहुत कठिन हो गया था। उन्होंने, उदारीकरण की नीति के कार्यान्वयन का अनुसरण करते हुए, अपराधियों के ऐसे नए वार्ता, जो देश के परिदृश्य में परिवर्तन के साथ उभरे हैं, को दंडित करने के नए ढंगों के विकास की वाल्छा की। उन्होंने ऐसे अपराधी को “बुद्धिमान जाहूगर” की संज्ञा दी जो देश को साधारण अपराधियों की अपेक्षा अधिक प्रभावित कर सकते हैं।

अपने उद्घाटन भाषण में न्यायमूर्ति वर्मा ने कहा, यदि राज्य के कोई अभिकरण या ढंग नागरिकों के प्रति उत्तरदायित्व रखते हैं, तो न्यायाधीशों की भी समान जिम्मेदारी होती है और शीर्षस्थ न्यायालय के लिए यह आज्ञापक है कि वह नागरिकों के अधिकारों की रक्षा के लिए संविधान के अनुच्छेद 32 के अधीन कार्य करे।

ज्येष्ठ अधिवक्ता, श्री के० टी० एस० तुलसी ने इस बात पर बल दिया कि न्याय प्रदान करने के प्रशासन में सत्य की वाल्छा करने के संबंध में, परिसीमाएं ढटा दी जानी चाहिए।

**कार्य सत्र 1:** दंडादेश देने की नीति और फिरौती के लिए संगठित व्यपहरण के अपराध का मुकाबला करना

यह सत्र दंडादेश देने की नीति और फिरौती के लिए संगठित व्यपहरण के अपराध का मुकाबला करने के लिए नियत था। भारत के उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीश, न्यायमूर्ति एस० एम० पुंछी द्वारा इस सत्र की अध्यक्षता की गई। न्यायमूर्ति पुंछी ने, दंडादेश अवधारित और अधिनिर्णीत करते समय न्यायालयों द्वारा अनुसरण किए जाने वाले सिद्धांतों के बारे में साधारण संप्रेक्षण किया। न्यायमूर्ति पुंछी ने कहा, “न्यायाधीश के लिए, दंडादेश देना बहुत कठिन कार्य है” उन्होंने कहा कि मेरा अनुभव अन्याय की ओर ले जाने वाले किन्हीं मार्गदर्शी सिद्धांतों को दर्शाता है।

ज्येष्ठ अधिवक्ता, श्री पी० पी० राव, जो इस विषय के संबंध में मुख्य वक्ता थे, ने सौता करने के अभिवाकृ की धारणा का सामान्यतः संप्रेक्षण किया, जो उनके अनुसार, दार्ढीय न्याय के प्रशासन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। उन्होंने कहा कि प्रतिदंड अब अतीत की बात बन चुकी है और कहा कि दंड का निवारक सिद्धांत बहुत कठिन है। उन्होंने संविधान के अनुच्छेद 21 का पूर्ण अनुपालन सुनिश्चित करने के लिए समालों के तत्वरित विचारण पर बल दिया। तथापि, दंडादेश देने की नीति की पूर्ण रूप से जांच करते समय मूल वास्तविकताओं को ध्यान में रखना चाहिए। उन्होंने भारतीय दंड संहिता (संशोधन) विधेयक, 1978 में समाविष्ट किए जाने के लिए प्रस्तावित दंड के नए प्रकारों का समर्थन किया। उन्होंने कहा कि मीडिया द्वारा किया गया विचारण भी न्याय में बाधा डालता है। डॉ आर० के० यादव ने यह संप्रेक्षित किया कि दंडादेश पारित करने से पूर्व न्यायाधीश को उसके समक्ष साक्षियों द्वारा समझे गए तथ्यों जैसे कठिपय सिद्धांतों का अनुसरण करना पड़ता है और तब उसे यह राय बनानी पड़ती है कि क्या साक्षी विश्वसनीय हैं और कहा कि वर्तमान दंडादेश देने की नीति दमें केवल अधिकरम या कुछ समालों में न्यूनतम दंडादेश देने के बारे में बताती है और क्योंकि ये मार्गदर्शी सिद्धांत पर्याप्त नहीं हैं, न्यायाधीश को दंड का अपना सिद्धांत विकसित करना पड़ता है और तब प्रत्येक समालों की परिस्थितियों में अपने विवेकाधिकार को, अपनी तथ्य की बोधगम्यता, अपनी कुशलता, अपनी सामाजिक विचारधारा और अपने स्वयं के सन्नियमों पर निर्भर करते हुए, उनका उपयोग करना है। उन्होंने यह भी कहा कि उपरोक्त के अतिरिक्त, दंडादेश देने समय अनेक कम करने वाले कारक हो सकते हैं जिन को ध्यान में रखा जाना है, उन्होंने “लोक परिनिवास” की दंड की नए धारा का समर्थन किया।

ज्येष्ठ अधिवक्ता, श्री अनुप जार्ज चौधरी ने कहा है कि दंड के प्रस्तावित नए रूप प्रस्तावित विधेयक में उचित रूप से कथित नहीं किए गए हैं और उन्होंने इन्हें कायान्वित करते समय व्यावहारिक कठिनाइयों के बारे में चर्चा की। उन्होंने सुझाव दिया कि जैसा आजीवन कारोबास के दंड के विषय में, सिद्धांत को चौदह वर्ष के पश्चात मुक्त कर दिया जाता है जिससे दंड का वांछित प्रभाव नहीं हो पाता, इस पहलू पर विचार किए जाने की आवश्यकता है।

प्र० बी० वी० पांडे ने समाज में अपराधियों के पुनःएकीकरण और पुनःसामाजिकीकरण पर जोर दिया ताकि आने वाले समय में वह समाज में स्वयं को कलंकित मदसूस न करें।

इंडियन एक्सप्रेस के संपादक श्री शेखर गुप्ता ने यह संप्रेक्षित किया कि मीडिया के माध्यम से सिद्धांत सुनिश्चित करना त्याग देना चाहिए और इससे बचना चाहिए और कहा कि वास्तविक विचारण आरंभ किए जाने के पूर्व भी व्यक्ति को मीडिया द्वारा प्रभावित किया हुआ नहीं समझना चाहिए। उन्होंने यह भी संप्रेक्षित किया कि नीति के विषय के रूप में न्यूनतम दंडादेश विहित नहीं किया जाना चाहिए क्योंकि इसमें कोई प्रयोजन नहीं होता और कहा कि न्यायालय को ऐसे जुमने अधिरोपित करने से बचना चाहिए जो अन्तर्राष्ट्रीय दार्ढीय के प्रशासन में प्रतिशोधात्मक सिद्ध हो सकेगा। उन्होंने पीडितों के लिए प्रतिकर अधिनिर्णीत करने के महत्व पर बल दिया और कहा कि इसे, सामान्यतः अभियुक्त पर अधिरोपित जुमने में से अधिनिर्णीत किया जाना चाहिए और ऐसे मामले में, जहां प्रतिकर नहीं दिया जाता है, इसके कारण बताने का उपबंध करने के लिए धारा 357 का उपयुक्ततः संशोधन किया जाना चाहिए।

**कार्य सत्र-2** यौन अपराध और एकांतता के पड़लुओं को परिवर्तित करना

यह सत्र श्री के० टी० एस० तुलसी के परिचय भाषण से आरंभ हुआ। सत्र की अध्यक्षता, भारत के उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीश, न्यायमूर्ति डा० ए० ए० आनन्द ने की।

न्यायमूर्ति आनन्द ने, यह संप्रेक्षित किया कि साक्ष्य अधिनियम की धारा 155(4) की उपयुक्ततः संशोधित किए जाने की आवश्यकता है व्यक्तोंकि मूलपूर्व व्यभिचारिणी महिला का भी लैगिक दुरुपयोग से बचने/हमला न किए जाने का अधिकार है। उन्होंने बंद कमरे में विचारण पर भी जोर दिया कि बंद कमरे में विचारण को विशिष्टतया लैगिक दुरुपयोग वाले मामलों में आजापक बनाया जाना चाहिए और कहा कि प्रत्येक थाने में महिला अभियुक्त के विरुद्ध किसी मामले का अन्वेषण करने के लिए एक महिला अधिकारी होनी चाहिए। उन्होंने यह भी सुनिश्चित किया जाना चाहिए कि टेलीफोन को टेप करने, शयन कक्ष, अप्राधिकृत फोटोग्राफी, आदि किसी भी रूप में एकान्तता पर अतिक्रमण नहीं कर सकते हैं।

ज्येष्ठ अधिवक्ता श्री हरीष सात्ये ने यह संप्रेक्षित किया कि नियाय विधि एकांतता को पर्याप्त रूप से संरक्षित नहीं करती है और कहा कि प्रस्तावित नई धारा 490 के विस्तार को बढ़ाए जाने की आवश्यकता है, क्योंकि फिलादाल यह सभी स्थितियों को विस्तार से शामिल नहीं करती है और कहा कि धारा 492 में अन्तर्विष्ट उपबंध वस्तुतः धारा 490 और 491 के अधीन एकांतता के अधिकार को निरर्थक बनाता है। इन्होंने इस विषय के पूरी जांच किए जाने की आवश्यकता पर भी जोर दिया। राष्ट्रीय महिला आयोग की श्रीमती पदमा सेठ सदस्य ने कहा कि चार दीवारी के भीतर महिला की गरिमा संरक्षित किए जाने की आवश्यकता है और महिलाओं पर घरेलू हिंसा को रोकने के लिए पर्याप्त उपबंध होने चाहिए। उन्होंने यह भी सुझाव दिया कि भारतीय दंड संहिता (संशोधन) विधेयक, 1978 में अंतःस्थापित किए जाने वाली प्रस्तावित नई धारा 74ग (खंड 27) में बलात्संग के अपराध को भी सम्मिलित किया जाना चाहिए।

गुजरात उच्च न्यायालय के न्यायाधीश, न्यायमूर्ति, सी० ठबकर ने, हस्तक्षेप करते समय यह कहा कि प्रस्तावित नई धारा 492 के उपबंध किसी भी रूप में धारा 490 और 491 के उपबंधों को निरर्थक नहीं जाना चाहिए क्योंकि प्रस्तावित धारा 492 के अन्तर्गत केवल सदमावूर्पक किए गए कार्य आते हैं। तथापि, एक अन्य मत यह भी था कि प्रस्तावित धारा 492 वस्तुतः और पूर्णरूप से प्रस्तावित नई धारा 490 और 491 को अकृत करती है।

**कार्य सत्र-3** दार्ढीय विधि में सामूहिक दायित्व और मिथ्या प्रमाणपत्र जारी करने के लिए चिकित्सकों का दायित्व

यह सत्र श्री के० गंगीर, अधिवक्ता द्वारा दिए गए परिचय से आरंभ हुआ। सत्र की अध्यक्षता, भारत के उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीश, न्यायमूर्ति सुश्री सुजाता वी० मनोहर ने की।

&lt;p

दिया कि प्रस्तावित नई धारा 94क और 94ख का पुनर्मूल्यांकन यह अभिनिश्चित करने की आवश्यकता है कि वया ये नए उपबंध पूर्णतः पर्याप्त होंगे। उन्होंने यह और सुझाव दिया कि कंपनी के कर्मचारी चाहे प्रबंधकीय काडर में हों या निम्नस्तर के हों, अपने कर्तव्यों का निर्वहन करते समय यदि वे कोई अपराध करते हैं तो वायी ठहराये जाने चाहिए क्योंकि कारावास के दंड को भुगतने के लिए स्वयं कंपनी को जेल भेजना वस्तुतः संभव नहीं हो सकता।

डा० डी० के० प्रह्लाद राव, भारतीय कंपनी सचिव संस्थान के अध्यक्ष ने नई धारा 94क और 94ख के अंतःस्थापन का जोरदार शब्दों में विरोध किया क्योंकि इन उपबंधों का अंतःस्थापन प्रति-उत्पादक है और कंपनियों के सहज कार्यकरण में बाधा डालेगा और उनके अनुसार, इस बारे में यह विनिश्चय करना बहुत कठिन होगा कि वास्तव में अपराध करने के लिए कौन उत्तरदायी है ? जैसा कि कभी-कभी निदेशक, प्रबंधक की पंक्ति के कई व्यक्तियों और अन्य अधिकारी जो सामूहिक रूप से तथा संयुक्ततः कारबार चलाने के भारसाधक हैं, ऐसी स्थिति में, वास्तविक अभियुक्त, जो अपराध के लिए जाने में सहायक रहा है, की पहचान करना अव्यवहार्य होगा।

अपोलो डास्पिटल के जेष्ठ परामर्शी डा० अचल भगत ने, उन कठिनाईयों को स्पष्ट किया जिनका चिकित्सक करते हैं। प्रमाणपत्र जारी करते समय उन्होंने बताया कि कभी-कभी उन्हीं किलनिक संबंधी परीक्षण परिणामों के आधार पर विभिन्न अभिन्न लिए जा सकते हैं और कहा कि किसी चिकित्सक के लिए आपराधिक दायित्व सृजित करना उचित नहीं होगा यदि उसने कोई प्रमाणपत्र सइमावपूर्वक जारी किया है। उन्होंने यह और बताया कि भारतीय दंड संहिता में नई धारा 198क को अंतःस्थापित करने की कोई आवश्यकता नहीं है क्योंकि विशिष्टतया, धारा 193 और 194 के विभान उपबंध स्थिति से निपटने के लिए पर्याप्त है। उन्होंने यह और कहा कि केवल चिकित्सकों के साथ भेदभाव क्यों किया जाना चाहिए जबकि ऐसे बहुत से अन्य प्राधिकारी हैं जो विभिन्न प्रयोजनों के लिए प्रमाणपत्र जारी करते हैं।

#### कार्य सत्र-4 भारतीय दंड संहिता (संशोधन) विधेयक, 1978 और कोई अन्य सुझाव

यह सत्र भारत के विधि आयोग के सदस्य सचिव श्री आर० एल० मीणा द्वारा दिए गए परिचय से आरंभ हुआ। इस सत्र की अध्यक्षता भारत के भूतपूर्व न्यायमूर्ति एस० आर० पांडियान द्वारा की गई।

न्यायमूर्ति पांडियान ने, विधेयक में अंतर्विष्ट उपबंधों का साधारण संप्रेक्षण किया उन्होंने उल्लेख किया कि विधेयक के खण्ड 18 के अधीन यथाप्रस्तावित भारतीय दंड संहिता की धारा 18 के अधीन “भारत” को परिभाषित करना आवश्यक नहीं हो सकता और कहा कि प्रस्तावित नई धारा 74क, 74ख, 74ग और 74घ की ओर जांच किया जाना आवश्यक है। उन्होंने विधेयक के खण्ड 75 और 76 में उपयुक्त संशोधन करने की आवश्यकता पर भी जोर दिया।

उच्चतम न्यायालय विधि संगम के ज्येष्ठ अधिवक्ता और अध्यक्ष, श्री आर० के० जैन ने, बताया कि केवल उन न्यायाधीशों को ही, जिन्हें दांडिक विधि की जानकारी है। न्यायपीठ में बैठना चाहिए यदि न्यायपीठ किसी आपराधिक मामले का विनिश्चय कर रही हो तो, और कहा कि आपराधिक मामलों पर कर्तव्याई करने के दौरान न्यायाधीश को दया मात्र रखना चाहिए। उन्होंने यह भी बताया कि न्यायालय की अनुमति से अधिक अपराधों के शपनीय बनाया जाना चाहिए। और कहा कि कठोर मृत्यु दंड बिल्कुल नहीं दिया जाना चाहिए क्योंकि इससे कोई प्रयोजन हल नहीं होता है। उन्होंने बोर्टल विधियों को लागू करने की आवश्यकता पर भी जोर दिया। उन्होंने यह भी बताया कि धारा 309 हटा दी जानी चाहिए।

राजस्थान उच्च न्यायालय के भूतपूर्व न्यायाधीश, न्यायमूर्ति बी० एस० इवे० ने, दांडिक न्याय प्रणाली के बारे में साधारण संप्रेक्षण किया।

#### संगोष्ठी में निम्नलिखित व्यक्तियों द्वारा उपस्थित उपस्थिति दी गई

अनीता अग्रवाल, मुम्बई उच्च न्यायालय

टी० एस० अरुणाचलम, ज्येष्ठ अधिवक्ता, उच्चतम न्यायालय

ई० सी० अग्रवाल, अधिवक्ता, उच्चतम न्यायालय

डा० आदित्य आर्य, पुलिस उपायुक्त, दिल्ली

महेश अग्रवाल, अधिवक्ता, उच्चतम न्यायालय

रीना बग्गा, अधिवक्ता

एस० के० अग्रवाल, अधिवक्ता

बी० बाला जी, अधिवक्ता

सुश्री शारदा अग्रवाल, अपर जिला सेशन न्यायाधीश, दिल्ली

पी० एम० बक्शी, भूतपूर्व सदस्य, विधि आयोग

न्यायमूर्ति डा० ए० एस० आनन्द, न्यायाधीश, उच्चतम न्यायालय सुश्री

एम० बालचन्द्रन, उप महानिरीक्षक, केन्द्रीय जांच ब्यूरो

पिकी आनन्द, अधिवक्ता, दिल्ली उच्च न्यायालय

डी० बनर्जी, अपर, उपायुक्त, आसूचना, कलकत्ता

एस० डी० आनन्द, संयुक्त सचिव (विधि) हरियाणा

अचल भगत, ज्येष्ठ परामर्शी, अपोलो डास्पिटल

ए० पी० भटनागर, अपर, पुलिस महानिदेशक, पंजाब

ओमेन्द्र भारदाज, उपमहानिरीक्षक, राजस्थान

ए० एम० विश्वास, सदस्य राष्ट्रीय अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति आयोग

भरत चन्द्र, अपर पुलिस महानिदेशक, आनन्द प्रदेश

डा० सतीश चन्द्र, अपर विधि अधिकारी, विधि आयोग

सुश्री मुसरफ चौधरी, अधिवक्ता

एस० सी० चावला, अधिवक्ता

आर० सी० चोपड़ा, अपर जिला और सेशन न्यायाधीश, दिल्ली

बी० एस० दास, अधिवक्ता, कटक

मनोज के० दास, अधिवक्ता

न्यायमूर्ति बी० एस० देव, सेवानिवृत्त अध्यक्ष राज्य विधि आयोग, राजस्थान

क्षार० पी० धनियम, मुख्य अभियोजक, अभियोजन निदेशालय, दिल्ली

सुजाता धवाले, काफेडरेशन आफ डाक्टरर्स एसोसिएशन

आर० सी० दीक्षित, अपर पुलिस महानिदेशक, उत्तर प्रदेश

एन० दुलारे, उप महानिदेशक, ग्वालियर

एस० के० गंगेश, अधिवक्ता, दिल्ली

विवेक गंगीर, अधिवक्ता, दिल्ली

न्यायमूर्ति ए० के० गांगुली

मनीष गार्ग, अधिवक्ता, दिल्ली

डी० एन० गौतम, उप महानिदेशक, भारतीय तिब्बत सीमा पुलिस अनुप जार्ज, ज्येष्ठ अधिवक्ता

सुब्रह्म घिलदियाल, पत्रकार

बी० एल० गुलाटी, सचिव (विधि) हरियाणा

अरुणेश्वर गुप्ता, अधिवक्ता

अरविन्द गुप्ता, अधिवक्ता

ए० के० गुप्ता, अधिवक्ता

दीपांकर गुप्ता, ज्येष्ठ अधिवक्ता

के० एल० गुप्ता, ए० डी० जी० पुलिस (अपराध) उत्तर प्रदेश

न्यायमूर्ति आर० एल० गुप्ता, सदस्य, विधि आयोग

नरेश कुमार गुप्ता, अधिवक्ता

शेखर गुप्ता, संपादक, इंडियन एक्सप्रेस

श्रीमती जैकब एलिस, सदस्य, विधि आयोग

आर० सी० जैन, नई दिल्ली

आर० के० जैन, ज्येष्ठ अधिवक्ता, नई दिल्ली

न्यायमूर्ति एस० एन० ज्ञा, न्यायाधीश, पटना उच्च न्यायालय

सुश्री काक पूर्णमा भट्ट, अधिवक्ता, उच्चतम न्यायालय

सुमन कपूर, अधिवक्ता

प० परमानन्द कटारा, अधिवक्ता

संजय काव, पत्रकार

रमाकान्त डी० खलप, विधि और न्याय मंत्रालय के संघ राज्य मंत्री

श्री शशि खुराना, प्रशिक्षणार्थी अधिवक्ता

श्री० जी० कृष्णमूर्ति, सदस्य, विधि आयोग

मुकेश कुमार, प्रशिक्षणार्थी अधिवक्ता

सुशील कुमार, ज्येष्ठ अधिवक्ता

न्यायमूर्ति स्वतंत्र कुमार, न्यायाधीश, पंजाब और हरियाणा उच्च

न्यायालय बी० आर० प्रधान, सिविक्स सरकार

पी० स० बी०

सर्वीश आर०, अधिवक्ता  
सुश्री पद्मा सेठ, सदस्य, राष्ट्रीय महिला आयोग  
अतुल शर्मा, अधिवक्ता  
न्यायमूर्ति एम० के० शर्मा, न्यायाधीश, दिल्ली उच्च न्यायालय  
श्रीमती पवन शर्मा, सहायक विधि अधिकारी, विधि आयोग  
टी० सी० शर्मा, अधिवक्ता  
विभाकर शर्मा, उप महानिरीक्षक, तिरुनेलवली, तमिलनाडु  
विष्णु शर्मा, अधिवक्ता  
एम० एन० शरीक, अधिवक्ता  
एन० के० सिंधल, सेवानिवृत्त, भारतीय पुलिस सेवा  
कपिल सिंगल, ज्येष्ठ अधिवक्ता  
जे० पी० सिंह, अपर जिला न्यायाधीश, दिल्ली  
न्यायमूर्ति भवानी सिंह  
सुलतान सिंह, अधिवक्ता  
जी० पी० श्रीवास्तव, अधिवक्ता  
एस० सी० श्रीवास्तव, संयुक्त सचिव, विधि आयोग  
ए० सुभाषिनी, अधिवक्ता

ए० के० सूरी, अधिवक्ता, अपर महानिवेशक, जम्मू कश्मीर, जम्मू  
आर० एस० सूरी, अधिवक्ता  
एस० जे० सईद, विधि परामर्शी, राष्ट्रीय महिला आयोग  
न्यायमूर्ति चनी लाल ठक्कर, न्यायाधीश, गुजरात, उच्च  
न्यायालय  
न्यायमूर्ति के० थामस, न्यायाधीश, उच्चतम न्यायालय  
संजय त्रिपाठी, उप विधि अधिकारी, विधि आयोग  
डा० वीलबी त्रिवेदी, सहायक निवेशक, बी० पी० आर० एंड डी०  
के० व्ही० एस० तुलसी, ज्येष्ठ अधिवक्ता  
ए० के० उपाध्याय, सहायक विधि अधिकारी, विधि आयोग  
डा० आनुप कुमार वर्णी  
न्यायमूर्ति जे० एस० वर्मा, न्यायाधीश, भारत का उच्चतम न्यायालय  
न्यायमूर्ति एम० एन० थेंकटचलौया, वाध्यक, राष्ट्रीय मानव  
अधिकार आयोग  
न्यायमूर्ति डी० पी० वधवा, मुख्य न्यायमूर्ति, पटना उच्च न्यायालय  
आर० के० यादव, अपर जिला न्यायाधीश  
रणबीर यादव, अधिवक्ता

### उपांचंद्र 9

भारत के विधि आयोग और आन्ध्र प्रदेश न्यायिक अकादमी द्वारा, 14 दिसम्बर, 1996 को, आन्ध्र प्रदेश न्यायिक अकादमी, सिकन्दराबाद में, संयुक्ततः आयोजित भारतीय दंड संहिता (संशोधन) विधेयक, 1978 के प्रस्तावित संशोधनों पर कार्यशाला की कार्यवाहियां

प्रथम सत्र उद्घाटन सत्र था, जहां पर माननीय न्यायमूर्ति के० जयचन्द्र रेहडी, अध्यक्ष, भारत का विधि आयोग ने, कार्यक्रम की अध्यक्षता की। माननीय न्यायमूर्ति प्रमा शंकर मिश्र, आन्ध्र प्रदेश के मुख्य न्यायमूर्ति मुख्य अतिथि थे। श्री एस० जे० डौरा, भारतीय पुलिस सेवा, आन्ध्र प्रदेश राज्य के पुलिस महानिवेशक ने जनसमूह को सम्बोधित किया।

वास्तविक कार्यक्रम दूसरे सत्र से आरंभ हुआ। दूसरा सत्र मानव भाग से संबंधित अपराधों की वाज्त संशोधनों के बारे में है।

माननीय न्यायमूर्ति वाई० भास्कर राव, न्यायाधीश, आन्ध्र प्रदेश उच्च न्यायालय ने, सत्र का उद्घाटन किया। उन्होंने विधि आयोग की 42वीं रिपोर्ट तथा विधेयक, 1978 का भी उल्लेख किया।

उन्होंने, दण्डादेश के अधिरोपण के 'संबंध में ध्यान रखे जाने वाले पहलुओं के संदर्भ में, मनु से एक कोटेशन पढ़ा।

माननीय न्यायमूर्ति, वाई० भास्कर राव ने, बताया कि दोषी को दंडित किया जाना चाहिए। उन्होंने घोषणा की कि 1947 में स्वतंत्रता से ही अपराध में ज्यामितीय (एग्रोत्तर श्रेणी) के आधार पर बटोत्तरी हो रही है, जबकि दंड में कमी आ रही है और कि न्यायालय द्वारा विचारित मामलों का केवल 2 प्रतिशत मामले दोषिद्वारा हो पाते हैं।

इनके बाद आन्ध्र प्रदेश उच्च न्यायालय के ज्येष्ठ अधिवक्ता, श्री सी० पद्मनाभन बोले। उन्होंने सर जेम्स फिटजराल्ड स्टीमन की टिप्पणी की राय के बारे में बताया कि भारतीय दंड संहिता की धारा 299 और धारा 300, भारतीय दंड संहिता के विषय में सबसे कमजोर भाग है। उन्होंने मुन्हई उच्च न्यायालय द्वारा निर्णीत प्रसिद्ध गोविंदा के मामले में तथा विधि आयोग की 42वीं रिपोर्ट का हवाला दिया। उन्होंने बताया कि भारतीय दंड संहिता की धारा 304 का प्रथम भाग और धारा 304 के द्वितीय भाग के बीच एक संप्रान्ति है।

श्री सी० पद्मनाभन ने सुझाव दिया कि भारतीय दंड संहिता का, भारतीय दंड संहिता की धारा 302 के अधीन दोषी को दण्डित करने के लिए उपयुक्ततः तब ही संशोधन किया जाए जब केवल अपराध का पूर्व चित्तन हो। उन्होंने और यह सुझाव दिया कि यदि मामला धारा 300 के एक अपवाद या अधिक अपवादों के अन्तर्गत आता है तो दंड धारा 304 के प्रथम भाग के अधीन दोनों चाहिए और हत्या के अन्य अपराध के लिए भारतीय दंड संहिता की धारा 304 के द्वितीय भाग के अधीन दंडित किए जाएंगे।

उन्होंने धारा 304ख की आलोचना की और इस आत की ओर संकेत दिया कि भारतीय दंड संहिता की धारा 304ख के अर्थान्तर्गत दहेज का वही अर्थ लगाया जाएगा जैसा दहेज प्रतिवेद्य अधिनियम की धारा 2 दहेज को परिभाषित करती है। उन्होंने आगे यह कहा कि भारतीय दंड संहिता की धारा 304ख के अधीन अपराध के संबंध में जुर्माना अनिवार्यतः अधिरोपित किया जाना चाहिए और कि ऐसा जुर्माना पीड़ित को संदेश होगा।

उन्होंने सुझाव दिया कि भारतीय दंड संहिता की धारा 303 के प्रतिविवेश से, जिसे परिनियम पुस्तक से (व्यवहारातः) हटा दिया गया है, भारतीय दंड संहिता की धारा 309 को परिनियम पुस्तक से हटाया जाएगा। भारतीय दंड संहिता की धारा 354 के संबंध में श्री सी० पद्मनाभन देखड़ी ने सुझाव दिया कि आन्ध्र प्रदेश का राज्य हाष्ठोरुद्ध केन्द्रीय अधिनियमिति में भी किया जाएगा।

इसके बाद श्री एस० ही० एन० पटेल, रजिस्ट्रार (सहकारी), आन्ध्र प्रदेश उच्च न्यायालय ने यह संकेत करते हुए कहा कि यदि कोई व्यक्ति गलती से किसी अन्य व्यक्ति की हत्या करने की अग्राह्य एक व्यक्ति की हत्या कर देता है तो ऐसा अपराध, यदि इसमें पूर्वचित्तन है, भारतीय दंड संहिता की धारा 302 के अधीन दंडनीय बनाया जाएगा। उन्होंने यह और सुझाव दिया कि जनन्य हत्या, या भाड़े पर लिए गए हत्या करने वाले द्वारा हत्या अनिवार्यतः मृत्यु से दंडनीय होंगी।

उन्होंने सुझाव दिया कि धारा 304 के प्रथम भाग या द्वितीय भाग के अधीन दंडनीय अपराधों के लिए 5 वर्ष का न्यूनतम दण्डादेश होगा। उन्होंने भारतीय दंड संहिता की धारा 304क के अधीन अपराध के लिए 5 वर्ष का न्यूनतम दंड का भी सुझाव दिया

और यह कहा कि यदि उतावलापन तथा लापरवाही दोनों, स्थापित हो जाती हैं, तो भारतीय दंड संहिता की धारा 304क का दंड कम से कम 10 वर्ष की अवधि के लिए होगा। उन्होंने आगे भारतीय दंड संहिता की धारा 306 के लिए न्यूनतम दंड की सिफारिश की, श्री एम० ई० एन० पटरुदु ने उल्लेख किया कि भारतीय दंड संहिता की धारा 307 के अभियोजन का अभिकरण द्वारा अत्यधिक दुरुपयोग किया जा रहा है। भारतीय दंड संहिता की धारा 376 और धारा 354 के अधीन आगे वाले बलात्संग और महिला के लज्जा भंग के अपराधों के संबंध में, श्री एम० ई० एन० पटरुदु ने यह विचार प्रकट किया कि उक्त अपराधों के प्रयत्न की कोई स्पष्ट परिभाषा नहीं है और बलात्संग का प्रयत्न तथा महिला की लज्जा भंग से का प्रयत्न की उचित परिभाषा का सुझाव दिया।

श्री एम० ई० एन० पटरुदु ने यह भी सुझाव किया कि संबंध नियोक्ता द्वारा महिला कर्मचारियों के लैंगिक उत्पीड़न के दंड के लिए भारतीय दंड संहिता में उपबंध के लिए सुझाव दिया और यह भी संकेत किया कि ऐसे उत्पीड़नों में वृद्धि हो रही है।

माननीय न्यायमूर्ति के० एस० श्रीवास्तव, जो इसके पश्चात बोले और उन्होंने बताया कि भारतीय दंड संहिता की धारा 303 परिनियम पुस्तक से हटा दी जाएगी। उन्होंने बताया कि पत्नी की परिभाषा में दूसरी पत्नी उस समय समिलित की जाएगी जब कि भारतीय दंड संहिता की धारा 304ख के अर्थात्तर प्रथम विवाह बना हुआ है, जिससे कि कोई पति, जिसने दूसरा विवाह किया है, भारतीय दंड संहिता की धारा 304ख का स्पष्टीकरण देकर दूसरी पत्नी के साथ क्रूरतापूर्वक व्यवहार करने की अनुज्ञा न पा सके।

न्यायमूर्ति के० एस० श्रीवास्तव ने यह भी सुझाव दिया कि भारतीय दंड संहिता की धारा 304ख के प्रयोजन के लिए पत्नी के रूप में लोगों की जात रखेल भी पत्नी के रूप में मानी जाएगी।

उन्होंने बताया कि बिना अभिग्राय के अपदरण दंडनीय नहीं है और ऐसा अपदरण भी दंडनीय बनाया जाना चाहिए।

उन्होंने यह भी सुझाव दिया कि यदि कोई पत्नी न्यायिक पृथक्करण और किसी औपचारिक डिक्री के बिना अलग रह रही है, तो भारतीय दंड संहिता की धारा 376क को उपयुक्ततः संशोधित करके, ऐसा पति, जो इन्द्रिय संभोग के लिए, ऐसी अलग हुई पत्नी को मजबूर करता है, बलात्कारी समझा जाएगा और उपयुक्ततः दण्डित किया जाएगा।

भारतीय दंड संहिता की धारा 320 के संदर्भ में, न्यायमूर्ति श्री के० एस० श्रीवास्तव ने बताया कि अभियुक्त के ऐसे कार्य, जैसे ऐसिंड फैक्ना, से मानव शरीर के अभिदर्शित भाग का विरुद्ध, न कि धोर उपहार की परिभाषा को चेहरे या सिर के विरुद्ध के मानलों तक आवश्यक रूप से सीमित करते हुए, धोर उपहार की परिभाषा को चेहरे या सिर के विरुद्ध करता है तो उसे ऐसी लाइकी की आत्महत्या करने का दुष्प्रेरण होना समझा जाएगा। अन्त में उन्होंने सुझाव दिया कि ऐसिंग को भी दण्डित किया जाना चाहिए।

उनका यह मानना है कि भारतीय दंड संहिता की धारा 354 सुपरिभाषित है और किसी संशोधन की आवश्यकता नहीं है। उन्होंने यह व्यक्त किया कि भारतीय दंड संहिता की धारा 354 का संशोधन करने के लिए कोई भी प्रयत्न संकटमय परिणामों की ओर ले जाएगा। भारतीय दंड संहिता की धारा 309 के संबंध में, उनकी यह राय है कि यदि कोई लाइकी अपने उपहार (जार) की ओर से क्रूरता के कारण आत्महत्या करती है तो उसे ऐसी लाइकी की आत्महत्या करने का दुष्प्रेरण होना समझा जाएगा। अन्त में उन्होंने सुझाव दिया कि ऐसिंग को भी दण्डित किया जाना चाहिए।

माननीय न्यायमूर्ति श्री० एम० वापत ने कहा कि भारतीय दंड संहिता की धारा 299 और धारा 300 सुपरिभाषित है और उन्होंने संशोधित करने की आवश्यकता नहीं है। वे श्री सी० पद्मनाभा की राय से सहमत हैं कि भारतीय दंड संहिता की धारा 304 के पहले और दूसरे भाग के अधीन आशय और जानकारी मूर्त वस्तुएँ हैं या नहीं हैं। उन्होंने यह भी बताया कि इस आशय पर भारतीय दंड संहिता की धारा 353 का संशोधन करने की कोई आवश्यकता नहीं है। स्त्री की लज्जा की आरणा एक वर्ण से दूसरे वर्ण, एक स्थान से दूसरे स्थान और एक समाज से दूसरे समाज के साथ बदलती है। उन्होंने कहा कि भारतीय दंड संहिता की धारा 354 के अपराध को इस प्रकार परिभाषित करने की कोई आवश्यकता नहीं है, जिससे कि न्यायाधीश को जाहा लज्जा भंग हो, वहां प्रत्येक मामले में विनिश्चय करने के लिए एक स्वतंत्रता प्राप्त होती है। उन्होंने यह कहा कि मुर्बई जैसे महानगर में आर्थिक रूप से उच्च श्रेणी के समाज में किसी स्त्री के साथ डाय मिलाने की उस स्त्री की लज्जा को भंग करना नहीं कहा जा सकता जबकि किसी छोटे नगर में यह किसी स्त्री का लज्जा भंग होने का कारण हो सकता है।

हैदराबाद के मेट्रोपोलिटन सत्र न्यायाधीश श्री डी० सुब्रह्मण्यम, माननीय न्यायमूर्ति श्रीवास्तव के इस सुझाव से सहमत हैं कि भारतीय दंड संहिता की धारा 320(6) में धोर उपहार की परिभाषा के संबंध में, शरीर का प्रत्येक अंग समिलित होगा और भारतीय दंड संहिता की धारा 309 हटा दी जाएगी। नगर सिविल न्यायालय, हैदराबाद के मुख्य न्यायाधीश श्री जी० येथीराजुलु ने, यह सुझाव दिया कि जारकर्म के मामलों में पत्नी भी दंडनीय होगी। उक्त प्रक्रम पर, भारतीय विधि आयोग के अध्यक्ष माननीय

न्यायमूर्ति के० जयचन्द्र रेडी ने यह कहते हुए डस्टक्षेप किया कि अब जारकर्म के मामले में स्त्री को भी दण्डित किए जाने का प्रस्ताव है।

आन्ध्र प्रदेश सरकार, विधि विभाग (विधायी कार्य) के सचिव, श्री जी० भवानी प्रसाद, जो जिला न्यायाधीश है, ने कहा कि व्यवहार में भारतीय दंड संहिता की धारा 299 और 300 के बीच विवेद बहुत कम है। उन्होंने कहा कि श्री एम० ई० एन० पटरुदु द्वारा प्रस्तावित मामला भारतीय दंड संहिता की धारा 301 के अधीन प्रतिपादित अंतरित विद्वेष के सिद्धान्त के अन्तर्गत आता है।

उन्होंने यह तर्क दिया कि कोई व्यक्ति, भारतीय दंड संहिता की धारा 300 के अधीन यथापरिभाषित, जो हत्या का दोषी है, भारतीय दंड संहिता की धारा 300 के वर्णित एक या अधिक अपवादों के अन्तर्गत आता है, मानव वध के अपराध, जो हत्या नहीं है, को कम अपराध करने वाला समझा जाएगा। श्री जी० भवानी प्रसाद ने इसे अन्यायपूर्ण समझा है और सुझाव दिया कि सभी अपवादों के लिए, जब अपराध भारतीय दंड संहिता की धारा 300 के अधीन उपबंधित अपवादों के अन्तर्गत आता है, कम दण्ड दिया जाना चाहिए।

श्री जी० भवानी प्रसाद ने कहा कि एक से अधिक व्यक्तियों के जीवन के लिए खतरे से अंतर्वलित भोपाल गैस ग्रासदी जैसी गंभीर औद्योगिक उपेक्षा के लिए कठोर दंड अधिरोपित किया जाना चाहिए। उन्होंने यह भी सुझाव दिया कि नौकर और नौकरानियों के विवर घरेलू हिस्सा को, जिसे संपूर्ण विश्व में दंडनीय बनाया गया है, कठोर दंडादेश से दण्डित किया जाना चाहिए। उन्होंने सुझाव दिया कि वैवाहिक बलात्संग दंडलैंड जैसे रुद्रिवादी समाज में भी दंडनीय है और इसे मारत में भी दंडनीय बनाया जाएगा।

उस प्रक्रम पर माननीय न्यायमूर्ति के० जयचन्द्र रेडी ने डस्टक्षेप किया और प्रतिनिधियों से बलात्संग के लिए किसी स्त्री को दण्डित करने की संमावना पर विचार करने के लिए कहा। श्री जी० भवानी प्रसाद ने यह संकेत करते हुए अपना निवेदन समाप्त किया कि रैमिंग को दण्डित किया जाना चाहिए और बताया कि भारतीय दंड संहिता की धारा 303 और धारा 309 हटा दी जाएगी।

एक बार फिर माननीय न्यायमूर्ति के० जयचन्द्र रेडी ने डस्टक्षेप किया और बताया कि यदि आत्महत्या करने के प्रयत्न को दंडनीय नहीं बनाया जाता है, तो शायद इसका दुष्प्रयोग दण्डित नहीं किया जा सकता और लिटटे जैसे आत्मघाती दस्ते स्वतंत्र हो जाएंगी। श्री जी० भवानी प्रसाद ने यह भी प्रस्तुत किया कि आत्महत्या करना दंडनीय नहीं है जबकि आत्महत्या का प्रयत्न दंडनीय बनाया गया है; और उसी साधूश्य पर, यद्यपि आत्महत्या करने का प्रयत्न दंडनीय नहीं है, इसका दुष्प्रेरण दंडनीय बनाया जाएगा।

माननीय न्यायमूर्ति के० एस० श्रीवास्तव ने इसे समन्वित करने की कोशिश की और सुझाव दिया कि जब आत्महत्या करने के प्रयत्न को दण्डित न किया जाता है, तो दुष्प्रेरण को दण्डित करने के लिए भारतीय दंड संहिता की धारा 309 का स्पष्टीकरण समावेशित किया जाएगा।

अभियोजन निदेशक श्री नारायण राव देशमुख ने सुझाव दिया कि यदि भारतीय दंड संहिता की धारा 309 को परिनियम पुस्तक से हटाया जाना है, तो आत्मदाह और छत के ऊपर से कूद कर आत्महत्या करने जैसे कियाकलापों को भी ध्यान में रखना चाहिए।

माननीय न्यायमूर्ति एस० एस० एम० व्हादारी ने कहा कि आत्महत्या करना आत्मविनाश की एक प्रक्रिया मात्र है, आयुध नहीं, इसलिए भारतीय दंड संहिता की धारा 309 को बनाए रखना बांधनीय है।

आन्ध्र प्रदेश पुलिस अकादमी के निदेशक श्री एन० एम० वी० कृष्णाराव ने यह विचार व्यक्त किया कि भारतीय दंड संहिता की धारा 309 आत्महत्या करने का प्रयत्न करने से व्यक्तियों को संरक्षित करने के लिए परिनियम पुस्तक पर बनी रहनी चाहिए। उन्होंने यह भी महसूस किया कि किसी महिला का उपयाप्ति (जार) या पति वस्तुतः उस महिला को आत्महत्या करने के लिए दुष्प्रेरित नहीं कर सकता है किन्तु ऐसी परिस्थिति पैदा कर सकता है कि वह महिला आत्महत्या करने के लिए प्रवृत्त हो जाए और ऐसे मामले भारतीय दंड संहिता की धारा 306 के अधीन लाए जाएंगे।

इस प्रक्रम पर, माननीय न्यायमूर्त

सी० बी० आई० अभियोजक श्री पी० वी० रामकृष्ण ने कहा कि यदि मृत्यु दंड को पूरी तरह से समाप्त किया जाता है, तो गमीर मामलों में मृत्युदंड के अधिरोपण के लिए अपवादों का उपबंध किया जाएगा। उन्होंने यह भी बताया कि भारतीय दंड संहिता की धारा 304क का शीर्ष टिप्पण उत्तावलापन और उपेक्षा को समिलित करने के लिए परिवर्तन किए जाने योग्य है। माननीय न्यायमूर्ति श्री के० जयचन्द्र रेडी ने हस्तक्षेप किया और बताया कि उत्तावलेपन में एक सकारात्मक कार्य समिलित है जब कि उपेक्षा मात्र लोप द्वारा भी हो सकती है। उन्होंने यह भी बताया कि बहुत-सी धाराओं के शीर्ष टिप्पण सही नहीं हैं और इन्हें उपयुक्ततः संशोधित किया जाना चाहिए।

श्री पी० वी० रामकृष्ण ने यह भी बताया कि उत्तावलेपन का कार्य और उपेक्षापूर्ण कार्य के बीच विभेद किया जाना चाहिए और कि भारतीय दंड संहिता की धारा 304क के अधीन अपराध को और अधिक कठोर तथा अधिकतम दंड दिया जाना आवश्यक है। उनकी यह भी राय थी कि भारतीय दंड संहिता की धारा 309 निरसित किए जाने योग्य है और भारतीय दंड संहिता की धारा 354 को पुनःपरिमाणित किया जाना आवश्यक है।

श्री सीतापति, एक ज्योष्ठ आपाराधिक वकील ने बाद में बताया कि किसी व्यक्ति को तिरष्कृत किए जाने के अपराध को भी दंडित करने की पूरी आवश्यकता है। उन्होंने कहा कि किसी पुरुष के तिरस्कार के अपराध को दण्डित करने के लिए भारतीय दंड संहिता की धारा 354क के रूप में नई धारा इस आधार पर समाविष्ट की जाएगी कि भारत में प्रत्येक मनुष्य के आत्मसम्मान, जो संकट में है, को संरक्षित किया जा सके।

माननीय न्यायमूर्ति श्री के० जयचन्द्र रेडी ने बताया कि किसी व्यक्ति को तिरष्कृत किया जाना मानव अधिकारों का अतिक्रमण होगा और मानव अधिकार अधिनियम के उपबंधों के अधीन दण्डनीय होता है।

श्री जी० विठ्ठल, अभियोजन अधिकारी ने कहा कि पति द्वारा स्त्री को मानसिक पीड़ा या मानसिक क्षति कारित किया जाना भी, भारतीय दंड संहिता की धारा 498 का उपयुक्ततः संशोधन करके दण्डनीय बनाया जाएगा।

सी० बी० आई० अभियोजक श्री बालकृष्ण ने कहा कि विवाह के पश्चात भी मांग करने के कार्य को भारतीय दंड संहिता की धारा 304ख में समिलित किया जाएगा और कि कोई व्यक्ति, जो भावी विवाह के बचन पर किसी महिला के साथ मैथुन करने में लिप्त रहता है, भारतीय दंड संहिता की धारा 376 के अधीन दण्डनीय होगा। माननीय न्यायमूर्ति श्री एस० एस० एम० व्यावादी ने हस्तक्षेप किया और बताया कि स्थिति को, भारतीय दंड संहिता की धारा 493 का संशोधन करके, इसके अन्तर्गत लाया जा सकता है। श्री बालकृष्ण ने आगे और यह कहा कि भारतीय दंड संहिता की धारा 354 के अन्तर्गत कौन-कौन-सी लज्जा आती है और भारतीय दंड संहिता की धारा 282 और धारा 294 के अन्तर्गत कौन-कौन-सी अश्लीलता आती है, स्पष्टतः परिमाणित किया जाना आवश्यक है। उन्होंने यह भी बताया कि भारतीय दंड संहिता की धारा 498ख मानवीय गरिमा को संरक्षित करने के लिए अधिनियमित की जाएगी।

सेवानिवृत्त जिला न्यायाधीश और भारतीय विधि आयोग के अंशकालिक सदस्य की यह राय थी कि आत्महत्या करने के दुष्प्रेरण के दोषी व्यक्तियों को दंडित करने के लिए भारतीय दंड संहिता की धारा 309 को बने रहने दिया जाएगा। उन्होंने बताया कि लज्जा की बोधगम्यताएं प्रत्येक स्थान पर बदलती रहती हैं और इस प्रकार भारतीय दंड संहिता की धारा 354 के अधीन लज्जा को परिमाणित करना न तो बांधनीय है और न ही सुरक्षित है। वे बहुत से वक्ताओं से सहमत थे और कहा कि रैगिंग को रैगिंग की स्पष्ट परिमाणा के साथ दंडित किया जाना चाहिए।

उन्होंने प्रश्न किया कि क्या भारतीय दंड संहिता की धारा 299 और 300 को पुनःपरिमाणित किया जाना आवश्यक होना चाहिए और क्या इसे न्यायाधीश के विवेक पर नहीं छोड़ देना चाहिए। यदि भारतीय दंड संहिता की धारा 299 और धारा 300 को पुनःपरिमाणित किया जाना है, तो श्री दसरथि की राय थी कि विभिन्न मामलों के अनुपात को ध्यान में रखते हुए, इसे संशोधित किया जाएगा। उन्होंने कहा कि भारतीय दंड संहिता की धारा 304क न्यूनतम दंडावेश की अपेक्षा करती है, यद्यपि उन्होंने इस बारे में कुछ नहीं कहा कि न्यूनतम दंडावेश किया होगा।

आन्ध्र प्रदेश उच्च न्यायालय के अधिवक्ता श्री पट्टामि ने बताया कि मानव अंगों की चोरी, जिसके परिणामस्वरूप व्यक्ति की मृत्यु हो जाती है, को कम से कम मानव अंगों की चोरी करने वालों के मन में भय उत्पन्न करने के लिए भारतीय दंड संहिता की धारा 299 के अर्थान्तर्गत लाया जाएगा।

उन्होंने कहा कि भारतीय दंड संहिता की धारा 304क के लिए दंड का बढ़ाया जाना वहां न्याय के उद्देश्यों को पूरा नहीं करता जहां पर अभियुक्त एक ही दिन में दोषमुक्त कर दिए जाते हैं। उन्होंने बताया कि भारतीय दंड संहिता की धारा 304क के अधीन अपराध के दंडावेश को बढ़ाया जाना मात्र एक कागजी कार्य होगा।

उन्होंने कहा कि भारतीय दंड संहिता की धारा 498क प्रायः ईमानदार पतियों को तंग करने के लिए प्रयोग की जाती है और यह धारा ईमानदार पतियों को संरक्षित करने के लिए पुनःपरिमाणित की जानी चाहिए। उन्होंने कहा कि भारतीय दंड संहिता की

धारा 309 इस आधार पर वैसी ही बनी रहेगी कि सुख-मृत्यु (दया पूर्ण वध) भारत में मान्य नहीं है। उन्होंने यह भी कहा कि भारतीय दंड संहिता की धारा 306 का संशोधन करना अपेक्षित नहीं है।

सी० बी० आई० के अधिवक्ता, श्री रामकृष्ण राव ने कहा कि भारतीय दंड संहिता की धारा 304ख की परिवर्ति में दर्ज की लाया जाएगा, जिसमें त्यौहारों और अन्य अवसरों के संबंध में पति को पत्नी के नातेरारों द्वारा उपहारों के रूप में पेशकश भी समिलित होगी। उन्होंने कहा कि भारतीय दंड संहिता की धारा 309 विवरण पुस्तिका में रहेगी।

श्री पट्टामि ने यह बताते हुए एक बार पुनः कहा कि जब घरेलू हिंसा को दंडित किए जाने की आवश्यकता हो, तो ऐसे मामले पड़से मनविश्लेषण के लिए भेजे जाएंगे।

प्रशिक्षार्थी जिला न्यायाधीश श्री शिवशंकर राव ने तर्क दिया कि जुमाना, जो भारतीय दंड संहिता के अधीन अपराध के लिए अधिरोपित किया जा सकता है, बढ़ाया जाएगा और प्रत्येक धारा का भाग रूप बनाया जाएगा, और यह बताते हुए कहा कि वे प्रशिक्षितियां, जिनमें भारतीय दंड संहिता 130 वर्ष से भी अधिक पूर्व अधिनियमित की गई थीं, अधिक समय तक ठीक कार्य नहीं कर सकती हैं। उन्होंने कहा कि न केवल रैगिंग की ही अपितु छेड़लाड़ को भी दंडनीय बनाया जाना चाहिए। उन्होंने आगे और यह तर्क दिया कि अन्य रूप से मदिला मदाविद्यालयों जैसे स्थानों में स्त्रियों द्वारा पुरुष व्यक्तियों के साथ छेड़लाड़ को भी पुरुष छेड़लाड़ के रूप में दंडित किया जाएगा।

एक अन्य प्रशिक्षणार्थी, जिला न्यायाधीश श्री एम० सीताराम सूर्ति ने तर्क दिया कि भारतीय दंड संहिता की धारा 309 को उस समय बना रहने दिया जाएगा जब दण्ड के कार्यक्रम से आत्महत्या करने के मात्र प्रयत्न को क्षूट प्राप्त हुई हो। उन्होंने यह और कहा कि सिविल डिफ़री की अवज्ञा को कड़ाई से दंडित किया जाएगा।

माननीय न्यायमूर्ति श्री एस० एस० एस० एम० व्यावादी ने बताया कि जब तक कुटुम्ब की धारणा विद्यमान रहती है तब तक पत्नी के साथ बलपूर्वक मैथुन के लिए किसी पति को विधिकः दंडित किया जाना संभव नहीं हो सकता। उनकी राय यह भी है कि भारतीय दंड संहिता की धारा 376क में डिक्री शब्द को विधिक, नैतिक और सही रूप से समाविष्ट किया गया था। उन्होंने चर्चा को समाप्त किया और बताया कि चर्चाओं की आम सदमति यह है कि भारतीय दंड संहिता की धारा 309 परिनियम पुस्तक में बनी रहेगी।

माननीय न्यायमूर्ति श्री के० जयचन्द्र रेडी ने तब सभी भाग लेने वालों का धन्यवाद किया। उन्होंने बताया कि विधि आयोग ने, भारतीय दंड संहिता की धारा 498क को दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 320 के भीतर शमनीय अपराध बनाने के लिए सिपारिश की है। उनकी यह भी राय थी कि जब तक जानकारी और आशय के बीच मूर्त और बोधगम्यता का अन्तर स्पष्ट नहीं किया जाएगा तब तक भारतीय दंड संहिता की धारा 299 और धारा 300 को पुनःपरिमाणित करना संभव नहीं होगा। उन्होंने प्रतिनिधियों का ध्यान इस तथ्य की ओर भी आकर्षित किया कि भारतीय दंड संहिता की धारा 299 और धारा 300 में बहुत कम विभेद है। इसके पश्चात दूसरा सत्र 2.00 बजे अपराह्न में समाप्त हो गया।

तीसरे सत्र की अध्यक्षता माननीय न्यायमूर्ति श्री आर० एम० बापत ने की और माननीय न्यायमूर्ति श्री के० एस० श्रीवास्तव, माननीय न्यायमूर्ति श्री एस० एस० एम० व्यावादी, माननीय न्यायमूर्ति श्री वाई० भास्कर राव और माननीय न्यायमूर्ति श्री के० जयचन्द्र रेडी ने इसमें भाग लिया। सत्र में, संपत्ति के विरुद्ध अपराध के विषय, लोक न्याय के विरुद्ध अपराधों के विषय से संबंधित शोष पहलुओं और साधारण अपवादों, साधारण स्पष्टीकरणों तथा अन्य विषयों के संबंध में कार्रवाई की गई।

माननीय न्यायमूर्ति श्री आर० एम० बापत ने संपत्ति के विरुद्ध अपराधों के विषय के संबंध में चर्चा आरंभ की। उन्होंने बताया कि भारतीय दंड संहिता का अध्यय 17, संपत्ति के विरुद्ध अपराधों के संबंध में कार्रवाई करता है, जिसमें मानव शरीर के विरुद्ध के कुछ अपराध विषय और भारतीय दंड संहिता की धारा 396 के अधीन आने वाली हत्या संहित डकैती जैसे अपर

रिष्ट के संदर्भ में, श्री नारायण राव देशमुख ने बताया कि इस समय रिष्ट के बेल सम्पत्ति के नुकसान तक सीमित है और सम्पत्ति के नुकसान के कारण हुई मानसिक क्षति भी रिष्ट की परिभाषा में सम्मिलित की जाएगी। उन्होंने कहा कि इस स्थान पर रिष्ट की परिभाषा में रैगिं को भी सम्मिलित किया जा सकता है। उनका यह मत है कि भयावोहन से संबंधित अलग घारा इस आधार पर आवश्यक नहीं है कि उद्घापन को परिभाषित करने वाली भारतीय दंड संहिता की घारा 383 में भयावोहन सम्मिलित है। उन्होंने भारतीय दंड संहिता की घारा 380 का, यह बताते हुए यह आलोचना की कि जब वानि प्राकृतिक विषदाओं और दुर्घटनाओं के कारण होती है तब व्यक्तियों को दंडित किया जाना अन्यायपूर्ण होगा।

उन्होंने स्कैमों को दंडित करने के लिए भारतीय दंड संहिता की घारा 420 के रूप में एक नई घारा समाविष्ट करने के लिए अनुरोध किया। वे विधि आयोग के इस सुझाव से सहमत हुए कि रोजगार प्राप्त करवाने के लिए अभिकथित रूप से धन संग्रहीत करने वाले व्यक्तियों को दंडित किए जाने का सही प्रस्ताव है।

श्री सीतापति ने बताया कि संपत्ति के विरुद्ध अपराधों ने स्कैम जैसे नियमित अपराधों का रूप ले लिया है। उन्होंने यह भी बताया कि वैकं के जालसाजी सामलों में वृद्धि हो रही है। उन्होंने कहा कि इन प्रवृत्तियों को समाप्त करने के लिए डॉकैती को दंडनीय बनाया जाएगा। उन्होंने यह भी बताया कि आपराधिक न्यास भंग स्कैमों तक विस्तारित किए जाएंगे और उतना जघन्य जिन्होंनी हत्या, जघन्य अपराध के रूप में माना जाएगा। उन्होंने बताया कि ऐसे अपराध कम से कम 7 वर्ष के कारावास से दंडित किए जाएंगे और कि धन और आपराधिक न्यास भंग आजीवन कारावास से दंडित किया जाएगा। श्री सीतापति ने यह भी बताया कि दंड प्रक्रिया संहिता की घारा 320 का, शमनीय अपराधों की सूची के भीतर छल के अपराधों को सम्मिलित करने के लिए संशोधित किए जाने की आवश्यकता है। उन्होंने यह भी सुझाव दिया कि धर्षद मेहता का मामला जहां स्कैम में एक करोड़ रुपए से अधिक रकम अंतर्वलित है, जैसे मामलों के शीघ्र विचारण के लिए विशेष नियम बनाए जाएंगे।

श्री सीतापति ने यह भी कहा कि वास्तविक संघात कारोबार असामाजिक तत्वों के हाथों में है। ऐसे मामलों में दांडिक न्यायालय, अंतरिम अनुतोष तथा वित्तीय अनुतोष का उपबंध करने में समर्थ होते हैं। उन्होंने इस तथ्य का भी वर्णन किया कि चोरी की गई वस्तुओं को धन में संपरिवर्तित करने और उद्घापन में धन जैसी चीजों को आमूषणों, गाड़ी, आदि में संपरिवर्तित करने जैसी संपरिवर्तित सम्पत्तियों को न्यायालय निर्मुक्त नहीं कर रहे और ऐसी संपत्तियों को भी उनके वास्तविक स्वामियों को वापस कराने के लिए विधि का उपबंध करना होगा।

श्री एम० वी० कृष्ण राव ने अध्यक्ष से कहा कि विधेयक, 1978 को कब तक बने रहने दिया जाएगा और माननीय न्यायमूर्ति के० जयचन्द्र रेडी ने यह बताते हुए उत्तर दिया कि विधेयक, 1978 की व्याख्या पत्र में ही उपर्युक्त की गई कि विधेयक को सुझावों के अनुसार, संशोधित किया जा सकता है।

श्री एम० वी० कृष्ण राव ने बताया कि विधेयक, 1978 में यथापरिभाषित छल बहुत ही अच्छा है, जिस पर माननीय न्यायमूर्ति के० जयचन्द्र रेडी ने बताया कि सेंधमारी और चोरी को भी विधेयक, 1978 में स्पष्टतः परिभाषित किया गया है।

श्री जी० येथि राजेलु ने बताया कि आपराधिक न्यास भंग के मामलों में अन्वर्वलित धन जब्त किया जाना आवश्यक है और मृत्यु दंडावेश का अधिकतम दंड, आपराधिक न्यास भंग के अपराधों के लिए आदिष्ट किया जाता है। उन्होंने कहा कि आपराधिक न्यास भंग जघन्य अपराध के रूप में समझा जाएगा।

श्री एम० ई० एन० पटरुदु ने बताया कि आपराधिक न्यास भंग के मामलों में अभियुक्त की सम्पत्ति, भारतीय दंड संहिता की घारा 406, 409 और 410 को उपयुक्त रूप से संशोधित करके कुर्क की जानी चाहिए।

श्री पी० वी० रामकृष्ण ने बताया कि दांडिक विधि संशोधन अधिनियम आपराधिक न्यास भंग और छल के मामलों में सम्पत्तियों की कुर्की के लिए उपबंध करता है। उन्होंने यह भी बताया कि दांडिक विधि संशोधन अध्यादेश कुर्क की गई सम्पत्ति को जब्त करने के लिए उपबंध करता है। पी० सी० अधिनियम की घारा को निर्दिष्ट करते हुए, श्री पी० वी० रामकृष्ण ने बताया कि दुर्विनियोग, आपराधिक न्यास भंग और धन के मामलों में जुमानी की मात्रा नियत करते समय न्यायालयों द्वारा ध्यान दिए जाने वाले विषयों का उल्लेख किया जाएगा। माननीय न्यायमूर्ति के० जयचन्द्र रेडी ने हस्तक्षेप किया और बताया कि भारतीय दंड संहिता की घारा 53 में, संपत्ति का सम्पद्धरण, दंड के तरीकों में से एक तरीके के रूप में सम्मिलित है। श्री एम० ई० एन० पटरुदु ने हस्तक्षेप किया और तर्क दिया कि सम्पद्धरण का आश्रय तब तक नहीं लिया जा सकता जब तक कि सम्पत्ति न्यायालय में प्राप्त नहीं हो जाती है।

श्री बालकृष्ण ने बताया कि सम्पद्धरण के मामलों में दंड प्रक्रिया की घारा 452(5) का फायदा उठाया जा सकता है और दांडिक विधि संशोधन अधिनियम अधिक सहायक नहीं है। श्री पी० वी० ने हस्तक्षेप किया और बताया कि प्रत्येक अपराध के लिए सम्पद्धरण को सम्पत्ति, जिसमें छल भी है, के विरुद्ध दंड का भाग बनाया जा सकता है। माननीय न्यायमूर्ति एस० एस० एम० क्वादरी ने हस्तक्षेप किया और बताया कि सम्पद्धरण की घारा किसी स्वामी को उसकी सम्पत्ति वापस प्राप्त करने से विचित्र करती है और इस प्रकार प्रत्येक सम्पत्ति के अपराध में सम्पद्धरण का आश्रय नहीं लिया जा सकता।

श्री रामकृष्ण राव ने बताया कि एन० ई० एस० अधिनियम और घटावार निवारण अधिनियम अभियुक्त की संपत्ति की कुर्की तथा सम्पद्धरण के लिए उपबंध करते हैं। श्री पी० वी० रामकृष्ण ने हस्तक्षेप किया और बताया कि सम्पत्तियां आवश्यक बस्तु अधिनियम के अधीन भी सम्पद्धरत की जाती हैं।

श्री विठ्ठल ने यह तर्क दिया कि प्रतिमूर्ति अधिनियम, 1892 से संबंधित संव्यवहार स्वतः सम्पत्ति की कुर्की के लिए उपबंध करते हैं और ऐसा उपबंध भारतीय दंड संहिता में समाविष्ट किया जाए। उन्होंने सुझाव दिया कि स्कैम, छल और आपराधिक न्याय भंग के मामलों में दोष की उपधारणा सुजित की जा सकती है।

श्री पटटामि ने बताया कि भारतीय दंड संहिता में संपत्ति को परिभाषित नहीं किया है किन्तु मात्र जंगम सम्पत्ति को परिभाषित किया गया है। उन्होंने चेतावनी दी की साधारण सम्पद्धरण जुमानी का परिहास होगा और तर्क दिया कि भारतीय दंड संबंध में सम्पद्धरण के लिए किसी विशेष उपबंध की आवश्यकता नहीं है। उनकी राय थी कि संपत्ति को सम्पद्धरत किया जाए तो क्यों जास्तीपर्याप्ति का प्रयोग किया जा सकता है ताकि सम्पद्धरण के उपबंधों का दुर्लयोग न किया जाए।

श्री सी० पडमनाभ ने बताया कि यह, इस समय, भारतीय दंड संहिता की घारा 420 के अधीन अपराध करने के समय आपराधी को आपराध के लिए दंडनीय बनाए जाने के लिए बेंडमानी का आशय होगा, उन व्यक्तियों को, जो एक समय बिन्दु के पश्चात, यद्यपि न कि वास्तविक संव्यवहार के समय, बेंडमानी का आशय विकसित करते हैं, दंडित करने के लिए, इस घारा का उपयुक्त रूप से संशोधन किया जाना चाहिए।

श्री रामकृष्ण ने सुझाव दिया कि भारतीय दंड संहिता की घारा 379 के अधीन दंडित किए जाने के लिए विद्युत को छल संपत्ति की अन्वर्वलित लाया जाना चाहिए। माननीय न्यायमूर्ति के० जयचन्द्र रेडी का मत था कि विद्युत, छल संपत्ति का एक भाग है, जिस पर श्रीराम कृष्ण ने तर्क दिया कि न्यायिक राय यह है कि विद्युत छल संपत्ति नहीं है और परिणामतः इसकी चोरी, भारतीय दंड संहिता की घारा 379 के अधीन दंडनीय नहीं है। माननीय न्यायमूर्ति एस० एस० एम० क्वादरी ने बताया कि माल विक्रय अधिनियम के अनुसार, विद्युत छल संपत्ति है, जिस पर श्री रामकृष्ण ने तर्क दिया कि छल संपत्ति के अर्थात् विद्युत को सम्मिलित करने के लिए भारतीय दंड संहिता में एक स्पष्टीकरण सम्मिलित किया जा सकता है।

माननीय न्यायमूर्ति के० एस० श्रीवास्तव ने बताया कि भारतीय दंड संहिता की घारा 27 यह उपबंध करती है कि पत्नी या सेवक द्वारा कब्जा, पति या मालिक का कब्जा होगा, जैसी भी दिव्यता हो, पर पुनर्विचार किया जाना आवश्यक है। श्री विठ्ठल ने सेवक द्वारा कब्जा, पति या मालिक का कब्जा होगा, जैसी भी दिव्यता हो, पर पुनर्विचार किया जाना आवश्यक है। श्री विठ्ठल ने सुझाव दिया कि छल, दुर्बिनियोग और आपराधिक न्यास भंग के मामलों में अभियुक्त की सम्पत्ति पर रोक लगाने पर विचार किया जाएगा।

इस सत्र में, लोक न्यास से संबंधित अपराधों पर विचार किया गया। माननीय न्यायमूर्ति के० एस० श्रीवास्तव ने यह बताते हुए चर्चा आरंभ की कि भारतीय दंड संहिता के अध्याय 11 में 41 घारा एं अन्वर्विष्ट हैं। उन्होंने बताया कि उस समय जब मिथ्या साक्ष्य विवरणसकारी परिणामों की ओर ले जाती है, तो शपथ की विशुद्धता समाप्त हो जाती है। उन्होंने बताया कि कूटरचना से संबंधित भारतीय दंड संहिता की घारा 463 और 464 को स्पष्ट रूप से पुनः परिभाषित किया जाना चाहिए और भारतीय दंड संहिता की घारा 466 और 467 को मिलाया जाना आवश्यक है। उन्होंने न्यायाधीशों को दत्तोत्साहित होने से बचाने के लिए भारतीय दंड संहिता की घारा 228 के अधीन कठोर दंड दिए जाने का अनुरोध किया और भारतीय दंड संहिता की घारा 222 के अध्यक्तम अवधि 2 वर्ष तक की दौड़ी और दस द्वारा रुपए तक का जुर्माना होगा। उन्होंने यह भी बताया कि भारतीय दंड संहिता की घ

भारतीय दंड संहिता की धारा 218 में “लोक” शब्द का लोप करने से, उद्देश्य पूरा हो सकता है। माननीय न्यायमूर्ति के० जयचन्द्र रेड्डी ने इस्तक्षेप किया और बताया कि चिकित्सीय प्रमाणपत्र और जाति प्रमाणपत्रों ने विवरण कर दिया और कहा कि ऐसे प्रमाणपत्रों का प्रयोग छल की कोटि में आता है जबकि ऐसे प्रमाणपत्रों को जीवी करना भारतीय दंड संहिता की धारा 198क, 198ख के अधीन आ सकता है। श्री पी० वी० रामकृष्ण ने यह तर्क दिया या ऐसे व्यक्ति, जिन्होंने मिथ्या प्रमाणपत्र जारी किए, छल करने के कार्यक्षेत्र से बाहर हैं जब माननीय न्यायमूर्ति के० जयचन्द्र रेड्डी की यह राय थी कि मिथ्या प्रमाण का सज्जन भारतीय दंड संहिता के अधीन दण्डनीय है श्री टी० सुब्रह्मण्यम ने बताया कि भारतीय दंड संहिता की धारा 229क प्रतिभूतों तथा अभियुक्तों को लागू की जानी चाहिए। श्री एम० ई० एन० पटरूदु, श्री टी० सुब्रह्मण्यम के सुझाव से सहमत थे। श्री पी० वी० रामकृष्ण ने सुझाव दिया कि भारतीय दंड संहिता की प्रस्तावित धारा 198क और 198ख को भारतीय दंड संहिता की धारा 197ख और 197ग के रूप में होना आवश्यक है और कहा कि इसके लिए दंड एक वर्ष की अवधि से अधिक नहीं होगा। माननीय न्यायमूर्ति के० जयचन्द्र रेड्डी की यह यह थी कि किसी डाक्टर के लिए एक वर्ष का कारावास एक जयन्य दंड है और कहा कि वस्तुतः मिथ्या चिकित्सीय प्रमाणपत्र को साबित करना बहुत कठिन है। श्री एम० ई० एन० पटरूदु ने यह तर्क दिया कि न्यायालय के साथ किया गया कष्ट तब दण्डनीय बनाया जाएगा जब यह किसी अधिवक्ता द्वारा किया जाता है और कहा कि भारतीय दंड संहिता की धारा 193 पक्षदोही साक्षियों को देंडित करने के लिए पर्याप्त नहीं है। श्री पटटामि ने बताया कि दो डाक्टर कभी सहमत नहीं होते हैं और कहा कि भारतीय दंड संहिता की धारा 198क एक वांछनीय धारा नहीं है, जहां पर भारतीय दंड संहिता की धारा 468 पर्याप्त रूप से स्थिति का समाधान कर सकती है। उनकी राय थी कि चिकित्सा व्यवसाय को सुरक्षित रखा जाए। उन्होंने कहा कि भारतीय दंड संहिता की धारा 228, जैसी अब यह विद्यमान है, न्यायिक अवरोध का उल्लङ्घ संतुलन है।

सत्र का अन्तिम भाग साधारण संशोधकों के लिए या स्पष्टीकरण और अन्य प्रकीर्ण विषयों से संबंधित न्यायमूर्ति एस० एस० एम० व्यावादी ने यह बताते हुए चर्चा आरंभ की कि साधारण स्पष्टीकरण और साधारण अपवादों से संबंधित अध्याय 1, 2, 3 और 4 और अध्याय 2 के अधीन आने वाले कपट को पुनःपरिभाषित किया जाना चाहिए। उन्होंने यह भी बताया कि अध्याय 2 के अधीन बहुत-सी परिभाषाएं साधारण दंड अधिनियम में कथित हैं। उन परिभाषाओं में ऐसी परिभाषाओं को, जो साधारण दंड अधिनियम में उल्लिखित हैं, भारतीय दंड संहिता के उपबंधों से निरसित किया जाना आवश्यक है। उन्होंने चेतावनी दी कि कपट को परिभाषित करना कठिन है। उन्होंने यह भी बताया कि अधिक कठोर दंड, जिन्हें विद्येयक, 1978 द्वारा प्रस्तावित किया गया है, भारतीय दंड संहिता की धारा 53 में सम्मिलित किया जाना आवश्यक है और कहा कि तथापि, दंड के विषय में प्रत्येक धारा, उन दण्डों को विनिर्दिष्ट करेगी, जिन्हें नए रूप में समाविष्ट किया जाना है।

साधारण अपवादों के संबंध में, उन्होंने इस बारे में चर्चा के लिए एक विचार-विमर्श प्रस्तुत किया कि क्या सभी अपराध, जो अधिकतम 2 वर्ष के कारावास के दंडादेश से या इससे अधिक की अवधि से दण्डनीय भारतीय दंड संहिता की धारा 75 में सम्मिलित किए जाएंगे। उनकी राय थी कि भारतीय दंड संहिता की धारा 99 के अपवाद को हटा दिया जाना आवश्यक है और उनकी यह भी राय थी कि भारतीय दंड संहिता की धारा 100 के अधीन प्राइवेट प्रतिरक्षा का अधिकार अपहरण के मामलों को भी लागू होगा।

श्री एम० वी० कृष्ण राव, माननीय न्यायमूर्ति एस० एस० एम० व्यावादी के सुझाव से सहमत थे। भारतीय दंड संहिता की धारा 99 द्वारा अधिरोपित निर्बंधन, प्राइवेट प्रतिरक्षा के अधिकार की धारणा के रूप में हटा दिया जाना चाहिए, जो प्रत्येक व्यक्ति के जीने के अधिकार पर आधारित है, को छोड़ देना चाहिए। उन्होंने कहा कि घटना के समय पीड़ित के लिए यह विनिश्चय करना संभव नहीं हो सकता कि वह स्वयं की रक्षा करे या संरक्षण के लिए किसी पुलिस थाने में जाए। उन्होंने कहा कि भारत एक त्रस्त देश है। भारतीय दंड संहिता की धारा 99 के अपवाद, यह अब भारतीय दंड संहिता की जैसी धारा 99 में विद्यमान है, को कभी भी दुरुपयोग नहीं किया जा सकता।

उन्होंने कहा कि भारतीय दंड संहिता की धारा 103 को परिनियम पुस्तक में उत्तरे अधिक मामलों के लिए बना रहने दिया जाए और भारतीय दंड संहिता की धारा 100 के अधीन अपहरण के मामलों को भी लाया जाए। उन्होंने स्पष्ट किया कि भारतीय दंड संहिता की धारा 103 का दुर्लभतः आश्रय लिया जा सकता है, और इसे परिनियम पुस्तक से हटाने की आवश्यकता नहीं है।

श्री सी० पदनामा की राय थी कि भारतीय दंड संहिता की धारा 86 न केवल अवधारित जानकारी होगी किन्तु इसमें जब किसी व्यक्ति द्वारा मतता में कोई कार्य किया जाता है। माननीय न्यायमूर्ति एस० एस० एम० व्यावादी ने हस्तक्षेप किया और बताया कि इस आशय को प्रत्येक मामले में की परिस्थितियों से साबित किया जा सकता है। माननीय न्यायमूर्ति के० जयचन्द्र रेड्डी ने हस्तक्षेप किया और प्रश्न किया कि क्या भारतीय दंड संहिता की धारा 86 देखने में बिल्कुल भारतीय दंड संहिता की धारा 85 जैसी है। उन्होंने बताया कि भारतीय दंड संहिता में मतता के अधीन कहने वालों को सुरक्षा अपेक्षित है और कहा कि संहिता केवल मत व्यक्ति को जानकारी प्रदान करती है, जिसे अन्यथा साबित किया जाना आवश्यक है, जबकि पुनरावृत्त प्रयत्नों आदि जैसी स्थितियों के आशय का अनुमान लगाया जा सकता है।

श्री सीतापति ने बताया कि चूंकि, अनेक अपराध मनोवैज्ञानिक और मनस्तापि कारणों से किए जाते हैं इसलिए, भारतीय दंड संहिता की धारा 84 में एक स्पष्टीकरण जोड़े जाने की आवश्यकता है। उन्होंने कहा कि भारतीय दंड संहिता में मनोरोग संबंधी पहलुओं को शामिल करने की आवश्यकता है।

श्री पटटामि ने बताया कि अन्येषक अधिकारियों को प्रत्येक अपराध के तत्व को सभी रूप से समझ लेना चाहिए और कहा कि पुलिस के लिए यह अनिवार्य बनाते हुए, उपबंध सुजित किए जाए कि वे कूटरचना, लेखाओं का होरफेर, आदि के मामलों में, वित्तीय विशेषज्ञ, चिकित्सीय विशेषज्ञ और अन्य विशेषज्ञों की सहायता ले।

माननीय न्यायमूर्ति के० जयचन्द्र रेड्डी ने यह बताते हुए चर्चा की कि मान, प्रतिष्ठा, प्राइवेट प्रतिरक्षा के अधिकार के प्रयोग में शामिल है और कहा कि भारतीय दंड संहिता की धारा 99 खाली बंजर भूमि का कज्जा जैसी स्थितियों के लिए प्राइवेट प्रतिरक्षा के अधिकार के प्रयोग को रोकने के लिए आशयित है। उन्होंने पीड़ितों को मासूली और आवश्यक मामलों के विधिपूर्ण प्राधिकारों के पास न जाने के औचित्य पर प्रश्न किया और बताया कि किसी व्यक्ति के मात्र अधिकारों के अतिक्रम के लिए हत्या नहीं कर सकता। अन्त में, माननीय न्यायमूर्ति के० जयचन्द्र रेड्डी ने सभी प्रतिनिधियों को विचार-विमर्श में सक्रिय भाग लेने के लिए धन्यवाद दिया।

कार्यशाला में निम्नलिखित व्यक्ति उपस्थित हैं—

1. माननीय न्यायमूर्ति के० जयचन्द्र रेड्डी, अध्यक्ष, भारत का विधि आयोग
2. माननीय न्यायमूर्ति वाई० भास्कर राव, न्यायाधीश, आन्ध्र प्रदेश उच्च न्यायालय
3. न्यायमूर्ति आर० एस० आपत, न्यायाधीश, आन्ध्र प्रदेश उच्च न्यायालय
4. न्यायमूर्ति के० एस० श्रीवास्तव, न्यायाधीश, आन्ध्र प्रदेश उच्च न्यायालय
5. न्यायमूर्ति एस० एस० क्षादरी, न्यायाधीश, आन्ध्र प्रदेश उच्च न्यायालय
6. श्रीमती सी० सुशीला देवी, लोक अभियोजक, आन्ध्र प्रदेश उच्च न्यायालय
7. श्री जी० कृष्णमूर्ति, सदस्य, भारत का विधि आयोग
8. श्री सी० पदनामा रेड्डी, ज्येष्ठ अधिवक्ता
9. श्री नारायण राव देशमुख, अभियोजन निदेशक
10. श्री पी० सीतापति, अधिवक्ता
11. ए० वी० कृष्ण राव, आन्ध्र प्रदेश पुलिस अकादमी, निदेशक
12. श्री पी० वी० रामकृष्ण, अधिवक्ता
13. श्री टी० एस० वी० प्रसाद, संयुक्त निदेशक, राष्ट्रीय पुलिस अकादमी
14. श्री टी० बाला रेड्डी, ज्येष्ठ अधिवक्ता
15. श्री एम० ई० एन० पटरूदु, रजिस्ट्रार (सरकारी)
16. श्री जी० येथि राजूलु, मुख्य न्यायाधीश, नगर सिविल न्यायालय
17. श्री टी० सुब्रह्मण्यम, मेट्रोपोलिटन सेशन्स न्यायाधीश
18. श्री जी० भवानी प्रसाद, विधि सचिव
19. श्री एच० जे० दोरा, पुलिस महानिदेशक, आन्ध्र प्रदेश
20. श्री अरविन्द राव, महानिरीक्षक
21. श्री दिनकर प्रसाद
22. श्री जी० विट्ठल, अभियोजक
23. श्री रामकृष्ण राव, अभियोजक
24. श्री बालकृष्ण पी०, अभियोजक
25. श्री पी० सत्यनारायण राजू, अधिवक्ता
26. श्री बी० पटटामि, अधिवक्ता
27. श्री के० जी० शंकर, आन्ध्र प्रदेश न्यायिक अकादमी के ज्येष्ठ संकायाध्यक्ष।

PLD 92 CLVI (H)  
100-1998 (DSK IV)

मूल्य : (देश में) रु 2114 (विदेश में) पौंड 77.74 या डालर 112.37 सेंट्स

---

महाप्रबंधक, भारत सरकार सुदृश्यालय, नाशिक द्वारा मुद्रित तथा प्रकाशन नियंत्रक,  
भारत सरकार, सिविल लाइन्स, दिल्ली-110 054 द्वारा प्रकाशित

2001